भूमिका

हे प्रियवरजनों! यह **प्रेमसागर** ग्रंथ रसिकजन [illegible] चंद्रके भक्तजनका साक्षात् प्रेमका सागर कहिये समुद्रही [illegible] पमा सब जानतेही हैं. यह मीठा अमृतमय सागर है, प[illegible] रीन संशोधकजन इसको खाराभी किया चाहते हैं, देखिये! [illegible] प-खानोंमें छपेहुए प्रेमसागरको कि जिसकी प्रस्तावनामें तो [illegible] है कि हमने इसे वहुतही शुद्ध किया है. फिर देखागया तो २ पृष्ठमें श[illegible] आसन मारे बैठे इसकी जगह लोमशऋषि लिखा है, फिर ११ पृष्ठमें [illegible] असंगत है. २२ पृष्ठमें लिखा है कि पूतनाका शरीर छह कोशथा उसकी जगह दोही कोश लिखे हैं, फिर १९० और १९२ इन पृष्ठोंमेंभी देखना, ये सब पृष्ठ हमने अपने पुस्तकके लिखे हैं; क्योंकि इनके ऊपर हमने शंका निवारणके वास्ते भागवतके अध्याय और श्लोकोंके अंक लगाके टिप्पणीमें प्रमाण दिये हैं.

यह ग्रंथ आजतक बहुत जनोंने वहुत समय छापकर प्रकाशित किया होगा; परंतु हमने बहुत श्रम और द्रव्यव्यय करके इस पष्ठावृत्तिमें दर एक अध्यायके उपर कथानुसार चित्र डाला है इससे जो शोभा आगई है सो देखनेसेही मालूम होगी और यह चित्र देखनेसे कथा बांचनेवालेके मनपर आबेहुव प्रतिबिंब पडेगा.

यह ग्रंथ हमने सुमेरपुरनिवासी पंडितवर श्रीरामभद्रद्वारा शुद्ध कराके अनेक जगह टिप्पणियोंसे विभूषित करके प्रकाशित किया. अब गुणग्राही सज्जन जनोंसे विनयपूर्वक यह प्रार्थना है कि इसको एकवार देखें और पुरातन प्रेमसागरोंसे मिलावें तव इसकी शुद्धता मालूम होगी. और हमने कियेहुए वहुत परिश्रमभी सफल होंगे.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
हरिप्रसाद भगीरथजी,
कालकादेवीरोड़-रामवाड़ी-मुंबई.

प्रस्तावना

प्रथम व्यासदेवकृत श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधकी कथाका चतुर्भुजमिश्रने पाठशालाके लिये श्रीमहाराजाधिराज मारक्वीस आफ् वेल्स्ली गवरनरजरलके राज्यमें दोहा चौपाईमें व्रजभाषा किया, और श्रीयुत जानगिल किरील महाशयकी आज्ञासे संवत् ८६०में श्रीलल्लु-लालजी कवि ब्राह्मण गुजराती सहस्र औदीच्य आगरेवालेने उसका सार ले यावनी भाषा छोड़, दिल्ली आगरेकी खड़ी बोलीमें कर इसका नाम 'प्रेमसागर' धरा. सो वना अधवना छपा अधछपा रहगया थ, परंतु लॉर्डमिंटो प्रतापवान्‌के राज्यमें कप्तान् जान विलियम टेलरकी आज्ञासे और श्रीयुत डाक्टर विलियम्स हंटर क्षत्रीकी संहायतासे और लेफटंनेट इब्राहीम डाक्टरके कहनेसे उसी कविने संवत् १८६६ में पूरा कर पाठशालाके विद्यार्थियंके पढ़नेको छपवाया.

ऐसी इस ग्रँथकी आख्यायिका, वंगालमें छपी है सो यह ग्रंथ हमने उत्तम विद्वान् सुमेरपुरानिवासी पण्डित रामभद्रशर्मासे शुद्ध करवाके अच्छे बड़े अक्षरोंसे छपवाया है, सो आपलोगोंके दृष्टिगोचर होय, यहआशा है.

धर्मशिरोमणि कर्मशिरोमणि वर्णशिरोमणे जोई ॥
भगीरथात्मज हरिप्रसाद हैं गुणगणमंदिर सोई ॥
सबगुणभूषण गौड़बिभूषण कोउ नाहिं उपमा ताको॥
श्री श्री श्री ब्रजवल्लभवल्लभ ब्रजवल्लभ सुत जाको ॥
करि बहु खर्चा पंडित अर्चा विबुधसुअर्चागतपापा ॥
शोध्यो पंडित रामभद्रने छाप्यो टाइपके छापा ॥

हरिप्रसाद भगीरथजी,

(मुंबई.)

अथ प्रेमसागरानुक्रमणिका.

पूर्वार्द्ध.

इति पूर्वार्ध ।

उत्तरार्ध.

प्रेमसागरानुक्रमणिका समाप्त.

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ प्रेमसागर प्रारम्भः ।

अध्याय १ ला.

श्री शुकदेवजीका राजा परीक्षितआदिकोंसे कथाप्रसंग.
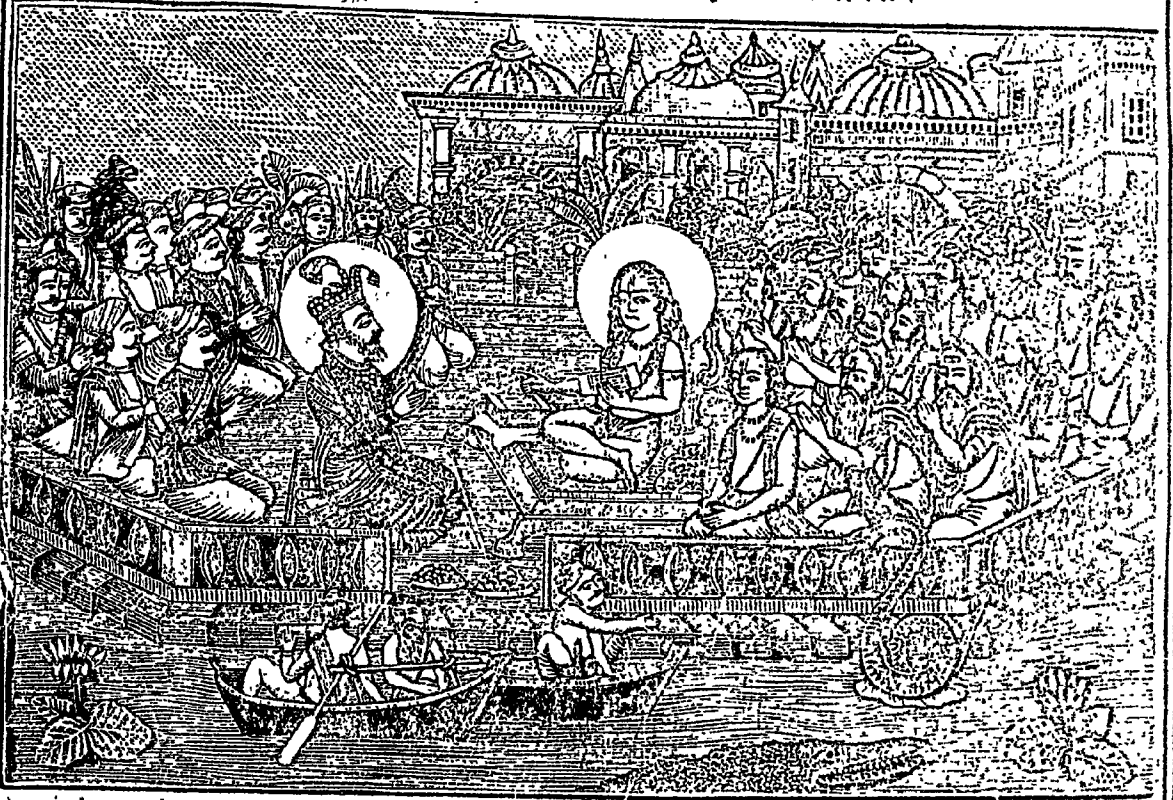
बिघनविदारण बिरदबर, बारणबदन बिकास ॥
बर देवहु बाढ़ै बिशद, बाणीबुद्धिबिलास ॥ १ ॥
युगलचरण सेवत जगत, जपत रैन दिन तोहिँ ॥
जय जय मात सरस्वती, युक्तिउक्ति दे मो मोहिँ ॥ २ ॥

महाभारतके अंतमें जब श्रीकृष्ण अंतर्धान हुये तब पांडव तो महादुःखी हो, हस्तिनापुरका राज परीक्षितको दे, हिमालयमें गलने गये और राजा परीक्षित सब देश जीत, धर्मराज करने लगे. कितने एक दिन पीछे एक दिन राजा परीक्षित अहेरको गये थे. वहा देखा कि एक गाय और एक बैल दौडे चले आते हैं, तिनके पीछे मुशल हाथमें लिये एक शूद्र मारता आता है; जब वे पास पहुँचे तब राजाने शूद्रको बुलाय झुंझलाय

कर कहा, अरे तू कौन है? अपना नाम बखान कर. जो तू गाय और बैलको जानकर मारता है; क्या अर्जुनको तैने दूर गया जाना ? तिससे उनका धनुष नहीं पहिंचाना. सुन, पांडुके कुलमें ऐसा किसीको न पावेगा कि, जिसके सोंही कोई दीनको सतावेगा. इतना कह, राजाने खड्ग हाथमें लिया. वह देख डरकर खड़ा हुआ. फिर नरपतिनें गाय और बैलकोभी निकट बुलायके पूंछा कि तुम कौन हो ? मुझे बुझाकर कहो; देवता हो कि ब्राह्मण ? और किसलिये भगे जाते हो ? यह निधड़क कहो; मेरे रहते किसीकी इतनी सामर्थ्य नहीं जो तुम्हें दुःख दे. इतनी बात सुनी तब तो बैल शिर झुकायकर बोला—महाराज ! यह पापरूप काले-वर्णवाला डरावनी सूरत जो आपके सन्मुख खड़ा है सो कलियुग है, इसीके आनेसे मैं भगा जाता हूं. यह गायस्वरूप पृथ्वी है सोभी इसीके डरसे भागचली और मेरा नाम धर्म है, चार पाँव रखताहूं. तप, स[illegible] दया और शौच. सतयुगमें मेरे चरण वीस बिस्वे थे, त्रेतामें सोल[illegible] द्वापरमें बारह अब कलियुगमें चार बिस्वे हैं; इसलिये कलिके बीच [illegible]चल नहीं सक्ता. धर्ती बो[illegible] नहीं जाता; क्योंकि शूद्र राजा हो, अधिक अधर्म मेरेपर करेंगे, तिनका बोझ मैं न सहसकूंगी, इस भयसे मैं भागती हूं. यह सुनतेही राजाने क्रोधकर कलियुगसे कहा—मैं तुझे अभी मारता हूं. वह घबरा राजाके चरणोंपर गिर गिड़गिड़ाकर कहने लगा—पृथ्वीनाथ ! अब तो मैं तुम्हारी शरण आया, मुझे कहीं रहनेको ठौर बतावो; क्योंकि तीन काल और चारोंयुग जो ब्रह्माने बनाये हैं सो किसी भांति मेटे न मिटेंगे. इतना वचन सुनतेही राजापरीक्षितने कलियुगसे कहा कि तुम इतनी ठौर रहो; जुयें, झूंठ, मदकी हाट, वेश्याके घर, हत्या, चोरी और सोनेमें. यह सुन कलिने तो अपने स्थानको प्रस्थान किया और राजाने धर्मको मनमें रखलिया. पृथ्वी अपने रूपसे मिलगई [illegible] फिर नगरमें आये और धर्मराज करने लगे.

कितने एक दि[illegible]ने, राजा फिर [illegible] अहेरको गये और चलते चलते प्यासे भये [illegible] मुकुटमें [illegible] रहताही था; उसने अप-

ना औसर पा, राजाको अज्ञान किया. राजा प्यासके मारे कहां आतेहैं कि, जहां शमीकऋषि आसन मारे नैन मूंदे हरिका ध्यान लगाये तप कर रहे थे. उन्हें देख परीक्षित मनमें कहने लगा कि, यह अपने तपके घमंडसे मुझे देख आंख मूंद रहा है, ऐसे कुमति ठान, एक मरा साप वहां पड़ा था सो धनुषसे उठा, ऋषिके गलेमें डाल, अपने घर आया. मुकुट उतारतेही राजाको ज्ञानहुवा, तो शोचकर कहने लगाकि कंचनमें कलियुगका बास है, यह मेरे शीशपर था, इसीसे मेरी ऐसी कुमति हुई. जो मरा सर्प ले, ऋषिके गलेमें डाल दिया सो मैं अब समझा कि, कलियुगने मुझसे अपना पलटा लेलिया. इस महापापसे मैं कैसे छूटूंगा? बरन धन, जन, स्त्री और राज मेरा क्यों न गया? सबब, आज न जानूं किस जन्ममें यह अधर्म जायगा? जो मैंने ब्राह्मणको सताया है.

राजा परीक्षित तो यहां इस अथाह शोचसागरमें डूब रहे थे और जहां शमीकऋषि थे वहा कितने एक लडके खेलते हुए जानिकले. मरा सांप उनके गलेमें देख, अचंभे रहे और घबराकर आपसमें कहने लगे कि, भाई! कोई इनके पुत्रसे जाके कहदे. वह उपबनमें कौशिकी नदीके तीर ऋषियोंके बालकोंके साथ खेलता है. एक सुनतेही दौडा वहीं गया जहां शृंगीनाम ऋषिकुमार छोकरोंके साथ खेलता था. कहा-बंधु! तुम यहा क्या खेलते हो? कोई दुष्ट मराहुवा काला नाग तुम्हारे पिताके कंठमें डाल गया है. सुनतेही शृंगी नाम ऋषिकुमारके नैन लाल हो आये, दांत पीसपीस, लगा थरथर कांपने और क्रोध कर कहने लगे कि, कलियुगमें राजा उपजे हैं अभिमानी दुखदानी, धनके मदसे अंध होगये हैं, इससे अब मैं उसको शाप देऊंगा आप ऐसे कह, कौशिकी नदीका जल चुल्लूमें ले राजा परीक्षितको शाप दिया कि, यही सर्प सातवें दिन तुझे डसेगा, जिससे तू मरेगा.

१ 'ददर्श मुनिमासीनमिति'-भा०स्कं० १ अ० १८ श्लो. २९ इसकी टीकामें श्रीधरस्वामीने "शमीक मुनि" लिखा है और अन्य प्रेमस[illegible]तकोंमें न मालूम संशोधकोंने किस आधारसे "लोमश ऋषि" घसीट मारा है. इस[illegible] प्रतीत होता है कि उन महाशयोंके संशोधक तथा उन्होने स्वयंभी "श्रीमद्भागवत" [illegible]न कथा श्रवण भी नहीं किया है.

इस भांति राजाको शाप देकर, अपने बापके पास जा, गलेसे सांप निकाल कहने लगा—हे पिता!तुम अपनी देह सँभालो, मैंने उसे शाप दिया है जिसने आपके गलेमें मरा सर्प डाला था. यह वचन सुनतेही शमीक ऋषिने सचेत हो, नैन उघाड, अपने ज्ञानध्यानसे विचारकर कहा अरे पुत्र! तैंने यह क्या किया? क्यों शाप राजाको दिया? उसके राजमें हम सुखी थे और कोई पशु पक्षीभी दुःखी न था, ऐसा धर्मराज थाकि जिसमें सिंह, गाय एकसाथ रहते आपसमें कछु न कहते, और हे पुत्र ! जिनके देशमें हम बसे, क्या हुवा तिनके हँसे?मराहुवा सर्प डाला था उसे शाप क्यों दिया ? तनक दोषपर ऐसा शाप तैंने दिया वही पाप, कछु विचार मनमें नहीं किया, गुण छोडा औगुणही लिया, साधुको चाहिये शीलस्वभावसे रहे आप कुछ न कहे औरकी सुनले, सबका गुण ले, अवगुण तजदे.

इतना कह शमीकऋषिने एक चेलेको बुलाके कहा तुम राजापरीक्षितको जाके जता दो; कि तुम्हें शृंगीऋषिने शाप दिया है. भला लोक तो दोष देहींगे पर वह सुन सावधान तो होय. इतना [illegible]न गुरुका मान, चेला चला चला वहां आया जहां राजा बैठा शोच करता था. आतेही कहा महाराज ! तुम्हे शृंगीऋषिने यह शाप दिया है कि, सातवें दिन तक्षक डसेगा, अब तुम अपना कारज करो जिससे कर्मकी फासीसे छूटो. सुनतेही राजा प्रसन्नतासे खडा हो हाथ जोड, कहने लगा कि, मुझपर ऋषिने बडी कृपा की जो शाप दिया; क्योंकि मैं मायामोहके अपार शोचसागरमें पडा था, सो निका[illegible] बाहर किया. जब मुनिका शिष्य बिदा हुवा तब राजाने आप [illegible]य लिया, और जनमेजयको बुलाय राजपाट देकर, कहा—[illegible] ब्राह्मणकी रक्षा कीजो और प्रजाको सुख दीजो "इतना कह आ[illegible]वास, देखी नारी सबी उदास" राजाको देखतेही रानिया पा[illegible] गिर, रो रो कहने लगीं—महाराज ! तुम्हारा वियोग हम अब[illegible] सह सकेंगी, इससे तुम्हारे साथ जी दें तो भला. राजा बोला सुनो, [illegible]को उचित है कि जिससे अपने धर्म रहै सो करै. उत्तम [illegible]में बाधा न डालै.

इतना कह [illegible], जन, कुटुंब और राजकी माया तज, निर्मोही हो आप योग स[illegible]को गंगाके तीरपर जा बैठा. इसको जिसने सुना वह [illegible]य हाय क[illegible]छताय पछताय बिन रोये न रहा. औ यह समाचार [illegible]ब मुनियोंने सुना कि, राजा परीक्षित शृंगीऋषिके शापसे मरनेको [illegible]गातीरपर आ बैठा है, तब व्यास, वासिष्ठ, भरद्वाज, कात्यायन, परा[illegible], नारद, विश्वामित्र, वामदेव, जमदग्नि आदि अठ्ठासीसहस्र ऋषि [illegible]ये और आसन बिछाय, पांत पांत बैठगये. अपने अपने शास्त्रविचार [illegible]क अनेक भांतिके धर्म, राजाको सुनाने लगे कि, इतनेमें राजाकी [illegible]द्रा देख, पोथी कांखमें लिये दिगंबरवेष श्रीशुकदेवजीभी आन [illegible]चे. उनको देखतेही जितने मुनि थे सबके सब उठ खडे हुये. और [illegible]ा परीक्षितभी हाथ बांध, खडा हो विनती कर कहने लगा [illegible]पानिधान! मुझपर बडी दया की; जो इस समय आपने मेरी [illegible]ली. इतनी बात कही, तब शुकदेव मुनिभी बैठे. राजा ऋषियोंसे [illegible]ने लगा कि, महाराज! शुकदेवजी व्यासजीके जो बेटे, और पराशर [illegible] पोते [illegible]को देख, तुम बड़े बड़े मुनीश होके उठे सो तो उचित [illegible], इसका [illegible] जो मेरे मनका संदेह जाय? तब पराशर मुनि बोले—राजा [illegible] बड़े बड़े ऋषि हैं, पर ज्ञानमें शुकसे छोटेही हैं इसलिये सबोंने [illegible]का आदर मान किया. किसीपरभी इसकी आश नहीं ये तरणतारण हैं; क्योंकि, जबसे जन्म लिया, तबसेही उदासी हो वनबास करतेहैं, और राजा! तेराभी कोई बड़ा पुण्य उदय हुआ जो शुक[illegible]जी आये. ये सब हमसे उत्तमधर्म कहैंगे जिससे तू जन्ममरणसे छूट भवसागर पार होगा. यह बचन सुन, राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीको दंडवत् कर पूंछा, महाराज! मुझे धर्म समझायके कहो. मैं किसरीतसे कर्मके फंदसे छूटूंगा? सात दिनमें क्या करूंगा? 'अधर्म हैं अपार, कैसे भवसागर हूंगा पार?'

श्रीशुकदेवजी बोले राजा! तू थोड़े दिन मत समझ; मुक्ति तो होती है एकी घड़ीके ध्यानमें. जैसे खट्वांग राजाको नारद मुनिने ज्ञान बताया था, और उसने दोही घड़ीमें मुक्ति पाई थी. तुझे तो सात दिन बहुत

है, 'जो एकचित्त हो करो ध्यान। तो सब समझोगे अपनेही ज्ञान ॥ कि क्या है देह किसका है बास। कौन करताहै इसमें प्रकाश ॥' यह सुन, राजाने हर्षसे पूंछा महाराज! सब धर्मोंसे उत्तम धर्म कौनसा है? सो कृपा कर कहो. तब शुकदेवजी बोले राजा! जैसे सब धर्मोंमें वैष्णवधर्म बड़ा तैसे पुराणोंमें श्रीमद्भागवत, जहां हरिभक्त यह कथा सुनावेहैं, तहांही सर्व तीर्थ औ धर्म आवेहैं. 'कहे हैं व्यासजीने जित पुरान। पर नहीं हैं कोई भागवतके समान॥' इसकारण मैं तुझे बारह स्कंध महापुराण सुनाताहूं, जो व्यासमुनिने मुझे पढ़ाया है; तू श्रद्धासमेत आनंदसे चित्त दे सुन. तब तो राजा परीक्षित प्रेमसे सुनने लगे और श्रीशुकदेवजी नेमसे सुनाने लगे. कथाके श्रोता सर्व आने लगे.

नौ स्कंध कथा जब मुनिने सुनाई तब राजाने कहा दीनदयाल! दया कर श्रीकृष्णावतारकी कथा कहिए; क्योंकि हमारे सहायक और कुलपूज्य वही हैं. शुकदेवजी बोले, राजा! तुमने मुझे बड़ा सुख दिया, जो यह प्रसंग पूंछा. सुनो, मैं प्रसन्न हो कहताहूं. यदुकुलमें पहले भजमान नाम राजा थे. तिनके पुत्र पृथु, पृथुके विदूरथ, उनके शूरसेन, जिन्होंने नौखंड पृथिवी जीतके यश पाया, उनकी स्त्रीका नाम मारिषा[१] था; उससे दश लड़के औ पांच लड़कियां, हुईं तिनमें बड़े पुत्र वसुदेव जिनकी स्त्रीके आठवें गर्भमें श्रीकृष्णचंद्रजीने जन्म लिया था. जब वसुदेवजी उपजे थे तब देवताओंने सुरपुरमें आनंदके बाजन बजाये थे इसीसे इसका नाम आनकदुंदुभिभी कहते हैं. और शूरसेनकी पांच पुत्रियोंमें सबसे बड़ी कुंती थी, जो पांडुको व्याही थी. जिसकी कथा महाभारतमें गई है. और वसुदेवजी पहले तो रोहन नरेशकी बेटी रोहिणीको व्याहलाये; तिसपीछे सत्रह व्याह किये. जब अठारह पटरानी हुईं तब मथुरामें कंसकी बहन देवकीको व्याहा. तहां आकाशवाणी भई कि इस लड़कीके आठवे गर्भमें कंसका काल उपजेगा. यह सुन कंसने बहन बहनोईको एक घरमें मूंद दिया और श्रीकृष्णने वहांही जन्म लिया. इतनी कथा सुनतेही

१ 'शूरस्य मारिषा नाम पत्न्यभूत्, भा० स्कं० ९ अ० २४ श्लो० २७ में ऐसे यह (मारिषा) नाम तौ भागवतमें मिलता है. मारिष्याका क्या आधार है?

राजा परीक्षित बोले महाराज! कैसे जन्म कंसने लिया? और फिर किस विधिसे गोकुल पहुंचे जाय? यह तुम मुझे कहो समझाय.

श्रीशुकदेवजी बोले, मथुरापुरीका आहुकनाम राजा थे, तिनके दो बेटे थे, एकका नाम देवक औ दूसरा उग्रसेन; कितनेएक दिनपीछे उग्रसेनही वहांका राजा हुआ; जिसकी एकही रानी थी. उसका नाम पवनरेखा था. सो अतिसुंदरी और पतिव्रता थी. आठौपहर स्वामीकी आज्ञाहीमें रहे. एकदिन पतिकी आज्ञा ले, सखी सहेलियोंको साथ कर, रथमें चढ़कर, बनमें फिरने गई. वहां घनेघने वृक्षोंमें भांति भांतिके फूल फूले हुये, सुगंधवाली मंदमंद ठंढी ठंढी पवन वह-रही. कोकिला, कपोत, कीर, मोर मीठी मीठी मनभावनी बोलियां बोलरहे; और एकओर पर्वतके नीचे यमुना न्यारीही लहरें ले रही-थी कि रानी इस समयको देख रथसे उतरकर चली तो [illegible] ओर अकेली भूलके जा निकली. वहां द्रुमलिक नाम रा[illegible]से आ पहुंचा. वह इसके जोबन और रूपकी छबि [illegible] और मनमें कहने लगा कि, इससे भोग किया चाहिये. निदान तुरत राजा उग्रसेनका स्वरूप बन, रानीके सोहीं जा बोला तू मुझसे मिल. रानी बोली, महाराज! दिनको कामकेलि करना यो[illegible] नहीं; क्योंकि इसमें शील और धर्म जाता है. क्या तुम नहीं जान[illegible] जो ऐसी कुमति विचारी है?

जब पवनरेखाने इस भांति कहा, तबतो द्रुमलिकने रानीका हाथ पकड़ खेंचलिया; और जो मनमाना सो किया. इस छलसे भोग करके जैसा था तैसाही बन गया. तब तो रानी अतिदुःख पाय, पछताय कर, बोली, अरे अधर्मी! पापी! चांडाल! तूने यह क्या अंधेर किया? जो मेरे सतको खोदिया. धिक्कार है तेरे मातापिताको और गुरुको, जिसने तुझे ऐसी बुद्धि दी. तुझसा कुपूत जन्मसे तेरी मा बांझ क्यों नहुई? अरे दुष्ट! जो नरदेह पाकर किसीका सतभंग करते हैं सो जन्म जन्म नरकमें प-ड़ते हैं. द्रुमलिक बोला—रानी! तू शाप मत दे, तुझे मैंने अपने धर्मका फल दिया है. तेरी कोख बंद देख मेरे मनमें बड़ी चिंता थी सो गई.

'आजसे हुई गर्भकी आस । लड़का होगा दशवें मास ॥' और मेरी देहके प्रभावसे तेरा पुत्र नौखंडपृथ्वीको जीत राज करेगा और श्रीकृष्णजीसे लड़ेगा. मेरा नाम प्रथम कालनेमि था तब विष्णुसे युद्ध किया था. 'अब जन्म ले आया । तो द्रुमलिक नाम कहाया ॥' तुझको पुत्र देचला, तू अपने मनमें किसी बातकी चिंता मतकर. इतनी बात कह जब द्रुमलिक चला गया तब रानीकोभी कछु सोच समझकर मनमें धीरज भया.

दो० जैसी हो होतंव्यता[1], तैसी उपजै बुद्धि ॥
होनहार हिरदै बसै, बिसर जाय सब सुद्धि ॥ १ ॥

इतनेमें सब सखी सहेली आय मिलीं. रानीका शृंगार बिगड़ा देख, एक सहेली बोल उठी—इतनी बेर तुझे कहां लगी और यह क्या गति हुई ? पवनरेखाने कहा सुनो, सहेली ! तुमने इस वनमें तजी अकेली, एक बंदर आया उसने मुझे अधिक सताया; तिसके डरसे मैं अबतक थर थर कांपती हूं. यह बात सुनकर तो सबकी सब घबराईं और रानीको उठाय, रथपर चढाय, घर लाईं. जब दश महीने पूरे तब दिनों पूरे लड़का हुआ; तिस समय ऐसी बड़ी आंधी चली कि जिसके मारे धरती ड़ोलने लगी. अँधेरा ऐसा हुआ जो दिनकी रात होगई. और लगे तारे टूटटूट गिरने बादल गरजने और बिजली कड़कने.

ऐसे माघ सुदी तेरस बृहस्पतिबारको कंसने जन्म लिया तब राजा उग्रसेनने प्रसन्न हो, सारे नगरके मंगलमुखियोंको बुलाय, मंगलाचार करवाये और सब ब्राह्मण, पंडित, ज्योतिषियोंकोभी अतिमान सन्मानसे बुलवा भिजवाये. राजानें बडी भावभक्तिसे आसन दे दे बैठाये, तब ज्योतिषियोंने लग्न साध मुहूर्त विचार कर, कहा—पृथ्वीनाथ! यह लडका कंस नाम तुह्मारे वंशमें उपजा सो अति बलवंत हो, राक्षसोंको ले, राज करेगा, और देवता और हरिभक्तोंको दुःख दे; आपका राज ले निदान हरिके हाथ मरेगा.

इतनी कथा कह शुकदेव मुनिने राजा परीक्षितसे कहा; राजा ! अब

---

१ भवितव्यता ऐसाभी पाठ है.

मैं उग्रसेनके भाई देवककी कथा कहताहूं कि, उसके चार बेटे थे और सात बेटियां थीं सो सातों वसुदेवको व्याह दीं, उनमें सातवीं देवकी हुई जिसके होनेसे देवताओंको प्रसन्नता भई; और उग्रसेनके नव पुत्रोंमें सबसे कंसही बड़ा था. जबसे जन्मा तबसे यह उपाय करने लगाकि नगरमें जाय छोटे छोटे लड़कोंको पकड़ पकड़ लावे और पहाड़की खोहमें मूंद मूंद मारडाले. जो बड़े होंय तिनकी छातीपर चढ़े, गला घोट जी निकाले; इस दुःखसे कोई कहीं निकलने न पावे. सब कोई अपने लड़कोंको छिपावे. 'प्रजा कहे दुष्ट यह कंस ॥ उग्रसेनका नहीं है अंश ॥' यह कोई महापापी जन्म ले आया है, जिसने सारे नगरको सताया है. यह बात सुन उग्रसेनने उसे बुलाकर बहुतसा समझाया, पर उसका कहना उसके जीमें न आया तब दुःख पाय पछतायके कहने लगा ऐसे पूत होनेसे मैं अपूत क्यों न हुआ ? कहतें हैं कि जिससमय कुपूत घरमें आता है तिस समय यश और धर्म जाता है. जब कंस आठ वर्षका भया, तब मागधदेशपर चढ़गया. वहांका राजा जरासंध बड़ा योधा था. तिससे मिल इसने मल्लयुद्ध किया तो उन्ने कंसका बल देखलिया तब हार मान, अपनी दो बेटियां व्याह दीं. यह ले मथुरामें आया और उग्रसेनसे वैर बढ़ाया. एकदिन कोपकर अपने पितासे बोला कि, तुम रामनाम कहना छोंड़दो और महादेवका जप करो. उसने कहा मेरे तो कर्ता, दुःखहर्ता वही हैं, जो उनकोही न भजूंगा तो अधर्मी हो कैसे भवसागर पार हूंगा?यह सुन कंसने खुनसा बापको पकड़कर, [illegible] राज्य लेलिया; और नगरमें यह डौंडी फेरदी कि, कोई यज्ञ, दान, ध[illegible] और रामका नाम करने न पावेगा. तब ऐसा अधर्म बढ़ा कि गो, [illegible]के भक्त दुःख पाने लगे; और धरती अतिबोझेसे भरने लगी. [illegible] सब राजाओंका राज्य लेचुका तब एक दिन अपना दल ले राजा इंद्र[illegible]ड़चला. तहां मंत्रीनें कहा महाराज ! इंद्रासन बिन तप किये नहीं [illegible]ता. आप बलका गर्व न करियें.

---

१ 'धृतदेवा शांतिदेवोपदेवा श्रीदेव[illegible]क्षिता । सहदेवा देवकी च वसुदेव उवाह ताः' भा०स्कं०९.अ० २४ श्लो० २२ भाग[illegible] ७ कन्या लिखीं है और किसीने ६ ही लिखीं है इस्का क्या आधार है ? । [illegible] भा. स्कं[illegible] २४ श्लो. २४ में उग्रसेनके नवही पुत्र कहे हैं.

देखो, गर्वने रावण कुंभकर्णको कैसा खोदिया कि जिनके कुलमें एकभी न रहा.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि-राजा ! जब पृथ्वीपर अति अधर्म होनेलगा, तब पृथ्वी दुःख पाय घबराय गायका रूप बनाय रांभती देवलोकमें गई और इंद्रकी सभामें जाय शिर झुकाय, उसने अपनी सब पीर कही कि, महाराज ! संसारमें असुर अति पाप करनें लगे, तिनके डरसे धर्म तो उठगया और मुझे आज्ञा हो तो नरपुर छोड़ रसातलको जाऊं. इंद्र यह सुन सब देवताओंको साथ ले ब्रह्माके पास गया. ब्रह्मा सुन, सब देवताओंको साथले महादेवके निकट लेगये. महादेवभी सुन सबको साथ ले वहां गये, जहा क्षीरसमुद्रमें नारायण सो रहेथे. उनको सोते जान ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र सब देवताओंको साथ ले खड़े हो हाथ जोड़ बिनती कर स्तुति करने लगेः—महाराजाधिराज ! आपकी महिमा कौन कह सके? मत्स्यरूप हो वेद डूबते निकाले, कच्छरूप बन पीठपर गिरि धारण किया, वराह बन भूमिको दांतपर रखलिया, वामन हो राजाबलिको छला, परशुराम अवतार ले क्षत्रियोंको मार पृथ्वी कश्यपमुनिको दी, रामावतार लिया तब महादुष्ट रावणका वध किया और जब जब दैत्य तुम्हारे भक्तोंको दुःख देते हैं तब तब आप उनकी रक्षा करते हो. हे नाथ ! अब कंसके सतानेसे पृथ्वी अति व्याकुल हो पुकार करती है, उसकी बेग सुध लीजे. असुरोंको मार साधुओंको सुख दीजे.

ऐसे गुण गाय देवताओंने कहा तब आकाशवाणी हुई, सो ब्रह्म देवताओंको समझाने लगे. यह जो वाणी भई सो तुम्हें आज्ञा दी कि, तुम सब देवी देवता ब्रजमंडल जाय मथुरा नगरीमें जन्म लो. पीछे चार स्वरूप धर हरिभी वसुदेवके घर देवकीकी कोखमें अवतार लेंगे और बाललीला कर नंदयशोदाको सुख देंगे. इस रीतसे ब्रह्माने स[illegible] बुझाकर कहा. तब तो सुर, मुनि, किन्नर और गंधर्व, सब अपनी स्त्रियोंसमेत जन्म लेले ब्रजमंडलमें आये. यदुवंशी और गोप कहाये और जो चारों वेदोंकी ऋचायें थीं वेभी ब्रह्माके कहनेसे गोपी हु

व्रजमें आईं और गोपी कहलाईं. जब सब देवता मथुरापुरीमें आचुके तब क्षीरसमुद्रमें हरि विचार करने लगे कि 'पहले तो लक्ष्मण होवें बलराम, पीछे वासुदेव हो मेरा नाम' भरत प्रद्युम्न, शत्रुघ्न अनिरुद्ध और सीता रुक्मिणीका अवतार लेंगी. इतिश्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कथाप्रसंगः प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २ रा.

कंसका देवकीको मारनेको उद्यत होना.

इतनी कथा सुनाय, श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा हे महाराज! कंस तो इस अनीतिसे मथुरामें राज करने लगा और उग्रसेन दुःख भरने. देवक जो कंसका चचा था उसकी कन्या देवकी जब ब्याहने योग्य हुई तब उन्ने जाय कंससे कहा कि, यह लड़की किसको दें? यह बोला शूरसेनके पुत्र वसुदेवको दीजिये. इतनी बात सुनतेही देवकने एक ब्राह्मणको बुलाय शुभलग्न ठहराय शूरसेनके घर टीका भेजदिया. तब तो शूरसेनभी बड़ी धूमधामसे बरात बनाय, सब देशदेशके नरेश साथ ले मथुरामें वसुदेवको व्याहने आये.

बरात नगरके निकट आई सुन उग्रसेन, देवक और कंस अपना दल साथ ले आगे बढ नगरमें लेगये, अतिआदरमानसे आगोनी कर जनवासा दिया; खिलाय पिलाय, स[illegible] बरातियोंको मंडपके नीचे लेजा बैठाया और वेदकी विधिसे कं[illegible] वसुदेवको कन्यादान दिया.

तिसके यौतुक (दहेज) में पंद्रहसहस्र १५००० घोड़े, चार सौ[1] ४०० हाथी, अठारहसौ १८०० रथ, दोसौ[2] २०० दासी दे, कंचनके थाल वस्त्र, रत्नजड़ित आभूषणोंसे भर भर अनगिनत दिये और सब बरातियोंको भी अलंकार समेत बागे पहराय सब मिल पहुँचावने चले. तहां आकाशवाणी हुई कि अरे कंस! जिसे तू पहुँचाने चला है तिसका आठवां लड़का तेरा काल उपजेगा. उसके हाथे तेरी मौत है.

यह सुनतेही कंस डरसे काप उठा. क्रोध कर देवकीकी चोटी पकड रथके नीचे खैंचलाया, खड्ग हाथमें ले दांत पीसपीस कहने लगा कि जिस पेंड़को जड़हीसे उखाड़िये तिसमें फूल फल काहेको लगेगा? अब इसीको मारूं तो निर्भय राज करूं. यह देख वसुदेव मनमें कहने लगे—'इस मूरखने दिया संताप। जानत नाहिं पुण्य औ पाप॥' जो मैं अब क्रोध करताहूं तो काज बिगड़ेगा, तिससे इस समय क्षमा करनी योग्य है. कहा है:—

चौ०—जो बैरी खैंचे तरवार, करै साधुउसकी अनुहार।
समझ मूढ सोई पछिताय, जैसे पानी आग बुझाय॥

यह शोच समझ वसुदेव कंसके सोंहीं जा, हाथ जोड विनती कर कहने लगे कि, सुनो पृथ्वीनाथ! तुमसे बली संसारमें कोई नहीं, और सब तुम्हारी छाहतले बसते हैं, ऐसे शूर हो स्त्रीपर शस्त्र करो यह अति अनुचित है. क्योंकि शास्त्रमें स्त्री अवध्य कही है और विवाहके समयमें बहिनके मारनेसे महापाप होता है तिसपरभी मनुष्य अधर्म तो करे जो जाने कि मैं कभी न मरूंगा. इस संसारकी तो यही रीत है. इधर जन्मा उधर मरा. करोड जतनसे पाप पुण्य कर कोई इस देहको पोखे पर यह कभी अपनी न होगी, और धन, यौवन, राजभी काम न आवेगा, इससे मेरा कहा मानलीजे और आपनी अबला अधीन बहिनको छोंड़दीजे.

---

[1] "चतुःशतं पारिबर्हं गजानां हेममालिनामिति" भा०स्कं० १० अ. १ श्लो. ३१ यहां तो चार ४०० सौ लिखे हैं और लोगोंने हजार किधरसे किये?॥ [2] "दासीनां सुकुमारीणां द्वे शते समलंकृते" इति. भा. स्कं. १० अ. १ श्लो. ३२ दोसौ २०० दासी भागवतमें कही हैं.

इतना सुन वह अपना काल जान, घबरा कर, औरभी झुंझुलाया. तब वसुदेव शोचनेलगे कि यह पापी तो असुरबुद्धि किये अपने हठकी टेकपर है सो जिसमें इसके हाथसे यह बचे सो उपाय किया चाहिये; ऐसे विचार मनमें कहनेलगे-अब तो इससे यह कह देवकीको बचाऊं कि जो पुत्र मेरे होगा सो तुझे दूंगा पीछे किसने देखा है लड़का न होय कि यही दुष्ट मरे यह औसर तो टले फेर समझी जायगी. इस भांति मनमें ठान, वसुदेवने कंससे कहा-महाराज! तुम्हारी मृत्यु इसके पुत्रके हाथ न होगी; क्योंकि, मैंने एकबात ठहाराई है कि देवकीके जितने लडके होंगे तितने मैं तुझे लादूंगा, यह बचन मैंने तुमको दिया. ऐसी बात वसुदेवने कही तब समझके कंसने मानली और देवकीको छोड़, कहने लगा हे वसुदेव! तुमने अच्छा बिचार किया जो ऐसे भारी पापसे मुझे बचालिया. इतना कह बिदा दी वे अपने घर गये.

कितने एक दिन मथुरामें रहते भये जब पहला पुत्र देवकीके हुआ तब वसुदेव ले, कंसपै गये और रोताहुआ लड़का आगे धरदिया देखतेही कंसने कहा वसुदेव! तुम बडे सत्यवादी हो मैंने आज जाना, क्योंकि तुमने मुझसे कपट न किया. निर्मोही हो, अपना पुत्र ला दिया; इससे मुझको कुछ डर नहीं है. यह बालक मैंने तुझको दिया. इतना सुन बालक ले दंडवत् कर वसुदेवजी तो अपने घर आये. और उसीसमय नारदमुनिजीने जाय कंससे कहा-राजा! तुमने यह क्या किया, जो बालक उलटा फेर दिया? क्या तुम नहीं जानते कि, वसुदेवकी सेवा करनेको सब देवताओंने व्रजमें आय जन्म लिया है? और देवकीके आठवें गर्भमें श्रीकृष्ण जन्म ले सब राक्षसोंको मार भूमिका भार उतारेंगे. इतना कह नारदमुनिनें आठ लकीरें पृथ्वीपर खेंच गिनवाईं, जब आठही आठ गिनतीमें आईं, तब डरकर कंसने लड़के समेत वसुदेवजीको बुला भेजा. नारदमुनि तो यों समझाय बुझाय चलेगये, और कंसने वसुदेवसे बालक ले मारडाला. ऐसे जब पुत्र हो[illegible] तब वसुदेव ले आवें और कंस मारडाले. इसी रीतिसे छह बालक म[illegible] सातवें गर्भमें शेषरूप जो भगवान् तिन्होंने आ, बास लिया.

यह कथा सुन राजा परीक्षितने शुकदेव मुनिसे पूंछा—महाराज ! नारद मुनिजीने जो अधिक पाप करवाया तिसका ब्यौरा समझकर कहो जिससे मेरे संदेह जायँ. श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! नारद मुनिजीने अच्छा बिचार किया. यह अधिक अधिक पाप करे तो श्रीभगवान तुरंतही प्रकट होवें. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे देवकीविवाह बालकवधोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३ रा.

नारदमुनिका कंससे समागम.

फेर शुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि राजा ! 'जैसे गर्भमें आये हरि और ब्रह्मादिकने स्तुति करी' और देवी जिस भांति बल-देवजीको गोकुल लेगई तिस रीतिसे कहताहूं. एकदिन राजा कंस अपनी सभामें आय बैठा और जितने दैत्य उसके थे उनको बुलाय-कर कहा—सुनो, सब देवता पृथ्वीमें जन्म ले आये हैं, तिन्होंमें कृष्ण भी अवतार लेगा, यह भेद मुझसे नारदमुनि समझायके कहगये हैं; इससे अब उचित यही भेद है कि, तुम जाकर सब यदुवंशियोंको ऐसा नाश करो जो एकभी जीता न बचे.

यह आज्ञा पा, सबके सब दंडवत् कर चले. नगरमें आ ढूंढ पकड़ पकड़ बांधने लगे. खाते, पीते, खड़े, बैठे, सोते, जागते, चलते फिरते जिसे पाये तिसे न छोंडा. धरके एकठौर लाये और जला जला, डुबा डुबा, पटक पटक, दुःख देदे सबको मारडाला इसी रीतिसे छोटे बड़े

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव[illegible] राजा! बलदेवजी तो यों प्रकटे. और जब श्रीकृष्णजी देव[illegible] आये तभी मायाने जा नंदकी नारी यशोदाके पेटमें [illegible] दोनों औधानसे थीं कि, एक पर्वमें देवकी यमुना न्हाने ग[illegible] योगसे यशोदाभी आन मिलीं तो आपसमें दुःखकी चर्चा च[illegible]न यशोदाने देवकीको बचनदे कहा-कि तेरा बालक मैं रक्खूंगी, अपना तुझे दूंगी. ऐसे बचन दे यह अपने घर आई और वह अपने घर गई.आगे जब कंसने जाना कि देवकीको आठवा गर्भ रहा तब जा वसुदेवका घर घेरा. चारों ओर दैत्योंकी चौकी बैठादी और वसुदेवको बुलाकर कहा कि, अब तुम मुझसे कपट मत कीजो और अपना लड़का लादीजो. तब मैंने तुम्हाराही कहना मान लियाथा.

ऐसे कह वसुदेव देवकीको बेड़ी और हथकड़ी पहराय एक कोठेमें मूंदकर ताला दे निजमंदिरमें आ मारे [illegible]के उपासकरे सोरहा. फिर भोर होतेही वहीं गया जहां वसुदेव देवकी थे. गर्भका प्रकाश देख कहने लगा कि, इसी यमगुफामें मेरा काल है. मार तो डालूं पर अपयशसे डरताहूं. क्योंकि अतिबलवान् हो स्त्रीको हनना योग्य नहीं. पुनः गर्भवतीका तो वध अतिही निंद्य है. भला, इसके पुत्रहीको मारूंगा, [illegible] बाहर आ गज, सिंह, श्वान और अपने बड़े बड़े योद्धा वहां चौ[illegible] रखाए; और आपभी नित चौकशी कर आवे पर एकपलभी [illegible] न पावे. जहां देखे तहां आठ पहर चौंसठ घड़ी कृष्णरूप कालही दृष्टि आवे. तिसके भयसे भावित हो रात दिन चिंतामें गँवावे.

इधर कंसकी तो यह दशा थी, उधर वसुदेव और देवकी पूरे दिनोंमें महाकष्टमें श्रीकृष्णहीको मानतेथे कि, इसबीच भगवानने आ उन्हे सपना दिया. और इतना कह उनके मनका सोच दूर किया कि, हम वेगही जन्म ले तुम्हारी चिंता मेटते हैं. अब मत पछताओ, यह सुन वसुदेव देवकी जागपड़े तो इतनेमें ब्रह्मा रुद्र इंद्रआदि सब देवता अपने विमान घरमें छोड़ अलखरूप बन वसुदेवके गेहमें आय और हाथ जोड़ जो वेद गायगाय गर्भस्तुति[1] करने लगे तिससमय उनको तो किसीने

१ गर्भ.

न देखा पर वेदकी ध्वनि सबने सुनी. यह अचरज देख रखवाले अचंभे रहे और वसुदेव देवकीको निश्चय हुआ कि, भगवान् वेगही हमारी पीर हरेंगे. इति श्रीलल्लू० कृते प्रेमसागरे गर्भस्तुतिर्नामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४.

वसुदेवजीका श्रीकृष्णजीको गोकुलमें लेजाना.
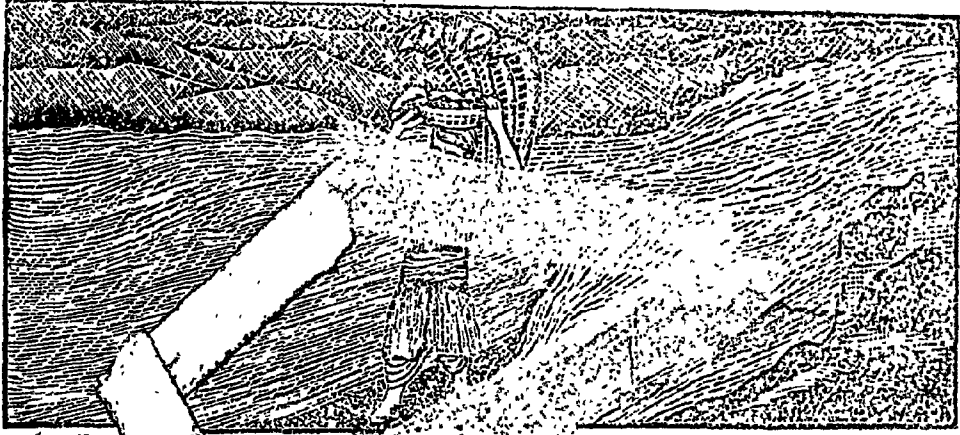
श्रीशुक [illegible] जिससमय श्रीकृष्णचंद्र जन्म लेने लगे तिसकाल सबहीके जीमें ऐसा आनंद उपजा कि, दुःख नामका भी न रहा, हर्षसे लगे बन उपबन हरे होहो फूलने, फलने, नदी, नाले, सरोवर भरने, तिनपर भांति भांतिके पक्षी कलोलें करने और नगर नगर, गांव गांव, घर घर, मंगलाचार होने, ब्राह्मण यज्ञ रचने, दशों दिशाओंके दिक्पाल हर्षने, बादल व्रजमंडलपर फिरने, देवता अपने अपने विमानोंमें बैठ आकाशसे फूल बरसावने; विद्याधर, गंधर्व, चारण [illegible]मामें भेरी बजाय बजाय गुण गानें और एक ओर उर्वशी [illegible] अप्सरा नाच रहींथीं कि, ऐसे समय भाद्रपदवदि अष्टमी [illegible]वार [illegible]णी नक्षत्रमें आधीरातको श्रीकृष्णने आ जन्म लिया. और मेघवर्ण, [illegible], कमलनयन हो, पीतांबर काछे, मुकुट धरे, वैजयंती माला और रत्नज[illegible] आभूषण पहरे, चतुर्भुज रूप किये; शंख चक्र गदा पद्म [illegible]ये, वसु[illegible]वकीको दर्शन दिया. देखतेही अचंभे हो उन दोनोंने [illegible]नसे विच[illegible] आदिपुरुषको जाना तब हाथजोड़ विनतीकर कहा [illegible]रे बड़े भा[illegible] आपने दर्शन दिया. और जन्म मरणका निबेड़ा किया.

इतना कह अपनी पहली कथा सब सुनाई जैसे कंसने दुःख दिया था, तब श्रीकृष्णचन्द्र बोले तुम अब किसी बातकी चिंता मनमें मत करो; क्योंकि, मैंने तुम्हारे दुःखको दूर करनेहींको अवतार लिया है. पर इस समय मुझे गोकुल पहुँचादो और इसी बिरियां यशोदाके लड़की हुई है सो कंसको लादो. अपने जानेका कारण कहताहूं सो सुनो.

दोहा०-नंद यशोदा तप कियो, मोहींसों मन लाय।
देख्यो चाहत बालसुख, रहौं कछुक दिन जाय॥

फिर कंसको मार आन मिलूंगा. तुम अपने मनमें धीरज धरो. ऐसे वसुदेव देवकीको समझाय श्रीकृष्ण बालक बन रोने लगे और अपनी माया फैलादी. तब तो वसुदेवदेवकीका ज्ञान गया और जाना कि, हमारे पुत्र भया. यह समझ दशसहस्र गायें मनमें संकल्प कर दीं और लड़केको गोदमें उठा छातीसे लगालिया. उसका मुँह देख दोनों लंबी श्वासें भरभर आपसमें लगे कहने-जो किसी रीतसे इस लड़केको भगादीजे तो कंस पापीके हाथसे बचे. वसुदेव बोले:-

चौ०-बिधना बिन राखैनहिं कोई, कर्म लिखासोईफलहोई॥
तब कर जोर देवकी कहै, नंद मित्र गोकुलमें रहै॥
पीर यशोदा हरै हमारी, नारि रोहिणी तहां तिहारी॥

इस बालकको वहां लेजाओ, यों सुन वसुदेव अकुलाकर कहने लगे कि, इस कठिन बंधनसे छूट कैसे ले जाऊंगा? इतनी बात कही तो सब बेड़ी हथकड़ी खुलपड़ीं; चारों ओर केंवाड़ उघड़ गये, पहेरुए अचेत नींदबश भये. तब तो वसुदेवजीने श्रीकृष्णजीको सूपमें रख शिरपर धर लिया और झटपटही गोकुलको प्रस्थान किया.

सोरठा-ऊपर बरसै देव, पीछे सिंह जु गुंजरै।
शोचत हैं वसुदेव, यमुना देखि प्रवाह अति॥

नदीके तीर खड़ेहो वसुदेव विचारने लगे कि, पीछे तो सिंह बोलताहै और आगे अथाह यमुना बह रहीहै अब क्या करूं! ऐसा भगवानका ध्यान धर यमुनामें पैठे; ज्यों ज्यों आगे जातेथे त्यों त्यों दी बढ़ती थी. जब नाकताक पानी आया तब तो निपट घबरा

इनको व्याकुल जान श्रीकृष्णने अपना पांव बढ़ाय हुंकार दिया. चरण छूतेही यमुना थाह हुई, वसुदेव पार हो नंदकी पौरपर जा पहुँचे वहां किवांड़ खुले पाये. भीतर घुसके देखा तो सब सोय पड़े हैं. देवीने ऐसी मोहनी डाली थी कि यशोदाको लड़कीके होनेकेभी सुध नहीं थी. वसुदेवजीने कृष्णको यशोदाके ढिग सुलादिया; और कन्याको ले चट अपना पंथ लिया. नदी उतर फिर आये, तहां देवकी बैठी शोचती थी. जब वसुदेवने देवकीको कन्या दे वहांकी कुशल कही तब सुनतेही देवकी प्रसन्न हो बोली—हे स्वामी! हमें कंस अब मारडाले तो भी कुछ चिंता नहीं; क्योंकि, इस दुष्टके हाथसे पुत्र तो बचा.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि जब वसुदेव लड़कीको ले आये तब कैंवाड़ ज्योंके त्यों भिड़गये और दोनोंने हथकड़ियां बेड़ियां पहरलीं. कन्या रो उठी. रोनेंकी ध्वनि सुन पहरुए जागे. तो अपने अपने शस्त्र लेले सावधान हो लगे तुपकें छोड़ने. तिनका शब्द सुन लगे हाथी चिंघाड़ने, सिंह दहाडने और कुत्ते भूंकने. तिसी समय अँधेरी रातके बीच रस्तेमें एक रखवालेने आय हाथ जोड कंससे कहा-महाराज! तुम्हारा वैरी उपजा. यह सुन कंस मूर्छित हो गिरा. इति श्रीलल्लूलाल०प्रेमसागरे कृष्णजन्म कन्याग्रहणं नाम चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

अध्याय ५.

कंसका कन्याको शिलापर पटकना.

बालकका जन्म सुनतेही कंस डर [illegible] कांपता उठ खड़ा हुआ और खड्ग हाथमें ले गिरता पड़ता दौड़ा. छूटे [illegible] पसीनेमें डूबा, धुकड़ पुकड़

करता, जा बहनके पास पहुँचा. जब उसके हाथसे लड़की छीनली तब वह हाथ जोड़ बोली--अय भैया! यह कन्या तेरी भानजी है इसे मत मार; यह पेटपोंछनी है, मेरे बालक छः मारे हैं तिनका दुःख मुझे अति सताता है. बिनकाज कन्याको मार क्यों पाप बढ़ाताहै ? कंस बोला--'जीती लड़की न दूंगा तुझे, इसे जो ब्याहेगा सो मारेगा मुझे' इतना कह बाहर आय ज्योंहीं चाहे कि फिरायकर पत्थरपर पटकें त्योंही हाथसे छूट कन्या आकाशको गई और पुकारके यह कहगई कि; अरे कंस! मेरे पटकनेसे क्या हुआ ? तेरा बैरी कहीं जन्म ले चुका, अब तेरा जी न बचेगा.

यह सुन कंस पछता पछता वहाँ आया जहां वसुदेव देवकी थे. आतेही उनके हाथ पांवकी हथकड़ी बेड़ी काट दी, और बिनती कर कहने लगा कि, मैंने बडा पाप किया; जो तुम्हारे पुत्र मारे. यह कलंक कैसे छूटेगा ? किस जन्ममें मेरी गति होगी ? तुम्हारे देवता झूठे हुए. जिन्होंने कहा था कि, देवकीके आठवें गर्भमें लड़का होगा सो न हो लड़की हुई, वह भी हाथसे छूट स्वर्गको गई, अब दया कर मेरा दोष जीमें मत रक्खो; क्योंकि कर्मका लिखा किसीके मेटे नहीं मिटता. जो ज्ञानी हैं वे मरना जीना समानही जानते हैं और अभिमानी मित्र शत्रुकर मानते हैं. तुम तो बड़े साधु सत्यवादी हो, जो हमारेहेतु अपने पुत्र ले आये.

ऐसे कह जब कंस बारबार हाथ जोड़ने लगा तब वसुदेवजी बोले--महाराज! तुम सच कहते हो इसमें तुम्हारा कछु दोष नहीं; बिधाताने यही हमारे कर्ममें लिखा था. यों सुन कंस प्रसन्न हो अति हितसे वसुदेव देवकीको अपने घर ले आया; भोजन करवाय, बागे पहराय, बड़े आदरभावसे दोनोंको फेर वहीं पहुँचा दिया. और मंत्रीको बुलाके कहा कि देवी कह गई है, कि तेरा बैरी जगतमें जन्मा है; इससे अब देवताओंको जहां पावो तहां मारो क्योंकि, उन्होंने बेसमझे झूठी बात कही कि-देवकीके आठवें गर्भमें तेरा शत्रु होगा. मंत्री बोले--उनका मारना क्या बड़ी बात है? वे तो जन्मके भिकारी हैं. जब आप कोपियेगा, तभी वे भागजावेंगे. उनकी क्या सामर्थ्य जो तुम्हारे सन्मुख हों. ब्रह्मा तो आठपहर ज्ञान

ध्यानमें रहताहै. 'महादेव भांग धतूरा खाय, इंद्रका कुछ तुमपर न बसाय.' 'रहा नारायण सो संग्राम नहीं जाने, लक्ष्मीके साथ रहताहै सुख माने.'

कंस बोला—नारायणको कहां पावें और किसविधि जीतें सो कहो? मंत्रीने कहा—महाराज! जो नारायणको जीता चाहते हो तो 'जिनके घरमें आठपहर है उसका वास, तिनहींका अब करो विनाश.' ब्राह्मण, वैष्णव, योगी, यति, तपस्वी, संन्यासी, बैरागी आदि जितने हरिके भक्त हैं तिनमें लड़केसे ले बूढ़ेतक एकभी जीता न रहे. यह सुन कंसने प्रधानोंसे कहा तुम सब जाके मारो. आज्ञा पाकर मंत्री अनेक राक्षस साथ ले बिदा हो; नगरमें जा लगे गो, ब्राह्मण, बालक और हरिभक्तोंको छल बल कर ढूंढ़ ढूंढ़ मारने ॥ इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कंसोपद्रवकरणं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६.

ब्राह्मणोंका श्रीकृष्णजन्मयोग कहना.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले—हे राजा! एक समय नंद यशोदाने पुत्रके लिये बड़ा तप किया, तहां श्रीनारायणने आय बर दिया कि, हम तुम्हारे यहां जन्म ले आवेंगे. जब भाद्रपदवदि अष्टमी बुधवारको आधीरातके समय श्रीकृष्ण आये तब यशोदाने जागतेही पुत्रका मुख देख, नंदको बुला, अति आनंद माना, और अपना जीवन तब सफल जाना. भोर होतेही उठके नंदजीने पंडित और ज्योतिषियोंको बुलाभेजा, वे अपनी पोथी पत्रे लेले आये. तिनको आसन

देदे आदर मानसे बैठाये. तिन्होंनें शास्त्रकी विधिसे संवत्, महीना, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण ठहराय लग्न बिचार मुहूर्त साधके कहा—महाराज ! हमारे शास्त्रके बिचारमें तो ऐसा आता है कि, यह लड़का दूसरा बिधाता हो. सब असुरोंको मार व्रजका भार उतार गोपीनाथ कहावेगा, सारा संसार इसीका यश गावेगा. यह सुन नंदजीने कंचनके शृंग, रूपेके खुर, तांबके पीठ समेत दो लाख गऊ पाटंबर उढ़ाय संकल्प कीं और अनेक दान कर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे दे आशीश लेले बिदा किया. तब नगरके सब मंगलमुखियोंको बुलाया, वे आय आय अपना २ गुण प्रकाश करने, लगे बजंत्री बजाने, नर्तक नाचने, गायक गाने. ढाड़ी ढाढ़िन यश बखानने और जितने गोकुलके गोप ग्वाल थे वेभी अपनी २ नारियोंके शिरपर दहेंड़ियां लिवाये, भांति भांतिके भेष बनाये नाचते गाते नंदको बधाई देने आये, आतेही ऐसा दधिकांदो किया कि; सारे गोकुलमें दही कर दिया. जब दधिकांदो खेल चुके तब नंदजीने सबको खिलाय पिलाय बागे पहराय तिलक कर पान दे बिदा किया.

इसी रीतिसे कई दिनतक बधाई रही. इस पीछे नंदजीसे जिसने जो जो आय आय मांगा सो सो पाया. बधाईसे निश्चिंत हो नंदजीने सब ग्वालोंको बुलायके कहा-भाइयो! हमने सुना है कि, कंस बालक पकड़ २ मँगवाता है. जानिये कोई दुष्ट कछु बात लगादे इससे उचित है कि सबमिल भेंट ले चलें, और बरसोदी दे आवें. यह वचन मान सब अपने अपने घरसे दूध, दही, माखन और रुपए लाय गाड़ोंमें लाद लाद नंदके साथ हो गोकुलसे चले मथुरा आए; कंससे भेंट कर भेंट दी, कौड़ी कौड़ी चुकाय बिदा होकर अपनी बाटली.

ज्योंहीं यमुनातीरपर आए त्योंहीं समाचार सुन वसुदेवजी आपहुँचे. नंदजीसे मिल कुशल क्षेम पूंछ कहने लगे तुमसरीखा सगा और मित्र हमारा संसारमें कोई नहीं क्योंकि, जब हमें भारी विपत्ति भई तब गर्भवती रोहिणी तुम्हारे यहा भेजदी. उसके लड़का हुआ सो तुमने पाल बड़ा किया, हम तुम्हारा गुण कहांतक बखानें, इतना कह फेर पूंछा

कहो राम, कृष्ण और यशोदारानी आनंदसे हैं? नंदजी बोले आपकी कृपासे सब भला है. और हमारे जीवनमूल तुम्हारे बलदेवजीभी कुशलसे हैं कि, जिनके होते तुम्हारे पुण्यप्रतापसे हमारेभी पुत्र हुआ; पर एक तुम्हारेई दुःखसे हम दुःखित हैं. वसुदेव कहने लगे; मित्र! विधातासे कछु न बसाय, कर्मकी रेख किसीसे मेटी न जाय. इससे संसारमें आय दुःख पीर पाय कौन पछताय ऐसा ज्ञान जनायके कहा–

चौ०–तुम घर जाहु बेगि आपने, कीने कंस उपद्रव घने।
बालक ढूंढ मँगावे नीच, हुई साधुपरजाकी मीच ॥

तुम तो यहां सब चले आयेहो, और राक्षस बालक ढूँढ़ते फिरतेहैं, न जानिये कोई दुष्ट जाय गोकुलमें उपाधि मचावे. यह सुनतेही नंदजी अकुलाकर सबको साथ लिये शोचते विचारते मथुरासे गोकुलको चले.

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कृष्णजन्मोत्सवोनाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अध्याय ७.

पूतनावध.

श्रीशुकदेवजी बोले–हे राजा! कंसके मंत्री तो अनेक राक्षस साथ लिये मारते फिरतेही थे कि कंसने पूतना नाम राक्षसीको बुलाकर कहा तू जा; यदुवंशियोंके जितने बालक पावे तितने मार. यह सुन वह प्रसन्न हो दंडवत् कर चली तो अपने जीमें कहने लगी.

दो०—भये पूत हैं नंदके, सुनियत गोकुल गाँव।
छलकर अबहीं आनिहौं, गोपी ह्वैके जाँव॥

यह कह सोलह शृंगार बारह आभरण कर कुचोंमें विष लगाय मोहिनीरूप बन कपट किये कमलका फूल हाथमें लिये बन ठनके ऐसी चली कि जैसे शृंगार किये लक्ष्मी अपने पतिपै जाती होय. गोकुलमें पहुँच हँसती हँसती नंदके मंदिरबीच गई. इसे देख सबकी सब गोपियां मोहित हो भूलीसी रहीं. यह जा यशोदाके पास बैठी और कुशल पूंछ आशीश दी कि—बीर! तेरा कान्ह जीवे कोट बरस. ऐसे प्रीति बढ़ाय लड़केको यशोदाके हाथसे ले गोदमें रख ज्यों दूध पिलाने लगी, त्यों श्रीकृष्ण दोनों हाथोंसे चूंची पकड़ मुंहमें लगाय लगे प्राणोंसमेत पय पीने. तब तो अतिव्याकुल हो पूतना पुकारी—'कैसा यशोदा तेरा पूत? मानुष नहीं यह है यमदूत' जेवरी जान मैंने सांप पकड़ा. जो इसके हाथसे बच जीती जाऊँगी तो फेर गोकुलमें कभी न आऊंगी. यों कह भाग गांवके बाहर आई पर कृष्णने न छोड़ा, निदान उसका जी लिया. वह पछाड़ खाय ऐसे गिरी जैसे आकाशसे वज्र गिरे. तिसका अति शब्द सुन रोहिणी और यशोदा रोती पीटती वहीं आई, जहां पूतनां छहं ६ कोसमें मरी पड़ीथी; उनके पीछे सब गांव उठ धाया. देखें तो श्रीकृष्ण उसकी छातीपर चढ़े दूध पी रहे हैं. झट उठाय मुख चूंम हृदय लगाय घर ले आईं. गुनियोंको बुलाय झाड़ फूंक कराने लगी और पूतनाको देख गोपी ग्वाल खड़े आपसमें कहा रहे थे कि, भाई! इसके गिरनेका धमका सुन हम ऐसे डरे हैं जो छाती अबतक धमकती है न जानिये बालककी क्या गति हुई होगी? इतनेमें मथुरासे नंदजी आये तो देखते क्या हैं कि, एक राक्षसी मरी पड़ी है और ब्रजवासियोंकी भीड़ घेरे खडी है, पूंछा यह उपाधि कैसे हुई? वे कहने लगे महाराज! पहले तो यह अति सुंदरी हो तुम्हारे घर आशीश देती गई, इसे देख सब ब्रजनारी भूल रहीं, यह कृष्णको ले दूध पिलाने लगी, पीछे हम नहीं जानते व

१ त्रिगव्यूत्यंतरद्रुमान् ॥ भा. स्कं. १० अ. ६ श्लो. १४, ऐसे ६ कोशका प्रमाण भाग० है. तिसपरभी भागवतको विना देखे सुने योंही संस्कृतशून्योंने दोही कोश लिखमारे.

गति हुई. इतना सुन नंदजी बोले-
और यह गोकुलपर न गिरी, नहीं तो ए
बीच दब मरते. यों कह नंदजी तो घर आ
ग्वालोंने फरसे, फावड़े, कुदाल, कुल्हाड़ोंसे
तोडतोड़ खड्डे खोद खोद गाड़ दिये; और मांस च
उसके जलनेसे एक ऐसी सुगंध फैली कि, जिसने स
भर दिया. इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशु
महाराज ! वह राक्षसी महामलीन मद्य मांस पीने खा
शरीरसे सुगंध कैसे निकली ? सो कृपा कर कहो. मुनि
श्रीकृष्णचंद्रने दूध पीनेसे मुक्ति दी इसकारण सुगंध निक
श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे पूतनावधोनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अध्याय ८.

यशोदा रानीका ब्रजवासियोंको भोजन देना.

श्रीशुकदेवमुनि बोले-

दो०-जिहि नक्षत्र मोहन भये, सो नक्षत्र परो आय॥
चारु बधाए रीति सब, कहत यशोदामाय ॥

जब सत्ताइस दिनके हरि हुए तब नंदजीने सब ब्राह्मण और ब्रज-
वासियोंको नौता भेजदिया. वे आए तिन्हें आदरमान कर बैठाया.
ब्राह्मणोंको बहुतसा दान दे विदा किया और भाइयोंको वागे ... आय

स समय यशोदा रानी परोसती थी,
जवासी हँस हँस खा रहेथे, गोपियां गीत
ऐसे मग्न थे कि, कृष्णकी सुरत किसीकोभी
भारी छकड़ेके नीचे पालनेमें अचेत सोतेथे कि
; तो पांवके अँगूठे मुंहमें दे रोने लगे और हिलक
र देखने. उसी औसरपर उडता हुआ एक राक्षस
कृष्णको अकेला देख अपने मनमें कहने लगा कि, यह तो
ड़ा बली उपजा है, पर आज मैं इससे पूतनाका वैर लूंगा. यों
मेंं ठान शकटमें आन बैठा तिसीसे उसका नाम शकटासुर हुआ.
जब गाड़ा चरचराय कर हिला तब श्रीकृष्णने बिलगते बिलगते एक
ऐसी लात मारी कि, वह मरगया और छकड़ा टूक टूक हो गिरा. तो
जितने बासन दूध दहीके थे सब फूट चूरहुये और गोरसकी नदीसी वह
निकली. गाड़ेके टूटने और भांड़ोंके फूटनेका शब्द सुन सब गोपी
ग्वाल दौड़ आए आतेही यशोदाने कृष्णको उठाय मुँह चूंम छातीसे
लगा लिया. यह अचरज देख सब आपसमें कहने लगे, आज बिधनाने
बड़ी कुशल की, जो बालक बच रहा और शकटही टूटगया.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले—हे राजा! जब हरि पांच महीनेके हुए तब कंसने तृणावर्तको पठाया, वह गोकुलमें आया. नंदरानी कृष्णको गोदमें लिये आंगनके बीच बैठी थी, कि एकाएकी कन्हैया ऐसे भारी हुए जो यशोदाने मारे बोझके गोदसे नीचे उतारे; इतनेमें एक ऐसी आंधी आई कि दिनकी रात होगई और लगे पेड़ उखड़ उखड़ गिरने, छप्पर उड़ने, तब व्याकुल हो; यशोदाजी श्रीकृष्णको उठाने लगी पर वे न उठे. ज्योंही उनके शरीरसे इनका हाथ अलग हुआ त्योंहीं तृणावर्त आकाशको ले उडा; और मनमें कहने लगा कि आज इसे बिनमारे न रहूंगा; वह तो श्रीकृष्णके लिये वहां यह विचार करताथा कि यहां यशोदाजीने जब आगे न पाया, तब रो रो कृष्ण कृष्ण कर पुकारने लगीं; उनका शब्द सुन सब गोपी ग्वाल आए, साथ हो

ढूंढ़नेको धाए, अँधेरेमें अटकलसे टटोल २ चलतेथे; तिसपरभी ठोकरें खाय गिर गिर पड़ते थे.

चौ०-ब्रजवनगोपी ढूंढ़त डोले, इतरोहिणी यशोदा बोले
नंद मेघधुनि करैं पुकार, ढूंढ़ें गोपी गोप अपार ॥

जब श्रीकृष्णने नंदयशोदासमेत सब ब्रजवासी अतिदुःखित देखे, तब तृणावर्तको फिराय शिलापर पटका. तुरंत उसका जी देहसे निकल सटका. आंधी थँभगई, उजाला हुआ, सब भूले भटके आये, देखे तो राक्षस मरा पड़ा है, श्रीकृष्ण छातीपर खेल रहेहैं. आतेही यशोदाने उठाय कंठसे लगालिया और दान ब्राह्मणोंको दिया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे शकटभंजनतृणावर्तवधो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ९.

यशोदाका श्रीकृष्णजीको ऊखलको बांधना.

श्रीशुकदेवजी बोले—हे राजा ! एक दिन वसुदेवजीने गर्गमुनि जो बड़े ज्योतिषी और यदुवंशियोंके पुरोहित थे उन्हे बुलाकर कहा कि तुम गोकुलमें जाओ और लडकेका नाम रख आओ.

दो०--गई रोहिणी गर्भसों, भयो पूत है ताहि।
किती आयु कैसा बली, कहा नामतो आहि ॥

और नंदजीके पुत्र हुआ है सोभी तुम्हें बुलाय गये हैं. सुनतेही गर्गमु[illegible]सन्न हो चले और गोकुलके निकट जा पहुँचे. तिसी समय

किसीने नंदजीसे आ कहा कि, यदुवंशियोंके पुरोहित गर्गमुनिजी आते है. यह सुन नंदजी आनंदसे ग्वाल बाल संग कर भेंट ले उठ धाए और पाटंबरके पांवड़े डालते बाजेगाजेसे ले आए. पूजा कर आसनपर बैठाय चरणामृत ले स्त्री पुरुष हाथ जोड़ कहने लगे—महाराज! बड़े भाग्य हमारे जो आपने दया कर दर्शन दे घर पवित्र किया. तुम्हारे प्रतापसे दो पुत्र हुए हैं, एक रोहिणीके एक हमारे. कृपा कर तिनका नाम धरिये. गर्गमुनि बोले ऐसे नाम रखना उचित नहीं, क्योंकि यह बात फैले कि गर्गमुनि गोकुलमें लड़केको नाम धरने गये हैं, और कंस सुन पावे तो वह यही जानेगा कि देवकीके पुत्रको वसुदेवके मित्रके यहां कोई पहुँचाय आया है, इसीलिये गर्ग पुरोहित गया है. यह समझ बूझके पकड़ मँगावेगा और न जानिये तुमपरभी क्या उपाधि लावे, इससे तुम फैलाव मत करो, चुप चाप घरमें नाम धरवा लो. नंद बोले गर्गजी! तुमने सच कहा, इतना कह घरके भीतर ले जाय बैठाया. तब गर्गमुनिने नंदजीसे दोनोंकी जन्मतिथि और समय पूंछ लग्न साध नाम ठहराया. और कहा सुनो नंदजी! वसुदेवकी रोहिणीके पुत्रके तो इतने नाम होवेंगे. संकर्षण, रेवतीरमण, बलदाऊ, बलराम, कालिंदीभेदन, हलधर और बलवीर. और कृष्णरूप जो तुम्हारा लड़का है उसके नाम तो अनगिंनत हैं. पर किसीसमय वसुदेवके यहां जन्मा इससे वासुदेव नाम हुआ और मेरे विचारमें आता है कि, ये दोनों बालक तुम्हारे चारों युगमें जब जन्में हैं तब साथही जन्मे हैं. नंदजी बोले इनके गुण कहो. गर्गमुनिने उत्तर दिया कि ये दूसरे विधाता हैं, इनकी गति कछु जानी नहीं जाती; पर मैं यह जानता हूं कि, कंसको मार भूमिका भार उतारेंगे; ऐसे कह गर्गमुनि चुपचाप चले गए और वसुदेवसे जा सब समाचार कहा. आगे दोनों बालक गोकुलमें दिन दिन बढ़ने लगे और बाललीला कर नंद यशोदाको सुख देने. नीले, पीले, झँगुले पहने, माथेपर छोटी छोटी लटुरियां बिथुरी हुईं, ताईं तगड़े बांधे, कठुले गलेमें डाले, खिलौने हाथमें लिये, खेलते आंगनके बीच घुट-

नों चल चल गिर पड़ें और तोतली तोतली बातें करें. रोहिणी और यशोदा पीछे पीछे लगीं फिरें इसलिये कि मत कहीं लड़के किसीसे डर ठोकर खागिरें. जब छोटे छोटे बछड़ों और बछियांओंकी पूंछ पकड़ पकड उठें और गिर पडें तब यशोदा और रोहिणी अतिप्यारसे उठाय छातीसे लगाय दूध पिलाय भांति भांतिके लाड़ लड़ावें. जद श्रीकृष्ण वडे भये तो एक दिन ग्वाल बाल साथ ले व्रजमें दधि माखनकीचोरीको गये.

चौपाई-सूने घरमें ढूंढ़ें जाय, जो पावेंसो देय लुटाय ॥
जिनको घरमें सोते पावें, तिनकी ढकी दही ढरकावें ॥

जहां छीकेपर रक्खा देखें तहां पीठीपर पठड़ा पठड़ेपै उलूखल धर साथियोंको खड़ाकर उसके ऊपर चढ़ उतार लें, कुछ खावें कुछ लुढ़ायदें, ऐसे गोपियोंके घर घर नित चोरी कर आवें. एकदिन सबने मता किया और गेहमें मोहनको आने दिया;ज्यों घर भीतर पैठे चाहे कि माखन दधि चुरायें त्यों गोपीने जाय पकड़कर कहा 'दिन [illegible] थे निशि भोर, अब कहां जाओगे माखनचोर' यों कह जब सब गोपी [illegible] कन्हैयाको लिये यशोदाके पास उलाहना देनेचलीं तब श्रीकृष्ण [illegible] ऐसे छल किया कि उसीके लड़केका हाथ उसे पकड़ादिया और आपने दौडके अपने ग्वालबालोंका संग लिया. वे चलीं चलीं नंदरानीके निकट आय पाओं पड़ बोलीं जो तुम बिलग न मानों तो हमकहें जैसी कुछ उपाधि कृष्णने ठानी है.

दोहा-दूध दही माखन मही, बचे नहीं व्रजमांझ ॥
ऐसी चोरी करतु हैं, फिरत भोर अरु सांझ ॥

जहां कहीं धरा ढका पातेहैं तहांसे निधडक उठा लातेहैं, कुछ खाते हैं, कुछ गिरातेहैं, जो कोई इनके मुखमें दही लगावे तासों उलटकर कहते हैं, तूनेई तो लगायाहै. इस भांति नित चोरी कर आतेथे. आज हमने पकड़ पाया सो तुमको दिखाने लाई हूं. यशोदा बोली-वीर ! तुम किसका लड़का पकड़ लाई ? कलसे तो घरसे बाहर नहीं निकला

मेरा कुँवर कन्हाई. ऐसाही सच बोलती हो ? यह सुन और अपनाही बालक हाथमें देख हँसकर लजाय रही. तब यशोदाजीने कृष्णको बुलायके कहा पुत्र ! किसीके यहां मत जाओ जो चाहो सो घरमेंसे ले खाओ.

चौ०-सुनकेकान्हकहततुतराय, मत मैया तू इन्हें पत्याय।
झूंठी गोपी झूंठा बोलैं, मेरे पीछे लागी डोलैं॥

कभी दोहनी बछडा पकडाती हैं, कभी घरकी टहल कराती हैं, मुझे द्वारे रखवाली बैठाय अपने काजको जाती हैं. फिर झूंठ मूठ आय तुमसे बातें लगाती हैं. यों सुन गोपी हरिमुख देख २ मुसक्कुराकर चली गईं. आगे एकदिन कृष्ण बलराम सखाओंके संग रेतमें खेलतेथे कि, जो कान्हने मट्टी खाई तो एक सखाने यशोदासे जा लगाई. वह क्रोधकर हाथमें छडी ले उठ धाई. माको रिसभरी आती देख मुँह पोंछ डरकर खडे होरहे. इन्होंने जातेही कहा—क्यों रे ! तूने मट्टी क्यों खाई ? कृष्ण डरते कांपते बोले मातु ! तुझसे किसने कहा ? ये बोली तेरे सखाने. तब मोहनने कोपकर सखासे पूंछा क्यों रे ! मैंने मट्टी कब खाई है ? वह भय कर बोला—भय्या ! मैं तेरी बात कुछ नहीं जानता क्या कहूंगा, जो कान्ह सखासे बतराने लगे तो यशोदाने उन्हें जा पकड़ा. तहा कृष्ण कहने लगे मैया ! तू मत रिसाय, कहीं मनुष्यभी मट्टी खाते हैं ? वह बोली मैं तेरी अटपटी बात नहीं सुनती, जो तू सचा है तो अपना मुख दिखा. ज्योंहीं श्रीकृष्णने मुख खोला त्योंही उसमें तीन लोक दृष्टि आये. तब यशोदाको ज्ञान हुआ. तो मनमें कहने लगी कि, मैं बडी मूरख हूं, जो त्रिलोकीके नाथको अपना सुतकर मानती हूं.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे बोले—हे राजा ! जब नंदरानीने ऐसा जाना तब हरिने जगतमोहनी अपनी माया फैलाई. इतनेमें मोहनको यशोदा प्यारकर कंठ लगाय घर लेआई. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे विश्वदर्शनं नाम नवमोऽध्यायः॥ ९॥

अध्याय १०

श्रीकृष्णजीका दही मथनेके समय माखनका चुराना.

एकदिन दहीमथनेकी बिरिया जान भोरही नंदरानी उठी और सब गोपियोंको जगाय बुलाय, वे आय घर झाड़ बहार लीप पोत अपनी अपनी मथनियां लेले दधि मथने लगीं. तहां नंदमहरिभी एक बड़ासा कोरा चरुआ ले इंडुयेपर रख चौकी बिछा नेता और रई मँगाय टटकी टटकी दहेंड़ियां बाँछ बाँछ रामकृष्णके लिये बिलोवन बैठी. तिस समय नंदके घर ऐसा शब्द दही मथनेका होरहाथा कि, जैसे मेघ गरजताहो इतनेमें कृष्ण जागे तो रोरोके मैया २ कर पुकारने लगे. जब उनका पुकारना किसीने न सुना तब आपही यशोदाके निकट आये और आंखें डबडबाय अनमने हो ठुसक ठुसक तुतलाय तुतलाय कहने लगे कि,मा! तुझे कैबेर बुलाया, पर मुझे कलेवा देने न आई. तेरा काज अब तक नहीं निबड़ा इतना कह मचल पड़े रई चरसे निकाल दोनों हाथ ड़ाल लगे माखन काढ़ काढ़ फेंकने, अंग लथेड़ने और पांव पटक पटक आंचल खेंच खेंच रोने. तब नंदरानी घबराय झुँझलायके बोली-बेटा यह क्या चाल निकली?

चौ० चल उठ तुझे कलेऊ देऊं, कृष्णकहे अब मैंनाहिंलेऊं
पहिलेक्योंनाहिंदीन्होमाय, अबतो मेरी लेइ बलाय॥

निदान यशोदाने फुसलाय प्यारसे मुह चूम गोदमें उठालिया और दधि माखन रोटी खानेको दिया. हरि हँस हँस खातेथे, नंदमहरि अंचलकी ओटकिये खिलारही थी इसलिये कि मत किसीकी दीठलगे. इस

बीच एक गोपीने आके कहा कि तुम तो यहां बैठीहो वहां चूल्हेपरसे सब दूध ऊफनगया. यह सुनतेही झट कृष्णको गोदसे उतार उठधाई और जाके दूध बचाया. यहां कान्ह दही महीके भाजन फोड़ रई तोड़ माखनभरी कमोरी ले ग्वालबालोंमें दौड़ आए, एक ऊखल औंधा धरा पाया तिस-पर जाबैठे और चारों ओर सखाओंको बैठाय लगे आपसमें हँस हँस बांट बांट माखन खाने. इतनेमें यशोदा दूध उतार आय देखे तो आंगन और तिबारेमें दही महीकी कीच होरही है. तब तो शोच समझ हाथमें छड़ी ले निकली और ढूँढ़ती २ वहां आई; जहां श्रीकृष्ण मंडली बनाय माखन खाय खिलाय रहेथे जातेही पीछेसे जा धरा तो हरि माको देख-तेही रोकर हाहाखाय लगे कहने कि मा! गोरस किसने लुढ़ाया? मैं नहीं जानूं, मुझे छोड़दे. ऐसे दिन वचन सुन यशोदा हँसकर हाथसे छड़ी डाल और आनंदमें मग्न हो रिसके मिस कंठ लगाय, कृष्णको ऊखलीसे बांधने लगी. तब श्रीकृष्णने ऐसा किया कि, जिस रस्सीसे बांधे वही छोटी होय. यशोदाने सारे घरकी रस्सियां मँगाई तोभी श्रीकृष्ण बांधे न गये. निदान माको दुःखित जान आपही बँधाई दिये नंदरानी बांध गोपियोंको खोलनेकी सौंह दे फिर घरकी टहल करने लगी. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे दामबन्धनोनाम दशमोऽध्यायः समाप्तः॥१०॥

अध्याय ११.

नलकूवरोंको शापमुक्त करना.

श्रीशुकदेवजी बोले—हे राजा! श्रीकृष्णचंद्रको बँधे बँधे पूर्वजन्मकी सुधी आई कि कुबेरके बेटोंको नारदने शाप दिया है, तिनका उद्धार

किया चाहिये. यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूंछा—महाराज! कुबेरके पुत्रोंको नारद मुनिने कैसे शाप दिया? सो समझाके कहो. शुकदेव मुनि बोले नलकूबर नाम कुबेरके दो लड़के कैलासमें रहते थे सो शिवकी सेवा कर अतिधनवान् हुए. एकदिन स्त्रियां साथ ले वे बनविहारको गये, वहां जाय मद पी मदमाते भये. तब रानियोंके समेत नंगे हो गंगामें न्हाने लगे और गलबहियां डाल डाल अनेक अनेक भांतिकी कलोलें करने, इतनेमें तहां नारदमुनि आ निकले. उन्हें देखतेही रानियोंने तो निकल कपड़े पहने; और ये मतवारे वहीं खड़े रहे. उनकी दशा देख मनमें नारदजी कहने लगे कि, इनको धनका गर्व हुआ है इसीसे मदमाते हो काम क्रोधको सुखकर मानते हैं. निर्द्धन मनुष्यको अहंकार नहीं होता, और धनवान्को धर्म अधर्मका बिचार कहां है? परंतु मूरख झूठी देहसे मोहकर भूले, संपत कुटुंब देखके भूले. और साधुजन धनमद मनमें न आने संपत विपत एकसम माने. इतना कह नारदमुनिने उन्हें शाप दिया कि इस पापसे तुम गोकुलमें जा वृक्ष हो; जब श्रीकृष्ण अवतार लेंगे तब तुम्हें मुक्ति देंगे. ऐसा नारदमुनिने उन्हें शाप दिया; तिसीसे वे गोकुलमें आ वृक्ष हुए, तब उनका नाम यमलार्ज्जुन हुआ.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले—महाराज! इस बातकी सुरत कर श्रीकृष्ण उखलीको घसीट वहां आगये; जहां यमलार्जुनके पेड़ थे. जातेही उन दोनों तरुवरोंके बीच ऊखलको आड़ा डाल एक ऐसा झटका मारा कि, वे दोनों जड़से उखड़ पड़े और उनसे दोपुरुष अति सुंदर निकल हाथ जोड़ स्तुति कर कहने लगे-हे नाथ! तुमबिन हमसे महापापियोंकी सुध कौन ले? श्रीकृष्ण बोले सुनो; नारदमुनिने तुमपर बड़ी दया की; जो गोकुलमें मुक्ति दी. उनकी कृपासे तुमने मुझे पाया, अब वर मांगो जो तुम्हारे मनमें हो. यमलार्जुन बोले—दीननाथ! यह नारदमुनिजीकीही कृपा है, जो आपके चरणपरसे और दर्शन किया. अब हमें किसी वस्तुकी इच्छा नहीं, पर इतनाहीं दीजे जो सदा तुम्हारी भक्ति

हृदयमें रहे. यह सुन वर दे, हँसकर श्रीकृष्णचन्द्रने तिन्हे बिदा किया.
इति श्रीलल्लूलाल० प्रेमसागरे यमलार्जुनमोक्षो नाम एकादशोऽध्यायः

अध्याय १२.

वत्सासुर और बकासुरका वध.

श्रीशुकदेव मुनि बोले हे राजा ! जब वे दोनों तरु गिरे तब उनका शब्द सुन नंदरानी घबराकर दौड़ी दौड़ी वहां आई, जहां कृष्णको ऊखलमें बांध गई थी; उनके पीछे सब गोपी ग्वालभी आये जब श्रीकृष्णको वहां न पाया तब व्याकुल हो यशोदा मोहन मोहन पुकारती और कहती चली. कहां बँधा था भाई ! कहीं किसीने देखा मेरा कुँवरकन्हाई ? इतनेमें सोंहींसे आ एक बोली ब्रजनारी, कि दो पेड गिरे तहां बचे मुरारी, यह सुन सब आगे जाय देखें तो सचही वृक्ष उखड़े पड़े हैं और कृष्ण तिनके बीच ओखीसे बँधे सुखसे बैठे हैं. जाते ही नंदमहरिने ऊखलसे खोल कान्हको रोके गलेसे लगा लिया. और सब गोपियां डरा जान लगीं चुटकी ताली देदे हँसाने. तब नंद उपनंद आपसमें कहने लगे कि, ये युगानुयुगके रूख जमे हुए कैसे उखड़ पड़े ? यह बड़ा अचंभा जीमें आताहै; कछु भेद इसका समझा नहीं जाता; इतना सुनके एक लड़केने पेड़ गिरनेका ब्योरा ज्योंका त्यों कहा; पर किसीके जीमें न आया. एक बोला-ये बालक इस भेदको क्या समझे? दूसरेने कहा कदाचित यही हो, हरिकी गति कौन जाने ? ऐसी अनेक अनेक भाँतिकी बातें कर श्रीकृष्णको ले सब

आनंदसे गोकुलमें आये; तब नंदजीने बहुतसा दान पुण्य किया कितने एक दिन बीते कृष्णका जन्मदिन आया, तो यशोदा रानीने सब कुटुंबको नोत बुलाया; और मंगलाचार कर वर्षगांठ बांधी. जब सब मिलकर जेवन बैठे तब नंदराय बोले सुनो भैया! 'अब इस गोकुलमें रहना कैसे बने, दिन दिन होने लगे उपद्रव घने चलो कहीं ऐसे ठौर जावें जहां तृणजलका सुख पावें. उपनंद बोले—वृंदावन जाय बसिये. यह बचन सुन नंदजीने सबको खिलाय पिलाय पानदे बैठाया व त्योंहीं एक ज्योतिषीको बुलाय यात्राका मुहूर्त पूंछा. उसने बिचारके कहा इस दिशाकी यात्राको कलका दिन अति उत्तम है. बामयोगिनी पीछे दिशाशूल और सन्मुख चंद्रमा है, आप निःसंदेह भोरही प्रस्थान कीजे. यह सुन तिससमय तो गोपी ग्वाल अपने अपने घर गये; पर सबेरेही उठ अपनी अपनी बस्तु भांड़े गाड़ोंपर लाद, आ इकट्ठे भये. तब कुटुंबसमेत नंदभी साथ होलिये. और चले चले नंदजी उधर सांझसमय जा पहुँचे और वृंदादेवीको मनाय वृंदावन बसाया; तहां सब सुख चैनसे रहने लगे. जब श्रीकृष्ण पांच वर्षके हुए तब मासे कहने लगे कि, मा! मैं बछड़े चरावने जाऊंगा. तू बलदाऊसे कहदे कि, मुझे बनमें अकेला न छोड़ें, वह बोली—पूत! 'बछड़े चरावनेवाले बहुत हैं दास तुम्हारे, तुम मत पलओट हो मेरे नयनआगेसे प्यारे' कान्ह बोले—जो मैं बनमें खेलने जाऊंगा तो खानेको खाऊंगा नहीं तो नहीं. यह सुन यशोदाने ग्वाल बालोंको बुलाय कृष्ण बलरामको सौंपकर कहा कि, तुम बछड़े चरावने दूर मत जाइयो और सांझ न होते दोनोंको संग ले घर आइयो, बनमें इन्हें अकेले मत छोड़ियो, साथही साथ रहियो, तुम इनके रखवाले हो. ऐसे कह कलेवा दे रामकृष्णको उनके संग करदिया. वे जाय यमुनाके तीर बछड़े चराने लगे और ग्वाल बालोंमें खेलने कि, इतनेमें कंसका पठाया कपटरूपलिये वत्सासुर आया. उसे देखतेही सब बछड़े डरकर जिधर तिधर भागे. तब श्रीकृष्णजीने बलदेजीको सैनसे चिताया कि भाई! यह कोई राक्षस आया. ज्योंहीं

आगे चरता २ वह घात करनेको निकट पहुँचा, त्योंही श्रीकृष्णने पिछले पांव पकड़ फिराय कर ऐसा पटका कि, उसका जी घटसे निकल सटका.

वत्सासुरका मरना सुन कंसने बकासुरको भेजा. वह वृंदावनमें आके अपनी घात लगाकर यमुनाके तीरपर बकसम जा बैठा. उसे देख मारे भयके ग्वालबाल कृष्णसे कहने लगे कि भैया! यह तो कोई राक्षस बगुला बन आया है, इसके हाथसे कैसे बचेंगे ? ये तो इधर कृष्णसे यों कहतेही थे, और उधर वह जीमें यह विचारता था कि, आज इसे विना मारे न जाऊंगा. इतनेमें जो श्रीकृष्ण उसके निकट गये तो उसने इन्हें चोंचमें उठाय मुँह मूंद लिया. ग्वालबाल व्याकुल हो, चारों ओर देख रोरो पुकार पुकार लगे कहने-हाय ! हाय ! यहां तो हलधरभी नहीं हैं. हम यशोदासे क्या जाय कहेंगे ? इनको अतिदुःखित देख श्रीकृष्ण ऐसे ताते हुये कि वह मुखमें रख न सका. जो उसने इन्हें उगला तो इन्होंने उसकी चोंच पकड ओंठ पांव तले दबाय चीरडाला और बछड़े घेर सखाओंको साथ ले हँसते खेलते घर आए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे वत्सासुरबकासुरवधोनाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अध्याय १३.

अघासुरका वध.

श्रीशुकदेव मुनि बोले--सुनो महाराज ! प्रात होतेही एकदिन श्रीकृष्ण बछड़े चरावने बनको चले, तिनके साथ सब ग्वालबालभी अपने २

घरसे छाक लेले होलिये, और हारमें जाय छाक धर बछड़े चरनेको छोंड़ लगे खड्ड(गेरू)तनमें चित्र विचित्र लगाने व वनके फल फूलोंके गहने बनाय बनाय पहन पहन खेलने और पशु पक्षियोंकी बोली बोल भांति भांतिके कुतूहल कर नाचने गाने. इतनेमें कंसका पठाया अघासुर नाम राक्षस आया. सो अतिबड़ा अजगर हो मुह पसार बैठा व सब सखाओं-समेत श्रीकृष्णभी खेलते खेलते वहीं जा निकले, जहां वह घात लगाये मुँह बाये बैठाथा, दूरसे उसे देख ग्वालबाल आपससें लगे कहने कि, भाई! यह तो कोई पहाड़ है कि जिसकी कंदरा इतनी बड़ी है. ऐसे कहते और बछड़ा चराते उसके पास पहुँचे तब एक लड़का उसका मुख देख बोला—भाई! यह तो कोई अति भयावनी गुफा है, इसके भीतर न जावेंगे, हमें देखतेही भय लगता है. फिर तोष नाम सखा बोला—चलो इसमें घुस चलैं, कृष्ण साथ रहते हम क्या डरें? जो कोई असुर होगा तो बकासुरकी रीतसे मारा जायगा.

यों सब सखा खड़े खड़े बातें करतेही थे कि, उसने एक ऐसी लंबी श्वास खैंची कि बछड़ों समेत सब ग्वालबाल उसके मुखमें जा पड़े. विष भरी ताती बाफ जो लगी तो लगे व्याकुल हो, बछड़े रांभने और सखा पुकारने कि, हे कृष्ण प्यारे! बेग सुध ले नहीं तो सब जले मरते हैं. उनकी पुकार सुनतेही आतुर हो श्रीकृष्णभी उसके मुख आ पड़गये. उसने प्रसन्न हो मुँह मूँद लिया; तब श्रीकृष्णने अपना शरीर इतना बढ़ाया कि, उसका पेटही फटगया. सब बछेरे और ग्वालवाल निकल पड़े. तिस समय आनंद कर देवताओंने फूल और अमृत बरसाय सबकी तपन हरली. तब ग्वालबाल श्रीकृष्णसे कहने लगे कि, भैया! इस असुरको मार आज तो तूने भले बचाये. नहीं तो सब मरचुकेथे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अघासुरवधोनाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अध्याय १४ वां.

ब्रह्माजीका बछड़ोंको चुराकेजाना.

श्रीशुकदेव मुनि बोले-हे राजा! ऐसे अघासुरको मार श्रीकृष्णचंद्र बछड़े घेर सखाओंको साथ ले आगे चले. कितनी एक दूर जाय कदंबकी छाँहमें खड़े हो बंशी बजाय सब ग्वालबालोंको बुलाय कर कहा-भैया! यह भली ठौर है. इसे छोंड़ आगे कहांजायँ? बैठो यहीं छाकें खावें. सो सुनतेही उन्होंने बछड़े तो चरनेको हांक दिये आप आक, ढाँक, डब, कदंब, कमलके पत्ते लाय पत्तलें दोनें बनाय झार बुहार श्रीकृष्णके चारों ओर पांति बैठगये और अपनी अपनी छाकें खोल खोल लगे आपसमें परूसने, जब परूसचुके तब श्रीकृष्णचंद्रने सबके बीच खड़े हो पहले कौर उठाय खानेकी आज्ञा दी, वे खाने लगे तिनमें मोरमुकुट धरे बनमाला गले पहने लकुट लिये त्रिभंगी छबि किये पीतांबर पहने पीतपट ओढ़े हँस हँस श्रीकृष्णभी अपनी छाकसे सबको खिलातेथे और आप एक एकके पनवारेसे उठाय उठाय चाख चाख खट्टे तीखे चरपरेका स्वाद कहते जातेथे व उस मंडलीमें ऐसे सुहावने लगतेथे कि, जैसे ताराओंमें चंद्रमा. तिस समय ब्रह्माआदि सब देवता अपने अपने बिमानोंमें बैठे आकाशसे ग्वालमंडलीका सुख देखतेथे, इतनेमें ब्रह्मा आय सब बछड़े चुराय लेगया. वहां ग्वालबालोंने खाते चिंताकर श्रीकृष्णसे कहा-भैया! हम तो निश्चिंताईसे बैठे खाय रहेहैं, न जानिये बछड़े कहां निकल गये होयँगे?

चौ०-तबग्वालनसोंकहतकन्हाई। तुमसबजेंवतरहियोभाई
जिनकोउउठैकरैओसेर। सबकेबछराल्याऊंघेर॥

ऐसे कह कितनी एक दूर बनमें जाय जब जाना कि यहांसे बछड़े ब्रह्मा हर लेगया. तब श्रीकृष्ण वैसेही और बनाय लाये. यहां आय देखें ग्वालबालोंकोभी उठाय लेगयाहै फिर उन्होंने जैसे थे तैसेही बनाय और सांझ हुई जान सबको साथ ले वृंदावन आये. सब ग्वालबाल अपने घर गये पर किसीने यह भेद न जाना कि ये हमारे बालक और बछड़े नहीं. वरन औरभी दिन दिन प्रति नित नयी प्रीति बढ़ती चली:

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले-महाराज! वहां ब्रह्मा ग्वालबाल बछड़ोंको लेजाय एक पर्वतकी कंदरामें भर उसके मुँहपर एक पत्थरकी शिला धर भूलगया. और यहां श्रीकृष्णचंद्र नित नई नई लीला करते थे. इतनेमें एक बर्ष बीत गया. तब ब्रह्माको सुध हुई तो मनमें कहने लगा कि, मेरा तो एकपलभी न हुआ पर नरका वर्ष होगया. इसमें अब चल देखा चाहिये कि, ब्रजमें ग्वालबाल बछड़ों बिना क्या गति भई? यह बिचार उठ कर वहां आया, जहां कंदरामें सबको मूंद गया था. शिला उठाय देखे तो लड़के और बछड़े घोर निद्रामें सोये पड़े हैं. वहांसे चल वृंदावनमें आय बालक और बछरे सब ज्योंके त्यों देख अचंभेमें हो कहने लगा कैसे ग्वाल बछड़े यहां आये? कैसे कृष्ण नये उपजाये? इतना कह फिर कंदराको देखने गया. जितनेमें वह वहांसे देखकर आवे तितने बीच यहां श्रीकृष्णने ऐसी माया करी कि जितने ग्वालबाल और बछड़े थे, सब चतुर्भुज होगये और एक एकके आगे ब्रह्मा रुद्र इंद्र हाथ जोड़े खड़े हैं.

चौ०-देखबिरंचिचित्रसोभयो। भूलोज्ञानध्यानसबगयो॥
जनुपषाणदेवीचौमुखी। भईभक्तिपूजाबिनदुखी॥

और डरकर नयन मूँद लगा थर थर कांपने. जब अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रने जाना कि ब्रह्मा अतिव्याकुल है, तब सबका अंश हरलिया. और आप अकेलेही रहगये, ऐसे कि जैसे भिन्न भिन्न बादल एक हो

जाय. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे ब्रह्मावत्सहरणं श्रीकृष्णमायाकरणं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अध्याय १५ वां.

ब्रह्मदेव श्रीकृष्णजीकी स्तुति करते हैं.

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा ! जब श्रीकृष्णने अपनी माया उठाली तब ब्रह्माको अपने शरीरका ज्ञान हुआ तो ध्यानकर भगवानके पास आ अति गिड़ गिड़ाय पांओं पड़ विनती कर हाथ बांध खड़ा हो कहने लगा कि, हे नाथ ! तुमने बड़ी कृपा करी जो मेरा गर्व दूर किया इसीसे अंधा हो रहाथा, ऐसी बुद्धि किसकी है जो तुम्हारी दया विन तुम्हारे चरित्रोंको जाने. तुम्हारी माया सबको मोहे है. ऐसा कौन है ? कि जो तुम्हें मोहे ? तुम सबके कर्ता हो. तुम्हारे रोम रोममें मुझसे ब्रह्मा अनेक पड़े हैं, मैं किस गिनतीमें हूं ? दीनदयाल ! अब दया कर अपराध क्षमा कीजे, मेरा दोष चित्तमें न लीजे.

इतना सुन श्रीकृष्णचंद्र मुसुकराये. तब ब्रह्माने सब ग्वालबाल और बछड़े सोते लादिये. और लजित हो स्तुति कर अपने स्थानको गये. जैसी मंडली आगे थी तैसीही बनगई. वर्षदिन बीता सो किसीने न जाना, जो ग्वालबालोंकी नींद गई, तो कृष्ण बछरे घेर लाये. तब तिनमेंसे लड़के बोले भय्या ! तू तो बछड़े बेग ले आया, हम भोजन करनेभी न पाये.

चौ० सुनतबचनहँसकहतबिहारी, मोकोंचिंताभईतिहारी।
निकटचरतएकठोरेपाए, अबघरचलोभोरके आए ॥

ऐसे आपसमें बतराय बछरुओंको ले सब हँसते खेलते अपने घर आये. इति श्रीलल्लूला० प्रेमसागरे ब्रह्मस्तुतिकरणं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

अध्याय १६.

बलदेवजीसे धेनुकासुरका वध.
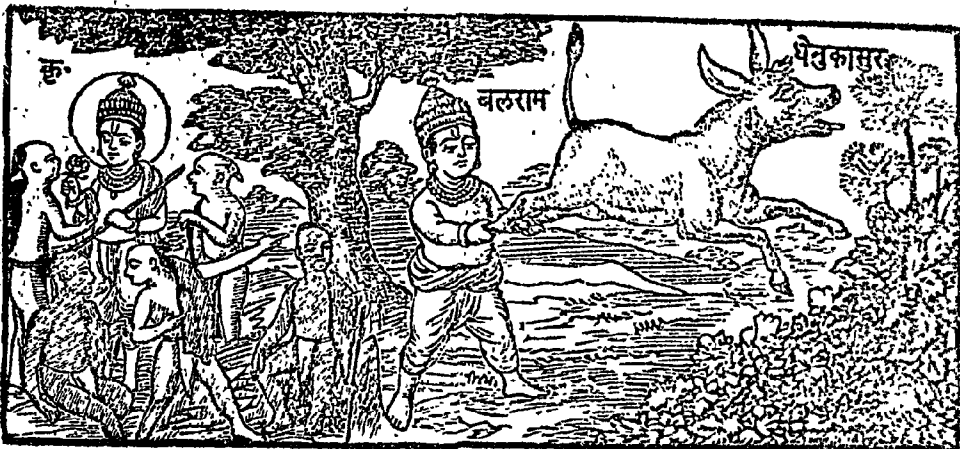
श्रीशुकदेवजी बोले हे महाराज! जब श्रीकृष्ण आठ वर्षके हुए तब एक दिन उन्होंने यशोदासे कहा कि, मा मैं गायें चरावन जाऊंगा? तू बाबासे समझायकर कह जो मुझे ग्वालोंके साथ पठायदें, सुनतेही यशोदाने नंदजीसे कह. उन्होंने शुभ मुहूर्त ठहराय ग्वाल बालोंको बुलाय कार्तिक शुदि आठेंको राम कृष्णसे खिरक पुजवाय विनती कर ग्वालोंसे कहा कि, भाइयो! आजसे गौ चरावन अपने साथ राम कृष्णकोभी ले जायाकरो; पर इनके पासही रहियो वनमें अकेलेको न छांड़ियो. ऐसे यह छाक दे कृष्ण बलरामके दहीका तिलक कर सबके संग बिदा किया. वे मगन हो ग्वालबालोंसमेत गायें लिये बनमें पहुँचे. वहां बनकी छबि देख श्रीकृष्ण बलरामजीसे कहने लगे-दाऊ! यह तो अतिमनभावनी सुहावनी ठौर है. देखो कैसे वृक्ष झुक रहे हैं और भांति भांतिके पशु पक्षी कलोलें करते हैं; ऐसा कह एक ऊंचे टीलेपर जा चढ़े और लगे डुपट्टा फिराय फिराय कारी, गोरी, पीरी, धौरी, धूमरी, भूरी, नीली, कह कह पुकारने लगे. सुनतेही सब गायें रांभती हांफती दौड़ आईं तिस समय ऐसी शोभा होरही थी कि, जैसे चहूँ ओरसे वर्ण वर्णकी घटा घिर आई होयँ. फिर श्रीकृष्णचंद्र गो चरावनको हांक भाईके

साथ छाक खाय कदंबकी छाहँमें एक सखाकी जाघपर शिरधर सोगये कितनी एक बेरमें जो जागे तो बलरामजीसे कहा–

चौ०दाऊ सुनो खेल यहकरें, बोंदीके चटका यों परें ॥
ज्यों सावन घन बुंदनि झरे, न्यारो कटक बांधके लरें ॥

इतना कह आधी आधी गायें और ग्वालबाल बांट लिये. फिर बनके फल फूल तोड़ झोलियोंमें भर भर लगे, तुरही, भेरी, भापू, डफ, ढोल, दमामें मुखहीसे बजाय २ लड़के और मार मार पुकारने ऐसे कितनी एक बेर तक लड़े फिर अपनी अपनी टोली निराली ले गायें चरावने लगे. इस बीच बलदेवजीसे किसी सखाने कहा-महाराज! यहांसे थोडीहीदूर एक तालवन है तिसमें अमृतसमान फल लगे हैं, वहां गधेके रूपमें एकराक्षस रखवाली करताहै. इतनी बात सुनतेही बलरामजी ग्वालबालोंसमेत उस बनमें गये. और लगे ईंट, पत्थर, ढेला, लाठियां मार मार फल झाडने लगे. तिनका शब्द सुनकर धेनुकनाम खर रेंकता आया और उसने आतेही फिरकर बलदेवजीकी छातीमें एक दुलत्ती मारी, तब इन्होंने उसे उठायकर पटका. फिर वह लोट पोटके उठा और धरती खूंद खूंद कान दबाय हटहट दुलत्तियां झाड़ने लगा. इस तरह बड़ी बेर लग लड़ता रहा, निदान बलरामजीने उसकी दोनों पिछली टांगें पकड़ फिराय कर एक ऊंचे पेंड़पर फेंका कि गिरतेही मरगया और उसके साथ वह रूखभी टूट पड़ा. दोनोंके गिरनेसे अतिभारी शब्द हुआ उस सारे बनके वृक्ष हिल उठे.

चौ०-देख दूरसों कहत मुरारी, हालेरूखशब्द भयोभारी॥
तबहिं सखा हलधरपे आये, चलहु कृष्ण तुमबेग बुलाये॥

एक असुर मारा है सो पड़ा है इतनी बातके सुनतेही श्रीकृष्णभी बलरामजीके पास जा पहुँचे तब धेनुकके साथी जितने राक्षस थे सो सब चढ़आए तिन्हें श्रीकृष्णचंद्रजीने सहजही मार गिराया. तब तो सब ग्वालबालोंने प्रसन्न हो निधड़क फल तोड़ मनमानती झोलियां भरलीं और गायें घेर लाय श्रीकृष्णजीने बलदेवजीसे कहा-महाराज! बड़ी बेरसे आये हैं. अब घरको चलिये. इतना बचन सुनतेही दोनों

भाई गायोंके लिये ग्वालबालोंसमेत हँसते खेलते साझको घर आये और जो फल लायेथे सो सारे वृन्दावनमें बँटवाया, सबको बिदादे आप सोये. फिर भोरके तड़के उठतेही श्रीकृष्ण ग्वालबालोंको बुलाय कलेऊ कर गायें ले बनको गये. और गौ चराते चराते कालीदह जा पहुँचे. वहां ग्वालोंने गायोंको यमुनामें पानी पिलाया और आपभी पिया. जो जल पी वहांसे उठे तो गायेंसमेत मारे विषके सब लोट गये, तब श्रीकृष्णचंद्रने अमृतकी दृष्टिसे देख सबको जिवाया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे धेनुकवधोनाम षोड़शोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अध्याय. १७

कालियामर्दन.

श्रीशुकदेवजी बोले-महाराज ! ऐसी सबकी रक्षा कर श्रीकृष्ण ग्वालबालोंके साथ गेंद खेलने लगे. और जहां कालियानाग था तहां चार कोश तक यमुनाका जल उसके विषसे ऐसा खौलता था कि;कोई पशु पक्षी वहां न जा सक्ता. जो भूलकर जाता सो लपटसे झुलस उस काली दहमें गिरपडता और तीरमें कोई रूखभी न उपजता. एक अविनाशी कदंब तटपर था सोई था. राजाने पूंछा महाराज ! वह कदंब कैसे [illegible] मुनि बोले एक समय अमृत चोंचमें लिये गरुड उस पेंड़पर आ बै[illegible] तिनके मुहसे एक बूंद गिरा था इसलिये वह रूख बचा.

इत[illegible] था सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा महाराज ! श्रीकृष्णच[illegible] कालियाका मारना जीमें ठान गेंद खेलते २ कदंबपर जा चढ़े और [illegible] चिसे सखाने गेंद चलाया तो यमुनामें गिरा उसके

साथ श्रीकृष्णभी कूदे इतनेमें कूदनेका शब्द कानसे सुनकर वह कालिया लगा विष उगलने और अग्निसम फुंकार मार मार और कहने कि, यह ऐसा कौन है ? जो अबलग दहमें जीता है. कहीं अविनाशी कदंब तो मेरा तेज न सहिके टूट पडा ? कि, कोई बडा पशु पक्षी आया है ? जो अबतक जलमें आहट होता है, यों कह वह एक सहस्र फनोंसे विष उगलनेलगा और श्रीकृष्ण पैरते फिरते थे. तिस समय सखा रोरो हाथ पसार पसार पुकारतेथे. गायें मुँह बाये चारों ओर रांभती हूंकती फिरतीथीं, ग्वाल न्यारेही कहतेथे श्याम ! बेग निकल आइये नहीं तो तुम बिन घर जाय; हम क्या उत्तर देंगे ? ये तो यहां दुखित हो, यों कह रहेथे. इतनेमें किसीने वृंदावनमें जा सुनाया कि, श्रीकृष्ण कालीदहमें कूद पड़े. यह सुन रोहिणी, यशोदा, और नंद गोपीगोपसमेत रोते पीटते उठधाये; और सबके सब गिरते पड़ते कालीदह आये. तहां श्रीकृष्णको न देख व्याकुल हो नंदरानी दौर पानीमें गिरने चली तब गोपियोंने बीचही जा पकड़ा और ग्वाल बाल नंदजीको थाम ऐसा कह रहेथेः–

चौ०–छांड़महाबनयाबन आए,तौहूंदैत्यनअधिकसताए।
बहुतकुशलअसुरनतेपरी, अबक्योंदहतेनिकसतहरी ॥

कि इतनेमें पीछेसे बलदेवजीभी वहां आए और सब ब्रजबासियोंको समझाकर बोलेः–

चौ०–आवतकृष्णअभीअविनाशी, तुमकाहेकोहोतउदासी ॥
आजसाथअयोंमैंनाहीं, मोंबिनहरिपैठेदहमाहीं ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि महाराज ! इधर तो बलरामजी सबको यों आशा भरोसा देते थे और उधर श्रीकृष्ण जो पैरकर उसके पास गये तो वह आ, इनके सारे शरीरमें लिपट गया. तब श्रीकृष्ण ऐसे मोटे हुए कि उसे छोड़तेही बन आया फिर ज्यों ज्यों वह फुंकारें मार मार इनपर फन चलाताथा त्यों त्यों ये अपनेको बचाते थे. निदान ब्रजवासियोंको अतिदुःखित जान श्रीकृष्ण एकाएकी उचक उसके शिरपर जा चढ़े.

दोहा--तीनलोकको बोझ ले, भारी भये मुरारि ॥
फन फन पर नाचत फिरें, बाजे पग पग तारि ॥

तब तो मारे बोझके काली मरने लगा. और फन पटक पटक उसने जीभें निकालदीं, तिनसें लोहूकी धार बह चली. जब विप और बलका गर्व गया तब उसने मनमें जाना कि आदिपुरुषने अवतार लिया, नहीं तो इतनी किसीमें सामर्थ्य है? जो मेरे विपसे बचे. यह समझ जीवकी आशा तज शिथिल होरहा, तब नागपत्नीने आय हाथ जोड़ शिर नवाय विनती कर श्रीकृष्णचंद्रसे कहा—महाराज! आपने भला किया जो इस दुःखदायी अति अभिमानीका गर्व दूर किया. अब इसके भागजागे जो तुम्हारा दर्शन पाया. जिन चरणोंको ब्रह्माआदि सब देवता जप तप कर ध्यावते हैं सो ए पद कालीके शीशपर बिराजते हैं, इतना कह फिर बोली—महाराज! मुझपर दया कर इसे छोड़ दीजे, नहीं तो इसके साथ मेराभी वध कीजे. क्योंकि स्वामीबिन स्त्रीको मरणही भला है. और जो बिचारिये तो इसकाभी कुछ दोष नहीं, यह जातिस्वभाव है कि दूध पिलाये विष बढ़े.

इतनी बात नागपत्नीसे सुन श्रीकृष्णचंद्र उसपरसे उतर पड़े तब प्रणामकर हाथ जोड़ काली बोला—नाथ! मेरा अपराध क्षमा कीजे. मैंने अनजाने आपपर फन चलाये. हम अधम जाति सर्प; हमें इतना ज्ञान कहां जो तुम्हे पहिंचानें. श्रीकृष्ण बोले-भला जो हुआ सो हुआ, पर अब तुम यहां न रहो. कुटुंबसमेत रमणकद्वीपमें जा बसो. यह सुन कालीने डरते कांपते कहा—कृपानाथ! वहां जाऊं तो गरुड मुझे खा जायगा. उसके भयसे मैं यहां भाग आयाहूं, श्रीकृष्ण बोले अब तू निर्भय चलाजा, हमारे पदके चिह्न तेरे शिरपर देख तुझसे कोई न बोलेगा. ऐसे कह श्रीकृष्णचंद्रजीने तिसी समय गरुडको बुलाय कालीके मनका [illegible]य दिया. तब कालीने धूप दीप नैवेद्य समेत विधिसे पूजा कर बहुत[illegible] श्रीकृष्णके आगे धर हाथ जोड़ बिनती कर विदा हो कहा:—

चौ०—[illegible] धरीनाचेमोमाथा, यहमनप्रीतिराखियोनाथा॥
असकहि [illegible]ड़ीजोरे हाथा, रमणकगयोकुटुंबकेसाथा ॥

यों कह दंडवत् कर काली तो कुटुंबसमेत रमणकद्वीपको गया, और श्रीकृष्णचंद्र जलसे बाहर आये. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कालीमर्दनोनाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अध्याय. १८ वां.

श्रीकृष्णजीका दावाग्नि भक्षण.

इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेजीसे पूंछा महाराज! रमणकद्वीप तो भली ठैर थी काली वहांसे क्यों आया? और किसलिये यमुनामें रहा? यह मुझे समझाकर कहो, जो मेरे मनका संदेह जाय. श्रीशुकदेवजी बोले राजा! रमणकद्वीपमें हरिका वाहन गरुड़ रहता है सो अति बलवान् है तिससे वहांके बड़े बड़े सर्पोंने हार मान उसे एक सांप नित देना कहा. नित एक रुखपर धर आवें. वह आवे और खाजाय. एक दिन कद्रुका पुत्र काली अपने विषका घमंडकर गरुड़का भक्ष खाने गया. इतनेमें वहां गरुड़ आया. और दोनोंमें अति युद्ध हुआ. निदान हार मान काली अपने मनमें कहने लगा कि, अब इसके हाथसे कैसे बचूं और कहां जाऊं? इतना कह शोचा कि वृंदावनमें यमुनाके तीर जा रहूं तो बचू. क्योंकि यह वहां नहीं जा सकता. ऐसे विचार काली वहीं गया. फिर राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवमुनिसे पूंछा कि, महाराज! गरुड़ वहां क्यों नहीं जा सकता था सो भेद समझाकर कहो. शुकदेवजी बोले हे राजा! किसी समय वहां यमुनाके तटपर सौभरि ऋषि बैठे तप करतेथे. तहां गरुड़ने जाय एक मछली मार खाई तब ऋषिने क्रोध कर उसे यह शाप दिया कि, तू इस ठौर फिर आवेगा तो जीता न रहेगा.

इस कारण वह वहां न जा सक्ताथा और जबसे काली वहां गया तभीसे उस थलका नाम कालीदह होगया.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! जब श्रीकृष्णचंद्र निकले तब नंद यशोदाने आनंद कर बहुतसा दान पुण्य किया. पुत्रका मुख देख नयनोंको सुख दिया, और सब ब्रजवासियोंके भी जीमें जी आया. इसबीच सांझ हुई तो आपसमें कहने लगे कि, अब दिनभरके हारे थके भूंखे प्यासे घर कहां जाँयगे? आजकी रात यहीं कटै भोर हुए वृंदावन चलेंगे. यह कह सब सोय रहे.

चौ०-आधी रात बीत जब गई, भारी कारी आंधी भई।
दावाअग्नि लगी चहुँ ओर, अतिझरवरैं वृक्षबन ठौर॥

आग लगतेही सब चौंक पड़े और घबरायकर चारों ओर देख देख हाथ पसार २ लगे पुकारने कि—हे कृष्ण! हे कृष्ण!! इस आगसे वेग बचाओ नहीं तो यह क्षणभरमें सबको जलाय भस्म करदेगी; जब नंद यशोदासमेत सब ब्रजवासियोंने ऐसा पुकारा तब श्रीकृष्णचंद्रजीने उठतेही वह आग पलमें पी सबके मनकी चिंता दूर की, भोर होतेही सब वृंदावन आए, घर घर आनंद मंगल हुए बधाये. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे दावाग्निमोचनोनाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय १९.

बलदेवजीका प्रलंबासुरको मारना.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले—महाराज! अब मैं ऋतुवर्णन करता हूं कि, जैसे श्रीकृष्णचंद्रने तिनमें लीला करी सो चित्त दे सुनो.

प्रथम ग्रीष्म ऋतु आई तिसने आतेही [illegible]ब संसारका सुख लेलिया. और धरती आकाशको तपाय अग्नि[illegible] किया. पर श्रीकृष्णके प्रताप-से वृंदावनमें सदा वसंतही रहे. जहां घने घने कुंजोंके वृक्षोंपर वेलें लह-लहा रहीं, बर्णबर्णके फूल फूले हुए, तिनपर भौरोंके झुंडके झुंड गुंजरहे, अबोंकी डालियोंपै कोयल कूहक रहीं, ठंढी ठंढी छांओंमें मोर नाचरहे, सुगंध लिये मीठी मीठी पवन बह रही और बनके एक ओर यमुना न्यारीही शोभा दे रहीथी. तहां कृष्ण बलराम गायें छोड, सब सखासमे-त आपसमें अनूठे अनूठे खेल खेल रहेथे कि, इतनेमें कंसका पठाया ग्वा-लका रूप बनाय प्रलंबनाम राक्षस आया. उसे देखतेही श्रीकृष्णचंद्रने बलदेवजीको सैनसे कहाः—

चौ० अपनोसखानहींबलबीर, कपट रूपयहअसुरशरीर ॥
याकेबधको करोउपाय, ग्वालरूप मारोनहिंजाय ॥
जबयहरूपधारिहै अपनो, तबतुमयाहिततक्षणहनो ॥

इतनी बात बलदेवजीको जताय श्रीकृष्णजीने प्रलंबको हँसकर पास बुलाय हाथ पकड़के कहा.

चौ० सबतेनीकोभेषतिहारो, भलाकपटबनिमित्रहमारो॥

यों कह उसे साथ ले आधे ग्वाल बाल बांट लिये और आधे बल-रामजीको दे, दो लड़के बैठाय लगे फल फूलोंका नाम पूंछने और बताने, इतनेमें बताते २ श्रीकृष्ण हारे, बलदेव जीते तब श्रीकृष्णजीकी ओरके ग्वाल बलदेवजीके साथियोंको कांधेपर चढ़ाय ले चले तहां प्रलंब बलरामजीको सबसे आगे ले भागा और बनमें जाय उसने अप-नी देह बढ़ाई तिस समय उस काले पहाडसे राक्षसके ऊपर बल-देवजी ऐसे शोभायमान थे जैसे श्यामघटापै चांद और कुंडलकी दमक बिजलीसी चमकतीथी, पसीना मेहसा बरसताथा, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज ! ज्योंहीं अकेले पाय यह बलरामजीको मारनेको तैयार हुआ, त्योंहीं उन्होंने मारे घूंसोंके उसे मारगिराया । इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे प्रलंबवधो-नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अध्याय २०.

श्रीकृष्णका कदंबपर चढ़कर वंशी वजाना और विछुड़ेहुये
ग्वालबाल और गैयांको इकट्ठा करना.

श्रीशुकदेजी बोले हे राजा ! प्रलंबको मारके चले बलराम तभी सोहीं सो सखाओंसमेत आन मिले घनश्याम, और जो [illegible] ग्वाल बनमें गायें चरातेथे वेभी असुरको मरा सुन गायें छोंड़ उधर देखनेको चले. तौलौं इधर गायें चरती २ डाभकांससे निकल मुंजबनमें वढ़गई. वहांसे आय दोनों भाई यहां देखें तो एकभी गाय नहीं.

चौ०--बिछुरीगैयांबिछुरेग्वाल, भूलेफिरैमुंजबनताल ।
रूखनचढ़ेपरस्परटेरैं, लै लै नाम पिछौरी फेरैं ॥

इतनेमें किसी सखाने आय हाथ जोड़ श्रीकृष्णसे कहा कि, महाराज ! गायें सब मुंजबनमे पैठ गई तिनके पीछे ग्वाल बाल न्यारे ढूंढ़ते, भटकते फिरते हैं. इतनीबातके सुनतेही श्रीकृष्णने कंदवपर चढ़ ऊंचे स्वरसे जो बंशी बजाई तो सुन ग्वाल बाल और सव गायें मुंजवनको फाड़ कर ऐसे आनमिलीं जैसे सावन भादोंकी नदी तुंग तरंगको चीर क्षीरसमुद्रमें जा मिलें. इस बीच देखते क्या हैं कि वन चारोंओरसे दहड़ दहड़ जलता चला आताहै. यह देख ग्वाल बाल और सखा अति घबराय भय खायकर पुकारे हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! इस आगसे वेग बचाओ नहीं तो अभी एक क्षणमें सब जले मरते हैं. कृष्ण बोले तुम सब अपनी आंखें मूंदो. जब उन्होंने नयन मूंदे तब श्रीकृष्णजीने पलभरमें आग बुझाय एक और माया करी कि गायोंसमेत सब ग्वाल बालोंको भांडीर वनमें ले आये और कहा कि अब आंखें खोल दो.

चौ० ग्वालखोलदृगकहतनिहारी, कहांगईवहअग्निमुरारी॥
कबफिरआयेबनभांडीर, होतअचंभौयहबलबीर ॥

ऐसे कह गायें ले सब मिल कृष्ण बलरामके साथ वृंदावन आये और सबोंने अपने २ घर जाय कहा कि आज वनमें बलरामजीने प्रलंब नाम राक्षसको मारा; और मुंजवनमें आग लगीथी, सोभी हरिके प्रतापसे बुझगई इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने कहा, हे राजा! ग्वाल बालोंके मुखसे यह बात सुन ब्रजबासी उसे देखने गये. पर उन्होंने श्रीकृष्णचरित्रका भेद कुछभी न पाया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे दावाग्निमोचनोनाम विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

अध्याय. २१.

वर्षा और शरद ऋतुकी क्रीडावर्णन.
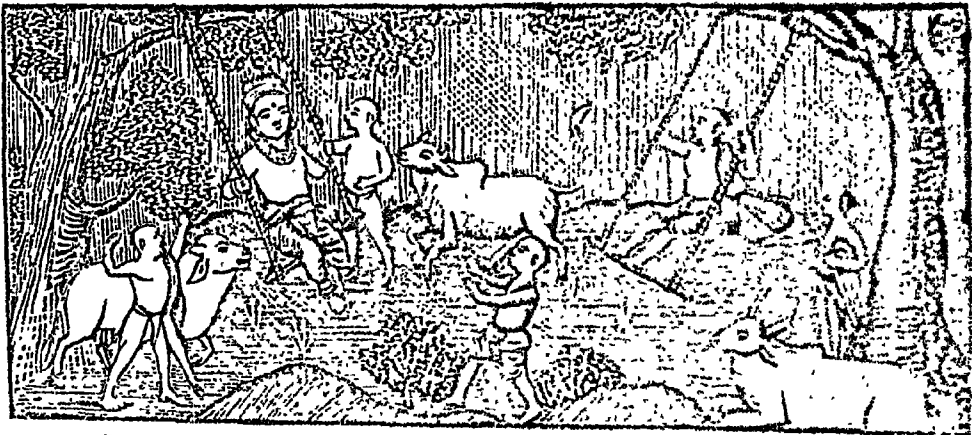
श्रीशुकदेव मुनि बोले कि-हे महाराज! ग्रीष्मकी अति अनीति देख नृप मेघ पावस प्रचंड पृथ्वीके पशु पक्षी जीव जंतुकी दया विचार चारों ओरसे दल बादल साथ ले लड़नेको चढ़ आया, तिस समय घन जो गरजताथा सोई तो धौंसा बजताथा. और वर्ण वर्णकी घटा जो घिर आईथीं सोई शूरवीर सावंत थे. तिनके बीच बीच बिजलीकी दमक शस्त्रसी चमकतीथी. बगलेकी पांतें ठौर ठौर श्वेत ध्वजासी फहराय रहीथीं. दादुर मोर कड़खैतकीसी भांति यश बखानतेथे. और बड़ी बड़ी बुंदकी झड़ी बाणोंकीसी झड़ी लगीथी. इस धूमधामसे पावसको आते देख ग्रीष्मखेत छोड़ अपना जीव ले भागा. तब मेघ पियाने बरस पृथ्वीको सुख दिया

उसने जो आठ महीने पतिके वियोगमें योग किया था तिसका भोग भरलिया. कुछ गिर शीतल हुये और गर्भ रहा उसमेंसे अठारह भार पुत्र उपजे सोभी फलमूल भेंट ले ले पिताको प्रणाम करने लगे. उसकाल वृंदाबनकी भूमि ऐसी सुहावनी लगतीथी कि, जैसे शृंगार किये कामिनी और जहां तहां नदी, नाले सरोवर भरेहुए तिनपर हंस. सारस, सरस भोग देरहे. ऊंचे २ रूखोंकी डालियां झूमरहीं. उनमें पिक, चातक, कपोत कीर बैठे कोलाहल कर रहेथे. और ठांव ठांव सूंहे कुसुंभे जोड़े पहरे गोपी ग्वाल झूलोंपै झूल झूल ऊंचे ऊंचे स्वरोंसे मलारें गातेथे, उनके निकट जाय जाय श्रीकृष्ण बलरामजी बाललीला [illegible] अधिक सुख दिखातेथे. इसी तरह आनंदसे बरसाऋ [illegible]. तब श्रीकृष्ण ग्वालबालोंसे कहनेलगे कि भय्या ! अब तो [illegible]

चौ० सबसेसुखभारीअबजाना, स्वादसुगंधरूपपाहचानो॥
निशिनक्षत्रउज्वलआकाश, मानहुंनिर्गुणब्रह्मप्रकाश॥
चार मास जो विरमेगेह, भये शरद तिन तजे सनेह।
अपने अपने काजनि धाये, भूप चढ़े तकि देशपराये॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे वर्षाऋतु शरदऋतु वर्णनो नाम एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अध्याय २२.

गोपी वेणु गीत.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, हे राजा ! इतनी बात कह श्रीकृष्णचंद्र फिर

ग्वालबाल साथले लीला करने लगे और जब लग कृष्ण वनमें धेनु चरावें तब लग सब गोपी घरमें बैठीं हरिका यश गावें. एक दिन श्रीकृष्णने वनमें बेणु बजाई तो वंशीकी ध्वनि सुन सारी व्रजयुवतियां हरबराय उठधांई और एक ठौर मिलकर बाटमें आ बैठीं तहां आपसमें कहने लगीं. कि हमारे लोचन सफल तब होंगे जब श्रीकृष्णके दर्शन पावेंगी. अभी तो कान्ह गायोंके साथ वनमें नाचते गाते फिरते हैं सांझ समय इधर आवेंगे तब हमें दर्शन मिलेंगे. यों सुन एक गोपी बोलीः—

चौ०-सुनोसखीवहबेनुबजाई, बांशवंशदेखौंअधिआई ॥

इसमें इतना क्या गुण है जो दिनभर श्रीकृष्णके मुँहलगी रहतीहै. और अधरामृत पी आनंद बर्ष वंशी गाजती है. क्या हमसेभी यह है प्यारी, जो निशिदिन लिये रहते हैं बिहारी ?

चौ०-मेरेआगेकीयहगढ़ी, अवभइसौतवदनपरचढ़ी ॥

जब श्रीकृष्ण इसे पीतांबर पोंछे बजाते हैं. तब सुर, किन्नर, मुनि और गंधर्व अपनी २ स्त्रियोंको साथ ले विमानोंपर बैठ बैठ हौस कर सुननेको आते हैं. और सुनकर मोहित हो जहाँके तहाँ चित्रसे रह जाते हैं. ऐसा इनने क्या तप किया है, जो सब इसके आधीन होते हैं ? इतनी बात सुन एक गोपीने उत्तर दिया कि, पहले तो इनने बांसके वंशमें उपज हरिका सुमिरण किया. पीछे घाम शीत जल ऊपर लिया, निदान टूक टूक हो देह जलाय धुआं पिया.

चौ०इननेतपकीयोहैकैसा, सिद्धहुईपायाफलऐसा ॥

यह सुन कोई व्रजनारी बोली कि—'हमको वेणु क्यों न रची व्रजनाथ ? जो निसिदिन रहती हरिके साथ.' इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि, महाराज ! जबतक श्रीकृष्ण धेनु चराय वनसे न आवें तब तक नित गोपी हरिके गुण गावें. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे गोपीवेणुनीतं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३.

गोपियोंके वस्त्र हरण कर श्रीकृष्णजीका कदंबपर बैठना.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि शरदऋतुके जातेही हेमंतऋतु आई और जाड़ा पाला पड़ने लगा. तिसकाल व्रजबाला आपसमें कहने लगीं सुनो सहेली. अगहनके न्हानेमें जन्म जन्मके पातक जाते हैं और मनकी आश पूरती है, यों हमने प्राचीन लोगोंके मुखसे सुना है. यह बात सुन सबके मनमें आई कि अगहन न्हाइये तो निःसंदेह श्रीकृष्ण वर पाइये. ऐसा विचार होतेही उठ वस्त्र आभूषण पहर सब व्रजबाला मिल यमुना न्हाने आंई स्नान कर सूर्यको अर्घ्य दे, जलसे बाहर आय माटीकी गौरी बनाय, चंदन अक्षत फल फूल चढ़ाय धूप दीप नैवेद्य आगे धर पूजा कर हाथ जोड़ शिर नाय गौरीको मनायके बोलीं—हे देवी ! हम तुमसे बार बार यही बर मांगती हैं कि, कृष्ण हमारे पति होयँ. इस विधिसे गोपी नित न्हाय दिनभर व्रत कर सांझको दही भात खा भूमिपर सोवें. इस लिये कि, हमारे व्रतका फल शीघ्र मिले. एक दिन सब व्रजबाला मिल स्नानको औघट घाट गईं और वहां जाय चीर उतार तीरपर धर नग्न हो नीरमें पैठ लगीं हरिके गुण गाय गाय जलक्रीड़ा करने. उसकाल श्रीकृष्णभी बंशीवटकी छांहमें बैठे धेनु चरातेथे. इन[illegible]नेका शब्द सुन वे चुप चाप चले आये. और लगे छिपकर देख[illegible]दान देखते देखते जो कछु इनके जीमें आई तो सब वस्त्र चुराय [illegible]र जा चढ़े और गठड़ी बांध आगे धरली. इतनेमें गोपियां जो [illegible] तो तीरपर चीर नहीं. तब घबराकर चारों ओर उठ

उठ लगीं देखने. और आपसमें कहने कि, अभी तो यहां एक चिड़ियाभी नहीं आई. वसन कौन हरलेगया माई ? इसवीच एक गोपीने देखा कि, शिरपर मुकुट, हाथमें लकुट, केशर तिलक दिये, बनमाल हिये, पीतांबर पहरे, कपड़ोंकी गठड़ी बांधे, मौन साधे, श्रीकृष्ण कदंबपर चढ़े छिपेहुए बैठे हैं. वह देखतेही पुकारी; हे सखी ! वे देखो हमारे चित्तचोर कदंबपर पोटली लिये बिराजते हैं, यह वचन सुन और सब युवतीयां कृष्णको देख लजाय पानीमें पैठ हाथ जोड़ शिर नाय विनती कर हाहा खाय बोलीं:—

चौ०-दीनदयालुहरणदुखप्यारे, दीजेमोहनचीरहमारे ॥
ऐसेसुनके कहैं कन्हाई, यों नहिं दूंगा नंददुहाई ॥
एकएकचलबाहरआओ, तोतुमअपनेकपड़ेपाओ ॥

ब्रजबाला रिसायके बोलीं:—यह तुम भली सीख सीखे हो ? जो हमसे कहतेहो नंगी बाहर आओ. अभी अपने पिता बंधुसे जाय कहें, तो वे तुम्हे चोर चोर कर आय गहें और नंद यशोदाको जा सुनावें तो वेभी तुमको सीख भली भांतिसे सिखावें. हम करती हैं किसीकी कान, तुमने मेटी सब पहिचान.

इतनी बातके सुनतेही क्रोध कर श्रीकृष्णजीने कहा कि अब चीर तभी पाओगी जब तिनको लिवा लावोगी, नहीं. तो यह सुन डर कर गोपी बोलीं दीनदयाल ! हमारे सुधके लिवैया पतिके रखैया तो आप हो हम किसे लावेंगी, तुम्हारेही हेतु नेमकर मार्गशिर मास न्हाती हैं. श्रीकृष्ण बोले जो तुम मन लगाय मेरे लिये अगहन न्हाती हो तो लाज और कपट तज आय अपनेश्चीर लो. जब श्रीकृष्णचंद्रने ऐसे कहा तब सब गोपी आपसमें शोच विचार कर कहने लगीं कि-चलो सखी ! जो मोहन कहते हैं सोई मानें क्योंकि ये हमारे तन मनकी सब जानते हैं. इनसे लाज क्या ? यों आपसमें ठान, श्रीकृष्णकी बात मान हाथसे कुछ देह दुराय सब युवती नीरसे निकल शिर निहुराय जब संमुख तीरपर जाके खड़ी हुई तब श्रीकृष्ण हँसके बोले अब तुम हाथ जोड़ जोड़ आगे आओ तो मैं वस्त्र दूं. गोपी बोलीं—

चौ०-काहेकपटकरतनँदलाला, हमसूधीभोरीव्रजवाला ॥
परीठगोरीसुधिगई, ऐसी तुम हरि लीलाठई ॥
मनसँभारिकैकरिहैंलाज, अबतुमकछूकरोव्रजराज ॥

इतनी बात कह गोपियोंने हाथ जोड़े तो श्रीकृष्णचंद्रजीने वस्त्र दे उनके पास आय कहा कि तुम अपने मनमें कुछ इस बातका बिलग मत मानों; यह मैंने तुम्हे सीख दी है, क्योंकि जलमें वरुण देवताका वास है. इससे जो कोई नग्न होय जलमें न्हाता है उसका सब धर्म बह जाता है. तुम्हारे मनकी लगन देख मगन हो मैंने यह भेद तुमसे कहा, अब अपने घर जाओ. फिर कार्तिक महीनेमें आय मेरे साथ रास लीला कीजियो.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, महाराज! इतना बचन सुन प्रसन्न हो संतोष कर गोपियां तो अपने घरोंको गईं और श्रीकृष्ण बंशीबटमें आय गोप ग्वाल बाल सखाओंको संग ले आगे चले, तिस समय चारों ओर सघन बन देख देख वृक्षोंकी बड़ाई करने लगे कि देखो ये संसारमें आ अपने पर कितना दुःख सह लोगोंको सुख देते हैं. जगतमें ऐसेही परकाजियोंका आना सफल है. यों कह आगे बढ़ यमुनाके निकट जाय पहुँचे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे चीरहरणं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अध्याय २४.

श्रीकृष्णजीका द्विजपत्नीयोंकेपाससे भोजन मांगना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, जब श्रीकृष्ण यमुनाके पास पहुँच रूखतले लाठी टेंक खड़ेहुए तब सब ग्वालबाल और सखावोंने आय कर हाथ जोड़

कहा कि, महाराज ! हमें इस समय बड़ी भूख लगी है, जो कुछ छाक लायेथे सो खाई पर भूख न गई. कृष्ण बोले देखो वह जो धुवां दिखाई देता है तहां मथुरिये कंसके डरसे छिपके यज्ञ करते हैं. उनके पास जा. हमारा नाम ले दंडवत् कर हाथ बांध खड़े हो, दूरसे कहो भोजन दो. ऐसे दीन हो मांगियो जैसे भिकारी आधीन हो मांगता है. यह बात सुन ग्वाल चले चले वहां गये जहां माथुर बैठे यज्ञ कर रहे थे. जातेही उन्होंने प्रणाम कर निपट आधीनतासे कर जोड़के कहा-महाराज! आपको दंडवत् कर, हमारे हाथ श्रीकृष्णचंद्रजीने यह कहलाया है कि हमको अति भूख लगी है, कुछ कृपा कर भोजन भेज दीजिये. इतनी बात ग्वालोंके मुखसे सुन मथुरिया क्रोधकर बोले तुम तो बड़े मूर्ख हो जो हमसे अभी यह बात कहतेहो. विना होम होचुके किसीको कुछ न देंगे. सुनो ! जब यज्ञ करलेंगे और कुछ बचेगा, सो बांटदेंगे. फिर ग्वालोंने उनसे गिड़गिड़ायके बहुतेरा कहा कि महाराज! घर आये भूखोंको भोजन करवानेसे बड़ा पुण्य होता है. पर वे इनके कहनेको कुछ ध्यानमें न लाये बरन इनकी ओरसे मुंह फेर आपसमें यों कहने लगे–

चौ०-बड़ेमूढ़पशुपालकनीच, मांगतभातहोमकेबीच ॥

तब तो ये वहांसे निराश हो पछताय पछताय श्रीकृष्णके पास आय बोले महाराज ! भीख मांग मान महत गमाया तोभी खानेको कुछ हाथ न आया. अब क्या करैं? श्रीकृष्णजीने कहा कि अब तुम उनकी स्त्रियोंसे जा. मांगो. वे बड़ी दयावंत धर्मात्मा हैं. उनकी प्रीति भक्ति देखियो, वे तुम्हैं देखतेही आदर मानसे भोजन देंगी. यों सुन वे फिर वहां गये, जहां वे बैठीं रसोई करतीथीं, जातेही उनसे कहा कि. बनमें श्रीकृष्णको धेनु चराते क्षुधा भई है, सो हमें तुह्मारे पास पठाया है. कुछ खानेको होय तो दो. इतना बचन ग्वालोंके मुखसे सुनतेही वे प्रसन्न हो कंचनके थालोंमें षटरस भोजन भर ले उठधाईं और किसीके रोंके न रुकी. एक मथुरनीके पतिने जो न जाने दिया, तो वह ध्यान कर देह छोंड़ सबके पहले ऐसे जामिली कि जैसे जल जलमें जा मिले, और पीछेसे सब चलीं चलीं वहां आईं. जहां श्रीकृष्णचन्द्र ग्वालबालोंसमेत वृक्षकी छाँहमें

सखाके कांधेपर हाथ दिये त्रिभंगी छवि किये, कमलका फूल कर लिये खड़ेथे; आतेही थाल आगे धर दंडवत् कर हरिका मुख देख देख आपसमें कहने लगीं कि हे सखी ! येई हैं नंदकिशोर, जिनका नाम सुन सुन ध्यान धरतींथीं, अब चंद्रमुख देख लोचन सफल कीजे और जीवनका फल लीजे. ऐसे बतराय हाथ जोड़ बिनती कर श्रीकृष्णसे कहनेलगीं कि, कृपानाथ! आपकी कृपाबिन तुम्हारा दर्शन कब किसीको होता है? आज धन्य भाग्य हमारा जो दर्शन पाया और जन्मजन्मका पाप गमाया:

चौ०--मूरखविप्रकृपणअभिमानी, श्रीमदमोहलोभमतिमानी ॥ ईश्वरको मानुष कर मानैं, मायाअंध कहा पहिंचानैं॥ जप तप यज्ञ जासुहित कीजै, ताको कहा न भोजन दीजै ॥

वही धन्य हैं; धन,जन,लाज, जो आवे प्रभु तुम्हारे काज॥और सोई हैं सांचो तप ज्ञान, जिसमें आवे तुम्हारा ध्यान ॥ इतनी बात सुन श्रीकृष्णचंद्र उनकी क्षेम कुशल पूंछ कहने लगे कि—

चौ०-माताजनिमुझकरोप्रणाम, मैंहूंनंदमहरको श्याम ॥

जो ब्राह्मणकी स्त्रीसे आप पुजवाते हैं सो क्या संसारमें कुछ बड़ाई पाते हैं ? तुमने हमको भूंखे जान दया कर बनमें आन सुध ली. अब हम यहां तुम्हारी क्या पहुनाई करें ?

चौ०-वृन्दावनघरदूरहमारा, केहिविधिआदरकरैंतुम्हारा

जो वहां होते तो कुछ फूल फल ला आगे धरते. तुमने हमारे कारण दुःख पाया जंगलमें आईं और यहां हमसे तुम्हारी टहल कुछ न बन आई, इस बातका पछतावही रहा. ऐसे शिष्टाचार कर फिर बोले तुम्हें आये बड़ी बेर हुई अब घरको सिधारिये. क्योंकि ब्राह्मण तुम्हारी बाट देखते होंगे. इसलिये कि स्त्रीबिन यज्ञ सफल नहीं. यह वचन श्रीकृष्णसे सुनतेही हाथ जोड़ बोलीं-महाराज ! हमने आपके चरणकमल सेवन कर कुटुंबकी माया सब छोड़ी. क्योंकि जिनका कहा न मान हम उठधाईं तिनके यहां अब कैसे जाँय ? जो वे घरमें न आने दें तो फिर

कहां बसें ? इससे आपकी शरणमें रहें सो भला. और हे नाथ! एक नारी हमारे साथ तुम्हारे दर्शनकी अभिलाषा किये आवतीथी. उसके पतिने रोंक रक्खा तब उस स्त्रीने अकुलाकर अपना जीव दिया. इस बातके सुनतेही हँसकर श्रीकृष्णचंद्रने उसे दिखाया, जो देह छोड़ आई थी और कहा कि–सुनों जो हरिसे हित करताहै तिसका विनाश कभी नहीं होता; यह तुमसे पहले आमिली है.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि–महाराज! उसको देखतेही एकबार तो सब अचंभे रहीं पीछे ज्ञान हुआ, तब हरिगुण गाने लगीं इसबीच श्रीकृष्णचंद्रने भोजन कर उनसे कहा कि, अब स्थानको प्रस्थान कीजे. तुम्हारे पति कुछ न कहेंगे. जब श्रीकृष्णजीने उन्हें ऐसे समझाय बुझायके कहा, तब वे बिदा हो दंडवत् कर अपने घर गईं और उनके स्वामी शोच विचारकर पछताय पछताय कह रहेथे कि–हमने कथा पुराणोंमें सुना है कि किसी समय नंदयशोदाने पुत्रके निमित्त बड़ी तपस्या की थी. तहां भगवान्‌ने आ उन्हें यह वर दिया था कि, हम यदुकुलमें अवतार ले तुम्हारे यहां जन्मेंगे, वेही जन्म ले आये हैं उन्होंने ग्वाल बालोंके हाथ भोजन मँगवाय भेजाथा. सो हमने यह क्या किया ? जो आदिपुरुषको भोजन न दिया.

चौ०-यज्ञधर्म जाकारणठये, तिनकेसन्मुखआजन भये ॥
आदिपुरुषहमसमानुषजाना, नहींवचनग्वालनकोमाना ॥
हममूरखपापीअभिमानी, कीन्हींदयानहरिगतिजानी ॥

धिक्कार है हमारी मतिको और इस यज्ञ करनेको. जो भगवान्‌को पहँचान सेवा न करी. हमसे नारीही भलीं; जिन्होंने जप, तप, यज्ञ, बिन-किये साहस कर जा श्रीकृष्णजीके दर्शन किये. और अपने हाथोंसे उन्हें भोजन दिया. ऐसे पछताय मथुरियोंने अपनी स्त्रियोंके सन्मुख हाथ जोड़ कहा कि धन्य भाग तुम्हारा, जो हरिका दर्शन कर आईं तुम्हाराही जीवन सफल है. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे द्विजपत्नीयाचनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अध्याय २५.

गोवर्द्धन पर्वतकी पूजा करना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, जैसे श्रीकृष्णचंद्रने गिरिगोवर्द्धन उठाया और इंद्रका गर्व हरा, सोइ कथा अब कहताहूं तुम चित्त दे सुनो; कि सब व्रजबासी वर्षवेंदिन कार्तिक बदी चौदसको न्हाय धोय केसर चंदनसे चौक पुराय भांति २ की मिठाई और पकवान धर धूप दीप कर इंद्रकी पूजा किया करें; यह रीति उनके यहा परंपरासे चली आतीथी. एक दिन वही दिवस आया, तब नंदजीने बहुतसी खानेकी सामग्री बनवाई और सब व्रजवासियोंकेभी घर घर भोजनकी सामग्री होरहीथी. तहा श्रीकृष्णने आ मासे पूंछा कि, माजी ! आज घरघरमें पकवान मिठाई जो हुई है सो क्या है ? इसका भेद मुझेसमझाकर कहो. जो मेरे मनकी दुविधा जाय. यशोदा बोली कि–बेटा ! इससमय मुझे बात कहनेका अवकाश नहीं तुम अपने पिताके पास जा पूंछो; वे बुझा कर कहेंगे. यह सुन नंद उपनंदके पास आय श्रीकृष्णने कहा कि, पिता ! आज किस देवताके पूजनकी ऐसी धूमधाम है? जिसके लिये घर घर पकवान और मिठाई हो-रहीं हैं. वे कैसे भुक्ति मुक्ति वरके दाता हैं ? उनका नाम और गुण कहो, जो मेरे मनका संदेह जाय. नंदमहर बोले कि–पुत्र ! यह भेद तूने अबतक नहीं समझा कि, मेघोंके पति जो सुरपति हैं तिनकी पूजा है. जिनकी कृपासे इस संसारमें ऋद्धिसिद्धि मिलतीं हैं और तृण, जल

अन्न होता है. बन, उपवन फूलते फलते हैं. उनसे सब जीव, जंतु, पशु, पक्षी आनंदमें रहते. यह इंद्रपूजाकी रीति हमारे यहां पुरखाओंके आगेसे चली आती है कुछ आज नई नहीं निकली. नंदजीसे इतनी बात सुन श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे पिता ! जो हमारे बड़ोंने जाने अनजाने इंद्रकी पूजा की. तो की, पर अब तुम जान बूझकर धर्मका पंथ छोंड़ औघट बाट क्यों चलतेहो? इंद्रके माननेसे कुछ नहीं होता, क्योंकि वह भुक्ति-मुक्तिका दाता नहीं. और उससे ऋद्धिसिद्धि किसने पाई है? यह तुमहीं कहो. उसने किसे वर दिया है? हां एक बात यह है कि, तप यज्ञ करनेसे देवताओंने अपना राजा बनाया इंद्रासन दे रक्खा है; इससे कुछ परमेश्वर नहीं हो सक्ता. सुनो ! जब असुरोंसे बार बार हारता है, तब भागके कहीं जा छिपकर अपने दिन काटता है. ऐसे कायको क्या [illegible] अपना धर्म किसीसे नहीं [illegible] किया कुछ नहीं होसक्ता. जो कर्ममें लिखा है [illegible] सुख, संपति, भाई, बंधु सब अपने धर्म कर्मसे मिलतेहैं और आठ मास जो सूर्य जल सोकता है सोई चार महीने बरसता है; तिसीसे तृण, जल, अन्न होता है और ब्रह्माने जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण बनाये हैं, तिनके पीछे भी एक एक कर्म लगा दिया है. कि ब्राह्मण तो वेदविद्या पढ़े, क्षत्रिय सबकी रक्षा करैं, वैश्य खेती बणिज, और शूद्र इन तीनोंकी सेवामें रहें. पिता ! हम वैश्य हैं, गायें बढ़ीं इससे गोकुल हुआ, तिससे नाम गोप पड़ गया. हमारा यह कर्म है कि, खेती बणिज करें और गो ब्राह्मणकी सेवामें रहें. वेदकी आज्ञा है कि, अपनी कुलरीति न छोंड़िये. जो लोग अपना धर्म तज औरका धर्म पालते हैं सो ऐसे हैं, जैसे कुलबधू हो परपुरुषसे प्रीति करे; इससे इंद्रकी पूजा अब तज दीजे, बन पर्वतकी पूजा कीजे ! ! क्योंकि हम बनवासी हैं, हमारे राजा वेई हैं, जिनके राज्यमें हम सुखसे रहते हैं तिन्हें छोड़ औरको पूजना हमें उचित नहीं, इससे अब सब पकवान मिठाई अन्न ले चलो और गोवर्द्धनकी पूजा करो.

इतनी बातके सुनतेही नंद उपनंद उठकर वहां गये, जहां बड़े बड़े गोप अथाईपर बैठेथे. इन्होंने जातेही सब श्रीकृष्णकी कही बातें उन्हें सुनाईं.

वे सुनतेही बोले कि, कृष्ण सच कहता है. तुम बालक जान उसकी बात मत टालो. भला! तुमहीं विचारो कि इंद्र कौन है? और हम किस लिये उसे मानते हैं? जो पालता है, उसकी तो पूजाही भुलाई.

चौ०-हमैंकहासुरपति सोंकाज, पूजेंबनसरितागिरिराज॥

ऐसे कह फिर सब गोपोंने कहाः-

दोहा-भलोमतो मोहन दियो, तजिये सिगरे देव॥
गोवर्द्धन पर्वत बड़ो, ताकी कीजे सेव॥

यह बचन सुनतेही नंदजीने प्रसन्न हो गोपोंमें ढंढोरा फिरवादियाकि, कल हम सारे ब्रजवासी चलकर गोवर्द्धनकी पूजा करेंगे. जिस२के घरमें इंद्रकी पूजाके लिये पकवान मिठाई बनी है, सो सब ले ले भोर ही गोवर्द्धनपर जाइयो. इतनी बात सुन सकल ब्रजवासी दूसरे दिन भोरके तड़केही उठ स्नान ध्यान कर सब सामग्री झालों, परातों, थालों, डोलों, हांडों चरुओंमें भर गाड़ों बहिंगियोंपर रखवाय गोवर्द्धनको चले. तिसी समय नंद उपनंदभी कुटुंबसमेत सामग्री ले सबके साथ होलिये. बाजेगाजेसे सब चले, मिले गोवर्द्धन पहुँचे. वहां जाय पर्वतको चारों ओरसे झाड़ बुहार जल छिड़क, घेवर, बावर, जलेबी, लड्डू, खुरमें, इमरती, फेनी, पेड़े, बरफी, खाझे, गुंझे, मठुलिया, सीरा, पूरी, कचोरी, सेव, पापड़, पकौड़े आदि पकवान और भांति भांतिके भोजन, व्यंजन, संधान चुन चुन रखदिये, इतने कि जिनसे पर्वत छिपगया और ऊपर फूलोंकी माला पहराय बर्ण बर्णके पाटंबर तानदिये. तिस समयकी शोभा वर्णी नहीं जाती. गिरि ऐसा सुहावना लगताथा, जैसे किसीको गहने कपड़े पहराय नखसिखसे सिंगारा होय. और नंदजीने पुरोहित बुलाय, सब ग्वालबालोंको साथ ले, रोली अक्षत पुष्प चढ़ाय, धूप दीप नैवेद्य कर, पान सुपारी दक्षिणा धर, वेदकी बिधिसे पूजा की. तब श्रीकृष्णने कहा कि अब तुम शुद्ध मनसे गिरिराजका ध्यान करो, तो वे आय दर्शन दे भोजन करें. श्रीकृष्णसे यों सुनतेही नंद यशोदा समेत सब गोपी गोप कर जोड़ नयन मूंद ध्यान लगाय खड़े हुए. तिसकाल नंदलाल उधर तो अति मोटी भारी दूसरी देह धर बड़े बड़े हाथपाव कर कमलनयन चन्द्रमुख हो

मुकुट धरे, बनमाल गले, पीत बसन और रत्नजडित आभूषण पहरे, मुँह पसारे, चुप चाप पर्वतके बीचसे निकले और इधर आपही अपने दूसरे रूपको देख सबसे पुकारके कहा. देखो गिरिराजने प्रकट व्है दर्शन दिया. जिनकी पूजा तुमने जी लगाय करी है.

इतना बचन सुनाय श्रीकृष्णचंद्रजीने गिरिराजको दंडवत् की. उनकी देखादेखी सब गोपीगोप प्रणामकर आपसमें कहने लगे कि इस भांति इंद्रने कब दर्शन दियाथा ? हम वृथा इसकी पूजा किया किये. और क्या जानिये पुरखाओंने ऐसे प्रत्यक्ष देवताको छोंड़ क्यों इंद्रको मानाथा ? यह बात समझी नहीं जाती. यों सब बतराय रहेथे कि श्रीकृष्ण बोले अब देखते क्या हो ? जो भोजन लायेहो सो खिलावो. इतना बचन सुनतेही गोपी गोप षटरस भोजन थाल परातोंमें भर उठाय उठाय लगे देने और गोवर्द्धन नाथ हाथ बढ़ाय बढ़ाय लेले भोजन लगे करने. निदान जितनी सामग्री नंदसमेत सब ब्रजबासी लेगये थे सो खाई, तब वह सूरत पर्वतमें समाई. इसभांति अद्भुत लीला कर श्रीकृष्णचंद्र सबको साथ ले पर्वतकी परिक्रमा दे दूसरेदिन गोवर्द्धनसे चले हँसते खेलते वृन्दावन आए. तिस काल घर घर मंगल बधाए होने लगे. और ग्वाल बाल सब गाय बछड़ोंको रंग रंगके उनके गलेमें गंडा घंटालियां घुंघुरू बांध बांध न्यारेही कुतूहल कर रहेथे.

इति श्रीलल्लू० प्रे० गोवर्द्धनपूजानाम पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६.

श्रीकृष्णचन्द्रजीका करांगुलीपर गोवर्धनका धारन करना.
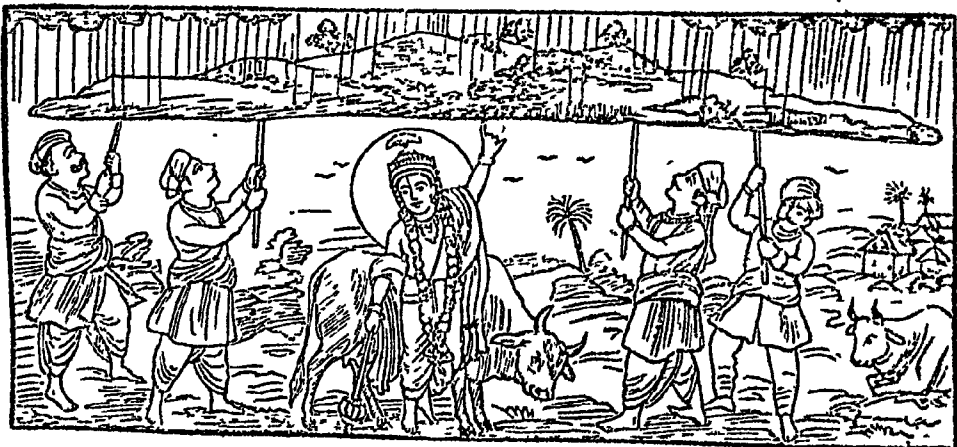
इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि हे महाराज !

दो०--सुरपतिकी पूजा तजी, करि पर्वतकी सेव ॥
तबहिं इंद्र मन कोपिकै, सबै बुलाये देव ॥

जब सारे देवता इंद्रके पास गये तब वह उनसे पूंछने लगा कि तुम मुझे समझाकर कहो, कल ब्रजमें किसकी पूजा थी ? इसवीच नारदजी आय पहुँचे तो इंद्रसे कहने लगे कि सुनो महाराज! तुम्हे सब कोई मानते हैं, पर एक ब्रजवासी नहीं मानते; क्योंकि नंदके एक बेटा हुआ है तिसीका कहा सब करते हैं. उन्होंने तुम्हारी पूजा मेट कल सबसे पर्वत पुजवाया. इतनी बातके सुनतेही इंद्र क्रोध कर बोला कि, ब्रजबासियोंके धन बढ़ा है इसीसे उन्हें अति गर्व हुआ है.

चौ०-जपतपयज्ञतज्योब्रजमेरो, कालदरिद्रबुलायोतेरो ॥
मानुषकृष्णदेवकरमाने, ताकीबातेंसांची जाने ॥
वहबालकमूरखअज्ञान, बहुबादीराखे अभिमान ॥
उनकाअबहिंगर्वपरिहरौं, पशूखोइलक्ष्मीबिनकरौं ॥
ऐसे बकझककर खिजलाय,सुरपति मेघप लियोबुलाय

वह सुनतेही डरता कांपता आ हाथजोड़ सन्मुख खड़ा हुवा. तिसे देखतेही इंद्र स्नेह कर बोला कि तुम अभी अपना दल साथ लेजाओ और गोवर्धन पर्वत समेत ब्रजमंडलको बरस कर बहाओ; ऐसा कि कहीं गिरिका चिन्ह और ब्रजबासियोंका नाम न रहे. इतनी आज्ञा पाय मेघपति दंडवत् कर राजा इंद्रसे बिदा हुआ उसने अपने स्थानपर आय बड़े बड़े मेघोंको बुलायके कहा कि सुनो, महाराजकी आज्ञा है कि तुम अभी जाय ब्रजमंडलको बरसके बहादो. यह बचन सुन सब मेघ अपने अपने दल बादल ले मेघपतिके साथ होलिये. उसने आतेही ब्रजमंडलको घेर दिया और गर्ज गर्ज बड़ीबड़ी बूंदोंसे लगा मूशलधार जल बरसावने; और अंगुलीसे गिरिको बतावने. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! जब ऐसे चहूं ओरसे घनघोर घोटा घिरिआई और अखंड जल बरसने लगा, तब नंदयशो-

दा समेत सब गोपी ग्वाल बाल भय खाय भींगते थरथर कांपते श्रीकृष्णके पास जाय पुकारे कि, हे कृष्ण ! इस महाप्रलयके जलसे कैसे बचेंगे ? तब तो तुमने इंद्रकी पूजा मेट पर्वत पुजवाया. अब उस्को बेग बुलाइये जो आय रक्षा करे नहीं तो क्षणभरमें नगरसमेत सब डूबे मरते हैं. इतनी बात सुन और सबको भयातुर देख श्रीकृष्णचंद्र बोले कि, तुम अपने जीमें किसी बातकी चिंता मत करो, गिरिराज अभी आय तुम्हारी रक्षा करते हैं. यों कह गोवर्धनको तेजसे तपाय अग्निसम किया. और बायें हाथकी अंगुलीपर उठाय लिया. तिसकाल सब व्रजबासी अपने डेरों समेत आ उस्के नीचे खड़े हुये. और श्रीकृष्णचंद्रको देख अचरज कर आपसमें कहने लगे.

चौ०-हैकोउआदिपुरुषऔतारी, देखतहूँकोउदेवमुरारी ॥
मोहनमानुषकैसोभाई, अँगुरीपरक्योंगिरिठहराई ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि राजा परीक्षितसे कहने लगे कि, उधर तो मेघपति अपना दल लिये क्रोध कर कर मूशलधार जल बरसाताथा. इधर पर्वतपै गिरतेही छनाक दे तवेकीसी बूंद होजातीथी. यह समाचार सुन इंद्रभी कोपकर आप चढ़ आया और लगातार इसी भांति सात दिन बरसा. पर व्रजमें हरिप्रतापसे एक बूंद भी न पड़ी जब सब जल निबड़ा तब मेघोंने आ हाथ जोड़ कहा कि, हे नाथ ! जितना महाप्रलयकालका जल था, सबका सब होचुका. अब क्या करें ? यह सुन इंद्रने अपने ज्ञान ध्यानसे विचारा कि, आदि पुरुषने अवतार लिया. नहीं तो किसमें इतनी सामर्थ्य थी, जो गिरिधारण कर व्रजकी रक्षा करता. ऐसे शोच समझ अछता पछता मेघोंसमेत इंद्र अपने स्थानको गया, और बादल उघड प्रकाश हुआ. तब सब व्रजबासियोंने प्रसन्न हो श्रीकृष्णसे कहा महाराज ! अब गिरि उतार धरिये मेघ जाता रहा. यह बचन सुनतेही श्रीकृष्णजीने पर्वत जहांका तहां रख दिया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे व्रजरक्षणं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अध्याय २७.

श्रीकृष्णजीकी अद्भुत लीलाका वर्णन.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, जब हरिने गिरि करसे उतार धरा तिस समय सब बड़े बड़े गोप तो इस अद्भुत चरित्रको देख यही कह रहे थे कि जिसकी शक्तिने इस महाप्रलयसे आज व्रजमंडल बचाया तिसे हम नंदसुत कैसे कहेंगे ? हां, किसी समय नंद यशोदाने महातप कियाथा इसीसे भगवानने आ इनके घर जन्म लिया है, और ग्वालवाल आय आय श्रीकृष्णके गलेसे मिल मिल पूंछने लगे कि, भैया ? तूने इस कोमल कमलसे हाथपर कैसे ऐसे भारी पर्वतका बोझ सँभाला ? और नंद यशोदा करुणा कर पुत्रको हृदय लगाय, हाथ दबाय, अँगुली चटकाय कहने लगे कि, सात दिन गिरि करपर रक्खा हाथ दुखता होगा ? और गोपियां यशोदाके पास आय पिछली सब कृष्णकी लीला गाय गाय कहने लगीं:—

चौ० यहजोबालकपूततिहारो, चिरजीवहिव्रजकोरखवारो
दानवदैत्यअसुरसंहारे, कहां कहां व्रजजन न उबारे ॥
जैसी कही गर्ग ऋषि आई, सोइ सोइ बात होतिहै माई ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णलीलावर्णनं नाम सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अध्याय २८.

इंद्रकृत श्रीकृष्णजीकी स्तुति.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, महाराज! भोर होते ही सब गायें और ग्वाल बालोंको संग कर अपनी अपनी छाक ले कृष्ण बलराम वेणु बजाते और मधुर मधुर सुरसे गाते ज्यों धेनु चरावन बनको चले तो राजा इंद्र सकल देवताओंको साथ लिये कामधेनुको आगे किये ऐरावत हाथीपर चढ़ सुरलोकसे चला चला वृन्दावनमें आय बनकी बाट रोंक खड़ा हुआ. जब श्रीकृष्ण[illegible] दिखाई दिये तब गजसे उतर नंगेपांओं गलेमें कपड़ा डाल[illegible] दौड़कर श्रीकृष्णके चरणोंपर गिरपड़ और पछताय पछताय [illegible] लगाकि, हे ब्रजनाथ! मुझपर दया करो.

चौ॰ मैंअभिमान[illegible] अतिकिया, राजसतामसमेंमनदिया
धनमदकरसंपतिसुखमाना, भेदनकछुकतुम्हारोजाना ॥
तुम परमेश्वर सबके ईश, और दूसरा को जगदीश ॥
ब्रह्मा रुद्र आदि वरदाई, तुम्हरी दई संपदा पाई ॥
जगतपितातुमनिगमनिवासी, सेवतनितकमलाभइदासी
जनके हेत लेत औतार, तब तब हरत भूमिको भार ॥
दूर करौ सब चूक हमारी, अभिमानीमूरखहौंभारी ॥

जब ऐसे दीन हो इंद्रने स्तुति करी तब श्रीकृष्णचंद्र दयालु हो बोले कि अब तो तू कामधेनुके साथ आया इससे तेरा अपराध क्षमा किया. पर फिर गर्व मत कीजो. क्योंकि गर्व करनेसे ज्ञान जाता है, और कुमति

बढ़ती है. इससे अपमान होता है. इतनी बात श्रीकृष्णके मुखसे सुनतेही इंद्रने उठकर बेदकी विधिसे पूजा की और गोविंद नाम धर चरणामृत ले परिक्रमा करी. तिस समय गंधर्व भांतिभांतिके बाजे बजाय२श्रीकृष्णका यश गाने लगे और देवता अपने २ विमानोंमें बैठ आकाशसे फूल बरसावने. उसकाल ऐसा समय हुवा कि, मानो फेरकर श्रीकृष्णने जन्म लिया. जब पूजासे निश्चिंत हो इंद्र हाथ जोड़ सन्मुख खड़ा हुआ, तब श्रीकृष्णने आज्ञा दी कि अब तुम कामधेनुसमेत अपने पुरको जाओ. आज्ञा पातेहीं कामधेनु और इंद्र बिदा हो दंडवत् कर इंद्रलोकको गये. और श्रीकृष्णचंद्र गो चराय सांझ हुये सब ग्वालबालोंको लिये वृन्दाबन आए. उन्होंने देखा सो अपने अपने घर जाय कहा कि आज हमने हरिप्रतापसे इंद्रका दर्शन बनमें किया.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा-महाराज! यह जो श्रीगोविंदकी कथा मैंने तुम्हें सुनाई इसके सुनने और सुनानेसे संसारमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थ मिलते हैं. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे इंद्रस्तुतिकरणंनाम अष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अध्याय २९.

इस अध्यायमें श्रीकृष्णने नंदजीको वरुणसे छुड़ा लाया और गोपोंको ब्रजमेंही वैकुंठ दिखाया यह कथा वर्णित है.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एकदिन नंदजीने संयम कर एकादशी व्रत किया. दिन तो स्नान, ध्यान, भजन, जप पूजामें काटा और रात्रि जागरणमें बिताई. जब छहघड़ी रैनि रही और द्वादशी भई तब उठके देह शुद्ध कर भोर हुआ जान धोती अँगोछा झारी ले यमुनापर स्नान करने चले. तिनके पीछे कईएक ग्वालभी होलिये. जब तीरपर जाय प्रणाम कर कपड़े उतार नंदजी ज्यों नीरमें पैठे त्यों वरुणके सेवक जो जलकी चौकी देते थे कि कोई रातको न्हाने न पावे; उन्होंने जा वरुणसे कहा-कि, महाराज! कोई इस समय यमुनामें न्हाय रहा है, हमें क्या आज्ञा होती है? वरुण बोले—उसे अभी पकड़ लाओ. आज्ञा पातेही सेवक फिर वहां आये जहां नंदजी स्नान कर जलमें खड़े जप करते थे.

आतेही अचानक नागफास डाल नंदजीको वरुणके पास ले गये. तब नंदजीके साथ जो ग्वाल गयेथे उन्होंने आय श्रीकृष्णसे कहा कि, महाराज ! नंदरायजीको वरुणके गण यमुनातीरसे पकड़ वरुणलोकको लेगये. इतनी बातके सुनतेही श्रीगोविंद क्रोध कर उठ धाये और पलभरमें वरुणके पास जा पहुँचे. इन्हें देखतेही वह उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ विनती कर बोलाः-

चौ०-सुफल जन्म है आज हमारो, पायो यदुपति दरश तुम्हारो ॥ कीजै दोष दूर सब मेरे, नंदपिता इस कारण घेरे॥तुमकोसबके पिता बखाने,तुम्हरेपिता नहीं हमजाने॥

रातको न्हाते देख अनजाने गण पकड़ लाये; भला इसी मिस मैंने दर्शन आपके पाये. अब दया कीजे, मेरा दोष चित्तमें न लीजे. ऐसे अतिदीनता कर बहुतसी भेंट लाय नंद और श्रीकृष्णके आगे धर जब बरुण हाथ जोड़ शिर नाय सन्मुख खड़ा हुआ, तब श्रीकृष्ण भेंट ले पिताको साथ कर वहांसे [illegible]बन आए. इनको देखतेही सब ब्रजबासी आय मिले. तिस [illegible] बड़े गोपोंने नंदरायसे पूंछा कि तुम्हें वरुणके सेवक कहा लेग[illegible] ? नंद बोले सुनो ज्यों वे वहांसे पकड़ मुझे वरुणके पास लेगये त्योंही पीछेसे श्रीकृष्ण पहुँचे. इन्हें देखतेही वह सिंहासनसे उतर पाओंपर गिर अति बिनती कर कहने लगा-नाथ! मेरा अपराध क्षमा कीजे, मुझे अनजाने यह दोष हुआ. सो चित्तमें न लीजे. इतनी बात नंदजीके मुखसे सुनतेही गोप आपसमें कहने [illegible]गे कि, भाई ! हमने तो यह तभी जानाथा, जब श्रीकृष्णचंद्रने गोवर्द्धन [illegible] कर ब्रजकी रक्षा करी, कि नंदमहरके घरमें आदि पुरुषने आय [illegible] है. ऐसे आपसमें बतराय फिर सब गोपोंने हाथ जोड़ श्रीकृ[illegible] महाराज ! आपने हमें बहुत दिन भरमाया, पर अब स[illegible]या. तुम्हीं जगतके कर्त्ता दुःखहर्त्ता हो. त्रिलोकीनाथ! दया[illegible] दिखाइये. इतना बचन सुन श्रीकृष्णजीने क्षणभरमें वैकुंठ रच उन्हें [illegible] दिखाया. देखतेही ब्रजबासियोंको ज्ञान

हुआ, तो कर जोड़ शिर झुँकाय बोले, हे नाथ! तुम्हारी महिमा अपरंपार है, हम कुछ कह नहीं सक्ते, पर आपकी कृपासे आज हमने यह जाना कि, तुम नारायण हो, भूमिका भार उतारनेको संसारमें जन्म ले आये हो.

श्रीशुकदेजी बोले कि, महाराज! जब व्रजवासियोंने इतनी बात कही तब श्रीकृष्णचंद्रजीने सबको मोहित कर जो वैकुंठकी रचना रचीथी सो उठाय ली, और अपनी माया फैलाय दी, तब तो सब गोपोंने स्वप्नसा जाना, और नंदजीनेभी मायाके वश हो श्रीकृष्णको अपना पुत्र कर माना. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे वरुणलोकगमने वैकुंठचरित्रं नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अध्याय ३०.

रासक्रीडा वर्णन और रासक्रीडामें जानेसे एक गोपका स्वस्त्रीको रोकना.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि, हे [illegible]राज!

दो०-जैसे हरिगोपिनसहित, कीनो रास[illegible] ॥
सो पंचाध्याई कहौं, जैसी बुद्धि [illegible]र ॥

जब श्रीकृष्ण[illegible]ने चीर हरेथे तब गोपि[illegible], यह वचन दियाथा कि म कार्तिक म[illegible]में तुम्हारे साथ रास [illegible]गे, तभीसे गोपियां रासकी [illegible]आश किये मन[illegible] उदास हो नित उठ कार्तिक मासहीको मनाया करें. [illegible]नाते २ [illegible]दाई शरदऋतु आई.

चौ०-लागयोजबतेकार्तिकमास,घामशीतबरखाकोनास ॥
निर्मलजल सरवरभररहे, फूलेकमल हीयडहडहे ॥
कुमुदचकोर कंतकामिनी, फूलहिंदेखिचंदयामिनी ॥
चकईमलिनकमलकुम्हिलाने, जेनिजमित्रभानुकोमाने ॥

ऐसे कह फिर शुकदेव मुनि बोले कि, पृथ्वीनाथ! एकदिन श्रीकृष्णचंद्र कार्तिक पून्योकी रात्रिको घरसे निकल बाहर आय देखें तो निर्मल आकाशमें तारे छिटक रहे हैं; चांदनी दशोंदिशामें फैल रही हैं; शीतल सुगंधसहित मंदगति पवन बह रही है और एक ओर सघन बनकी छबि अधिकही शोभा देरही है. ऐसा समय देखतेही उनके मनमें आया कि, हमने गोपियोंको यह बचन दियाथा कि जो शरदऋतुमें तुम्हारे साथ रास करेंगे सो पूरा किया चाहिये. यह विचारकर बनमें आय श्रीकृष्णने बाँसुरी बजाई. बंशीकी ध्वनि सुन सब ब्रजयुवती बिरहकी मारी कामातुर हो अति घबराईं. निदान कुटुंबकी माया छोड़ कुलकान पटक गृहकाज तज हड़बड़ाय उलटा पुलटा शृंगार कर उठ धाईं, गोपी जो अपने पतिके पाससे उठ चलीं तो उसके पतिने बाटमें जा रोंका और फेरकर घर ले आया जाने न दिया; तब तो वह हरिका ध्यान कर देह छोड़ सबसे पहले जा मिली. उसके चित्तकी प्रीति देख श्रीकृष्णचंद्रने तुरंतही मुक्ति दी.

इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूंछा कि कृपानाथ! गोपीने श्रीकृष्णजीको ईश्वर जानके तो नहीं माना केवल विषयकी वासना कर भजा, वह मुक्त कैसे हुई? सो मुझे समझायके कहो जो मेरे मनका संदेह जाय. श्रीशुकदेव मुनि बोले—धर्मावतार! जो जन श्रीकृष्णचंद्रकी महिमा अनजानेभी गुण गाते हैं सोभी निःसंदेह भुक्ति मुक्ति पाते हैं. जैसे कोई बिनजाने अमृत पियेगा, वहभी अमर हो जायगा और जानके पियेगा, उसेभी वही गुण होगा. यह सब जानते हैं कि पदार्थका गुण और फल बिन हुये रहता नहीं. ऐसेही हरिभजनका प्रताप है, कोई किसी भावसे भजे मुक्त होगा. कहा है—

दो०-जपमाला छापा तिलक, सरै न एकौ काम ॥
मन काचे नाचे वृथा, सांचे रांचे राम ॥

और सुनो जिन जिनने जिस जिस भावसे श्रीकृष्णको मानके मुक्ति पाई सो कहताहूं-कि, नंद यशोदा इन्होंने तो पुत्रकर बूझा, गोपियोंने यारकर समझा, कंसने भयकर भजा, ग्वालबालोंने मित्रकर जपा, पांडवोंने प्रीतमकर जाना, शिशुपालने शत्रुकर माना, यदुवंशियोंने अपना कर ठाना, और योगी यति मुनियोंने ईश्वरकर ध्याया; पर अंतमें मुक्तिपदार्थ सबहीने पाया. जो एक गोपी प्रभुका ध्यान कर तरी तो क्या अचरज हुआ ?

यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेव मुनिसे कहा कि कृपानाथ! मेरे मनका संदेह गया, अब कृपाकर आगे कथा कहिये. श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! तिसकाल सब गोपियां अपने अपने झुंडलिये श्रीकृष्णचंद्र जगतउजागर रूपसागरमें धायकर यों जायमिलीं जैसे पानी पानीमें जाय मिले. उस समयके बनावकी शोभा बिहारीलालकी कुछ वर्णी नहीं जाती कि सब शृंगार करे, नटवरभेष धरे ऐसे मनभावने, सुन्दर सुहावने लगतेथे, कि व्रजयुवतियां हरिछबि देखतेही छक रहीं. तब मोहन उनकी क्षेम कुशल पूंछ रूखेहो बोले-कहो, रातसमय भूत प्रेतकी बिरियां भयावनी बाट काट उलटे पुलटे वस्त्र आभूषण पहने अति घबराई, कुटंबकी माया तज इस महाबनमें तुम कैसे आई ? ऐसा साहस करना नारियोंको उचित नहीं, स्त्रीको कहा है कि कायर, कुमति, क्रूर, कपटी, कुरूप, कोढ़ी, काना, अंधा, लूला, लँगडा, दरिद्री, कैसाही पति हो पर उसे उसकी सेवा करनी योग्य है. इसीमें उनका कल्याण है, और जगत्में बड़ाई; कुलवंती पतिव्रताका धर्म है कि पतिको क्षणभर न छोंड़े. और जो स्त्री अपने पुरुषको छोंड़ परपुरुषके पास जाती है सो जन्म जन्म नरकबास पाती है. ऐसे कह फिर बोले कि, सुनो तुमने आय सघन वन निर्मल चांदनी और यमुनातीरकी शोभा देखी अब घरजा मन लगाय कांतकी सेवा करो. इसीमें तुम्हारा सब भांति भला है. इतना वचन श्रीकृष्णके मुखसे सु-

नतेही सब गोपियां एक बार तो अचेत हो अपार शोचसागरमें पड़ीं. पीछे–

चौ०–नीचे चितैउसासैंलईं, पदनखते भू खोदत भईं ॥
यों दृगसों छूटी जलधारा, मानहुँ टूटे मोतीहारा ॥

निदान दुःखसे अति घबराय रोरो कहने लगीं कि, अहो कृष्ण ! तुम बड़े ठग हो. पहले तो वंशी बजाय अचानक हमारा ज्ञान, ध्यान, मन, धन हर लिया. अब निर्दयी हो कपट कर कर्कश वचन कह प्राण लिया चाहते हो ? यों सुनाय पुनि बोलीं:–

दो०–लोगकुटुँबघरपतितजे, तजीलोककीलाज ॥
हैंअनाथकोऊनहीं, राखि शरण ब्रजराज ॥

और जो जन तुम्हारे चरणोंमें रहते हैं सो धन, तन, लाज, बड़ाई नहीं चाहते. उनके तौ तुम्ही हो जन्म जन्मके कंत, हे प्राणरूप भगवंत !

चौ०–करिहैंकहाजायहमगेह, उरझेप्राणतुम्हारेनेह ॥

इतनी बातके सुनते श्रीकृष्णचंद्र मुसुकराय सब गोपियोंको निकट बुलायके कहा–'जो तुम राजी हो इस रंग; तो खेलो रास हमारे संग.' यह वचन सुन दुःख तज गोपियां प्रसन्नतासे चारों ओर घिर आईं और हरिमुख निरख लोचन सुफल करने लगीं–

दो०–ठाढ़ेबीचजुश्यामघन, इहिछबिकामिनिकेलि ।
मनहुँनीलगिरिकेतरे, उलटीकंचनबेलि ॥

आगे श्रीकृष्णजीने अपनी मायाको आज्ञा दी कि, हम रास करेंगे उसके लिये तू एक अच्छा स्थान रच और यहीं खड़ी रह, जो [illegible] जिस वस्तुकी इच्छा करे सो सो ला दीजे. महाराज ! उसने सुनतेही [illegible] [illegible]के तीर जाय एक कंचनका मंडलाकार बड़ा चौतरा बनाय मोती ह[illegible] जड़ उसके चारों ओर सपल्लव केलेके खंभ लगाय तिनमें वंदनवार और [illegible]ंति-भांतिके फूलोंकी माला बांध आ श्रीकृष्णचन्द्रसे कहा. ये सुनतेही [illegible] सब ब्रजयुवतियोंको साथ ले यमुनातीरको चले. वहां जाय देखा [illegible]द्रमंडलसे रासमंडलके चौतरेकी चमक चौगुनी शोभा देरही है. उसके चारों ओर रेती चांदनीसी फूल रही है. सुगंधसमेत शीतल मीठी पवन

चल रही है. और एक ओर सघनवनकी हरियाली उजाली रातमें अधिकही छबि दे रही है.इस समयको देखतेही सब गोपियां मग्न हो, उसी स्थानके निकट मानस सरोवर नाम एक सरोवर था, तिसके तीर जाय मनमाने सुथरे वस्त्र आभूषण पहर नखशिखसे शृंगार कर अच्छे बाजे बीन पखावज आदि सुर बांध बांध ले आई. और लगीं प्रेममदमाती हो शोच संकोच तज श्रीकृष्णके साथ मिल बजाने गाने नाचने. उस समय श्रीगोविंद गोपियोंकी मंडलीके मध्य ऐसे सुहावने लगतेथे जैसे तारामंडलमें चंद्रमा शोभे.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले सुनो महाराज ! जब गोपियोंने ज्ञान विवेक छोड़ रासमें हरिको मनसे विषयी पतिकर माना, और अपने आधीन जाना; तब श्रीकृष्णचंद्रजीने मनमें विचारा कि-

चौ०--अबमोहिंइन अपनेवशजानो, पतिविषयीसमसनमें आनो॥भईअज्ञानलाजतजिदेह,लपटहिंपकरहिंकंतसनेह। ज्ञानध्यानमिलकेबिसरायो, छांड़िजाउँ इनगर्वबढ़ायो ॥

देखूं मुझबिन पीछे बनमें क्या करती हैं और कैसे रहती हैं; ऐसे विचार श्रीराधिकाजीको साथ ले श्रीकृष्णचंद्र अंतर्धान हुए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे रासक्रीड़ारंभो नाम त्रिंशत्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ३० ॥

अध्याय ३१.

श्रीकृष्णका न देखनेसे गोपियोंका श्रीकृष्णको शोधना.

अथ रासमंडललीला.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, महाराज ! एकाएकी श्रीकृष्णचंद्रको न

देखतेंही गोपियोंकी आंखोंके आगे अँधेरा हो गया, और अति दुःख पाय ऐसे अकुलाईं जैसे मणि खोय सर्प घबराताहै. इसमें एक गोपी कहने लगी-

दोहा-कहो सखी मोहन कहां, गये हमें छिटकाय ॥
मेरे गरे भुज धरे, रहे हुते उर लाय ॥

अभी तो हमारे संग हिल मिल रासबिलास कर रहेथे, इतनेहीमें कहां गये? तुममेंसे किसीनेभी जाते न देखा. यह वचन सुन सब गोपियां बिरहकी मारी उदास हो हायमार बोलीं-

दोहा-कहां जायँ कैसी करैं, कासों कहैं पुकार ॥
हैं कित कछु न जानिये, क्यों कर मिलैं मुरार ॥

ऐसे कह हरिमदमाती हो सब गोपी लगीं चारों ओर ढूंढ ढूंढ गुण गाय २ टेरो यों पुकारने-

चौ०-हमकोक्योंछोड़ीब्रजनाथ,सरबसदियातुम्हारेसाथ॥

जब वहां न पाया तब आगे जाय आपसमें बोलीं सखी! यहां तो हम किसीको नहीं देखतीं, किससे पूंछें कि हरि किधर गये? यों सुन एक गोपीने कहा, सुनो आली! एक बात मेरे जीमें आई है कि ये जितने इस वनमें पशु पक्षी और वृक्ष हैं सो सब ऋषि मुनि हैं. ये कृष्णलीला देखनेको अवतार ले यहां आये हैं. इन्हींसे पूंछें, ये यहां खड़े देखते हैं; जिधर हरि गये होंगे तिधर बतादेंगे. इतना वचन सुनतेही सब गोपियां बिरहसे व्याकुल हो क्या जड़, क्या चैतन्य लगीं एकएकसे पूंछने-

चौ०-हे बड़ पीपल पाकरबीर, लह्यो पुण्यकर उच्चशरीर ॥
परउपकारी तुमहीं भये, वृक्षरूप पृथ्वीपर लये ॥
घाम शीत बरखादुख सहो, काज पराये ठाढ़े रहौ ॥
बकला फूल मूल फलडार, तिनसों करत पराई सार ॥
सबकामनधनहरनँदलाल, गयेकिधरकोकहोदयाल ॥
हे कदंब अंब कचनारी, तुम कहुँ देखे जात मुरारी ॥
हेअशोक चंपा करवीर, जात लखे तुमने बलबीर ॥

हेतुलसीअतिहरिकीप्यारी, तनतेकहूंनराखतन्यारी ॥
फूलीआजमिले हरिआय, हमहूकोकिनदेतवताय ॥
जाहिजुहीमालतीमाइ, इतह्वैनिकरेकुँवरकन्हाई ॥
मृगिहिंपुकारिकहैंब्रजनारी, इततुमजातलखेवनवारी ॥

इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! इसरीतिसे सब गोपी पशु, पक्षी, द्रुम, बेलिसे पूंछतीं श्रीकृष्णमय हो हो लगीं पूतना, दावा, आदि सब श्रीकृष्णकी करी हुई बाललीला करने और ढूंढ़ने. निदान ढूंढ़ते ढूंढ़ते कितनी एक दूर जाय देखें तो श्रीकृष्णके चरणचिह्न, कमल, यव, ध्वजा, अंकुशसमेत रेतपर जगमगा रहे हैं, देखतेही व्रजयुवतियां जिस रजको सुर नर मुनि खोजते हैं, तिस रजको दंडवत् कर शिर चढ़ाय हरिके मिलनेकी आश धर वहांसे बढ़ी तो देखा कि उन चरणचिह्नोंके आस पास एक नारीकेभी पाव पड़े हुए हैं. उन्हें देख अचरज कर आगे जाय देखें तो एक ठौर कोमल पातोंके बिछौनेपर सुंदर जड़ाऊ दर्पण पड़ा है, उससे लगीं पूछने. जब विरहभरा वहभी न बोला तब उन्होंने आपसमें पूंछा कहो आली ! यह क्यों कर लिया ? उसीसमय जो प्रिय प्यारीके मनकी जानती थी, उसने उत्तर दिया, कि सखी ! जब प्रीतम प्यारीकी चोटी गूंथन बैठे और सुंदर बदन बिलोकनेमें अंतर हुआ तिस बिरियां प्यारीने दर्पण प्रियको दिखाया, तब श्रीमुखका प्रतिबिंब सन्मुख आया, यह बात सुन गोपियां कुछ न कोपियां वरन कहने लगीं कि उसने शिव पार्वतीको अच्छीरीतसे पूजा है, और बड़ा तप किया है, जो प्राणपतिके साथ एकातमें निधड़क विहार करती है. महाराज ! सब गोपियां तो इधर विरह मदमाती बक बक झक झक ढूंढ़ती फिरतीही थी कि उधर श्रीराधिकाजी हरिके साथ अधिक सुख मान, प्रीतमको अपने बश जान, आपको सबसे बड़ा ठान, मनमें अभीमान आन, बोलीं—प्यारे ! अब मुझसे चला नहीं जाता. कांधेपर चढ़ाय ले चलिये. इतनी बातके सुनतेही गर्वप्रहारी अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रजीने मुसकुराय बैठकर कहा कि, आइये हमारे कांधेपर चढ़लीजिये. जब वह हाथ बढ़ाय चढ़नेको तय्यार हुई, तब श्रीकृष्ण अंतर्धान हुए. जो हाथ बढ़ाये थे सो

हाथ पसारे खड़ी रहगई ऐसेकि जैसे घनसे मानकर दामिनी बिछुड़ रही हो, के चंद्रसे चंद्रिका रूप पीछे गई होय, और गोरे तनकी ज्योति छूटि क्षितिपर छाह यों छबि दे रहीथी; कि, मानो सुंदर कंचनकी भूमिपै खड़ी है. नयनोंसे जलकी धार बह रहीथी और जो सुवासके वश सुख-पास भवँर आय बैठतेथे तिन्होंकोभी उड़ाय न सक्तीथी और अकेली हाय हायकर बनमें बिरहकी मारी इस भांति रोरहीथी, कि जिसके रोनेकी ध्वनि सुन पशु, पक्षी, और द्रुम बेली सब रोतेथे, और यों कह रहीथीं-

चौ०-हाहानाथपरमहितकारी, कहांगयेस्वच्छंदविहारी॥
चरणशरण दासी मैं तेरी, कृपासिंधु लीजे सुधमेरी॥

इतनेमें सब गोपियांभी ढूंढ़ती ढूंढ़ती उसके पास जापहुँचीं और उसके गले लग सबोंने मिल मिल ऐसा सुख माना कि, जैसे कोई महाधन खोय आधा धन पाय सुख माने. निदान सब गोपियांभी उसे अति-दुःखित जान साथ ले महाबनमें पैठीं और जहांलग चांदनी देखी तहां-लग गोपियोंने बनमें श्रीकृष्णको ढूंढ़ा. जब सघन बनके अँधेरेमें बाट न पाई तब वे सब वहांसे फिर धीरज धर मिलनेकी आश कर यमुनाके उसी तीरपर आय बैठीं; जहां श्रीकृष्णचंद्रजीने अधिक सुख दिया था. इति श्रील-ल्लूलालकृते प्रेमसागरे गोपीविरहवर्णनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः॥ ३१ ॥

अध्याय ३२.

गोपियां श्रीकृष्णके चरित्र और गुणगातीं हैं.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! सब गोपियां यमुनातीर बैठ

प्रेममदमाती हो हरिके चरित्र और गुण गाने लगीं, कि प्रीतम ! जबसे तुम ब्रजमें आये, तबसे नये नये सुख यहां आकर छाये; लक्ष्मीने करी तुम्हारे चरणकी आश, अचल आयके किया है वास; हम गोपी हैं दासी तुम्हारी, वेग सुध लीजे दया कर हमारी; जबसे सुंदर सांवली सलोनी मूर्ति देखी है तेरी, तबसे हुई हैं बिन मोलकी चेरी; तुम्हारे नयनबाणोंने हने हैं हिय हमारे, सो प्यारे किसलिये लेखे नहीं हैं तुम्हारे; जीव जाते हैं हमारे अब करुणा कीजे, तजकर कठोरता वेग दर्शन दीजे; जो तुम्हें मारनाही था तो हमको विषधर आग और जलसे किसलिये बचाया ? तभी मरने क्यों न दिया ? तुम केवल यशोदासुत नहीं हो. तुम्हें तो ब्रह्मा, रुद्र, इंद्रादि सब देवता बिनती कर लाये हैं संसारकी रक्षाके लिये. हे प्राणनाथ ! हमें एक अचरज बड़ा है कि, जो अपनेहीको मारोगे तो करोगे किसकी रखवाली ? प्रीतम ! तुम अंतर्यामी हो, हमारे दुःख हर मनकी आश क्यों नहीं पूरी करते ? क्या अबलाओंपरही शूरता धरी है ? हे प्यारे ! जब तुम्हारी मंदमुसकानयुत प्यारभरी चितवन और भ्रुकुटीकी मरोर, नयनोंकी सिकोर, मुकुट ग्रीवांकी लटक, और बातोंकी चटक हमारे जियमें आती है तब क्या क्या दुःख पाती हैं ? और जिस समय तुम गो चरावन बनमें जातेथे, तिस समय तुम्हारे कोमल चरणोंका ध्यान करने लगें तो बनके कंकर कांटे आ हमारे मनमें कसकतेथे. भोरके गयें सांझको फिर आतेथे, तिसपरभी हमें चार प्रहर चार युगसे जातेथे. जब सन्मुख बैठे सुंदर बदन निहारतीं थीं तब अपने जीमें बिचारतीं थीं कि, ब्रह्मा कोई बड़ा मूरख है, जो पलक बनाई है हमारे इकटक देखनेमें बाधा डालनेको.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! इसी रीतसे सब गोपी बिरहकी मारी श्रीकृष्णचंद्रके गुण और चरित्र अनेक प्रकारसे गाय गाय हारीं, तिसपरभी न आए बिहारी; तब तो निपट निराश हो मिलनेकी [illegible] कर जीनेका भरोसा छोड़ अति अधीरतासे अचेत हो गिर गिर ऐसे [illegible] पुकारीं, कि-सुनकर चर अचरभी दुःखित भये भारी. इति श्रीलल्लू[illegible]कृते प्रेमसागरे गोपीविरहकथनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥३२॥

अध्याय ३३.

श्रीकृष्ण और गोपियोंका संवाद.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! जब श्रीकृष्णचंद्र अंतर्यामीने जाना कि अब ये गोपियां मुझबिन जीती न बचेंगी–

छं०–तब तिनहीमें प्रकट भये, नँदनँदन यों ॥
दृष्टि बंदकर छिपे, फेर प्रकटे नटवरज्यों ॥

दो०–आए हरि देखे जबै, उठीं सबै यों चेत ॥
प्राण परे ज्यों मृतकमें, इंद्री जगें अचेत ॥

छं०–बिन देखे सबको मन, व्याकुल होत भयो ॥
मानो मनमथभुजंग, सबनि डसिकै गयो ॥
पीर खरी प्रियजान, पहूँचे आइके ॥
अमृतबेलि निज सींच, लई सब ज्याइके ॥

दो०–मनहुँ कमल निशि मलिन व्है, ऐसे हो ब्रजबाल ॥
कुंडल रविछबि देखिकै, फूले नैन बिशाल ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदको देखतेही सब गोपिया एकाएकी बिरहसागरसे निकल उनके पास जाय ऐसे प्रसन्न हुई कि कोई जैसे अथाह समुद्रमें डूब थाह पाय प्रसन्न होय, और चारों ओरसे घेरकर खड़ी भई. तब [illegible]ष्ण उन्हें साथ लिये वहा आये, जहां पहले रासबिलास किया [illegible]तेही एक

एक गोपीने अपनी ओढ़नी उतारके श्रीकृष्णके बैठनेको बिछादी. जो वे उसपर बैठे तो कईएक गोपी क्रोधकर बोलीं कि, महाराज! तुम बड़े कपटी हो, बिराना मन धन लेना जानतेहो, पर किसीका कछु गुण नहीं मानते, इतना कह आपसमें कहने लगीं-

दोहा--गुण छांड़े औगुण गहे, रहे कपट मनभाय ॥
देखो सखी बिचारिकै, तासों कहा बसाय ॥

यह सुन एक उनमेंसे बोली कि, सखी तुम अलगी रहो. अपने कहे कुछ शोभा नहीं पाती, देखो मैं कृष्णहीसे कहाती हूँ, यों कह उसने मुसुकरायके श्रीकृष्णसे पूंछा कि, महाराज! एक बिन गुण किये गुण मानले, दूसरा किये उसका पलटा दे, तिसरा गुणके पलटे अवगुण करे, चौथा किसीके किये गुणकोभी मनमें न धरे. इन चारोंमें कौन भला है और कौन बुरा? यह तुम हमसे समझाके कहो. श्रीकृष्णचंद्र बोले कि, तुम सब मन दे सुनो. भला और बुरा मैं बुझाकर कहताहूं. उत्तम तो वह है जो बिनकिये करै. जैसे पिता पुत्रको चाहता है. और कियेपर करनेसे कुछ पुण्य नहीं सो ऐसे है, जैसे बेटाके हेतु गौ दूध देती है गुणको अवगुण माने तिसे शत्रु जानिये. सबसे बुरा कृतघ्नी, जो कियेको मेटे. इतना बचन सुनतेही सब गोपिया आपसमें एक एकका मुँह देख २ हँसने लगीं. तब तो श्रीकृष्णचंद्र घबराकर बोले कि सुनो मैं इन चारकी गिनतीमें नहीं, जो तुम जानके हँसती हो. बरन मेरी तो यह रीति है कि, जो मुझसे जिस बातकी इच्छा रखता है, तिसके मनकी वांछा पूरी करता हूं. कदाचित् तुम कहो कि, जो तुम्हारी यह चाल है तो हमें बनमें ऐसे क्यों छोड़गये? उसका कारण यह है कि, मैंने तुम्हारी प्रीतिकी परीक्षा ली; इस बातको बुरा [illegible] मानो, मेरा कहा सचाही जानो. यों कह फिर बोले-

चौ०--अबहम [illegible]लियोतिहारो, कीनोसुमिरनध्यानहमारो॥ मोहिंस[illegible]तुम प्रीतिबढ़ाई, निर्द्धन मनोसंपदा पाई॥ ऐसे आई मेरे [illegible]ज, छांड़ी लोक वेदकी लाज ॥

ज्यों बैरागी छांड़े गेह, मनदे हरिसों करे सनेह ॥
कहातिहारीकरैंबड़ाई, हमपैपलटोदियोनजाई ॥

जो ब्रह्माके सौ वर्ष जियें तौभी हम तुम्हरे ऋणसे उऋण न होंय. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे गोपीकृष्णसंवादो नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३।

अध्याय ३४.

रासक्रीडा.

श्रीशुकदेव मुनि बोले–राजा ! जब श्रीकृष्णचंद्रने इस ढबसे रसके वचन कहे, तब तो सब गोपियां रिस छोंड़ प्रसन्न हो उठ हरिसे मिल भांति भांतिके सुख मान आनंदमग्न हो कुतूहल करने लगीं. तिससमय

दोहा-कृष्णअंश माया ठई, भये अंग बहु देह ॥
सबको सुख चाहत दियो, लीला परमसनेह ॥

महाराज ! जितनी गोपियां थीं तितनेही शरीर श्रीकृष्णचंद्रने धर उसी रासमंडलके चौतरेपर सबको साथले फिर रासबिलासका आरंभ किया.

चौ०–द्वैद्वै गोपीजोरेहाथा, तिनकेबीच बीच हरि साथा ॥
अपनी अपनी ढिगसबजाने, नहींदूसरेकीपहिंचाने ॥
अँगुरिनमें अँगुरीकरदिये, प्रफुलितफिरेंसंगहरिलिये ॥
बिचगोपीबिचनंदकिशोर, सघनघटादामिनिचहुँओर ॥
श्यामकृष्णगोरीब्रजबाला, मानहुँकनकनीलमणिमाला ॥

महाराज ! इसीरीतसे खड़ेहो गोपी और कृष्ण लगे अनेक अनेक

प्रकारके यंत्रोंके सुर
बजाय बजाय गानें,
लेले उपजै बोल बता
उनको तन मनकीभी
कभी उनका मुकुट
माल. पसीनेकी बूंदे
पियोंके गोरे गोरे मुखड़ोंपर अलकें यों बिथर रहाथा, कि जैसे अमृतके
लोभसे सपोंलिये उड़कर चांदको जा लपटे होयँ. कभी कोई गोपी आ
कृष्णकी मुरलीके साथ मिलाकर दिलमें गातीथी. कभी कोई अपनी
तान अलगही लेजातीथी. और जब कोई बंशीको छेंक उसकी तान
समुझ ज्योंकी त्यों गलेसे निकालतीथी, तब हरि ऐसे भूल रहते कि
ज्यों बालक दर्पणमें अपना प्रतिबिंब देख भूल रहे. इसी ढबसे गाय
गाय नाच नाच अनेक अनेक प्रकारके हाव भाव कटाक्ष करकर सुख लेते
देतेथे. और परस्पर रीझ हँस हँस कंठ लगाय लगाय वस्त्र आभूषण
निछावर कररहेथे. तिसकाल ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र आदि सब देवता और गंधर्व
अपनी अपनी स्त्रियोंसमेत बिमानोंमें बैठ रासमंडलीका सुखमुख देख
देख आनंदसे फूल बरसावने लगे. और उनकी स्त्रियां वह सुख लख
हंसकर मनमें कहतीं, कि जो जन्म ले ब्रजमें जातीं तो हमभी हरिके
साथ रासबिलास करतीं. और रागरागिनियोंका ऐसा समा बँधा हुआ था
कि जिसको सुनके पवन पानीभी न बहताथा और तारामंडलसमेत चंद्रमा
थकित हो किरणोंसे अमृत बरसाताथा. इससे रात बढ़ी तो छह महीने बीत
गये, और किसीने न जाना. तभीसे उस रैनिका नाम ब्रह्मरात्रि हुआ.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले—पृथ्वीनाथ! रासलीला क-
रते जो कुछ श्रीकृष्णचंद्रके मनमें तरंग आई तो गोपियोंको ले यमुना-
तीरपर जाय नीरमें पैठ जलक्रीड़ा कर श्रम मिटाय बाहर आय सबके
मनोरथ पूरे कर बोले कि, अब चार घड़ी रात बाकी रही है. तुम सब अ-
पने २ घर जाओ. इतना बचन सुन उदास हो गोपियोंने कहा-नाथ!
आपके चरणकमल छोड़के घर कैसे जायँ? हमारा लालची मन तो कहा

॰, सुनो. जैसे योगीजन मेरा ध्यान धरते
ा. मैं तुम्हारे पास जहां रहोगी तहां रहूंगा.
ोष कर बिदा हो अपने अपने घर गईं.
लोंमेंसे किसीने न जाना कि ये यहां न थीं.

ाजा परीक्षितने श्रीशुकदेव मुनिसे पूंछा कि, दीन-
[illegible] मुझे समझाकर कहो, कि श्रीकृष्णचंद्र तो असुरोंको मार पृथ्वीको भार उतारने, और साधु संतोंको सुख दे धर्मका पंथ चलानेके लिये अवतार ले आयेथे. उन्होंने पराई स्त्रियोंके साथ रासविलास क्यों किया ? यह तो कुछ लंपटका कर्म है, जो बिरानी नारीसे भोग करे. शुकदेवजी बोले—

चौ०--सुनराजायदिभेदनजान्यो, मानुषसमपरमेश्वरमान्यो ॥ जिनकेसुमिरे पातक जात, तेजवंत पावनहैगात। जैसे अग्निमांझ कछुपरै, सोऊ अग्नि होयके जरै ॥

समर्थ क्या नहीं करते ? क्योंकि वे तो करके कर्मकी हानि करते हैं. जैसे शिवजीने विष लिया, और खाके कंठको भूषण किया. और काले सांपका किया हार, कौन जाने उनका व्यौहार; वे तो अपने लिये कुछभी नहीं करते. जो उनका भजन सुमिरन कर कोई वर मागता है, तैसाही तिसको देते हैं. उनकी तो यह रीति है कि, सबसे मिले दृष्टि आते हैं, और ध्यान कर देखिये तो सबसे ऐसे अलग जनाते हैं, जैसे जलमें कमलका पात, और गोपियोंकी उत्पत्ति तो मैं तुम्हें पहलेही सुना चुकाहूँ कि, वेद और वेदकी ऋचायें हरिका दरशपरश करनेको व्रजमें जन्म ले आईं हैं, और इसी भांति श्रीराधिकाभी ब्रह्मसे वर पाय श्रीकृष्णचंद्रकी सेवा करनेको जन्म ले आई और प्रभुकी सेवामें रही.

इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले—महाराज ! कहा है कि, हरिका चरित्र मान लीजे, पर उनके करनेमें मन न दीजे. जो कोई गोपीनाथका यश गाता है सो निश्चय परमपद पाता है. और जैसा फल होता है अरसठ तीर्थके न्हानेमें, तैसाही फल मिलता है श्रीकृष्णयश गानेमें.

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे पंचाध्यायीरासलीलावर्णनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

अध्याय ३५.

सुदर्शन विद्याधरका अजगर शरीरसे मोक्ष और शंखचूडदैत्यका वध.

श्रीशुकदेव मुनि कहने लगे, कि राजा ! जैसे श्रीकृष्णजीने विद्याधरको तारा और शंखचूड़को मारा सो प्रसंग कहताहूं. तुम जी लगाय सुनो. एक दिन नंदजीने सब गोप ग्वालोंको बुलायके कहा-कि, भाइयो ! जब श्रीकृष्णका जन्म हुआ था, तब मैंने कुलदेवी अंबिकाकी मानता करी थी कि जिस दिन श्रीकृष्ण बारह वर्षका होगा तिस दिन नगरसमेत बाजे गाजेसे जाकर पूजा करूंगा; सो दिन उनकी कृपासे आज देखा, अब चलकर पूजा किया चाहिये. इतना वचन नंदजीके मुखसे सुनतेही सब गोप ग्वाल उठधाए, और झटपट अपने अपने घरोंसे पूजाकी सामग्री ले आए. तब तो नंदरायभी पूजा पाय और दूध दही माखन, छकड़ों बहँगियोंमें रखवाय, कुटुंबसमेत उनके साथ हो लिये. और चले चले अंबिकाके स्थानपर पहुँचे. वहां जाय, सरस्वती नदीमें न्हाय, नंदजीने पुरोहित बुलाय सबको साथ ले देवीके मंदिरमें जाय शास्त्रकी रीतिसे पूजा की, और जो पदार्थ चढ़ानेको लेगये थे सो आगे धर परिक्रमा दे हाथ जोड़ बिनती कर कहा, कि माँ ! आपकी [illegible] कान्ह बारह वर्षका हुआ. ऐसे कह दंडवत् कर मंदिरके बाहर आय सहस्र ब्राह्मण जिमाय, इसमें अबेर जो हुई तो सब ब्रजवासियां-

समेत नंदजी तीर्थ व्रत कर वहांही रहे. रातको सोतेथे, कि एक अजगरने आय नंदरायका पाव पकड़ा और लगा निगलने. तब तो वे देखतेही भय खाय घबरायके लगे पुकारने; हे कृष्ण! वेग सुध ले, नहीं तो यह मुझे निगले जाता है. उनका शब्द सुनतेंही सारे ब्रजवासी स्त्रियां पुरुष नींदसे चौंक नंदजीके निकट जाय उजाला कर देखें तो एक अजगर उनका पांव पकड़े पड़ा है, इतनेमें श्रीकृष्णचंद्रजीभी पहुँचे. सबके देखतेही ज्योंही उसकी पीठमें चरण लगाया त्योंही वह अपनी देह छोंड़ सुंदर पुरुष हो प्रणाम कर सन्मुख हाथ जोड़ खड़ा हुआ तब श्रीकृष्णजीने उससे पूंछा कि, तू कौन है? और किस पापसे अजगर हुआथा? सो कह. वह शिर झुंकाय, विनती कर बोला-अंतर्यामी! तुम मेरी उत्पत्तिका कारण सब जानते हो, मैं सुदर्शन नाम विद्याधर हूं.सुरपुरमें रहता था. और अपने रूपगुणके आगे गर्वसे किसीको कुछ न गिनता था. एक दिन विमानमें बैठ फिरनेको निकला तो जहां अंगिरा ऋषि बैठे तप करते थे, तिनके ऊपर हो सौबेर आया गया. एकबेर जो उन्होंने विमानकी परछाहीं देखी तो ऊपर देख क्रोध कर मुझे शाप दिया कि, रे अभिमानी! तू अजगर हो. इतना वचन उनके मुखसे निकला कि, मैं अजगर हो नीचे गिरा, तिससमय ऋषिने कहा कि तेरी मुक्ति श्रीकृष्णचंद्रके हाथ होगी, इसी लिये मैंने नंदरायजीके चरण आन पकड़े थे, कि आप आयके मुझे मुक्त करें. सो कृपानाथ! आपने आय कृपा कर मुझे मुक्ति दी. ऐसे कह विद्याधर तो परिक्रमा दे हरिसे आज्ञा ले दंडवत् कर बिदा हो विमानपर चढ़ सुरलोकको गया, और यह चरित्र देख सब ब्रजबासियोंको अचरज हुवा. निदान भोर होतेही देवीका दर्शन कर सब मिल वृंदावन आए.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले—कि पृथ्वीनाथ! एक दिन हलधर और गोविंद गोपियोंसमेत चांदनी रातको आनंदसे वनमें गाय रहेथे कि इसबीच कुबेरका सेवक शंखचूड नाम यक्ष जिसके शीशमें मणि था और अतिबलवान् था, सो आ निकला, देखे तो एक ओर सब गोपीयूथ कुतूहल कररही हैं व एक ओर कृष्ण बलदेव प्रेम

हो मत्तवत् गाय रहे हैं, इसके जीमें जो कुछ आई तो सब व्रजयुवतियोंको घेर आगे कर लेचला. तिससमय सब गोपी भय खाय पुकारीं, व्रजनाथ ! रक्षा करो. कृष्ण बलराम इतना वचन गोपियोंके मुखसे निकलतेही सुनकर दोनों भाई रूख उखाड़ हाथोंमें ले यों दौड़ आए, कि मानो सिंह माते गजपर उठ धाए. और वहां जाय गोपियोंसे कहा कि तुम किसीसे मत डरो हम आन पहुँचे. इनको कालसमान देखतेही यक्ष भयमान् हो गोपियोंको छोड़ अपना प्राण ले भागा. उस काल नंदलालने बलदेवजीको तो गोपियोंके पास छोड़ा, और आप जाय उस्के झोटे पकड़ पछाड़ा. निदान तिरछा हाथ कर उस्का शिर काट मणि ले आन बलरामजीको दिया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे विद्याधरमोक्षः शंखचूड़वधो नाम पंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

अध्याय ३६.

श्रीकृष्णजीका वनमें धेनु चरावना और गोपियोंका यशोदाके पास श्रीकृष्णका यश गाना.

श्रीशुकदेवजी मुनि बोले कि राजा ! जबतक हरि वनमें धेनु चरावें तबतक सब व्रजयुवतियां नंदरानीके पास आय बैठ कर प्रभुका यश गावें. जो लीला श्रीकृष्ण वनमें करें सो गोपिया घरबैठीं उचरें—

चौ०-सुनो सखी बाजति है बैन, पशु पक्षी पावत हैं चैन ॥
पतिसँगदेवीथकींबिमान, मगनभईहैंधुनिसुनिकान ॥
करते पहिरें चुरी सुंदरी, बिव्हलमनतनकीसुधिहरी ॥

तबहीं एक कहै ब्रजनारी, गरजानिमेघतजीअतिहारी ॥
गावत हरि आनंदअडोल, मोहनचातकपानिकपोल ॥
पियसँगमृगीथकीसुनिबेनु, यमुनाफिरीघिरीतहँधेनु ॥
मोहे बादर छैया करें, मानों छत्र कृष्णपर धरें ॥
अबहरिसघनकुंजकोधाए, पुनिसबबंशीवटतरआए ॥
गायनपाछे डोलत भये, घेरलई जलप्यावन गये ॥
सांझ भई अब उलटेहरी, रांभति गाय बेनुधुनि करी

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि म[illegible] राज ! इसीरीतसे नित गोपियां दिनभर हरिके गुण गावें और स[illegible] समय आगे जाय श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदसे मिल सुख मान ले अ[illegible] और तिस समय यशोदारानीभी रजमंडित पुत्रका मुख प्यारसे [illegible] कंठ लगाय सुख माने. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे [illegible]वर्णनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥

अध्याय ३७.

वृषभासुरका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! एकदिन श्रीकृष्ण बलराम सांझसमय धेनु चरायके बनसे घरको आतेथे. इसबीच एक असुर बड़ा बलवान् आय गायोंमें मिला.

चौ०-तिहि अकाशलौंदेहीधरी, पीठकड़ीपाथरसीकरी ॥

बड़ेसींगतीक्षणदोउखरे, रक्तनयनअतिहीरिसभरे ॥
पूंछउठायडकारतुफिरे, रहि रहि मूतत गोवर करे ॥
फटके कंध हिलावे कान, गये देव सवछोंड़ विमान ॥
खुरसों खोदे नदी करारे, पर्वत उलट पीठसोंडारे ॥
सबको त्रास भयो तिहिं काल, कंपिहँलोकपालदिगपाल॥
पृथ्वीहलैशेष थरहरै, तियऔ धेनुगर्भ भूपरै ॥

उसे देखतेही सब गायें तो जिधर उधर फैल गईं और ब्रजवासी दौड़ वहां आए जहां सबके पीछे कृष्ण बलराम चले आते थे. प्रणाम कर बोले महाराज ! आगे एक अति बड़ा बैल खड़ा है उससे हमें बचाओ. इतनी बातके सुनतेही अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्र बोले कि—तुम कुछ मत डरो. वह राक्षस वृषभका रूप बनकर आया है नीच; हमसे चाहता है अपनी मीच. इतना कह आगे जाय उसे देख बोले-बनवारी, कि आव हमारे पास कपटतनधारी, तू और किसीको क्या डराता है मेरे निकट किसलिये नहीं आता ? जो बैरी सिंह कहावता है सो मृगपर नहीं धावता देख मैंही हूं कालरूप गोविंद, मैंने तुझसे वहुतोंको मारके किया है [illegible] फिर ताल [illegible] सुनतेही असुर ऐसे क्रोध कर धाया कि, मानो इंद्रका वज्र आया; ज्यों ज्यों हरि उसे हटातेथे त्यों त्यों वह सँभल सँभल बढ़ा आताथा. एकवार जो उन्होंने उसे दे पटाका त्योंहीं खिझलाकर उठा और दोनों सींगोंसे उसने हरिको दबाया, तब तो श्रीकृष्णजीनेभी फुरतीसे निकल झट पावपर पांव दे उसके सींग पकड़ यों मरोड़ा कि जैसे कोई भींगे चीरको. निदान वह पछाड़ खाय गिरा और उसका जी निकल गया. तिस समय सब देवता अपने अपने विमानोंमें बैठे आनंदसे फूल वरसावने लगे, और गोपी गोप कृष्णयश गाने; इसबीच श्रीराधिकाजीने आ हरिसे कहा कि, महाराज ! वृषभरूप जो तुमने मारा इसका पाप हुआ इससे अब तुम तीर्थ न्हाय आओ, तब किसीको हाथ लगाओ. इतनी बातके सुनतेही प्रभु बोले कि, सब तीर्थोंको मैं ब्रजमेंही बुलाये लेताहूं यों कह गोवर्ध-

नके निकट जाय दो औड़े कुंड खुदवाये. तहांहीं सब तीर्थ देह धर आये और अपना अपना नाम कह कह उनमें जल डाल डाल चलेगए. तब श्रीकृष्णचंद्र उनमें स्नान कर बाहर आय अनेकं गोदान दे बहुतसे ब्राह्मण जिमाय शुद्ध हुए. और उसी दिनसे कृष्णकुंड राधाकुंड वे प्रसिद्ध हुए.

यह प्रसंग सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि महाराज! एकदिन नारद मुनिजी कंसके पास आये. और उसका कोप बढ़ानेको जब उन्होंने बलराम और श्यामके होने और मायाके आने और कृष्णके जानेका भेद समझाकर कहा. तब कंस क्रोध कर बोला, नारदजी तुम सच कहतेहो.

दोहा--प्रथम दियो सुत आनिकै, मन परतीत बढ़ाय ॥
ज्यों ठग कछु दिखाइकै, सर्वस ले जियजाय ॥

इतना कह वसुदेवजीको बुलाय पकड़ बांधा और कांधेपर हाथ रख अकुला कर बोला—

चौ०--मिलारहा कपटी तू मुझे, भलासाधु जानामैंतुझे॥
दिया नंदके कृष्ण पठाय, देवी हमें दिखाईआय ॥
मनमें कछु कही मुख और, मारूं अवशितुयाही ठौर ॥
मित्रसगा सेवक हितकारी, करै कपट सो पापी भारी ॥

दोहा--मुख मीठा मन विषभरा, रहे कपटके हेत ॥
आपकाज परद्रोहिया, उससे भला जु प्रेत ॥

ऐसे बक झक फिर कंस नारदजीसे कहने लगा कि महाराज! हमने कछु इसके मनका भेद न पाया, हुआ लड़का और कन्याको ला दिखाया, जिसे कहा अधूरागया सोई जा गोकुलमें बलदेव भया. इतना कह क्रोधकर होंठ चबाय खड्ग उठाय ज्यों चाहा कि, वसुदेवको मारूं त्यों नारद मुनिने हाथपकड़कर कहा—राजा! वसुदेवको तू रख आज, और जिसमें कृष्ण बलराम आवें सो कर काज. ऐसे समझाय बुझाय जब नारदमुनि चलेगये, तब कंसने वसुदेव देवकीको तो एक कोठरीमें मूंददिया, और आप भयातुर हो केशीनाम राक्षसको बुलायके कहा—

चौ०-महाबली तू साथी मेरा, बड़ा भरोसा मुझको तेरा ॥
एकबार तू व्रजमें जा, रामकृष्णहति मुझे दिखा ॥

इतना वचन सुनतेही केशी तो आज्ञा पाय विदा हो दंडवत् कर वृंदावनको गया. और कंसने शल, तोशल, चाणूर, अरिष्ट, व्योमासुर आदि जितने मंत्री थे सबको बुला भेजा. वे आये, तिन्हें समझा कर कहनेलगा कि मेरा बैरी पास आय बसा है तुम अपने जीमें शोच विचार करके मेरे मनका शूल जो खटकता है सो निकालो. मंत्री बोले-पृथ्वीनाथ! आप महाबली हो किससे डरते हो? रामकृष्णका मारना क्या बड़ी बात है? कुछ चिंता मत करो. जिस छलबलसे वे यहां आवें सोई हम मता बतावें. पहले तो यहां भली भांतिसे एक ऐसी सुंदर रंग-भूमि बनवाइये, कि जिसकी शोभा सुनतेही देखनेको नगर नगर गांव-गांवके लोग उठ धावें; पीछे महादेवका यज्ञ करवाओ. होमके लिये बकरे भैंसे मँगवाओ. यह समाचार सुन सब व्रजवासी भेंट लावेंगे, तिनके साथ रामकृष्णभी आवेंगे. उन्हें तभी कोई मल्ल पछाड़ेगा. या कोई औरही बली पौरमें मार डालेगा. इतनी बातके सुनतेही-

सो०-कहै कंस मनलाय, भलो मतो मंत्री दियो ॥
लीने मल्ल बुलाय, आदर कर बीरा दिए ॥

फिर सभामें आय अपने बड़े बड़े राक्षसोंसे कहने लगा; कि जब हमारे भानजे रामकृष्ण यहां आवें तब तुममेंसे कोई उन्हें मार डालियो, जो मेरे जीका खटका जाय; उन्हें यों समझाय पुनि महावतको बुलाकर बोला, कि तेरा सबसे मतवाला हाथी है. तू द्वारपर लिये खड़ा रहियो. जब वे दोनों आवें और द्वारमें पाँव दें तब तू हाथीसे चिथा डालियो [illegible] भांति भागने न पावें. जो उन दोनोंको मारेगा सो मुँह मांगा [illegible] पावे-गा. ऐसा सबको सुनाय समझाय बुझाय कार्तिक वदी [illegible] को शिव-का यज्ञ ठहरा कंसने सांझ समय अक्रूरको बुलाय अ[illegible] [illegible]व भक्ति कर घरभीतर लेजाय एक सिंहासनपर अपने पास बै[illegible] हाथ पकड़ अति-प्यारसे कहा, कि तुम यदुकुलमें सबसे बड़े [illegible] नी, धर्मात्मा, धीर हो

इसलिये तुम्हें सब जानते मानते हैं. ऐसा कोई नहीं जो तुम्हें देख सुखी न होय इससे जैसे इंद्रका काज वामनने जा किया जो छलकर बलिका सारा राज्य ले दिया और राजा बलिको पाताल पठाया. तैसे तुम हमारा काम करो, कि एकबेर वृंदावन जाओ और देवकीके दोनों लड़कोंको जैसे बने तैसे छलबलकर यहां ले आओ. कहा है जो बड़े हैं सो पराये काज आप दुःख सहा करते हैं. तिसमें तुम्हीं तो हो हमारी सब बातकी लाज; अधिक क्या कहेंगे, जैसे बने तैसे उन्हें ले आओ तो यहा सहज-हीमें मारे जायँगे, कै तो देखतेही चाणूर पछाड़ेगा, कै गज कुवलिया पकड़ चीर डालेगा, नहीं तो मैंही उठ मारूंगा, अपना काज अपने हाथ सवाँरूंगा, और उन दोनोंको मार पीछे उग्रसेनको हनूंगा; क्यों कि वह बड़ा कपटी है मेरा मरना चाहता है. देवकीके पिता देवकको आगसे जलाय पानीमें डुबाऊँगा, साथही उसके वसुदेवको मार हरिभक्तोंको जड़से खोऊंगा तब निष्कंटक राज्य कर जरासंध जो मेरा मित्र है प्रचंड, उसके त्राससे कांपतें हैं नौ खंड; और नरकासुर, बाणासुर आदि बड़े बड़े महाबली राक्षस जिसके सेवक हैं तिससे जा मिलूंगा, जो तुम रामकृष्णको ले आओ. इतनी बातें कहकर कंस फिर अक्रूरको समझाने लगा, कि तुम वृंदावनमें जाय नंदके यहां कहियो कि शिवका यज्ञ है, धनुष धरा है, और अनेक अनेक प्रकारके कुतूहल वहां होयँगे. यह सुन नंद उपनंद गोपोंसमेत बकरे भैंसे ले भेंट देने आवेंगे तिनके साथ देखनेको कृष्ण बलदेवभी आवेंगे. यह तो मैंने तुम्हें उनके लावनेका उपाय बताय दिया. आगे तुम सुज्ञान हो जो और जीतें बनिआवे सो करि कहियो. अधिक तुमसे क्या कहें? कहा है कि-

सो०--होय बिचित्र बसीठ, जाहि बुद्धिबल आपनों ॥
परकारजपर दीठ, रहहि भरोसो ताहिका ॥

इतनी बातके सुनतेही पहले तो अक्रूरने अपने जीमें बिचारा कि जो मैं अब कुछ भली बात कहूंगा यह न मानेगा. इससे उत्तम यही है कि इस समय इसके मनभाती सुहाती बात कहूं ऐसे औरभी ठौर कहा है, कि वही कहिये जो जिसे सुहाय, यों शोच बिचार अक्रूर हाथ जोड़

शिर झुँकाय बोला—महाराज ! तुमने भला मता किया. यह वचन हमनेभी शिर चढ़ाय मानलिया. होनहारपर कुछ वश नहीं चलता. मनुष्य अनेक मनोरथ कर धरता है पर कर्मका लिखाही फल पावता है. शोचता है और, होता है और. किसीके मनका चेता होता नहीं, आगम बांध तुमने यह बात विचारी है, न जानिये कैसी होय, मैंने तुम्हारी बात मानली. कल भोरको जाऊँगा और रामकृष्णको ले आऊंगा. ऐसे कह कंससे बिदा हो अक्रूर अपने घर आया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कंसनारदसंवादो नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अध्याय ३८.

श्रीकृष्णसे केशी दैत्यका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले-कि, महाराज ! ज्यों श्रीकृष्णचंद्रने केशीको मारा और नारदजीने स्तुति करी, पुनि हरिने व्योमासुरको हना त्यों सब चरित्र कहताहूं तुम चित्त दे सुनो; कि भोर होतेही केशी अति ऊंचा भयावना घोड़ा बन वृंदावनमें आया. और लगा लाली लाली आंखें कर नयन चढ़ाय कान पूंछ उठाय टापोंसे भू खोदने और हींस हींस कांधा कँपाय कँपाय लातें चलाने. इसे देखतेही ग्वालबालोंने भय खाय भाग श्रीकृष्णसे जा कहा; ये सुनके वहां आए, जहां वह था और उसे देख लड़नेको फेंटा बांध ताल ठोंक सिंहकी भांति गर्जकर बोले-अरे ! जो तू कंसका बड़ा प्रीतम है और घोड़ा बन आया है तो औरके पीछे क्यों फिरता है आ मुझसे लड़ जो तेरा बल देखूं. दीपपतंगकी भांति कबतक फिरेगा. तेरी

मृत्यु तो निकट आन पहुँची है. यह बचन सुन केशी कोपकर अपने मन कहने लगा, कि आज इसका बल देखूंगा, और पकड़ ईखकी भांति कंसका कार्य्य कर जाऊंगा. इतना कह मुँह बायके ऐसे [illegible] कि मानो सारे संसारको खाय जायगा. आतेही पहले जो उसने श्रीकृष्णपर मुँह चलाया तो उन्होंने एकबेर तो ढकेल कर पीछेको हटाया; जब दूसरी बेर वह फिर सँभलके मुख फैलाय धाया, तब श्रीकृष्णने अपना हाथ उसके मुँहमें डाल लोह लाटसा कर ऐसा बढ़ाया, कि जि[illegible] उसके दशोंद्वार जा रोंके; तब तो केशी घबराकर जीमें कहने लगा [illegible] देह फटती है, यह कैसी भई ? अपनी मृत्यु आप मुँहमें ली. जैसे मछली बंसीको निगल प्राण देती है, तैसे मैनेभी अपना जीव खोया.

इतना कह उसने बहुतेरे उपाय हाथ निकालनेको किये; पर एकभी काम न आया. निदान श्वास रुँककर पेट फटगया तो पछाड़ खायके गिरा, तब उसके शरीरसे लोहू नदीकी भांति बह निकला, तिस समय ग्वालबाल आय आय देखने लगे, और श्रीकृष्णचंद्र आगे ज[illegible]नमें एक कदंबकी छाँहतले खड़े हुए, इसबीच बीणा हाथमें लिये नार[illegible]जी आन पहूंचे. प्रणाम कर खड़े हो बीना बजाय श्रीकृष्णचंद्रकी [illegible] भविष्यकी सब लीला और चरित्र गायके बोले कि-कृपानाथ [illegible]हारी लीला अपरंपार है. इतनी किसमें सामर्थ्य है, जो आपके चरि[illegible] बखानें ? पर तुम्हारी दयासे मैं इतना जानताहूं, कि आप भक्तोंको [illegible] देनेके अर्थ और साधुओंकी रक्षाके निमित्त और दुष्ट असुरोंके [illegible] करनेके हेतु बारंबार अवतार ले संसारमें प्रकट हो भूमिका भार उतारते [illegible] इतना बचन सुनतेहीं प्रभुने नारदमुनिको तो बिदादी; वे तो दंडवत [illegible] सिधारे और आप सब ग्वालबाल सखाओंको साथले एक बड़के तले बैठ पहले तो किसीको मंत्री, किसीको प्रधान, किसीको सेनापति बनाय आप राजा हो राजरीतिके खेल खेलने लगे और पीछे आंख मिचौली. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि-पृथ्वीनाथ !

दोहा--मार्यो केशी ज्यौंहरी, सुनि कंस यह बात ॥
व्योमासुरसों कहत है, व्याकुल कंपत गात ॥

चौ०--अरिकंदन व्योमासुर बली, तेरी जगमें कीरति-भली ॥ज्यों रामके पवनको पूत, त्योंहीं तू मेरे यह दूत ॥ वसुदेवके पुत्र हतिल्याव, आज काज मेरो करि आव ॥

यह सुन, कर जोड़ व्योमासुर बोला—महाराज ! जो बसायगी सो करूंगा आज, मेरी देह है आपहीके काज; जो जीके लोभी हैं तिन्हें स्वामीके अर्थ जी देते आती है लाज, सेवक और स्त्रीको तो इसीमें यश धर्म है, जो स्वामीके निमित्त प्राण दे. ऐसे कह कृष्ण बलदेवपर बीड़ा उठाय कंसको प्रणाम कर व्योमासुर वृंदावनको चला. बाटमें जाय ग्वालका भेष बनाय चला चला वहा पहुँचा, जहां हरि, ग्वालबाल सखाओंके साथ आखमिचौली खेल रहे थे. जातेही दूरसे जब उसने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचंद्रसे कहा—महाराज ! मुझेभी अपने साथ खिलाओ तब हरिने उसे पास बुलाकर कहा तू अपने जीसे किसी बातकी हौंस मत रख, जो तेरा मनमाने सो खेल हमारे संग खेल. यों सुन वह प्रसन्न हो बोला—कि, वृक मेंढेका खेल भला है. श्रीकृष्णचंद्रने मुसकुरायके कहा बहुत अच्छा तू बन भेंड़िया, और सब ग्वालबाल होवें मेंढ़ा. सो सुन-तेही व्योमासुर तो फूलकर भारी हुआ; और ग्वालबाल बने मेंढे [illegible] मिलकर खेलने लगे तिस समय वह असुर एक एकको उठा [illegible] य और पर्वतकी गुफामें रख उसके मुँहपर आड़ी शिला धर [illegible] चला आवे. ऐसे जब सबको वहां रख आया और अकेले श्री [illegible] रहे तब ल-लकारकर [illegible] कि, आज कंसका काज सारूं [illegible] सब यदुवंशियोंको [illegible] कह ग्वालका भेष छोंड़ [illegible] भेंड़िया बन ज्यों हरिपर [illegible] उन्होंने उसको पकड़ [illegible] मारे घूसोंके यों मार पटका [illegible] जैसे यज्ञके बकरेको मार [illegible]. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे व्योमासुरवधो नाम अष्ट[illegible]ध्यायः ॥ ३८ ॥

अध्याय ३९.

अक्रूरजीका वृन्दावनमें आगमन.

श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि महाराज ! कार्तिक वदी द्वादशीको तो केशी और व्योमासुर मारा गया और त्रयोदशीको भोरके तड़केही अक्रूर कंसके पास आय विदा हो रथपर चढ़ अपने मनमें यों विचारता वृंदावनको चला, कि ऐसे मैंने क्या जप, तप, यज्ञ, दान, तीर्थ, व्रत किया है? जिसके पुण्यसे यह फल पाऊंगा. अपने जान तो इस जन्मभर कभी हरिका नाम नहीं लिया. सदा कंसकी संगतिमें रहा. भजनका भेद कहा पाऊंगा ? हां अगले जन्म कोई बड़ा पुण्य किया हो उस धर्मके प्रतापसे यह फल होता हो, जो कंसने मुझे श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके लेनेको भेजा है. अब जाय उनका दर्शन पाय जन्म सफल करूंगा.

चौ०-हाथजोरिकैपाँयनपरिहौं, पुनिपगरेणुशीशपरधरिहौं ॥
पापहरण जेही पग आहीं, सेवत श्रीब्रह्मादिक ताहीं ॥
जे पग कालीके शिर परे, जे पग कुचकुंकुमसों भरे ॥
नाचे रासमंडली आछे, जे पग डोलैं [illegible] ॥
जा पगरेणु अहल्या तरी, जा पगते [illegible] ॥
बलि छलिकियो इंद्रको काज, ते पगहौ [illegible]ज ॥
मोको शकुन होत हैं भले, मृगके झुंड दाहने चले ॥

महाराज ! ऐसे विचार फिर अक्रूर अपने मनमें कहने लगा कि, कहीं मुझे वे कंसका दूत तो न समझें ? फिर आपही शोचा कि जिनका

नाम अंतर्यामी है वे तो मनकी प्रीति मानते हैं. और सब मित्र शत्रुको पँहचानते हैं, ऐसा कभी न समझेंगे. वरन मुझे देखतेही गले लगाय दबाकर अपना कोमल कमलसा कर मेरे शिरपर धरेंगे तब मैं उस चंद्रवदनकी शोभा इकटक निरख अपने नयनचकोरोंको सुख दूंगा कि, जिसका ध्यान ब्रह्मा, रुद्र आदि सब देवता सदा करते हैं.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज! इस भाँति शोच विचार करते रथ हाक इधरसे तौ अक्रूरजी गये. और उधर बनसे गौ चराय ग्वाल समेत कृष्ण बलरामभी आये. तो इनसे वृंदावनके बाहरही भेंट भई, हरिछबि दूरसे देखतेही अक्रूर रथसे उतर अति अकुलाय दौड़ उनके पांओंपर जा गिरा और ऐसा मग्न हुआ कि मुँहसे बोल न आया. महा आनंद कर नयनोंसे जल [illegible]साने लगा. तब श्रीकृष्णजी उसे उठाय अति प्यारसे मिल हाथ [illegible] घर लिवाय लेगये. वहां नंदराय अक्रूरजीको देखतेही प्रसन्न हो [illegible] मिले और बहुतसा आदर मान किया. पांव धुलवाय आसन [illegible].

दो०-लियेतेलमरदनियां[illegible]सुगंधचुपरिअन्हवाये॥चौकापटायशोदादिय[illegible]रसरुचिसोंभोजनकियो

जब अँचयके पान खाने लगे तब नंदजी उनसे कुशल क्षेम पूंछ बोले कि, तुम यदुवंशियोंमें बड़े साधु हो. सदा अपनी बड़ाईसे रहे हो. कहो उस कंस दुष्टके पास कैसे रहतेहो? और वहांके लोगोंकी क्या गति है? सो सब भेद कहो. अक्रूरजी बोले–

चौ०जबते कंस मधुपुरी भयो, तबसे सबही[illegible] दुख दयो॥
पूंछो कहा नगर कुशलात, परजा दुखी [illegible] गात॥
जौलौं है मथुरामें कंस, तौलौं कहां बचे [illegible]वंस॥
दो०-पशु मेंढे छेरीनको, ज्यों खटीक [illegible] होइ॥
त्यों परजाको कंस है, दुख पावे [illegible] कोइ॥

इतना कह फिर बोले, कि तुम तो कंसका व्योहार जानते हो, हम

अधिक क्या कहेंगे ? इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अक्रूरवृंदावनगमनं नाम एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

अध्याय ४०.

नंद और अक्रूरका वार्तालाप पीछे कृष्णबलरामके पास वार्तालाप.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि पृथ्वीनाथ ! जब नंदजी बातें करचुके तब अक्रूरको कृष्ण बलराम सैनसे बुलाय अलग ले गये.

चौ० आदर कर पूछी कुशलात, कहो कका मथुराकीबात ॥
हैं वसुदेव देवकी नीके, राजा बैर परो तिनहींके ॥
अति पापी है मामा कंस, जिन खोयो सगरो यदुवंश ॥

कोई यदुकुलका महारोग जन्म ले आया है. तिसीने सब यदुवंशियोंको सताया है. और सच पूंछो तो वसुदेव देवकी हमारे लिये इतना दुःख पाते हैं. जो हमें न छिपाते तो वे इतना दुःख न पाते. यों कह श्रीकृष्ण फिर बोले.

चौ०--तुमसों कहा चलत उन कह्यो, तिनको सदा ऋणी होरह्यो ॥ करति होयँगे सुरति हमारी, संकटमें पावत दुख भारी ॥

यह सुन अक्रूरजी बोले—कि कृपानाथ ! तुम सब जानते हो. क्या कहूंगा कंसकी अनीति, उसकी किसीमें नहीं है प्रीति. वसुदेव और उग्रसेनके मारनेको नित विचार किया करता है; पर वे आजतक अपनी प्रारब्धसे बचे रहे हैं. और जबसे नारद मुनि आय आपके होनेका सब

समाचार बुझायके कहगये हैं; तबसे वसुदेवजीको बेड़ी हथकड़ी दे महा दुःखमें रक्खा है, और कल उसके यहां महादेवका यज्ञ है व धनुष धरा है सब कोई देखनेको आवेगा तुम्हारे बुलानेको मुझे भेजा है. यह कहकर कि तुम जाय रामकृष्णसमेत नंदरायको भेंटसहित लिवाय लावो. सो मैं तुम्हें लेनेको आया हूं, इतनी बात अक्रूरजीसे सुन रामकृष्णने आ नंदरायसे कहा—

चौ०--कंस बुलायो है सुन तात, कहि अक्रूरकका यह बात॥
गोरस मेढ़े छेरा लेहु, धनुषयज्ञ है ताको देहु ॥
सब मिल चलो साथ ले अपने, राजा बोले रहत न बने॥

जब ऐसे समझाय बुझायकर श्रीकृष्णचंद्रजीने नंदजीसे कहा, तब नंदरायजीने उसी समय ढँढोरियेको बुलाय सारे नगरमें यों कह डोंड़ी फिरवायदी, कि कल सबेरही सब मिल मथुराको जायँगे. राजाने बुलाया है. इस बातके सुननेसे भोर होतेही भेंटे लेले सकल ब्रजवासी आन पहुँचे और नंदजीभी दूध, दही, माखन, मेढ़े, बकरे, भैंसे ले शकट जुतवाय उनके साथ होलिये. और कृष्ण बलदेवजी अपने ग्वालबाल सखाओंको साथ ले रथपर चढ़े.

चौ०--आगे भये नंद उपनंद, सब पाछे हलधर गोविंद ॥

श्री शुकदेवजी बोले—कि पृथ्वीनाथ! एकाएकी श्रीकृष्णका चलना सुन सब ब्रजकी गोपियां अति घबराय व्याकुल हो घर छोंड़ हड़बड़ाय उठ धाईं, और उठती झुकती गिरती पड़ती वहां आईं जहां श्रीकृष्णचंद्रका रथ था; आतेही रथके चारों ओर खड़ी हो हाथ जोड़ विनती कर कहने लगीं, हमें किसलिये छोड़तेहो ब्रजनाथ, सर्वस्व दिया है तुम्हारे साथ. साधुकी तो प्रीति कभी घटतीं नहीं, करकीसी रेखा सदा करहीमें रहती है. और मूढ़की प्रीति नहीं ठहरती जैसे बालूकी भीति; ऐसा तुम्हारा क्या अपराध किया है जो हमें पीठ दिये जाते हौ. यों श्रीकृष्णचंद्रको सुनाय फिर गोपियां अक्रूरकी ओर देख बोलीं—

चौ०--यह अक्रूर क्रूर है भारी, जानी कछु न पीर हमारी ॥
जाबिन छिन सब होति अनाथ, ताहि चल्यो ले अपने साथ
कपटी क्रूर कठिन मन भयो, नाम अक्रूर वृथा किन दयो
हे अक्रूर कुटिल मतिहीन, क्यों दाहत अबला आधीन ॥

ऐसे कड़ी कड़ी बातें सुनाय शोच संकोच छोड़ हरिका रथ पकड़ आपसमें कहने लगीं. मथुराकी रानियां अति चंचल चतुर रूपगुण भरी हैं उनसे प्रीति कर गुण और रूपके वश हो वहांही रहेंगे बिहारी, तब काहेको करेंगे सुरत हमारी; उन्हीके बड़े भाग्य हैं जो प्रीतमके संग रहेंगी. हमारे जप तप करनेमें ऐसी क्या चूक पड़ीथी? जिससे श्रीकृष्णचंद्र बिछुड़ते हैं. यों आपसमें कह फिर हरिसे कहने लगीं, कि तुम्हारा तो नाम है गोपीनाथ, किस लिये नहीं ले चलते हमें अपने साथ?

चौ०-तुमबिनछिनछिनकैसेकटै, पलकओटभयेछातीफटै
हितलगायक्यों करत बिछोह, निठुर निर्दयी धरतनमोह॥
ऐसी तहां जहां सुंदरी, शोचे दुखसमुद्रमें परी ॥
चाहिरहीं इकटक हरिओर, ठगी मृगीसी चंद्रचकोर ॥
परहिं नैनते आंशूटूक, रही बिछुरलटमुखपरछूट ॥

श्रीशुकदेव मुनि बोले—कि राजा! उस समय गोपियोंकी तो यह दशा थी. जो मैंने कही. और यशोदा रानी ममता कर पुत्रको कंठ लगाय रो रो अतिप्यारसे कहती थी. बेटा जै दिनमें तुम वहांसे फिर आओ तै दिनके लिये कलेऊ ले जाओ. वहां जाय किसीसे प्रीति मत कीजो; वेग आय अपनी जननीको दर्शन दीजो. इतनी बात सुन श्रीकृष्ण रथसे उतर सबको समझाय बुझाय मासे बिदा है दंडवत् कर आशीश ले फिर रथपर चढ़ चले. तिस काल इधरसे तो गोपियोंसमेत यशोदाजी अति अकुलाय रोरो कृष्ण कृष्ण कर पुकारतीथीं. और उधरसे श्रीकृष्ण रथपर खड़े खड़े पुकार पुकार कहते जातेथे कि, तुम घर

जाओ, किसी बातकी चिंता मत करो. हम पांच चार दिनमें हो फिरकर आते हैं, ऐसे कहते कहते और देखते देखते जब रथ दूर निकल गया, और धूलि आकाशतक छाई तिसमें रथकी ध्वजाभी नहीं दिखाई; तब निराश हो एक बेरतो सबकी सब नीरबिन मीनकी भांति तड़फड़ाय मूर्च्छा खाय गिरीं, पीछे कितनीएक बेरमें चेतकर उठीं, और अवधिकी आश मनमें धर धीरज कर उधर यशोदाजी तो सब गोपियोंको ले वृंदावनको गईं; और इधर श्रीकृष्णचंद्रसमेत सब चले चले यमुनातीरपर आ पहुँचे. तहां ग्वालबालोंने जल पिया और हरिनेभी एक बड़की छाँहमें रथ खड़ा किया. इधर अक्रूरजी न्हानेका विचार कर रथसे उतरे. तब श्रीकृष्णचंद्रजीने नंदरायसे कहा कि आप सब ग्वालबालोंको ले आगे चलिये. चचा अक्रूर स्नान कर लें तो पीछेसे हमभी आ मिलते हैं. यह सुन सबको ले नंदजी आगे बढ़े, और अक्रूरभी कपड़े खोल हाथ पाँ[illegible] कर तीरपर जाय नीरमें पैठ डुबकी ले पूजा, तर्पण, जप, ध्या[illegible]बकी मार आखें खोल जलमें देखें तो वहां रथसमेत श्रीकृष्ण दृष्टि आए.

चौ०–पुनि उन देख्यो शीश उठाय, तिहिंठां बैठे हैं यदुराय ॥ करैं अचंभो हिये बिचारि, वे रथऊपर दूर मुरारि ॥
बैठे दोऊ बड़की छाँह, तिनहींको देखौं जलमाँह ॥
बाहर भीतर भेद न लहौं, सांचो रूप कोनसो कहौं ॥

महाराज! अक्रूरजी तो एकही सूरत बाहर भीतर देख शोचतेही थे, कि इस बीच पहले तो श्रीकृष्णचंद्रजीने चतुर्भुज हो शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कर सुर, मुनि, किन्नर, गंधर्व आदि सब भक्तोंसमेत जलमें दर्शन दिया, और पीछे शेषशायी; तो अक्रूर देख औरभी भूलरहा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अक्रूरगमनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अध्याय ४१.

अक्रूरका श्रीकृष्णजीकी स्तुति करना.
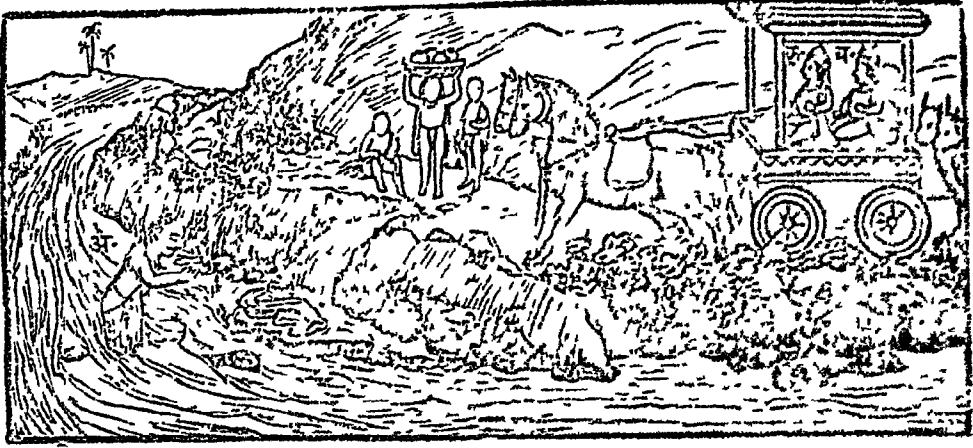
श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! पानीमें खड़े खड़े अक्रूरको कितनी एक बेरमें प्रभुका ध्यान करनेसे ज्ञान हुआ तो हाथ जोड़ प्रणाम कर कहने लगा कि, कर्त्ता हर्त्ता तुम्हीं हो भगवंत, भक्तोंके हेतु संसारमें आय धरते हो वेप अनंत; और सुर, नर, मुनि तुम्हारेही अं[illegible] तुम्हींसे प्रकट हो तुम्हींमें ऐसे समाते हैं जैसे जल सागरसे निकल सागरमें समाता है. तुम्हारी महिमा है अनूप, कौन कहसके सदा रहतेहो विराटस्वरूप; शिर स्वर्ग, पृथ्वी पांव, समुद्र पेट, नाभि आकाश, बादल केश, वृक्ष रोम, अग्नि मुख, दशों दिशा कान, नयन चंद्र और भानु, इंद्र भुजा, बुद्धि ब्रह्मा, अहंकार रुद्र, गर्जन वचन, प्राण पवन, जल वीर्य, पलक लगाना रातदिन, इस रूपसे सदा विराजतेहो तुम्हें कौन पहिचान सके? इस भांति स्तुति कर अक्रूरजीने प्रभुके चरणोंका ध्यान धर कहा कृपानाथ! मुझे अपने चरणोंमें रक्खो. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अक्रूरस्तुतिकरणं नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

अध्याय ४२.

कंसकी सभामें अक्रूरजीका आगमन.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! जब श्रीकृष्णचंद्रने नटमायाकी भांति जलमें अनेक रूप दिखाय हर लिये; तब अक्रूरजीने नीरसे निकल तीरपर आ हरिको प्रणाम किया. तिसकाल नंदलालने अक्रूरजीसे पूंछा कि—कका शीतसमय जलके बीच इतनी बेर क्यों लगी ? हमें यह अति-चिंता थी तुम्हारी, कि चचाने किसलिये बाट चलनेकी सुधि बिसारी. क्या कुछ अचरज तो जाकर नहीं देखा ? यह समझायके कहो, जो हमारे मनकी दुबधा जाय—

चौ०--सुनि अक्रूर कह जोरे हाथ, तुम सब जानतहो व्रजनाथ ॥ भलोदरश दीनो जलमाहीं, कृष्णचरितको अचरज नाहीं ॥ मोहिं भरोसो भयो तिहारो, बेग नाथ मथुरा पग धारो ॥ अब तो यहां विलंब नकरिये, शीघ्र चलो कारज चित धरिये ॥

इतनी बातके सुनतेही हरि उठ रथपर बैठ अक्रूरको साथले चल खड़े हुए. और नंदआदि जो सब गोप ग्वाल आगे गयेथे, उन्होंने जा मथुराके बाहर डेरे किये, और *कृष्ण बलदेवकी बाट देख देख अति चिंता कर* अपने मनमें कहने लगे, कि इतनी अबेर न्हाते क्यों लगी ? और किसलिये अबतक हरि नहीं आये ? कि इस बीच चले चले आनंदकंद श्रीकृष्णचं-द्रभी जाय मिले. उस समय हाथ जोड़ शिर झुकाय विनती कर अक्रूरजी

बोले कि ब्रजनाथ! अब चलके मेरा घर पवित्र कीजे, और अपने भक्तोंको दर्शन दे सुख दीजे. इतनी बातके सुनतेही हरिने अक्रूरसे कहा—

चौ० पहले सोधं कंसको देहु, तब अपनो दिखरावो गेहु ॥
सबकी बिनती कहौ जु जाय, सुनि अक्रूर चल्यो शिरनाय

चले चले कितनीएक बेरमें रथसे उतरकर वहां पहुँचे जहां कंस सभा किये बैठाथा, इनको देखतेही सिंहासनसे उठ नीचे आय अति हितकर मिला. और बड़े आदर मानसे हाथ पकड़ लेजाय सिंहासनपर अपने पास बैठाय इनकी क्षेम पूंछ बोला; जहां गयेथे वहांकी बात कहो.

चौ० सुनि अक्रूर कहे समुझाय, ब्रजकी महिमा कही नजाय
कहा नंदको करौं बड़ाई, बात तुम्हारी शीश चढ़ाई ॥
राम कृष्ण दोऊ हैं आए, भेंट सबै ब्रजवासी लाए ॥
डेरा किये नदीके तीर, उतरे गाड़ा भारी भीर ॥

यह सुन कंस प्रसन्न हो बोला—अक्रूरजी! आज तुमने हमारा बड़ा काम किया जो रामकृष्णको ले आए. अब घर जाय [illegible] करो. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा [illegible] कंसकी आज्ञा पाय अक्रूरजी तो अपने घर गये [illegible] करने लगा और जहा नंद उपनंद बैठे थे तहां उनसे हलधर गोविंदने पूंछा जो हम आपकी आज्ञा पावें तो नगर देख आवें. यह सुन पहले तो नंदरायजीने कुछ खानेको मिठाई निकाल दी. उन दोनों भाइयोंने मिलकर खायली. पीछे बोले अच्छा जाओ पर विलंब मत कीजो. इतना बचन नंदमहरके मुखसे निकलतेही आनंदकंद दोनों भाई अपने ग्वालबाल सखाओंको साथ ले नगर देखने चले. आगे बढ़ देखें तो नगरके बाहर चारों ओर बन उपबन फूल फल रहे हैं. तिनपर पक्षी बैठे अनेक भांतिकी मनभावनी बोलिया बोलते हैं. और बड़े बड़े सरोवर निर्मल जलसे भरे हैं, उनमें कमल खिलेहुए जिनपर भौरोंके झुंडके झुंड गुंज रहे. और तीरमें हंस सारस आदि पक्षी कलोलें कर रहे, शीतल सुगंध समीर मंद पवन बह रही और बड़ी बड़ी बाड़ियों व बाड़ोंपर पनवाड़िया लगीं हुई, बीच बीच [illegible]गके

फूलोंकी क्यारियां कोसोंतक फूली हुई, ठौर २ इंदारों बावड़ियोंपर रहँट परोहें चल रहे, माली मीठे मीठे सुरोंसे गाय गाय जल सींच रहे हैं.

यह शोभा बन उपवनकी निरख हर्ष प्रभु सब समेत मथुरापुरीमें पैठे. वह पुरी कैसी है, कि जिसके चहुँओर तांबेका कोट और पक्की चुआन चौड़ी खाई, स्फटिकके चार फाटक तिनमें अष्टधाती किवाँड़ कंचन खचित लगेहुए, और नगरमें बर्ण बर्णके राते, पीले, हरे, धोले, पंचखने, सतखने मंदिर ऊंचे ऐसे कि घटासे बातें कर रहे. जिसके सोनेके कलस कलसियोंकी ज्योति बिजलीसी चमक रही. ध्वजा, पताका फहराय रहीं. जाली झरोखों मोखोंसे धूपकी सुगंध आय रही. द्वार द्वारपर केलेके खंभ ओर सुवर्णकलश सपल्लव भरे धरेहुए. तोरन वंदनवार बँधीहुई, घर घर बाजन बाज रहे और एक ओर भाँति भाँतिके मणिमय कंचनके मंदिर राजाके न्यारेही जगमगाय रहे, जिनकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती. ऐसी जो सुंदर सुहावनी मथुरापुरी तिसे श्रीकृष्ण बलदेव ग्वालबालोंको साथ लिये देखते चले—

दो०–बड़ी धूम मथुरानगर, आवत नंदकुमार।
सुनि धाए पुरलोग सब, गृहको काज बिसार॥

चौ०-और जो मथुराकी सुंदरी, सुनत कान अति आतुरखरी॥
कहैं परस्पर बचन उचारी, आवतहैं बलभद्र मुरारी॥
तिन्हैं अक्रूर गयेहैं लैन, चलहु सखी अब देखहिं [illegible]॥
को[illegible]ात न्हातसे भजै, गुहत शीश कोऊ उ[illegible]॥
काम[illegible]ले पियके बिसरावैं, उलटे भूषण बसन [illegible]
जैसे[illegible]से उठिधाई, कृष्णदरश देखनको [illegible]॥ लाज कान [illegible]डारे कोऊ, खिरकिन कोउ अटनप[illegible]ऊ॥
कोऊ[illegible]द्वार कोउ ताकै, दौरीगलियन [illegible]उझाकै
ऐसेज[illegible]हांखड़ि नारी, प्रभुहिं बतावें बाँह पसारी॥
नील [illegible]न गोरे बलराम, पीतांबर ओढ़े घनश्याम॥

ये भानजे कंसके दोऊ, इनते असुर बचो नहिं कोऊ ॥
सुनतहुतीपुरुषारथ जिनको, देखहु रूपनैनभरि तिनको ।
पूरुबजन्मसुकृतकछुकीना, सो विधियहदर्शनफलदीना ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि महाराज ! इसी रीतसे सब पुरबासी क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक अनेक प्रकारकी बातें कह कह दर्शन कर मग्न होतेथे, और जिस हाट बाट चौहटेमें हो सब समेत कृष्ण बलराम निकलतेथे, वहीं अपने अपने कोठोंपर खड़े इनपर चोआ, चंदन छिड़क छिड़क आनंदसे वे फूल बरसावतेथे. और ये नगरकी शोभा देख देख ग्वालबालोंसे कहते जाते थे. भैया ! कोई भूलियो मत, और जो कोई भूले तो पिछले डेरेपर जाइयो. इसमें कितनी एक दूर जाय देखें तो क्या है, कि कंसके धोबी धोए कपड़ोंकी लादियां लादे पोटे मोटे लिये मद पिये रंगराते कंसयश गाते नगरके बाहरसे चले आते हैं. उन्हें देख [illegible]णचंद्रने बलदेवजीसे कहा कि भय्या ! इनके सब चीर छीन लीजिये [illegible]ईको सुनाय स[illegible]ास जाय हरि बोले.

[illegible] हमको [illegible]देहु, राजहि मिलिआवै फिर-
[illegible]जो प[illegible]नि नृपसों पैहैं, तामेंते कछु तुमको दैहैं ॥

[illegible]तेही उनमेंसे जो बड़ा धोबी था सो हँसकर कहनें लगा–

[illegible]सा धरी बनाय, है आवो नृपद्वारलौं ॥
[illegible] तब लीजो पट आय, जो चाहो सो दी[illegible]

चौ॰ बनबनफिरतचरावतगैया, अहिरजातिकामरीउढैया
नटको भेष बनाये आए, नृपअंबर पहरन मनभाए ॥
जुरिकैचलेनृपतिके पास, पहिरावनिलेबेकीआस ॥
नेकआशजीवनकीजोऊ, खोवनचहतअबहिंपुनिसोऊ ॥

यह बात धोबीकी सुनकर हरिने फिर मुसुकुरायकर कहा, कि हम तो सीधी चालसे मांगते हैं तुम उलटी क्यों समझते हो ? कपड़े देनेसे कुछ तुम्हारा न बिगड़ेगा, बरन यशलाभ होगा. यह बचन सुन रजक

झुंझुलायकर बोला कि, राजाके बागे पहरनेका मुँह तो देखो! मेरे आगेसे जा नहीं तो अभी मार डालताहूं. इतनी बातके सुनतेही क्रोध-कर श्रीकृष्णचंद्रजीने तिरछा कर एक हाथ ऐसा मारा कि उसका शिर भुट्टासा उड़ गया; तब जितने उसके साथी टहलुए थे सबके सब छोटे मोटेलादियां छोड़ अपना जीव ले भागे और कंसके पास जा पुकारे. यहां श्रीकृष्णजीने सब कपड़े ले लिये और आप पहन भाईको पहराय ग्वालबालोंको बांट बचे सो लुटाय दिये. तिस समय ग्वाल बाल अति प्रसन्न हो लगे उलटे पुलटे वस्त्र पहरने.

दो०--कटि कस पग पहरे झँगा, सूथन मेले बांह ॥
बसन भेद जाने नहीं, हँसत कृष्ण मनमाँह ॥

जो वहांसे आगे बढ़े तो एक सूजीने आय दंडवत कर [illegible] जोड़ कहा महाराज! मैं कहनेको तो कंसका सेवक [illegible] मनसे सदा आपहीका गुण गाताहूं. दयाकर कहिये तो बागे पहराऊं जिससे तुम्हारा दास कहाऊं, इतनी बात उसके मुखसे निकलते ही अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रजीने उसे अपना भक्त जान निकट बुलायके कहा तू भले समय आया. अच्छा पहारायदे. तब तो उसने झटपटही खोल उधेड़ कतर छांट सींकर ठीक ठाक बनाय चुन चुन रामकृष्ण समेत सबको बागे पहराय दिये. उसकाल नंदलाल उसे भक्ति दे साथ ले आगे चले.

चौ०तहांसुदामामाली आयो, आदरकर अपने घरलायो॥
सबहीको माला पहराई, मालीके घर भई बधाई ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे मथुरापुरप्रवेशो नाम द्विचत्वा-रिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

अध्याय ४३ वां.

कुब्जाको सीधी करना और शिवधनुषका तोडना.

श्रीशुकदेवजी बोले—कि पृथ्वीनाथ! मालीकी लग्न देख मग्न हो श्रीकृष्णचंद्र उसे भक्ति पदार्थ दे वहांसे आगे जाय देखें तो सोंहीं गलीमें एक कुबड़ी, केशर चंदनसे कटोरियां भरे थालीके बीच धरे हाथमें लिये खड़ी है. उससे हरिने पूंछा तू कौन है और यह कहां ले चली? वह बोली—दीनदयाल! मैं कंसकी दासी हूं. मेरा नाम कुब्जा है. नित चंदन घँस कंसको लगाती हूं और मनसे तुम्हारे गुण गातीहूं. तिसके प्रतापसे आज आपका दर्शन पाय जन्म सार्थ किया और नयनोंका फल लिया अब दासीका मनोरथ यह है कि जो प्रभुकी आज्ञा पाऊं तो चंदन अपने हाथों चढ़ाऊं. उसकी अति भक्ति देख हरिने कहा; जो तेरी इसीमें प्रसन्नता है तो लगाव. इतना बचन सुनतेही कुब्जाने बड़े रावचावसे चित्त लगाय, जब रामकृष्णको चंदन चरचा तब श्रीकृष्णने उसके मनकी लाग देख दयाकर पांवपर पांव धर दो अँगुली डाढ़ीके तले लगाय उचकाय उसे सीधी किया. हरिका हाथ लगतेही वह महासुंदरी हुई. और निपट बिनती कर प्रभुसे कहने लगी, कि कृपानाथ! जो आपने कृपा कर इस दासीकी देह सूधी की, तो दयाकर अब चलके घर पवित्र कीजे, औ विश्राम ले, दासीको सुख दीजे. यह सुन हरि उसका हाथ पकड़ मुसुकुरायके कहने लगे—

चौ॰ तैं श्रम दूर हमारो कियो, मिलके शीतलचंदन दियो॥

रूप शील गुण सुंदरि नीकी, तोसों प्रीति निरंतर जीकी ॥
आइ मिलौंगो कंसहि मारी, यों कह आगे चले मुरारी ॥

और कुब्जा अपने घर जाय केशर चंदनके चौक पुराय हरिके मिलनेकी आशा मनमें रख मंगलाचार करने लगी,

चौ०--आवैं तहँ मथुराकी नारी, करैं अचंभौ कहैं निहारी ॥
धनिधनिकुब्जातेरोभाग, जाको विधना दियो सुहाग ॥
ऐसो कहां कठिन तप कियो, गोपीनाथ भेंट भुजलियो ॥
हम नीकेनहिं देखे हरी, तोको मिले प्रीति अति करी ॥
ऐसे तहां कहत सब नारी, मथुरा देखत फिरत मुरारी ॥

इस बीच नगर देखते २ सब समेत प्रभु धनुपपौरपर जा पहुँचे, इन्हें अपने रँगराते मद माते आते देखतेही पौरिये रिसायके बोले, इधर किधर चले आते हो गँवार, दूर खड़े रहो यह है राजद्वार, द्वारपालोंकी बात सुनी अनसुनी कर हरि सब समेत द्वारसे वहां चले गये, जहां तीन ताड़ लंबा अति मोटा भारी महादेवका धनुप धराथा. जातेही झट उठाय चढ़ाय सहज स्वभावही खैंच यों तोड़ डाला, कि ज्यों हाथी गाड़ा तोड़ता है. उसमें सब रखवाले जो कंसके बिठाये धनुषकी चौकी देते थे सो चढ़ आये, प्रभुने उन्हेभी मार गिराया. तिस समय पुरवासी तो यह चरित्र देख विचार कर निःशंक हो आपसमें यों कहने लगे, कि देखो राजाने घरबैठे अपनी मृत्यु आप बुलाई है. इन दोनों भाइयोंके हाथसे अब न बचेगा. और धनुष टूटनेका अति शब्द सुन कंस भय खाय अपने लोगोंसे पूंछने लगा कि, यह महाशब्द काहेका हुआ ? इस बीच कितने एक लोग राजाके जो खड़े दूरसे देखतेथे वे मुंड उघार यों जा पुकारे कि महाराजकी दुहाई, रामकृष्णने आय नगरमें बड़ी धूम मचाई. शिवका धनुष तोड़ सब रखवालोंको मारडाला. इतनी बात सुनतेही कंसने बहुतसे योद्धाओंको बुलायके कहा, तुम इनके साथ जाओ और कृष्ण बलदेवको छलबल कर अभी मारकर आओ. इतना वचन कंसके मुखसे निकलतेही ये अपने अपने अस्त्र शस्त्र ले वहां गये, जहां दोनों भाई

खड़े थे. इन्होंने उन्हें ज्यों ललकारा त्यों उन्होंने इनकोभी आय मारडा-ला. जब हरिने देखा कि अब यहां कंसका सेवक कोई नहीं रहा; तब बलरामजीसे कहा, कि भाई हमें आये बड़ी बेर हुई, अब डेरोंपर चला चाहिये. क्योंकि बाबानंद हमारी बाट देख देख भावना करते होयँगे, यों कह सब ग्वालबालोंको साथ ले प्रभु बलराम समेत चलकर वहां आये जहां डेरे पड़ेथे. आतेही नंदमहरसे तो कहा, कि पिता! हम नग-रमें जाय भला कुतूहल देख आये, और गोप ग्वालोंने अपने बागे दिखाये.

चौ०-तब लखि नंद कहैं समुझाय, कान्ह तुम्हरी टेंव न जाय॥ व्रजबन नहीं हमारो गांव, यहहैकंसरायको ठांव॥ यहँ जिन कछु उपद्रव करो, मेरी सीख पूत मन धरो॥

जब नंदरायजी ऐसे समझाय चुके तब नंदलाल बड़े लाड़से बोले कि पिता! भूँख लगी है जो हमारी माताने खानेको साथकर दिया है सो दीजिये. इतनी बातके सुनतेही उन्होंने जो पदार्थ खानेको साथ लायेथे सो निकाल दिये. कृष्ण बलदेवने ले ग्वालबालोंके साथ मिलकर खाय लिया. इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले; कि महाराज; इधर तो ये आय परमानंदसे ब्याली कर सोये, और उधर श्रीकृष्णकी बातें सुन कंसके चित्तमें अतिचिंता हुई कि उठते बैठते चैन न था; खड़े मनही मन कुढ़ता था. अपनी पीर किसीसे न कहताथा. कहा है कि—

दो०-ज्यों काठहि घुन खातहै, कोउ न जाने पीर॥
त्यों चिंता चितमें भई, बुधिबल घटत शरीर॥

निदान अति घबराय मंदिरमें जाय सेजपर सोया, पर उसे मारे डरके नींद न आई.

चौ०-तीनपहरनिशिजागतगई, लागीपलकनींदछिनभई॥ तब सपनो देख्यो मनमाँह, फिरे शीश बिन धरकी छाँह॥ कबहूँ नगन रेतमें न्हाय, धावै गदहा चढ़ विष खाय॥ बसे मशान भूत सँग लिये, रक्तफूलकी माला हिये॥

बरतरूख देखे चहुँ ओर, तिनपर बैठे बालकिशोर ॥

महाराज ! जब कंसने ऐसा स्वप्न देखा, तब तो वह अति व्याकुल हो चौंक पड़ा; और शोच विचार करता उठकर बाहर आया व अपने मंत्रियोंको बुलाय बोला, तुम अभी जावो. रंगभूमिको झड़वाय छिड़कवाय सँवारो, और नंद उपनंद समेत सब व्रजवासियोंको और वसुदेव आदि यदुवंशियोंको रंगभूमिमें बुलाय बिठाओ. और जो सब देशदेशके राजा आये हैं तिन्हेंभी. इतनेमें मैंभी आताहूं. उसकी आज्ञा पाय मंत्री रंगभूमिमें आए; उसे झड़वाय छिड़कवाय तहां पाटंबर बिछवाय ध्वजा पताका तोरन बंदनवार बँधवाय अनेक अनेक भांतिके बाजे बजवाय सबको बुलाय भेजा. वे आये, और अपने अपने मंचपर जाय २ बैठे. इस बीच राजा कंसभी अति अभिमान भरा अपने मंचपर आय बैठा. उसकाल देवता विमानोंमें बैठे आकाशमेंसे देखने लगे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कंसस्वप्नदर्शनंनाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

अध्याय ४४.

कुवलयापीडका वध.
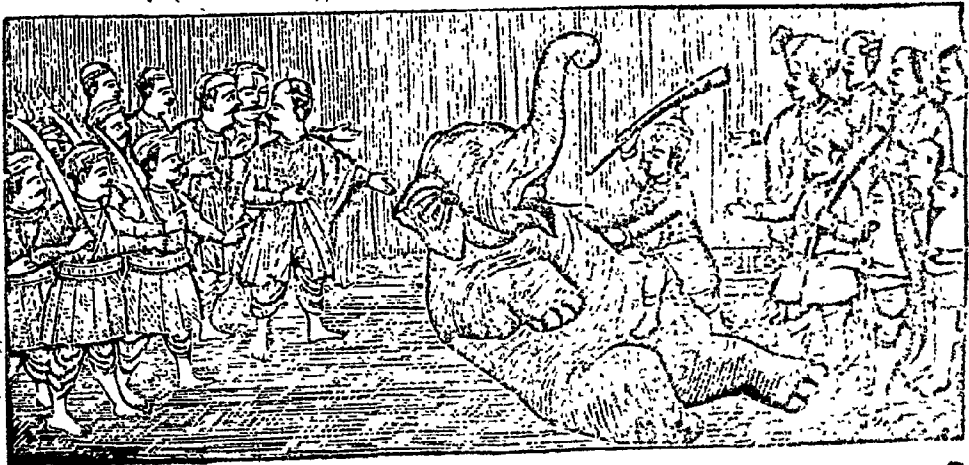
श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! भोरही जब नंद उपनंद आदि सब बड़े बड़े गोप रंगभूमिकी सभामें गये, तब श्रीकृष्णचंद्रजीने बलदेवजीसे कहा कि, भाई सब गोप आगे गये. अब विलंब न करिये शीघ्र ग्वाल बाल सखाओंको साथ ले रंगभूमि देखने चलिये; इतनी बातके सुनतेही बलरामजी उठ खड़े हुए, और सब ग्वाल सखाओंसे कहा, कि भाइयो !

चलो रंगभूमिकी रचना देख आवें. यह बचन सुनतेही तुर्त सब साथ हो लिये. निदान, श्रीकृष्णचंद्र बलराम नटवर भेष किये ग्वालबाल सखाओंको साथ लिये चले चले रंगभूमिकी पौरपर आय खड़े हुए. जहां दशसहस्र हाथियोंका बलवाला बड़ा मतवाला गज कुबलिया खड़ा झूमताथा.

चौ०-देख मतंगद्वार मतवारो, गजपालहिं बलरामपुकारो॥
सुनो महावत बात हमारी, लेहु द्वारते गज तुम टारी॥
जानदेहु हमको नृपपास, नातर व्हैहै गजको नास॥
कहे देत नहिं दोष हमारो, मत जानो हरिको तुमबारो॥

ये त्रिभुवनपति हैं दुष्टोंको मार भूमिका भार उतारनेको आये हैं. यह सुन महावत क्रोधकर बोला, मैं जानताहूं गौ चरायके त्रिभुवनपति भये हैं. इसीसे यहा आय बड़े शूरकी भांति अड़े खड़े हैं. धनुषका तोड़ना न समझियो मेरा हाथी दशसहस्र हाथियोंका बल रखता है जबतक इससे न लड़ोगे तबतक भीतर न जाने पाओगे. तुमने तो बहुत बली मारे हैं पर आज इसके हाथसे बचोगे तो मैं जानूंगा कि तुम बड़े बली हो.

दो०-तबहिं कोपि हलधर कह्यो, सुन रे मूढ़ कुजात॥
गजसमेत पटकों अबहिं, मुखसँभारि कहु बात॥
सो०-नेकु न लगिहै बार, हाथी मरिजैहै अबहिं॥
तासों कहत पुकार, अजहुँ मान मेरो कह्यो॥

इतनी बात सुनतेही झुंझलाकर गजपालने गज पेला, ज्यों वह बलदेवजीपर टूटा त्यों इन्होंने हाथ घुमाय एक थपेटा ऐसा मारा, कि वह सूंड़ सिकोड़ चिंघाड़ मार पीछे हटा. यह चरित्र देख कंसके बड़े बड़े योद्धा जो खड़े देखतेथे, सो अपने जियोंमें हार मान मनही मन कहने लगे; कि इन महाबलवानोंसे कौन जीत सकेगा? और महावतभी हाथीको पीछे हटा जान अतिभय मान जीमें विचार करने लगा कि जो ये बालक न मारे जाँय [illegible] जीता न छोंड़ेगा यों शोच समझ उसने फिर अकुंश मा[illegible] तत्ता किया औ[illegible] दोनों भाइयोंपर हलादिया. उसने आतेही सूंड़से हरिको पक[illegible]ड़ खुन-

साय ज[illegible]तोंसे दवाया त्यों प्रभु सूक्ष्म शरीर वनाय दातोंके बीचमें वचरहे.

दो०-[illegible] उठे तिहिंकाल सब, सुर मुनि पुर नर नारि॥
दु[illegible]शन बिच व्है कढ़े, बलनिधि प्रभु दे तारि॥

सो०-उ[illegible] गजहिके साथ, बहुरि ख्याल हो हांकदे॥
तु[illegible]हिं भये सनाथ, देखि चरित वलश्यामके॥

चौ०हांक[illegible]तअतिकोपबढ़ायो,झट[illegible]शुंडवहुरोगजधायो
रहे उदर[illegible]बकि मुरारी, भजे जानि[illegible]॥
पाछे प्रकट फेर हरि टेरो, बलदाऊ आगेते घेरो॥
लागे गजहिं खिलावन दोऊ, भौंचक रहे देख सबकोऊ॥

महाराज ! उसे कभी बलराम सूंड पकड़ खैंचतेथे, कभी श्याम पूछ पकड़ और वह उन्हें पकड़नेको आताथा तव ये अलग हो जातेथे. कितनी एक बेरतक उससे ऐसे खेलते रहे जैसे बछड़ोंके साथ बालकपनेमें खेलतेथे. निदान हरिने पूंछ पकड़ फिराय उसे दे पटका और मारे घूसोंके मार डाला, दांत उखाड़ लिये. तब उसके मुहसे लोहू नदीकी भांति बह निकला. हाथीके मरतेही महावत ललकारकर आया, प्रभुने उसेभी हाथीके पांवतले झट मार गिराया. और हँसते हँसते दोनों भाई नटवर भेष किये एक २ दांत हाथोंमें लिये रंगभूमिके बीच जा खड़े हुए. उसकाल नंदलालको जिन जिनने जिस जिस [illegible] देखा उस उसको उसी उसी भावसे दृष्टि आए. मल्लो[illegible] माना, राजाओंने राजा जाना, देवताओंने अपना प्रभु बूझा, [illegible]ग्वालोंने सखा माना, नंद उपनंदने बालक समझा और पुरकी युव[illegible]ने रूपनिधान. और कंसादिक राक्षसोंने कालसमान देखा. महा[illegible]रतेही कंस अतिभयमान हो पुकाराः—अरे मल्लो ! इन्हें पछाड़ मा[illegible] मेरे आगेसे टालो. इतनी बात जो कंसके मुंहसे निकली तो सब मल्लगुरु सुन चले शस्त्र संगलिये, वर्ण वर्णके भेष किये, ताल ठोंक ठोंक भिड़नेको कृष्ण बलरामके चारों ओर घेर आए. जैसे वे आये तैसे येभी सँभल खड़े हुये. तब उनमेंसे उनकी ओर देख चतुराई कर चाणूर बोला—सुनो,

हमारे राजा कुछ उदास हैं इससे जीव हँसानेको तुम्हारा युद्ध देखा चाहते हैं; क्योंकि तुमनें बनमें रह सब विद्या सीखी है, और किसी बातका मनमें शोच न कीजे, हमारे साथ मल्लयुद्ध कर अपने राजाको सुख दीजे. श्रीकृष्ण बोले—राजाजीने बड़ी दया कर हमें बुलाया है आज, हमसे क्या सरैगा इनका काज; तुम अतिबली गुणवान् हम बालक अनजान, तुमसे हाथ कैसे मिलावें. कहा हैः-व्याह बैर प्रीति समानसे कीजे, पर राजाजीसे कुछ हमारा वश नहीं चलता;इससे तुम्हारा कहा मानते हैं. हमें बचालीजो, बलकर पटक न दीजो. अब हमें तुम्हें उचित है जिसमें धर्म रहे सो कीजे, मिलकर अपने राजाको सुख दीजे.

चौ॰सुनिचाणूरकहैभयखाय,तुम्हरीगतिजानीनहिंजाय॥
तुम बालक मानुष नहिं दोऊ, कीन्हे कपट बली हौ कोऊ॥
खेलत धनुष खंड द्वै करो, मारे तुरत कुबलिया तरो॥
तुमसे लरे हानिही होई, या बातें जाने सब कोई॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कुवलयापीडवधोनाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः समाप्तः ॥ ४४ ॥

अध्याय ४५.

श्रीकृष्णजीके हाथसे कंसका वध.

श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि पृथ्वीनाथ! ऐसे कितनी एक बातें कर ताल ठोंक चाणूर तो श्रीकृष्णके सोहीं हुआ, और मुष्टिक बलरामजीसे आय भिड़ा. इनसे उनसे महा मल्लयुद्ध होने लगा.

दोहा--शिरसों शिर भुजसों भुजा, दृष्टि दृष्टिसों जोरि ॥
चरण चरण गहि झपटके, लपटत झपट झकोरि ॥

उस काल सब लोग उन्हें इन्हें देख २ आपसमें कहने लगे कि, भाइयो ! इस सभामें अति अनीति होती है, देखो कहां ये बालक रूपनिधान, कहां ये सब मल्ल वज्रसमान; जो बरजें तो कंस रिसाय, न बरजें तो धर्म जाय; इससे यहां रहना उचित नहीं; क्योंकि हमारा कुछ वश नहीं चलता. महाराज ! इधर तो ये सब लोग यों कहतेथे, और उधर श्रीकृष्ण बलराम मल्लोंसे मल्लयुद्ध करतेथे. निदान इन दोनों भाइयोंने मल्लोंको पछाड़ मारा, उनके मरतेही सब मल्ल आय टूटे. प्रभुने पलभरमें तिन्हेंभी मार गिराया. तिस समय हरिभक्त तो प्रसन्न हो बाजन बजाय बजाय जयजयकार करने लगे, और देवता आकाशसे अपने विमानोंमें बैठ श्रीकृष्णयश गाय गाय फूल बरसावने. और कंस अति दुःख पाय व्याकुल हो रिसाय अपने लोगोंसे कहने लगा–अरे ! बाजा क्यों बजाते हो ? तुम्हें क्या कृष्णकी जीत भाती है ? यों कह बोला–ये दो बालक बड़े चंचल हैं, इन्हें पकड़ बांध सभासे बाहर लेजाओ. और देवकीसमेत उग्रसेन वसुदेव कपटीको पकड़ लाओ. पहले उन्हें मार पीछे इन दोनोंकोभी मार डालो. इतना बचन कंसके मुखसे निकलतेही भक्तोंके हितकारी मुरारी सब असुरोंको क्षणभरमें मार उछलके वहां जाय चढ़े, जहां अति ऊंचे मंचपर झिलम पहने टोप दिये फरी खांड़ा लिये बड़े अभिमानसे कंस बैठाथा. वह इनको कालसमान निकट देखतेही भय खाय उठ खड़ा हुआ, और थरथर कांपने लगा. मनसे तो चाहा कि भागूं पर मारे लाजके भाग न सका; फरी खांड़ा सँभा[illegible] करने. उसकाल नंदलाल अपनी घात लगाये उसकी चोट [illegible], और सुर नर मुनि गंधर्व यह महायुद्ध देख देख भयमान हो यों पुकारते थे–हे नाथ! इस दुष्टको बेग मारो. कितनीएक बेरतक मंचपर युद्ध होतारहा, निदान प्रभुने सबको दुःखित जान उसके केश पकड़ मंचसे नीचे पटका. और ऊपरसे आपभी कूदे कि उसका जीव घटसे निकल

सटका, तब सब सभाके लोग पुकारे कि श्रीकृष्णचंद्रने कंसको मारा, यह शब्द सुन सुर नर मुनि सबको अति आनंद हुआ.

दो०करि अस्तुति पुनि पुनि हरष, बर्षि सुमन [illegible] ।
मुदित बजावत दुंदुभी, कहि जय जय नँदनंद ॥

सो०मथुरापुर नर नारि, अति प्रफुलित सबको हियो ।
मनहुँकुमुदबनचारि, विकसितहरिशशिमुखनिरखि ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, धर्मावतार! कंसके मरतेही जो बलवान् आठ भाई उसके थे सो लड़नेको चढ़ आए. प्रभुने उन्हेंभी मार गिराया. जब हरिने देखा कि अब यहां राक्षस कोई नहीं रहा, तब कंसकी लोथको घसीट यमुनातीरपर ले आए और दोनों भाइयोंने विश्राम [illegible] उस ठौरका नाम विश्राम-घाट हुआ. आगे कंसका मर[illegible] रानियां [illegible] रानियों (अस्ति और प्राप्ति समेतअतिव्याकुल, [illegible] हा यमुनाके तीर दोनों वीर मृतक लिये बैठे थे, [illegible] पति[illegible] मुख निरख निरख सुख सुमिर सुमिर गुण गाय [illegible] हो प[illegible] खाय खाय गिरने, कि इसबीच करुणानिधान कान्ह करुणाकर उनके निकट जाय बोले-

चौ०मामी सुनहु शोक नहिं कीजै, मामाजीकोपानी दीजै
सदा न कोऊ जीवत रहै, झूठो सो जो अपने कहै ॥
मातपिता सुत बंधु न कोई, जन्ममरणफिरहीफिर होई
जौलौं जासौं सँबँध रहै, तौंहीलौं तासौं सुख लहै ॥

म[illegible]राज! जब श्रीकृष्णचंद्रने रानियोंको ऐसे समझाया तब उन्होंने वहांसे उठ धीरज धर यमुनातीरपै आ पतिको पानी दिया; और आप [illegible]पने अपने हाथ कंसको आग दे उसकी गति की. इति श्रीलल्लूलाल [illegible]प्रेमसागरे कंसासुरवधो नाम पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

अध्याय ४६.

वसुदेव देवकीकी कारागृहसे मुक्तता और उग्रसेनको राज्याभिषेक.

श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि राजा! रानियां तौ दोरानियोंसमेत वहांसे न्हाय धोय रोय राजमंदिरको गईं और श्रीकृष्ण बलराम, वसुदेव देवकीके पास आय उनके हाथ पांवकी हथकड़ियां बेड़िया काट दंडवत् कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हुए. तिस समय प्रभुका रूप देख वसुदेव देवकीको ज्ञान हुआ; तो उन्होंने अपने जीमें निश्चयकर जाना, कि ये दोनों विधाता हैं, असुरोंको मार भूमिका भार उतारनेको संसारमें अवतार ले आये हैं, जब वसुदेव देवकीने यों जीमें जाना तव अंतर्यामी हरिने अपनी माया फैलाय दी. उसने उनकी वह मति हरली, फिर तो उन्होंने इन्हें पुत्रकर समझा. कि इतनेमें श्रीकृष्णचंद्र अति दीनता कर बोले—

चौ० तुमबहुदिवसलह्योदुखभारी, करतरहेअतिसुरतहमारी।

इसमें हमारा कुछ अपराध नहीं क्योंकि, जबसे आप हमें गोकुलमें नंदके यहां रख आये तबसे परबश थे, हमारा वश न था. पर मनमें सदा यह आताथा, कि जिसके गर्भमें दश महीने रह जन्म लिया उसे नेकभी कुछ सुख न दिया, न हमहीं माता पिताका सुख देखा, वृथा जन्म पराये यहां खोया. तिन्होंने हमारे लिये अति विपत्ति सही, हमसे कुछ उनकी सेवा न भई, वही संसारमें समर्थ बेटे हैं जो मा बापकी सेवा करते हैं. हम उनके ऋणी रहे, टहल न करसके.

पृथ्वीनाथ! जब श्रीकृष्णजीने अपने मनका खेद यों कह सुनाया, तब उन्होंने अति आनंदकर उन दोनोंको हितकर कंठ लगाय और सुख मान पिछला दुःख सब गँवाया, ऐसे माता पिताको सुख दे दोनों भाई वहांसे चले चले उग्रसेनके पास आए और हाथ जोड़कर बोले-

चौ०नानाजूअबकीजेराज, शुभनक्षत्रनीकोदिन आज।

इतनी बात हरिमुखसे निकलतेही राजा उग्रसेन उठकर आय श्रीकृष्णचंद्रके पाओंपर गिर कहने लगा, कि कृपानाथ! मेरी विनती सुन लीजिये. जैसे आपने सब असुरोंसमेत कंस महादुष्टको मार भक्तोंको सुख दिया, तैसेही सिंहासनपर बैठ अब मधुपुरीका राज्यकर प्रजापालन कीजिये. प्रभु बोले--महाराज! यदुवंशियोंको राज्यका अधिकार नहीं, इस बातको सब कोई जानते हैं; जब राजा ययाति बूढ़े हूए, तब अपने पुत्र यदुको उन्होंने बुलाकर कहा, कि अपनी तरुण अवस्था मुझे दे और मेरा बुढ़ापा तू ले. यह सुन उसने अपने जीमें विचारा कि जो मैं पिताको युवावस्था दूंगा तो यह तरुण हो भोग करेगा, इसमें मुझे पाप होगा, इससे नहीं करनाही भला है. यों शोच समझके उसने कहा कि पिता! यह तो मुझसे न हो सकेगा, इतनी बातके सुनतेही राजा ययातिने क्रोध कर यदुको शाप दिया, कि तेरे वंशमें राजा कोई न होगा. इसबीच पुरुनाम उनका छोटा बेटा सन्मुख आ हाथ जोड़ बोला कि पिता! अपनी वृद्धावस्था मुझे दो तुम मेरी युवावस्था लो, यह देह किसी कामकी नहीं.जो आपके काम आवे तो इससे उत्तम क्या है? जब पुरुने यों कहा तब राजा ययाति प्रसन्न हो अपनी वृद्ध अवस्था दे उसकी युवा अवस्था ले बोला, कि तेरे राज्यगद्दी रहेगी. इससे नानाजी! हम यदुवंशी हैं. हमें राज्य करना उचित नहीं.

सो०--करो बैठ तुम राज, दूर करहु संदेह सब।
हम करिहैं सब काज, जो आयसु देहो हमें॥
चौ०--जोनमानिहै आनतुम्हारी,ताहिदंडकरिहैंहमभारी॥

औरकछूचितशोचनकीजै, नीतिसहितपरजासुखदीजै॥ यादव जिते कंसके त्रास, नगर छाँड़िकै गये प्रवास। तिनको अब कर जोर मँगाओ,सुख दै मथुरामांझ बसाओ विप्रधेनुसुरपूजन कीजै, इनकी रक्षामें चित दीजै॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि धर्म्मावतार! महाराजाधिराज! भक्तहितकारी श्रीकृष्णचंद्रने उग्रसेनको अपना भक्त जान ऐसे समझाय सिंहासनपर बिठाय राजतिलक किया और छत्र फिरवाय दोनों भाइयोंने अपने हाथों चँवर लिया. उसकाल सब नगरके वासी अति आनंदमें मग्न हो धन्य धन्य कहने लगे, और देवता फूल बरसाने लगे. महाराज! उग्रसेनको राजपाटपर बिठाय दोनों भाई बहुतसे वस्त्र आभूषण अपने साथ लिवाय वहांसे चले चले नंदरायजीके पास आए और सन्मुख हाथ जोड़ खड़े हो अतिदीनता कर बोले हम तुम्हारी क्या बड़ाई करें जो सहस्र जीभें होय तौभी तुम्हारे गुणका बखान हमसे न हो सकेगा. तुमने हमें अति प्रीतिकर अपने पुत्रकी भांति पाला, सब लाड़ प्यार किया,यशोदा मैयाभी बड़ा स्नेह करती,अपना हित हमहींपै रखती, सदा निजपुत्रसमान जानती, कभी मनसेभी हमें पराया कर न मानती. ऐसे कह फिर श्रीकृष्णचंद्र बोले, कि हे पिता! तुम यह बात सुनकर कुछ बुरा मतमानो. हम अपने मनकी बात कहते हैं; कि मातापिता तो तुम्हेंही कहेंगे पर अब कुछ दिन मथुरामें रहेंगे अपने जात भाइयोंको देख यदुकुलकी उत्पत्ति सुनेंगे. और अपनी मातासे मिल उसे सुख देंगे. क्योंकि, उन्होंने हमारे लिये बड़ा दुःख सहा है. जो हमें तुम्हारे यहां न पहुँचा आते तो वे दुःख न पाते. इतना कह वस्त्र आभूषण नंदमहरके आगे धर प्रभुने निर्मोही हो कहा—

चौ० मैयासों पालागन कहिये, हममें प्रेम करो तुम रहियो

इतनी बात श्रीकृष्णके मुँहसे निकलतेही नंदराय तो अतिउदास हो लंबी श्वासें लेने लगे और ग्वालबाल विचारकर मनहीं मन यों कहने लगे, कि यह क्या अचंभेकी बात कहते हैं? इससे ऐसा समझमें आता

है कि अब ये कपट कर जाया चाहते हैं नहीं तो ऐसे निठुर बचन न कहते. महाराज ! निदान उनमेंसे सुदामा नाम सखा बोला—भैया ! कन्हैया ! अब मथुरामें तेरा क्या काम है ? जो निठुराईकर पिताको छोंड़ यहां रहता है. भला किया कंसको मारा, सब काम सँवारा; अब नंदके साथ हो लीजिये और वृंदावनमें चल राज्य कीजिये. यहांका राज्य देख मनमें मत ललचाओ वहांकासा सुख न पाओगे, सुनो राज्य देख मूरुख भूलते हैं और हाथी घोड़े देख फूलते हैं. तुम वृंदावन छोड़ कहीं मत रहो.वहां सदा बसंतऋतु रहती है, सघन बन और यमुनाकी शोभा मनसे कभी नहीं बिसरती.भाई ! जो वह सुख छोंड़ हमारा कहा न मान मातापिताकी माया तज यहां रहोगे तो तुम्हारी इसमें क्या बड़ाई होगी ? उग्रसेनकी सेवा करोगे, और रातदिन चिंतामें रहोगे, जिसे तुमने राज्य दिया उसी के आधीन होना होगा, यह अपमान कैसे सहा जायगा ? इससे उत्तम यही है कि, नंदरायको दुःख न दीजे, उनके साथ हो लीजे.

चौ०ब्रजवननदीबिहारबिचारो, गायनकोमनतेनबिसारो
नहीं छांड़िहैं हम ब्रजनाथ, चलिहैं सबै तिहारे साथ ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनिने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज ! ऐसे कितनी एक बातें कह दस बीसक सखा श्रीकृष्ण बलरामजीके साथ रहे और उन्होंने नंदरायसे बुझाकर कहा आप सबको ले निःसंदेह आगे बढ़िये पीछेसे हमभी इन्हे साथ लिये चले आते हैं. इतनी बातके सुनतेही—

सो०—ब्याकुल सबै अहीर, मानहुँ पन्नगके डसे ।
हरिमुख लखत अधीर, ठाढ़े काढ़े चित्रसे ॥

उस समय बलदेव नंदरायको अतिदुःखित देख समझाने लगे कि पिता ! तुम इतना दुःख क्यों पाते हो ? थोड़े एक दिनोंमें यहांका काज कर हमभी आते हैं. आपको आगे इसलिये बिदा करते हैं [illegible] माता हमारी अकेली ब्याकुल होती होगी, तुम्हारे गयेसे उन्हें [illegible] धीरज

होगा. नंदजी बोले कि बेटा ! एक बार तुम मेरेसाथ चलो फिर मिल कर चले आइयो.

दोहा--ऐसे कह अतिबिकलहो, रहे नंद गहि पाय ॥
भई क्षीण द्युति मंदमति, नैनन जल न रहाय ॥

महाराज ! जब मायारहित श्रीकृष्णचंद्रजीने ग्वालवालोंसमेत नंद महरको महाव्याकुल देखा तब मनमें विचारा कि, ये मुझसे बिछुड़ेंगे तो जीतें न बचेंगे, त्योंही उन्होंने अपनी उस मायाको छोड़ी जिसने सारे संसारको भुला रक्खा है. उसने आतेही नंदजीको सबसमेत अज्ञानी किया. फिर प्रभु बोले, कि पिता ! तुम इतना क्यों पछताते हो ? पहले यही विचारो कि, मथुरा और वृंदावनका अंतरही क्या है ?तुमसे हम कहीं दूर तो नहीं जाते ? जो इतना दुःख पाते हो. वृंदावनके लोग दुःखी होंगे, इसलिये तुम्हें आगे भेजते हैं. जब ऐसे प्रभुने नंदमहरको समझाया तब ये धीरज धर हाथ जोड़ बोले—प्रभु जो तुम्हारेही जीमें यों आया तो मेरा क्या बश है ? जाताहूं. तुम्हारा कहा टाल नहीं सक्ता. इतना बचन नंदजीके मुखसे निकलतेही हरिने सब गोप ग्वालवालों-समेत नंदरायको तो वृंदावन बिदा किया. और आप कईएक सखाओं समेत दोनो भाई रहे. उसकाल नंदसहित गोप ग्वाल—

चौ०चलेसकलमगशोचतभारी,हारेसर्वसुमनहुँजुआँरी ॥ क[illegible] [illegible]ै काहू सुधि नाहीं, लटपट चरण परत म[illegible]ड़ीं ॥ जात वृंदावन देखत मधुबन, बिरहबिथा बाढ़ी [illegible]कुलतन ॥

इसीरीत[illegible] ज्यों त्यों कर वृंदावन पहुँचे.इनका आना सुनतेही यशोदारानी अति अकुलाकर दौड़ी आई और रामकृष्णको न देख महाव्याकुल हो नंदजीसे कहने लगी—

**चौ०—कहो कंत सुत कहाँ गवांये, बसन अभूषण लीन्हें आए ॥ कंचन फेंक कांच घर राख्यो, अमृत छांड़ि मूढ

विष चाख्यो, पारस पाय अंध जो डारै, फिरि गुण सुनहि कृपारहि मारै ॥

ऐसे तुमनेभी पुत्र गवाँये और बसन आभूषण उनके पलटे ले आए. अब उनबिन धन क्या करोगे ? हे मूर्ख कंत ! जिनके पलक ओट भये छाती फटती है उनबिन दिन कैसे कटें ? जब उन्होंने तुमसे बिछुड़नेको कहा तब तुम्हारा हिया कैसे रहा? इतनी बात सुन नंदजीने बड़ा दुःख पाया और नीचा शिर कर यह बचन सुनाया, सच कहो ये वस्त्र अलंकार कृष्णने दिये.मुझे यह सुध नहीं किसने दिये ? और मैं कृष्णकी बात क्या कहूंगा ? सुनकर तूभी दुःख पावेगी.

चौ०कंसमारमोपैफिरआए,प्रीतिहरन कहि वचन सुनाए ॥ बसुदेवके पुत्र वे भये, कर मनुहार हमारी गये ॥ हौं तब महरि अचंभे रह्यौं, पोषन भरन हमारो कह्यो ॥ अब जानि महरि हरिहिं सुत कहिये,ईश्वर जानि भजन करि रहिये ॥

उसे तो हमने पहलेही नारायण जाना था, पर मायावश पुत्रकर माना. महाराज! जब नंदरायजीने सच सच बातें श्रीकृष्णकी कही कह सुनाई, तिस समय मायावश हो यशोदारानी कभी तो प्रभुको अपना पुत्र ज़ान मनही मन पछताय व्याकुल हो हो रोती थी, और कभी ज्ञानकर ईश्वर जान उनका ध्यानकर गुण गाय गाय मनका खेद खोती थी.और इसी रीतिसे सब वृंदावनवासी क्या स्त्री क्या पुरुष हरिके प्रेमरंगराते अनेक अनेक प्रका[illegible]की बातें करतेथे, सो मेरी सामर्थ्य नहीं जो मैं वर्णन करूं. इससे अब [illegible]की लीला कहताहूं तुम चित्त दे सुनो-कि जब हलधर और गोवि[illegible]दरायको बिदा कर वसुदेवदेवकीकेपास आए तब उन्होंने इन्हें दे[illegible] भुलाय ऐसे सुख माना, कि जैसें तपी तपकर अपने तपका फ[illegible] सुख माने. आगे वसुदेवजीने देवकीसे कहा, कि कृष्ण बलदेव [illegible]ां रहे हैं इन्होंने उनके साथ खायापिया

है और अपनी जातका व्यौहारभी नहीं जानते. इससे अब उचित है कि पुरोहितको बुलाय पूंछें; जो वह कहे सो करें. देवकी बोली—बहुत अच्छा. तब वसुदेवजीने अपने कुलपूज्य गर्गमुनिजीको बुला भेजा. वे आए. उनसे इन्होंने अपने मनका संदेह सब कहके पूंछा कि महाराज ! अब हमें क्या करना उचित है ? सो दयाकर कहिये. गर्गमुनि बोले—पहले सब जातभाइयोंको नौत बुलाइये, पीछे जातकर्म कर रामकृष्णको जनेऊ दीजे. इतना बचन पुरोहितके मुखसे निकलतेही वसुदेवजीने नगरमें नोता भेज सब ब्राह्मण और यदुवंशियोंको नौत बुलाया, वे आए तिन्हें अति आदर मानकर बिठाया. उसकाल पहले तो वसुदेवजीने विधिसे जातकर्म कर जन्मपत्रिका लिखवाया. दशसहस्र गौ सोनेके सींग, तांबेकी पीठ, रूपेके खुरसमेत पाटंबर उढ़ाय ब्राह्मणको दिया. जो श्रीकृष्णजीके जन्मसमय संकल्पी थीं. पीछे मंगलाचार करवाय वेदकी बिधिसे सब रीति भांतिकर रामकृष्णका यज्ञोपवीत किया, और उन दोनों भाइयोंको कुछ दे विद्या पढ़नेको [illegible] दिया. वे चले चले अवंतिकापुरी के सांदीपनि नाम ऋषि [illegible] पंडित और बड़ा ज्ञानवान् काशीपुरमें था; उसके यहां आए; दंडवत [illegible] हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो अतिदीनता कर बोले—

चौ० हमपर कृपा करो ऋषिराय। विद्यादान देहु मनलाय॥

महाराज ! जब श्रीकृष्ण बलरामजीने सांदीपनि ऋषिसे यों दीनताकर कहा तब तो उन्होंने इन्हें अति प्यारसे अपने घरमें रक्खा, और लगे बड़ी कृपा कर पढ़ाने. कितने एक दिनोंमें ये चार वेद, उपवेद, छह शास्त्र, आठ व्याकरण, अठारह पुराण, मंत्र, यंत्र, तंत्र, आगम, ज्योतिष, वैद्यक, कोक, संगीत, पिंगल पढ़ और चौदा विद्या चौंसठ कलावोंके निधान हुए. तब एक दिन दोनों भाइयोंने हाथ जोड़ अति बिनती कर गुरुसे कहा कि महाराज ! कहा है जो अनेक जन्म अवतार ले बहुतेरा कुछ दीजिये तोभी विद्याका पलटा नहीं दिया जाता, पर आप हमारी शक्ति देख गुरुदक्षिणाकी आज्ञा कीजे तो हम यथाशक्ति दे आशीश ले अपने घर

जायँ. इतनी बात श्रीकृष्ण बलरामजीके मुखसे निकलतेही सांदीपनि ऋषि वहांसे उठ शोच विचार करते घरभीतर गये, और उन्होंने अपनी स्त्रीसे उनका भेद यों समझाकर कहा, कि ये रामकृष्ण जो दोनों बालक हैं सो आदिपुरुष अविनाशी हैं,भक्तोंके हेतु अवतार ले भूमिका भार उतारनेको संसारमें आये हैं, मैंने इसकी लीला देख यह भेद जाना. क्योंकि पढ़ पढ़ फिर फिर जन्म लेते हैं सोभी विद्यारूपी सागरकी थाह नहीं पाते, और देखो इस बालअवस्थाके थोड़ेही दिनोंमें ये ऐसे अगम अपार समुद्रके पार हो गये. जो किया चाहैं सो पलभरमें कर सक्ते हैं. इतना कह फिर बोले.

चौ०इनपैं कहा माँगिये नारी,सुनके सुंदरि कहै विचारी॥
मृतकपुत्र माँगो तुम जाय, जो हरिहैं तो देहैं ल्याय॥

ऐसे घरमेंसे विचार कर सांपदीनि ऋषि स्त्रीसहित बाहर आय श्रीकृष्ण बलदेवजीके सन्मुख कर जोड़ दीनता कर बोले, महाराज! मेरे एक पुत्र था तिसे साथ ले मैं कुटंबसमेत एक पर्वमें समुद्र न्हाने गयाथा. जो वहां पहुँचा कपड़े उतार सबसमेत तीरमें न्हाने लगा, तो एक सागरकी लहर आई उसमें मेरा पुत्र बहगया, सो फिर न निकला, किसी मगर मच्छने निगल लिया, उसका दुःख मुझे बड़ा है जो आप गुरुदक्षिणा दिया चाहते हो तो वही सुत लादीजे, और हमारे मनका दुःख दूर कीजे. यह सुन श्रीकृष्ण बलराम, गुरुपत्नी और गुरुको प्रणाम कर रथपर चढ़ उनका पुत्र लानेके निमित्त समुद्रकी ओर चले, और चले चले कितनीएक बेरमें तीरपर जा पहुँचे कि इन्हें क्रोधवान् आते देख सागर भयमान हो मनुष्यशरीर धारण कर बहुतसी भेंट ले नीरसे निकल तीरपर डरता कांपता इनके सोहीं आ खड़ा हुवा और भेंट रख दंडवतकर हाथ जोड़ शिर नवाय अति बिनती कर बोला–

चौ०बड़ेभाग्यप्रभुदर्शनदयो, कौनकाजइतआवनभयो।

श्रीकृष्णचंद्र बोले, हमारे, गुरुदेव यहां कुटुंबसमेत न्हाने आयेथे. तिनके पुत्रको जो तू तरंगसे बहाय लेगया है, तिसे लादे, इसलिये हम यहां आए हैं.

चौ० सुनतसिंधुबोल्योशिरनाय, मैंनहिंलीनोवा हि वहाय।
तुम सबहीके गुरु जगदीश, रामरूप बांध्योहो ईश ॥

तभीसे मैं बहुत डरताहूं. और अपनी मर्यादसे रहताहूं. हरि बोले--जो तूने नही लिया तो यहांसे और कौन उसे लेगया ? समुद्रने कहा कृपानाथ ! इसका भेद बताताहूं कि, एक शंखासुरनाम असुर शंखरूप मुझमें रहता है; सो सब जलचर जीवोंको दुःख देता है और जो कोई ती[illegible]र न्हानेको आता है उसे पकड़कर ले जाता है. कदाचित् व[illegible]क गुरुसुतको लेगया होय तो मैं नही जानता, आप भी[illegible] देखिये.

चौ० यों सुनकृष्णधसेमनलाय, मांझस[illegible] पहुँचेजाय ॥
देखतही शंखासुर मार्‍यो, पेट [illegible] बाहर डार्‍यो ॥
तामें गुरुको पुत्र न पायो [illegible]ने बलभद्र सुनायो ॥

कि भैया ! हमने इसे बिन[illegible] मारा, बलरामजी बोले कुछ चिंता नहीं अब आप इसे धारण कीजे [illegible]ह सुन हरिने उस शंखको अपना आयुध किया. आगे दोनों भा[illegible] वहांसे चले चले यमपुरीमें जा पहुँचे जिसका संयमिनी नाम है, और [illegible]मराज वहाका राजा है. इनको देखतेही धर्मराज अपनी गद्दीसे [illegible] आगे आय अतिभाव भक्ति कर लेगया. सिंहासनपर बैठाय पांव [illegible] चरणामृत ले बोला—धन्य यह पुरी. जहां आकर प्रभुने दर्शन दिय[illegible] और अपने भक्तोंको कृतार्थ किया. अब कुछ आज्ञा कीजे, जो सेवक [illegible] करे. प्रभुने कहा कि हमारे गुरुपुत्रको लादे. इतना बचन हरिके मुख[illegible] निकलतेही धर्मराज झट जाकर बालकको ले आये और हाथ जोड़ [illegible]ती कर बोले कि कृपानाथ! आपकी कृपासे यह बात मैंने पहलेही ज[illegible]थी, कि आप गुरुसुतको लेने आवोगे. इसलिये मैंने यत्न कर रक्खा [illegible] इस बालकको आजतक जन्म नहीं दिया. महाराज ऐसे कह धर्मरा[illegible] बालक हरिको दिया, प्रभुने लेलिया; और तुरंत उसे रथपर बैठाय व[illegible] चल कितनीएक वेरमें ला गुरुके सोहीं खड़ा किया. और दोनों भा[illegible]ने हाथ जोड़के कहा; गुरुदेव अब क्या आज्ञा होती है? इतनी बा[illegible] सुन और पुत्रको देख सांदीपनि ऋषि अति प्रसन्न हो श्रीकृष्ण बलरा[illegible]को बहुतसी आशीश देकर बोले—

चौ० अबहौं मागौं कहा मुरारी, दीन्हौं मोहिं पुत्रसुख भारी॥ अतियश तुमसौं शिष्य हमारो, कुशलक्षेम अब घरहि पधारो॥

जब ऐसे गुरुने आज्ञा की तब दोनो भाई विदा हो दंडवत्कर रथपर बैठ वहांसे चले चले मथुरापुरीके निकट आए. इनका आना सुन राजा उग्रसेन वसुदेवसमेत नगरबासी क्या स्त्री क्या पुरुष सब उठ धाए, और नगरके बाहर आय भेंटकर अति सुख पाय बाजे गाजेसे पाटंबरके पांवड़े डालते प्रभुको नगरमें लेगये. उसकाल घर घर मंगलाचार होने लगे और बधाई बाजने. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे शंखासुरवधो नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४६॥

अध्याय ४७.

श्रीकृष्णजीका उद्धवजीको वृंदावनमें नंदादिकोंका समाधान करनेको भेजना.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि पृथ्वीनाथ! जो श्रीकृष्णचंद्रजीने वृंदावनकी सुरत करी सो मैं सब लीला कहताहूं. तुम चित्त दे सुनो. एक दिन हरिने बलरामजीसे कहा कि भाई! सब वृंदावनवासी हमारी सुरतकर अति दुःख पाते होंगे; क्योंकि जो मैंने उनसे अवधि की थी सो वीतगई; इससे अब उचित है कि किसीको वहा भेजदीजे, जो जाकर उनका समाधान कर आवे. यों भाइयोंमें मतो कर हरिने उद्धवको बुलायके कहा, कि अहो उद्धव! एक तो तुम हमारे सखा हो, दूजे अतिचतुर

ज्ञानवान् और धीर, इसलिये हम तुम्हें वृंदावन भेजा चाहते हैं कि तुम जाकर नंद, यशोदा और गोपियोंको ज्ञान दे उनका समाधान कर आओ और माता रोहिणीको ले आओ उद्धवजीने कहा जो आज्ञा. फिर श्रीकृष्णचंद्र बोले, तुम प्रथम नंदमहर और यशोदाजीको ज्ञान उपजाय उनके मनका मोह मिटाय ऐसे समझांकर कहियो जो वे मुझे निकट जान दुःख तजें, और पुत्रभाव छोंड़ ईश्वर मान भजें. पिछे उन गोपियोंसे कहियो. जिन्होंने मेरे काज, छोंड़ी है लोक वेदकी लाज. रातदिन लीला यश गाती हैं और अवधिकी आश किये प्राण मूठीमें लिये हैं कि तुम कंतभाव छोड़े हरिको भगवान् जान भजो और विरहदुःख तजो. महाराज! ऐसे उद्धवको कह दोनों भाइयोंने मिलकर एक पाती लिखी जिसमें नंद यशोदासमेत गोप ग्वालोंको तो यथा योग्य दंडवत प्रणाम आशीर्वाद लिखा और सब ब्रजयुवतियोंको योगका उपदेश लिख उद्धवके हाथ दी और कहा यह पाती तुमहीं पढ़ सुनाइयो जैसे [illegible] उन सबको समझाय शीघ्र आइयो. इतना सँदेस कह [illegible]ने [illegible] आभूषण मुकुट पहराय अपनेही रथपर बैठाय उद्धवजीको वृंदावन बिदाकिया. ये रथ हाक कितनीएक वेरमें मथुरासे [illegible] चले वृंदावनके निकट जा पहुँचे तो वहां देखते क्या हैं कि, सघन [illegible] कुंजोंके पेड़ोंपर भांति भांतिके पक्षी मनभावन बोलियां बोल [illegible] हैं. और जिधर तिधर धौली, धूमरी, भूरी, पीली गायें घटासी [illegible]ती हैं.और ठौर ठौर गोपी गोप ग्वालबाल श्रीकृष्णयश गाय [illegible] हैं. यश शोभा निरख हर्षते और प्रभुका विहारस्थल जान प्रणाम [illegible] उद्धवजी जो गांवके खरिक निकट गये तो किसीने दूरसे हरिका [illegible] पहिचाँन पास आय इनका नाम पूंछ नंदमहरसे जा कहा कि, महाराज! श्रीकृष्णका भेष किये उन्हींका रथ लिये कोई उद्धवनाम [illegible]से आया है. इतनी बातके सुनतेही नंदराय जैसे गोपमंडलीके [illegible] अथाईपर बैठेथे, तैसेही उठ धाए और तुरंत उद्धवजीके निकट [illegible]. रामकृष्णके संगी जान अतिहित कर मिले, और कुशल क्षेम पूंछ [illegible] आदर मानसे घर लिवाय लेगये. पहले पांव धुलवाय आसन बैठ-

नेको दिया; पीछे षटरस भोजन बनवाय उद्धवजीकी पहुनाई की. जब वे रुचिसे भोजन करचुके तब एक सुठौर उज्ज्वल फेनसी सेज बिछवा दी; तिसपर पान खाय जाय उन्होंने पौढ़कर अति सुख पाया और मार्गका श्रम सब गँवाया. कितनीएक बेरमें जो उद्धवजी सोकर उठे तो नंदमहर उनके पास जा बैठे और पूंछने लगे, कि कहो उद्धवजी! शूरसेनके पुत्र हमारे परममित्र वसुदेवजी कुटुंबसमेत आनंदसे हैं? और हमसे कैसी प्रीति रखते हैं? यों कह फिर बोले-

चौ॰ कुशलहमारे सुतकी कहो, जिनके संग सदा तुम रहो
कबहूं वे सुधि करत हमारी, उन बिन दुख पावत हम भारी
सबहीसों आवन कह गये, बीती अवधि बहुत दिन भये

नित उठ यशोदा दही बिलोय माखन निकाल हरिके [illegible]ती है. उसकी और ब्रजयुवतियोंकी जो उनके प्रेमरंगमें रंगी [illegible]त कभी कान्ह करते हैं कि नहीं?

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा [illegible] पृथ्वीनाथ! इसीरीतसे समाचार पूंछते पूंछते [illegible] पूर्वलीला गाते गाते नंदरायजी तो प्रेमसे भीजे. [illegible] कह [illegible] ध्यान धर अवाक् हुए कि-

चौ॰ महाबली कंसादिक मारे, अबहम काहे कृष्णवि[illegible]

इस बीच अतिब्याकुल हो सुध बुध देहकी बिसारे मन मारे [illegible] यशोदारानी उद्धवजीके निकट आय रामकृष्णकी कुशल पूंछ बोली. कहो उद्धवजी! हरि हमबिन वहां कैसे इतने दिन रहे? और क्या संदेशा भेजा है? कब आय दर्शन देंगे? इतनी बात सुनतेही पहले तो उद्धवजीने नंद यशोदाको कृष्ण बलरामकी पाती पढ़ सुनाई. पीछे समझाकर कहने लगे, कि जिनके घरमें भगवानने जन्म लिया और बाललीला कर सुख दिया, तिनकी महिमा कौन कहसके? तुम बड़े भाग्यवान् हो. क्योंकि जो आदिपुरुष अविनाशी शिव विरंचिका कर्त्ता न जिसके माता न पिता न भाई न बंधु तुम तिन्हे अपना पुत्र [illegible]

मानते हो· और सदा उसीके ध्यानमें मन लगाये रहते हो, वह तुमसे कब दूर रह सक्ता है ? कहा है--

चौ०सदा समीप प्रेमबश हरी, जिनके हेतु देह निज धरी ।
जाके वैरी मित्र न कोई, ऊँच नीच कोऊ कि न होई ॥
जोई भक्ति भजन मन धरे, सोई हरिसों मिल अनुसरे ॥

जैसे भृंगी कीटको लेजाता है और अपना रूप वना देता है और जैसे कमलके फूलमें मूँद जाता है और रातभर उसके ऊपर गुंजता रहता है उसे छोंड़ और कहीं नहीं जाता तैसेही जो हरिसे हित करता है और उनका ध्यान धरताहै तिसे वेभी आपसों वना लेते हैं और सदा उसके पासही रहते हैं· यों कह उद्धवजी बोले कि, अव तुम हरिको पुत्र कर मत जानो, ईश्वर कर मानों वे अंतर्यामी भक्तहितकारी प्रभु आय दर्शन दे तुम्हारा मनोरथ पूरा करेंगे, तुम किसी वातकी चिन्ता मत करो·

महाराज! इसीरीतसे अनेक अनेक प्रकारकी वातें कहते और सुनते-सुनते जब सब रात व्यतीत भई और चार घड़ी पिछली रहीं तव नंदरायजीसे उद्धवजीने कहा कि महाराज ! अव दधि मथनेकी विरियां हुई जो आपकी आ[illegible]ाऊं तो यमुना स्नान करि आऊं, नंदमहर बोले बहुत अच्छा· इतना [illegible]वे तो वहां बैठ शोच विचार करते रहे, और उद्धव झट रथमें बैठ यमुनातीरपर आए. पहले वस्त्र उतार देह शुद्ध करी पीछे नीरके निकट जाय रज शिर चढ़ाय हाथ जोड़ कालिंदीकी स्तुति गाय आचमन कर जलमें पैठ और न्हाय धोय संध्या पूजा तर्पणसे निश्चित हो लगे जप करने· उसीसमय सव ब्रजयुवतियांभी उठीं और अपना २ घर झाड़ बुहार लीप पोत [illegible] दीप कर लगीं दही मथने.

चौ०दधिको मथन मेहसों गा[illegible] ावैं नूपुरकी धुनि बाजैं
दो०--दधि मथिकै माखन [illegible], कियो गेहका काम ।
तब सब मिल पानी च[illegible] ुंदर ब्रजकी वाम ॥

महाराज वे गोपियां श्रीकृष्णके वियोग मदमातियां उनकाही यश गातियां अपने झुंड लिये प्रीतमका ध्यान किये बाटमें प्रभुकी लीला गाने लगीं-

चौ० एक कहै मुहिं मिले कन्हाई, एक कहै वे भजे लुकाई
पाछेते पकरी मों बाँह, वे ठाढ़े हरि बड़की छाँह ॥
कहत एक गो दोहत देखे, बोली एक मोरहीं पेखे ॥
एक कहै वे धेनु चरावैं, सुनहुँ कान दै बेनु बजावैं ॥
या मारग हम जाँय न माई, दान माँगिहैं कुँवर कन्हाई
गागरि फोरैं गांठि छोरिहैं, नेक चितैकै चित्त चोरिहैं ।
है कहुँ दुरे दौरि आइहैं, तब हम कहां जान पाइहैं ।
ऐसे कहत चलीं ब्रजनारीं, कृष्णवियोगबिकल तन भारी

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे उद्धवस्य वृंदावनगमनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अध्याय ४८.

उद्धव और गोपियोंका श्रीकृष्णसंबंधी वार्तालाप.

श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि पृथ्वीनाथ! जब उद्धवजी जप कर चुके तब नदीसे निकल वस्त्र आभूषण पहन रथमें बैठ जो कालिंदीतीरसे नंदगेहकी ओर चले तो गोपियां जो जलभरनेको निकलीं थीं तिन्होंने रथ दूरसे पंथमें आते देखा. देखतेही आपसमें कहने लगीं, कि यह रथ-

किसका चला आता है? इसे देखलो. आगे पांव न बढ़ाओ. यों सुन उनमेंसे एक गोपी बोली कि,सखी ! कहीं वही कपटी अक्रूर तो न आया होय? जिसने श्रीकृष्णचन्द्रको ले जाय मथुरामें बसाया, और कंसको मरवाया. इतना सुन एक और उसमेंसे बोली, यह विश्वासघाती फिर काहेको आया? एक बेर तो हमारे जीवनमूलको लेगया, अब क्या जीव लेगा? महाराज! इसी भांतिकी आपसमें अनेक बातें कह-

चौ०ठाढी भईंतहांब्रजनारी, शिरतेगागरिधरीउतारी॥

इतनेमें जो रथ निकट आया तो कुछ एक दूरसे उद्धवजीको देखकर आपसमें कहने लगीं, कि सखी! यह तो कोई श्यामवर्ण कमलनयन मुकुट शिर दिये बनमाल गलेमें डाले पीतांबर पहिरे पीतपट ओढ़े श्रीकृष्णचंद्रसा रथमें बैठा हमारी ओर देखता चला आता है, तब तिनहीमेंसे एक गोपीने कहा, कि सखी ! यह तो कलसे नंदजीके यहां आया है, उद्धव इसका नाम है, और श्रीकृष्णचंद्रजीने कुछ संदेशा इसके हाथ कह पठाया है. इतनी बातके सुनतेंही गोपियां एकांत ठौर देख शोच संकोच छोड़ दौडकर उद्धवजीके निकट गईं ओर हरिका हितू जान दंडवत् कर कुशल क्षेम पूंछ हाथ जोड़ रथके चारों ओर घेरके खड़ी हुईं. उनका अनुराग देख उद्धवजीभी रथसे उतर पड़े, तब सब गोपियाँ उन्हें एक पेंड़की छायामें बैठाय आपभी चारों ओर घेरके बैठीं और अति प्यारसे कहने लगीं-

चौ०भलीकरीउद्धव तुम आए, समाचार माधवके लाए
सदा समीप कृष्णके रहो, उनको कह्यो सँदेशो कहो ॥
पठये मात पिताके हेत, और न काहूकी सुधि लेत ॥
सर्वसु दीनो उनके हाथ, उरझे प्राण चरणके साथ ॥
अपनेही स्वारथके भये, सबहीको अब दुख दे गये ॥

और जैसे फलहीन तरुवरको पक्षी छोड़ जाता है तैसेही हरि हमें छोड़ गये.हमने उन्हे अपना सर्वसु दिया तोभी हमारे न हुए.महाराज! जब प्रेममें मग्न है इसी ढबकी बातें बहुतसीं गोपियोंने कहीं, तब उद्धव-

जी उनके प्रेमकी दृढ़ता देख ज्यों प्रणाम करनेको उठ चाहतेथे त्योंही किसी गोपीने एक भौंराको फूलपर बैठते देख उसके मिस उद्धवसे कहा, अरे मधुकर! तैंने माधवके चरणकमलका रस पिया है, तिसीसे तेरा नाम मधुप हुआ. और कपटीका मित्र है इसलिये तुझे उसने अपना दूत कर भेजा है, तुम हमारे चरण मत परसो. क्योंकि हम जानें हैं जितने श्यामवर्ण हैं उतने सब कपटी हैं जैसा तू है तैसाही है श्याम,इससे तुम हमें मत करो प्रणाम. जो तू फूल फलका रस लेता फिरता है और किसीका नहीं होता, तो वेभी प्रीति कर किसीके नहीं होते. ऐसे गोपी कह रहीथीं कि एक भौंरा और आया उसे देख ललिता नाम गोपी बोली-

चौ० अहो भ्रमर तुम अलगी रहो, यहतुमजायमधुपुरीकहो

जहां कुब्जासी पटरानी और श्रीकृष्णचंद्र विराजते हैं कि एक जन्मकी हम क्या कहै? तुम्हारी तो जन्म जन्मकी यही चाल है बलिराजाने सर्वसु दिया तिसे पाताल पठाया और सीता सतीको बिन अपराध घरसे निकाला. जब उनकी यह दशा की तो हमारी क्या चली है? यों कह फिर सब गोपी मिल हाथ जोड़ उद्धवसे कहने लगीं, कि उद्धवजी ! हम अनाथ हैं श्रीकृष्ण बिन, तुम अपने साथ ले चलो. श्रीशुकदेवजी बोले कि,महाराज! इतना वचन गोपियोंके मुखसे निकलतेही उद्धवजीने कहा जो संदेशा श्रीकृष्णचंद्रजीने लिख भेजा है सो मैं समझाकर कहताहूं तुम चित्त दे सुनो, लिखा है तुम भोगकी आश छोड़ योग करो तुमसे बियोग कभी न होगा. और कहा है कि-

चौपाई--निशि दिन करती मेरा ध्यान,
प्रिय नाहिं कोइ मम तुमहिं समान ॥

[illegible] कह फिर उद्धवजी बोले, जो हैं आदिपुरुष अविनाशी हरी, तिन[illegible]ने प्रीति निरंतर करी, जिन्हें सब कोई अलख अगोचर अभेद बखा[illegible]न्हें तुमने अपने कंत कर माने. पृथ्वी, पवन,पानी, तेज, आकाशका ह[illegible] देहमें निवास, ऐसे प्रभु तुममें विराजते हैं. पर मायाके गुणोंसे न्यारे [illegible]ई देते हैं. उनका सुमिरन ध्यान किया करो, वे

दा अपने भक्तोंके वश रहते हैं. और पास रहनेसे होता है ज्ञान ध्यानका नाश, इस लिये हरिने किया है दूर जाके वास. और मुझे यहभी श्रीकृष्णचंद्रने समझायके कहा है, कि तुम्हें वेणु बजाय वनमें बुलाया और जब देखा तुम्हारेमें मदनबीरका प्रकाश,तब हमने तुम्हारे साथ मिलकर कियाथा रास विलास.

जब तुम सुरतादी बिसराई, अंतर्धान भये यदुराई ॥

ज्यों तुमने ज्ञानकर ध्यान हरिका मनमें किया त्योंही तुम्हारे भक्तिज्ञान देख प्रभुने आय दर्शन दिया. महाराज! इतना उद्धवजीके मुखसे निकलतेही--

गोपी तबै कहैं सतराय,सुनी बात अब रहैं अरगाय ॥
योगविधिहमहिंसुनावैं, ध्यान छोंड़ आकाशवतावैं
जो लीलामें मन रहे, तिनको को नारायण कहे ॥
जानते जिनसुखदयो, सो क्यों अलख अगोचर भयो
गुणयुत अहे स्वरूप, सो क्योंनिर्गुण होयोनिरूप
जामें प्रिय प्राण हमारे, तोको सुनिहैंवचन तिहारे
सखी उठि कहै विचारी, उद्धवकी कीजे मनुहारी
सखीकछूनाहिंकहिये, सुनके वचनदेखसुखरहिये
कहति अपराध न याको, तहँ आयोपठयोकुब्जाको
कुब्जा जो जाहिसिखावै, सोई वाको गायो गावै॥
हूं श्याम कहैं नाहिं ऐसी, कही आय व्रजमें इनजैसी
बात सुनै को माई, उठत शूल सुनि सही न जाई॥
त भोग तजि योग अराधो, ऐसी कैसी कहिहैंमाधो ॥
तपसंयमनेमअपार, यह सब विधवाको व्योहार ॥
युगजीवहु कँवरकन्हाई, शीश हमारेपर सुखदाई ॥
क्षतपतीविभूति लगाई, कहोकहाँकी रीति चलाई ॥

हमको नेम योग व्रत एहा, नंदनँदनपद सदा सनेहा ॥
उद्धव तुम्हें दोष को लावै, यह सब कुब्जा नाच नचावै॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि, महाराज ! जब गोपि योंके मुखसे ऐसे प्रेमरससाने बचन सुने तब योगकथा कहके उद्ध मनही मन पछताये सकुचाय मौन साध शिर नवाय रहगये. फिर ए गोपीने पूंछा; कहो बलभद्रजी कुशल क्षेमसे हैं? और बालापन प्रीति बिचार कभी हमारी सुधि करते हैं कि नहीं ? यह सुन उन मेंसे किसी और गोपीने उत्तर दिया कि, तुमतो हो अहीरी गँव और मथुराकी हैं सुंदर नारी. तिनके बश हो हरि बिहार करते हैं, हमारी सुरत क्यों करेंगे ? जबसे वहां जाके छाये, सखी ! तबसे भये पराये. जो पहले हम ऐसा जानती तो काहेको जाने देत अब पछताये कुछ हाथ नहीं आता, इससे उचित है; की सब छोंड़ अवधिकी आश करि रहिये. क्योंकि जैसे आठ महीने ृथ्वी- बन पर्वत मेघकी आश किये तपन सहते हैं और तिन्हे वह ठंढा करता है तैसे हरिभी आय मिलेंगे.

चौ०एक कहति हरी कीनो काज, बैरी मारि ... ॥
काहेको वृंदावन आवें, राज छांडि क्यों गाय च ॥
छोंड़हु सखी अवधिकी आश, चिंता जैहै भये नि ॥
एक त्रिया बोली अकुलाय, कृष्ण आश क्यो छोंडी ॥

बन, पर्वत और यमुनाके तीरमें जहां २ श्रीकृष्ण बलबीरने करी ,तहां तहां वही ठौर देख सुध आतीहै खरी; हे प्राणपति हरि कहां गये ? फिर बोलीं-

दो०दुखसागर यह ब्रज भयो, नाम नाव बिच ध
बूड़हिं बिरह बियोगजल, कृष्ण कहे सब पार ॥
चौ०गोपीनाथतेक्योंसुधिगई, लाजनकछुनामकी ॥

इतनी बात सुन उद्धवजी मनही मन बिचार करने लगे कि है इन गोपियोंको और इनकी दृढ़ताको जो सर्वस छोंड़ श्रीकृष्ण

द्रके ध्यानमें लीन हो रही हैं. महाराज ! उद्धवजी तो उनका प्रेम देख मनहीं मन सराहतेहीथे, कि उसकाल सब गोपी उठ खड़ी हुई और उद्धवजीको बड़े आदर मानसे अपने घर लिवाय लेगई. उनकी प्रीति देख इन्होंनेभी वहां जाय भोजन किया और विश्राम कर श्रीकृष्णकी कथा सुनाय उन्हें बहुत सुख दिया. तब सब गोपी उद्धवजीकी पूजा कर, बहुतसी भेंट आगे धर, हाथ जोड़, अति विनती कर बोलीं, उद्धवजी ! तुम हरिसे जाय कहियो कि, नाथ ! आगे तो तुम बड़ी कृपा करतेथे, हाथ पकड़ अपने साथ लिये फिरतेथे. अब ठकुराई पाय नगरनारी कुब्जाके कहे योग लिख भेजा, हम अबला अपवित्र अबतक गुरुमुखभी नहीं हुई हम ज्ञान क्या जानें ?

चौ॰ उनसों बालापनकी प्रीति, जानें कहायोगकी रीति॥
वे हरि क्यों न योगदे जात, यह न सँदेशेकी है बात ॥
उद्धव यों कहियो समुझाय, प्राण जात हैं राखैं आय ॥

महाराज ! इतनी बात कह सब गोपिया तो हरिका ध्यान कर मग्न हो रहीं. और उद्धवजी उन्हें दंडवत कर वहांसे उठ रथपर बैठ गोवर्धनमें आए वहां कईएक दिन रहे फिर वहांसे जो चले तो जहां जहां श्रीकृष्णचंद्रजीने लीला करीथी तहां तहां गये और दोदो चारचार दिन सब ठौर रहे. निदान कितनेएक दिन पीछे फिर वृंदावनमें आए. और नंद यशोदाजीके पास जा हाथ जोड़कर बोले—आपकी प्रीति देख मैं इतने दिन ब्रजमें रहा. अब आज्ञा पाऊं तो मथुराको जाऊं. इतनी बातके सुनतेहीं यशोदारानी दूध, दही, माखन और बहुतसी मिठाई घरमें जाय ले आई और उद्धवजीको देके कहा कि— यह तो तुम श्रीकृष्ण बलराम प्यारोंको देना, और बहन देवकीसे यों कहना, कि मेरे श्रीकृष्ण बलरामको भेजदे, बिरमाय न रक्खे. इतना संदेशा कह नंदरानी अतिव्याकुल हो रोने लगी. तब नंदजी बोले, कि उद्धवजी ! हम तुमसे अधिक क्या कहैं ? तुम आप चतुर गुणवान् महा सुजान हो. हमारी ओरसे प्रभुसे ऐसे जाय कहियो, कि वे व्रजवासि-

योंका दुःख विचार बेग आय दर्शन दें, और हमारी सुध न बिसारें. इतना कह जब नंदरायने आंशू भरलिये, और जितने ब्रजबासी क्या स्त्री क्या पुरुष वहा खड़ेथे सोभी सब रोने लगे. तब उद्धवजी उन्हें समझाय बुझाय आशा भरोसा दे ढाढस बँधाय बिदा हो रोहिणीको साथ ले मथुराको चले और कितनीएक बेरमें चले २ श्रीकृष्णके पास आ पहुँचे.

उन्हें देखतेही श्रीकृष्ण बलदेव उठकर मिले और बड़े प्यारसे इनकी कुशल क्षेम पूंछ वृंदावनके समाचार पूछने लगे. कहो उद्धवजी! नंदयशोदा समेत सब ब्रजबासी आनंदसे हैं? और कभी हमारी सुरत करते हैं कि नहीं? उद्धवजी बोले कि, महाराज! ब्रजकी महिमा और ब्रजबासियोंका प्रेम मुझसे कुछ कहा नहीं जाता. उनके तो तुम्हीं हो प्रान, निशि दिन करते हैं वे तुम्हाराही ध्यान. और ऐसी देखी गोपियोंकी प्रीत, जैसी होती है पूरन भजनकी रीत. आपका कहा योगका उपदेश जा सुनाया, पर मैंने भजनका भेद उनहींसे पाया. इतना समाचार कह उद्धवजी बोले कि, दीनदयाल! मैं अधिक क्या कहूं, आप अंतर्यामी घट घटकी जानतेहो. थोड़ेहीमें समझिये कि ब्रजमें क्या जड़, क्या चैतन्य, सब आपके दर्शन परसन बिन महादुःखी हैं. केवल अवधिकी आश कर रहे हैं. इतनी बातके सुनतेही जब दोनों भाई उदास हो रहे, तब उद्धवजी तो श्रीकृष्णचंद्रसे बिदा हो नंद यशोदाका संदेशा बसुदेव देवकीको पहुँचाय अपने घर गये, और रोहिणीजी श्रीकृष्ण बलरामसे मिल अति आनंदकर निजमंदिरमें रहीं. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे गोपसंबोधनं भ्रमरगीतं नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

अध्याय ४९.

श्रीकृष्णजीका उद्धवजीके साथ कुब्जाके घर जाना.

श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि महाराज! एक दिन श्रीकृष्णविहारी भक्तहितकारी, कुब्जाकी प्रीति विचार अपना वचन प्रतिपालनेको उद्धवको साथ ले उसीके घर गये.

**चौ० जब कुब्जा जान्यों हरि आए, पाटंबर पाँवडे बिछाए
अति आनंद लये उठि आगे, पूरब पुण्यपुंज सब जागे ॥
उद्धवको आसन बैठारी, मंदिरभीतर घुसे मुरारी ।**

वहां जाय देखें तो चित्रशालामें उज्वल बिछौना बिछा है. उसपर एक फूलोंसे सँवारी अच्छी सेज बिछी है. तिसपर हरि जा बिराजे. और कुब्जा एक ओर मंदिरमें जाय सुगंध उबटन लगाय न्हाय धोय कंघी चोटी कर सुथरे कपड़े पहन नख शिखसे शृंगार कर पान खाय सुगंध लगायकर ऐसे रावचावसे श्रीकृष्णचंद्रके निकट आई कि जैसे रति अपने पतिके पास आई होय. और लाजसे घुंघट किये प्रथम-मिलनका भय उर लिये चुपचाप एक ओर खड़ी देखतेही श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदने उसे हाथ पकड़ अपने पास बिठाय लिया, और उसका मनोरथ पूर्ण किया.

चौ० तब उठि उद्धवके ढिग आए, भई लाज हँसि नयन नवाए।

महाराज! यों कुब्जाको सुख दे उद्धवजीको साथ ले श्रीकृष्णचंद्र

अपने घर आये. और बलरामजीसे कहने लगे कि, भाई! हमने अक्रूरजीसे कहा था, कि तुम्हारा घर देखनें आवेंगे सो पहले तो वहां चलिये पीछे उन्हें हस्तिनापुरको भेज वहाके समाचार मँगवाइये. इतना कह दोनों भाई अक्रूरके घर गये· यह प्रभुको देखतेही अति सुख पाय प्रणाम कर चरणरज शिर चढ़ाय हाथ जोड़ विनती कर बोला–कृपानाथ! आपने बड़ी कृपा की जो आय दर्शन दिया और मेरा घर पवित्र किया. यह सुन श्रीकृष्णचंद्र बोले, कका इतनी बड़ाई क्यों करते हो? हम तो आपके लड़के हैं. यों कह फिर सुनाया कि, कका आपके पुण्यसे असुर तो सब मारे गये, पर एकही चिंता हमारे जीमें है जो सुनते हैं कि पांडु वैकुंठ सिधारे, और दुर्योधनके हाथ पांच भाई हैं दुःखी हमारे·

चौ· कुंतीफुफीअधिकदुखपावै, तुमबिनजायकौनसमझावै

इतनी बातके सुनतेही अक्रूरजीने हरिसे कहा–आप इस बातकी चिंता न कीजे· मैं हस्तिनापुर जाऊंगा और उन्हें समझाय वहांकी सुध ले आऊंगा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कुब्जागृहलीलावर्णनं नाम एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

अध्याय ५०

अक्रूरका दुर्योधनके दुर्वचनोंको सुन विदुरसहित पांडुके घर जाना और कुंतिका समाधान करना.

श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि पृथ्वीनाथ! जब ऐसा श्रीकृष्णचन्द्रजीने अक्रूरके मुखसे सुना तब उन्हें पांडवोंकी सुध लेनेको बिदा किया. वे

रथपर बैठ चले चले कई एक दिनोंमें मथुरासे हस्तिनापुर पहुँचे; और रथसे उतर जहा राजा दुर्योधन अपनी सभामें बैठा था तहां जा जुहार कर खड़े हुए. इन्हें देखतेही दुर्योधन सभासमेत उठकर मिला, और अति आदर मानसे अपने साथ बिठाय इनकी क्षेम कुशल पूंछ बोला—

चौ०-नीके सूरसेन बसुदेव, नीके हैं मोहन बलदेव ॥
उग्रसेन राजा केहि हेत, नाहिन काहूकी सुध लेत ॥
पुत्रहि मार करतहैं राज, तिन्हैं न काहूसों है काज ॥

ऐसे जब दुर्योधनने कहा तब अक्रूर सुन चुप हो रहा और मनही मन कहने लगा, कि यह पापियोंकी सभा है. यहां मुझे रहना उचित नहीं. क्योंकि जो मैं रहूंगा तो ये ऐसी ऐसी अनेक बातें कहेंगे. सो मुझसे कब सुनी जायँगी? इससे यहा रहना भला नहीं. यों विचार अक्रूरजी वहांसे उठ बिदुरको साथ ले पांडुके घर गये. तहां जाय देखें तो कुंती पतिके शोकसे महाव्याकुल हो रो रही है.उसके पास जा बैठे. और लगे समझाने-कि माई! विधनासे कुछ किसीका वश नहीं चलता. और सदा कोई अमर हो जीताभी नहीं रहता. देहधर जीव दुःख सुख सहता है. इसमें मनुष्यको चिंता करनी उचित नहीं; क्योंकि चिंता कियेसे कुछ हाथ नहीं आता. केवल चित्तको दुःख देना है. महाराज! जब ऐसे समझाय बुझाय अक्रूरजीने कुंतीसे कहा तब वह शोच समझ चुप हो रही. और इनकी कुशल पूंछ बोली; हे अक्रूरजी! हमारे माता पिता और भाई वसुदेवजी कुटुंबसमेत भले हैं? और श्रीकृष्ण बलराम कभी युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव इन अपने पांचों भाइयोंकी सुध करते हैं? ये तो यहां दुःख-समुद्रमें पड़े हैं. वे इनकी रक्षा कब आय करेंगे? हमसे अब तो इस अंध धृतराष्ट्रका दुःख सहा नहीं जाता; क्योंकि अब दुर्योधनकी मतिसे च-लता है. इ[illegible]ांचोंको अब मारनेके उपायमें दिन रात रहता है. कईबेर तो विष [illegible] दिया सो मेरे भीमसेनने पीलिया. इतना कह पुनि कुंती बो[illegible] [illegible] अक्रूरजी! जब सब कौरव यों बैर कर रहे तब यह मेरे

बालक किसका मुंह चाहैं ? और नीचसे बच कैसे होयँ सयाने ? यह दुःख बड़ा है, हम क्या बखानें ? ज्यों हरिनी झुंडसे बिछुड़ करती है त्रास, त्यों मैंभी सदा रहती हूं उदास.

चौ०-जिन कंसादिक असुरन मारे, सोई हैं मेरे रखवारे।
भीम युधिष्ठिर अर्जुन भाई, इनको दुख तुम कहियोजाई

जब ऐसे दीन हो कुंतीने कहे बैन, तब सुनकर अक्रूरने भरलिये नैन. और समझाके कहने लगा, कि माता ! तुम कछु चिंता मत करो. ये जो पांचों पुत्र तुम्हारे हैं सो महाबली यशी होंगे. शत्रु और दुष्टोंको मार करैंगे निकंदन. इनके पक्षी हैं श्रीगोविंद. यों कह फिर अक्रूरजी बोले कि, श्रीकृष्ण बलरामने मुझे यहां तुम्हारे पास भेजा है कि फूफीसे कहियो कि किसी बातसे दुःख न पावैं. हम वेगही तुम्हारे निकट आते हैं. महाराज ! ऐसे श्रीकृष्णकी कही बातें कह अक्रूरजी कुंतीको समझाय बुझाय आशा भरोसा दे बिदा हो बिदुरको साथले धृतराष्ट्रके पास गये. और उससे कहा कि तुम पुरखा हो ऐसी अनीति क्यों करते हो ? जो पुत्रके बश हो अपने भाईका राजपाट ले भतीजोंको दुःख देते हो. यह कहांका धर्म है ? जो ऐसा अधर्म करते हो.

चौ०लोचन गये न सूझै हिये, कुल बहिजाय पापके किये

तुमने भले चंगे बैठे बिठाये क्यों भाईका राज्य लिया, और भीम युधिष्ठिरको दुःख दिया ? इतनी बातके सुनतेही धृतराष्ट्र अक्रूरका हाथ पकड़ बोला-कि मैं क्या करूं ? मेरा कहा कोई नहीं सुनता. ये सब अपनी अपनी मतिसे चलते हैं. मैं तो इनके सोहीं मूर्ख हो रहाहूं, इससे इनकी बातोंमें कुछ नहीं बोलता. एकांत बैठ चुपचाप अपने प्रभुका भजन करताहूं. इतनी बात जो धृतराष्ट्रने कही तो अक्रूरजी दंडवत् कर वहांसे उठ रथपर चढ़ हस्तिनापुरसे चले चले मथुरा नगरीमें आए.

दो०-उग्रसेन वसुदेवसों, कही पांडुकी बात।
कुंतीके सुत अति दुखित, भये छीन सब गात॥

यों उग्रसेन वसुदेवजीसे हस्तिनापुरके सब समाचार कह अक्रूरजी फिर

श्रीकृष्ण बलरामजीके पास जा प्रणाम कर हाथ जोड़ बोले महाराज! मैंने हस्तिनापुरमें जाय देखा. आपकी फूफी और पांचों भाई कौरवोंके हाथसे महादुःखी हैं. अधिक क्या कहूंगा? आप अंतर्यामी हैं; वहांकी अवस्था और विपत्ति तुमसे कुछ छिपी नहीं. यों कह अक्रूरजी तो कुंती का कहा संदेशा सुनाय बिदा हो अपने घर गये. और सब समाचार सुन श्रीकृष्ण बलदेव जो हैं सब देवनके देव सो लोकरीतिसे बैठ चिंता कर भूमिका भार उतारनेका विचार करने लगे.

इतनी कथा श्रीशुकदेवमुनिने राजा परीक्षितको सुनाकर कहा कि हे पृथ्वीनाथ! यह जो मैंने ब्रज बन मथुराको यश गाया सो पूर्वार्द्ध कहा, अब आगे उत्तरार्द्ध गाऊंगा; जो द्वारकानाथका बल पाऊंगा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अक्रूरहस्तिनापुरगमनं नाम पंचाशत्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ५० ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

॥ इति श्रीप्रेमसागरस्य पूर्वार्द्धकथा समाप्ता ॥

इति

श्री प्रेमसागरपूर्वार्ध

समाप्त.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

हरिप्रसाद भगीरथजी,

कालकादेवीरोड, रामवाड़ी--मुंबई.

अथ उत्तरार्द्धकथा लिख्यते.

अध्याय ५१.

श्रीकृष्ण बलरामजीका जरासंधसे युद्ध.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! ज्यों श्रीकृष्णचंद्र दलसमेत जरासंधको जीत कालयवनको मार मुचुकुंदको तार व्रजको तज द्वारकामें जाय बसे त्यों मैं सब कथा कहताहूं; तुम सचेत हो चित्त लगाय सुनो. राजा उग्रसेन राजनीतिसे मथुरापुरीका राज्य करता था और श्रीकृष्ण बलराम सेवककी भांति उनके आज्ञाकारी थे, इससे राजा, राजप्रजा सब सुखी थे; पर दो कंसकी रानियांही अपने पतिके शोकसे महादुःखी थीं. न इन्हे नींद आती थी, न भूंख न प्यास लगतीथी, आठ प्रहर उदास रहतीथीं. एक दिन वे दोनों बहन अति चिंता कर आपसमें कहने लगीं कि, जैसे नृपबिन प्रजा, चंद्रबिन यामिनी शोभा नहीं पाती, तैसे कंतबिन कामिनीभी शोभा नहीं पाती. अब अनाथ हो यहां रहना भला नहीं, इससे अपने पिताके घर चल रहिये सो अच्छा. महाराज! वे दोनों रानियां ऐसे आपसमें शोचबिचारकर रथ मँगवाय उसपर चढ़ मथुरासे चलीं चलीं मगधदेशमें अपने पिताके यहां आईं. और जैसे श्रीकृष्ण बलरामजीने सब असुरोंसमेत कंसको मारा तैसे उन दोनोंने रोरो समाचार अपने पितासे सब कह सुनाया. सुनतेही जरासंध अतिक्रोध कर सभामें आया और कहने लगा-कि ऐसे बली कौन यदुकुलमें उपजे?

जिन्होंने सब असुरोंसमेत महाबली कंसको मार मेरी बेटियां रांड़ किया. मैं अभी अपना सब कटक ले चढ़धाऊं और सब यदुवंशियोंसमेत मथुरापुरीको जलाय श्रीकृष्ण बलरामको जीता बांध लाऊं तो मेरा नाम जरासंध; नहीं तो नहीं. इतना कह उसने तुर्तही चारों ओरके राजाओंको पत्र लिखे कि तुम अपना दल लेले हमारे पास आओ. हम कंसका पलटा ले यदुवंशियोंको निर्वंश करेंगे. जरासंधका पत्र पातेही सब देशदेशके नरेश अपना अपना दल साथ ले उठ चले आए. और यहां जरासंधनेभी अपनी सेना ठीक ठाक बनारक्खी. निदान सब असुरदल साथ ले जरासंधने जिस समय मगधदेशसे मथुरापुरीको प्रस्थान किया तिस समय उसके संग तेईस अक्षौहिणी सेना थी, (इकीससहस्र आठसौ सत्तर रथी, और इतनेही गजपति, एकलाख नवसहस्रसाड़ेतीनसौ पैदल, और छांछठ सहस्र अश्वपति. यह अक्षौहिणीका प्रमाण है.) ऐसी तेइस अक्षौहिणी उसके साथ थीं. और उनमेंसे एक एक राक्षस ऐसा बली था सो मैं कहांतक वर्णन करूं ? महाराज ! जिसकाल जरासंध सब असुरसेना साथ ले धौंसा दे चला, उसकाल दशों दिशाके दिग्पाल लगे थरथर कांपने और सब देवता मारे डरके भागने, पृथ्वी न्यारीही बोझसे लगी छातसी हिलने. निदान कितनेएक दिनोंमें चला चला जा पहुँचा. और उसने चारों ओरसे मथुरापुरीको घेरलिया. तब नगरनिवासी अति भय खाय श्रीकृष्णचंद्रके पास जा पुकारे कि, महाराज ! जरासंधने आय चारोंओर सेना ले नगर घेरा. अब क्या करें ? और किधर जाय ? इतनी बातके सुनतेही हरि कुछ शोच बिचार करने लगे, इतनेमें बलरामजीने आय प्रभुसे कहा, कि महाराज ! आपने भक्तोंका दुःख दूर करनेके हेतु अवतार लिया है. अब अग्नितृण धारणकर असुररूपी बनको जलाय भूमिका भार उतारिये. यह सुन श्रीकृष्णचंद्र उनको साथ ले उग्रसेनके पास गये और कहा, कि महाराज! हमें तो लड़नेकी आज्ञा दीजे. और आप सब यदुवंशियोंको साथ ले गढ़की रक्षा कीजे. इतना कह जो माता पिताके निकट आए तो सब नगरनिवासी घेर आये व लगे अति व्या-

कुल हो कहनेकि हे कृष्ण ! अब इन असुरोंके हाथसे कैसे बचैं ? तब हरिने मातापितासमेत सबको भयातुर देख समझाके कहा, कि तुम किसी भांतिकी चिंता मत करो. यह असुरदल जो तुम देखते हो सो पलभरमें यहांका यहां ऐसे बिलाय जायगा कि, जैसे पानीके बुल्ले पानीमें बिलाय जाते हैं. यों कह सबको समझाय बुझाय ढाढ़स बँधाय उनसे बिदा हो प्रभु जो आगे बढ़े तो देवताओंने दो रथ शस्त्रभर इनके लिये भेज दिये वे आय इनके सोहीं खड़ेहुए. तब ये दोनों भाई दोनों रथोंमें बैठ लिये.

चौ० निकसे दोउ यदुराय, पहुँचे असुरदलमें जाय ॥

जहां जरासंध खड़ा था, तहां जा निकले, देखतेही जरासंध श्रीकृष्णचंद्रसे अति अभिमान कर कहने लगा. अरे ! तू मेरे सोहींसे भागजा. मैं तुझे क्या मारूं ? तू मेरे समानका नहीं. जो मैं तुझपर शस्त्र चलाऊं भला बलरामको मैं दे[illegible] श्रीकृष्णचंद्र बोले—अरे मूर्ख ! अभिमानी ! यह क्या बक[illegible] होते हैं सो बड़ा बोल नहीं बोलते सबसे दीनता करते ह. [illegible] पड़े अपना बल दिखाते हैं और जो अपने मुंह अपनी बड़ाई मारते हैं सो क्या कुछ भले कहाते हैं ? कहा है कि गरजता है सो बरसता नहीं; इससे वृथा बकवाद क्यों करता है ?

इतनी बातके सुनतेही जरासंधने जो क्रोध किया तो श्रीकृष्ण बलदेव चल खड़े हुए. इनके पीछे वहभी अपनी सब सेना ले धाया. और उसने यों पुकारके कह सुनाया, अरे ! दुष्टो, मेरे आगेसे तुम कहां भाग जाओगे? [illegible] दिन जीते बचें, तुमने अपने मनमें क्या समझा है?अब जीते न रह[illegible]ओगे. जहां सब असुरोंसमेत कंस गया है तहांही सब यदुवंशियों[illegible] तुम्हेंभी भेजूंगा. महाराज ! ऐसे दुष्टवचन उस असुरके मुखसे नि[illegible]ही कितनीएक दूर जाय दोनों भाई फिर खड़े हुए. श्रीकृष्णजीने [illegible]ब शस्त्र लिये और बलरामजीने हल मुशल.ज्यों असुरदल उनके नि[illegible]या, त्यों दोनों वीर ललकारके ऐसे टूटे, कि जैसे हाथियोंके यू[illegible] सिंह टूटे और लगा लोहा बाजने. उसकाल मारू जो बज-

ताथा सो तो मेघसा गाजताथा और चारों ओरसे राक्षसोंका दल जो घेर आयाथा सो दल बादलसा छाया था. और शस्त्रोंकी झड़ी झड़ीसी लगीथी. उनके बीच श्रीकृष्ण बलराम युद्ध करते ऐसे शोभायमान लगतेथे जैसे सघन घनमें दामिनी सुहावनी लगती है. सब देवता अपने अपने बिमानोंपर बैठ आकाशसे देख देख प्रभुका यश गातेथे और इन्हींकी जीत मनातेथे; और उग्रसेनसमेत सब यदुवंशी अतिचिंता कर मनहीं मन पछतातेथे कि, हमने यह क्या किया? जो श्रीकृष्ण बलरामको असुरदलमें जाने दिया. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि पृथ्वीनाथ! जब लड़ते लड़ते असुरोंकी बहुतसी सेना कटगई तब बलदेवजीने रथसे उतर जरासंधको बांधलिया. इतनेमें श्रीकृष्णचंद्रजीने जा बलरामजीसे कहा कि भाई इसे जीता छोंड़दो, मारो मत; क्योंकि यह जीता जायगा तो फिर असुरोंको साथ ले आवेगा तिन्हें मार हम भूमिका भार उतारेंगे. और जो जीता न छोड़ोगे तो जो राक्षस भागगये हैं सो हाथ न आवेंगे. ऐसे बलदेवजीको समझाय प्रभुने जरासंधको छुड़वाय दिया. वह अपने उन लोगोंमें गया जो रणसे भागके बचेथे.

चौ० चहुँदिशि चितै कहै पछताय, सिगरी सेना गई बिलाय॥ भयो दुःख अति कैसे जीजै, अब घर छांड़ि तपस्या कीजै॥ मंत्री तबै कहैं समुझाय, तुमसे ज्ञानी क्यों पछताय॥ कबहूं हार जीत पुनि होई, राज देश छांड़े नहिं कोई॥

क्या हुवा जो अबकी लड़ाईमें हारे? फिर अपना दल जोड़ लावेंगे और सब यदुवंशियोंसमेत श्रीकृष्ण बलदेवको स्वर्ग पठावेंगे. तुम किसी बातकी चिंता मत करो. महाराज! ऐसे समझाय बुझाय जो असुर रणसे भागके बचेथे तिन्हें और जरासंधको मंत्रीने घरले पहुँचाय और वह फिर वहां कटक जोड़ने लगा. यहा श्रीकृष्ण बलराम रणभूमिमें देखते क्या हैं कि लोहूकी नदी बह निकली है. तिसमें रथविना रथी नावसे वहे जाते हैं, ठौर ठौर हाथी मरे पहाड़से पड़े दृष्टि आते हैं; उनके घावोंसे

रक्त झरनेकी भांति झरता है. तहा महादेवभी भूत प्रेत संग लिये अति आनंदकर नाच २ गाय २ मुंडोंकी माला बनाय बनाय पहनते हैं. भूतिनी, प्रेतिनी, योगिनियां खप्पर भर भर रक्त पीती हैं. शृगाल, गृध्र, काग लोथोंपर बैठ बैठ मांस खाते हैं, और आपसमें लड़ते जाते हैं.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि—महाराज ! जितने रथ, हाथी, घोड़े और राक्षस उस खेतमें मरेथे, तिन्हें पवनने तो समेट इकट्ठा किया और अग्निने पलभरमें सबको जलाय भस्म कर दिया. पंचतत्त्वमें पंचतत्त्व मिल गये. उन्हें आते तो सबने देखा पर जाते किसीने न देखा, कि किधर गये. ऐसे असुरोंको मार भूमिका भार उतार श्रीकृष्ण बलराम भक्तहितकारी उग्रसेनके पास आय दंडवत् कर हाथ जोड़ बोले कि महाराज ! आपके पुण्यप्रतापसे असुरदल मार भगाया. अब निर्भय राज्य कीजै और प्रजाको सुख दीजे. इतना वचन इनके मुखसे निकलतेही राजा उग्रसेनने अति आनंद मान बड़ी बधाई की और धर्मराज कर [illegible] ानेएक दिन पीछे फिर जरासंध उतनीही सेना ले चढ़आ[illegible] ष्ण बलदेवजीने पुनि त्योंही मार भगाया. ऐसे तेईस २ [illegible] जरासंध सत्रहबेर चढ़ आया और प्रभुने मार हटाया.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनिने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज ! इसबीच नारदमुनिजीके जो कुछ जीमें आई तो एकाएकी उठकर कालयवनके यहां गये. इन्हें देखतेही वह सभासमेत उठ खड़ाहुआ और उसने दंडवत् कर हाथ जोड़ पूँछा कि, महाराज ! आपका आना यहां कैसे भया ?

चौ० सुनिकै नारद कहैं विचारी, मथुरामें बलभद्र मुरारी ॥ तुम बिन तिन्हैं हतै नहिं कोई, जरासधसों कुछ नहिं॥ होई तू है अजर अमर अति बली, बालक वासुदेव औ हली ॥

यों कह फिर नारदजी बोले, कि जिसे तू मेघवर्ण कमलनयन अति

सुंदरबदन पीतांबर पहरे पीतपट ओढ़े देखे तिसका तू पीछा बिन मारे मत छोड़ियो. इतना कह नारदमुनि तो चले गये और कालयवन अपना दल जोड़ने लगा. इसमें कितनेएक दिन बीतगये; उसने तीन करोड़ म्लेच्छ अतिभयावने इकट्ठे किये. ऐसे कि जिनके मोटे भुज, लंबे गल, बड़े दांत, मैले भेष, भूरे केश, नैन लाल घुँघचीसे, तिन्हें साथ ले डंका दे मथुरापुरीपर चढ़ आया. और उसे चारों ओरसे घेर लिया. उसकाल श्रीकृष्णचंद्रजीने उसका व्योहार देख अपने जीमें विचारा कि, अब यहां रहना भला नहीं क्योंकि आज यह चढ़ आया है और कलको जरासंधभी चढ़ आवे तो प्रजा दुःख पावेंगे, इससे उत्तम यही है कि यहां न रहिये. सबसमेत समुद्रके अंत जाय बसिये. महाराज ! हरिने यों विचारकर बिश्वकर्माको बुलाय समझाय बुझायके कहा कि तुम अभी जाके समुद्रके बीच एक नगर बनाबो. ऐसा कि जिसमें सब यदुवंशी सुखसे रहें; पर वे यह भेद न जानें, कि ये हमारे घर नहीं. और पलभरमें सबको वहां ले पहुँचावो. इतनी बातके सुनतेही विश्वकर्मा जा [illegible] बीच शुद्ध सरलके ऊपर बारह योजनका नगर जैसा श्रीकृष्ण [illegible] ॥ तैसाही रातमें बनाय उसका नाम द्वारका रख आ हरिसे [illegible] प्रभुने उसे आज्ञा दी, कि इसी समय तू सब यदुवंशियोंको व[illegible]चाय दे कि कोई यह भेद न जाने कि हम कहां आये ? और [illegible]न ले आया ?

इतना वचन प्रभुके मुखसे ज्यों निकला त्यों रातोरातही उग्रसेन वसुदेवसमेत विश्वकर्माने सब यदुवंशियोंको ले पहुँचाया, और श्रीकृष्ण बलरामभी वहां पधारे. इस बीच समुद्रकी लहरका शब्द सुन सब यदुवंशी चौंक पड़े और अचरजकर आपसमें कहने लगे कि, मथुरामें समुद्र कहां आया ? यह भेद कुछ जाना नहीं जाता; इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि पृथ्वीनाथ! ऐसे सब यदुवंशियोंको द्वारकामें बसाय श्रीकृष्णचंद्रजीने बलदेवजीसे कहा, कि भाई ! अब चलके प्रजाकी रक्षा कीजे और कालयवनका बध कीजे. इतना कह दोनों भाई वहांसे चल ब्रजमंडलमें आए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे जरासंधपराजयो नाम एकपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

अध्याय ५२.

मुचकुंदके दृष्टिसे कालिया यवनका भस्म हो जाना और मुचकुंदका जन्ममर[illegible]।

श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि महाराज! व्रजमंडलमें आतेही श्रीकृष्णचंद्रजीने बलरामजीको तो मथुरामें छोड़ा और आप रूपसागर जगतउजागर पीतांबर पहने पीतपट ओढ़े सब शृंगार किये कालयवनके दलमें जाय उसके सन्मुख हो निकले, वह इन्हें देखतेही अपने मनमें कहने लगा कि, हो नहो यही कृष्ण है, नारदमुनिने जो चिह्न बताये थे सो सब इसमें पाये जाते हैं, इन्हींने कंसादिक असुर मारे, जरासंधकी सेना हनी. ऐसे मनहीमन विचार कर कहा—

चौ॰ कालयवन यों कहै पुकारी, काहे भागे जात मुरारी ॥
आय पर्‍यो अब मोसो काम, ठाढ़े रहो करो संग्राम ॥
जरासिंधु हौं नाहीं कंस, यादवकुलको करों विध्वंस ॥

हे राजा! यों कह कालयवन अति अभिमान कर अपनी सब सेनाको छोड़, अकेला श्रीकृष्णचंद्रके पीछे धाया. पर उस मूर्खने प्र[illegible]का भेद न पाया, आगे आगे तो हरि भागे जाते थे और एक हा[illegible]तरसे पीछे २ वह दौड़[illegible]ाथा, निदान भागते २ जब अनेक दू[illegible]कलगये तब प्रभु एक [illegible] गुफामें घुस गये. वहां जा देखे तो [illegible] पुरुष सोया पड़ा [illegible] अपना पीतांबर उसे उढ़ाय आप अलग एक ओर छिपरहे. [illegible] कालयवनभी दौड़ता हांकता उस अंधेरी कंदरामें जा पहुँच[illegible]र पीतांबर ओढ़े उस पुरुषको सोता

देख[illegible] अपने जीमें जाना, यह श्रीकृष्णही छलकर सो रहा है. महाराज! ऐसे मनहीं मन बिचार क्रोधकर उस सोतेहुएको एक लात मार कालयवन बोला, अरे कपटी! क्या मिसकर साधुकी भांति निश्चिंताईसे सोरहा है? उठ मैं तुझे अभी मारताहूं, यों कह इसने उसके ऊपरसे पीताम्बर झटक लिया तब वह नींदसे चौंकपड़ा और जो उसने इसकी ओर क्रोध कर देखा तो यह जलबल भस्म होगया. इतनी बातके सुनतेही राजा परीक्षितने कहा-

चौ०-यह शुकदेव कहौ समुझाय, को वह रह्यो कंदरा जाय॥ ताकी दृष्टि भस्म क्यों भयो, कौने वाहि महावर दयो॥

श्रीशुकदेवमुनि बोले पृथ्वीनाथ! इक्ष्वाकुवंशी क्षत्रिय मांधाताका बेटा मुचुकुंद अतिबली महाप्रतापी जिसका अरिदलदलन यश छाय रहा नौखंड. एक समय सब देवता असुरोंके सताये निपट घबराये मुचुकुंदके पास आये. और अति दीनता कर उन्होंने कहा महाराज! असुर बहुत बढ़े अब तिनके हाथसे बच नहीं सकते, अब हमारी रक्षा करो. यह रीति परंपरासे चली आई है, जब जब सुर, [illegible] दुखी हुए हैं तब तब उनकी सहायता क्षत्रियोंने करी है. इतनी बातके सुनतेही मुचुकुंद इनके साथ होलिया. और जाके असुरोंसे युद्ध करने लगा. [illegible] लड़ते लड़ते कितनेही युग बीतगये, तब देवताओंने मुचुकुंदसे कहा कि महाराज! आपने हमारे लिये बहुत श्रम किया, अब कहीं बैठ विश्राम लीजिये और देहको सुख दीजिये.

चौ०--बहुत दिनन कीनो संग्राम, गयो कुटुंब सहित धन धाम॥ रह्यो न कोऊ तहां तिहारो, ताते अब जिन घर पशु धारो॥

और जहां तुम्हारा मन माने तहां जाओ. यह सुन मुचुकुंदने देवताओंसे कहा कृपानाथ! मुझे कृपाकर ऐसा एकांत ठौर बतावो, कि जहां जाय मैं निश्चिंताईसे सोऊं और कोई न जगावेगा इतनी बातके सुनतेही

प्रसन्न हो देवताओंने मुचुकुंदसे कहा, कि महाराज ! आप धौलागिरि पर्वतकी कंदरामें जाय शयन कीजिये, वहां तुम्हें कोई न जगावेगा और जो कोई जाने अनजाने वहां जा तुम्हें जगावेगा तो वह देखतेही तुम्हारी दृष्टिसे जलबल राख होजावेगा. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा, कि महाराज ! ऐसे देवताओंसे वर पाय मुचुकुंद उस गुफामें रहा था. इससे उसकी दृष्टि पड़तेही कालयवन जलकर छार होगया. आगे करुणानिधान कान्ह भक्तहितकारीने मेघवर्ण, चंद्रमुख, कमलनयन, चतुर्भुज, शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये, मोरमुकुट, मकराकृति कुंडल, वनमाल और पीतांबर पहरे मुचुकुंदको दर्शन दिया. प्रभुका स्वरूप देखतेही वह साष्टांग प्रणाम कर खड़ा हो हाथ जोड़ बोला, कि कृपानाथ ! जैसे आपने इस महा अंधेरी कंदरामें आय उजाला कर तम दूर किया तैसे दया कर अपना भेद बताय मेरे मनकाभी भ्रम दूर कीजे. श्रीकृष्णचंद्र बोले कि मेरे तो जन्म, कर्म और गुण हैं घने, वे किसी भांति गने न जाँय कोई कितनाही गनें, पर मैं इस जन्मका भेद कहताहूं सो सुनो कि अबकी वसुदेवके यहां जन्म लिया इससे वासुदेव मेरा नाम हुआ. और मथुरापुरीमें सब असुरोंसमेत कंसको मैंनेही मार भूमिका भार उतारा और सत्रह बेर तेईस२अक्षौहिणी सेना ले जरासंध युद्ध करनेको चढ़आया. सोभी मुझसे हारा और यह कालयवन तीन करोड़ म्लेच्छकी भीड़ भाड़ ले लड़नेको आया था सो तुम्हारी दृष्टिसे जल मरा. [illegible] बात प्रभुके मुखसे निकलतेही सुनकर मुचुकुंदको ज्ञान हुआ. तो [illegible] कि महाराज ! आपकी माया अतिप्रबल है उसने सारे संसारको [illegible] है; इसीसे किसीकी कुछ सुधबुध ठिकाने नहीं रहती.

चौ० क[illegible] कर्म सब सुखके हेत, ताते भारी दुख सहित लेत

दो० [illegible] हाड़ ज्यों श्वान मुख, रुधिर चचोरे आप ॥
[illegible]नत ताहिते चुवत, सुख माने संताप ॥

और [illegible]राज ! जो इस संसारमें आया है सो गृहरूपी अंधकूपमें आपकी [illegible] विना निकल नहीं सक्ता. इससे मुझेभी चिंता है कि

मैं कैसे गृहरूप कूपसे निकलूंगा ? श्रीकृष्णजी बोले-सुन मुचुकुंद ! बात तो ऐसीही है जैसे तूने कही, पर मैं तेरे तरनेंका उपाय बताये देताहूं सो तू कर. तैंने राज्य पाय भूमि, धन, स्त्रीके लिये अधिक अधर्म किये हैं. सो बिन तप किये न छूटेंगे. इससे उत्तरदिशामें जाय तू तपस्या कर यह अपनी देह छोड़ फिर ऋषिके घर जन्म लेगा, तब तू मुक्ति पदार्थ पावेगा. महाराज ! इतनी बात जो मुचुकुंदने सुनी तो जाना कि, अब कलियुग आया, यह समझ प्रभुसे बिदा हो दंडवत कर परिक्रमा दे मुचुकुंद तो बद्रीनाथको गया और श्रीकृष्णचंद्रजीने मथुरामें आय बलरामजीसे कहा कि-

चौ०--कालयवनको कियो निकंद, बद्रीदिशि पठयो मुचुकुंद ॥ कालयवनकी सेना घनी, तिन घेरी मथुरा आपनी ॥ आवहु तहा मलेच्छन मारौ, सकल भूमिको भार उतारौ ॥

ऐसे कह हलधरको साथ ले [illegible] निकल वहां आये जहां कालयवनका दल ख[illegible] उनसे युद्ध करने लगे. निदान लड़ते लड़ते [illegible] सब मारी तब बलदेवजीसे कहा कि, भाई अब मथुरापुरीकी सब संपत्ति ले द्वारकाको भेजदीजे. बलरामजी बोले बहुत अच्छा. तब श्रीकृष्णचंद्रने मथुराका सब धन निकलवाय भैंसों, छकड़ों, ऊंटों, हाथियोंपर लदवाय द्वारकाको भेजदिया. इसबीच फिर जरासंध तेईस अक्षौहिणी सेना ले मथुरापुरीपर चढ़ आया. तब श्रीकृष्ण बलराम अति घबरायके निकले और उसके सन्मुख आ दिखाई दे इसके मनका संताप मिटानेको भाग चले. तब मंत्रीने जरासंधसे कहा, कि-महाराज ! आपके प्रतापके आगे ऐसा कौन बली है ? जो ठहरे. देखो वे दोनों भाई कृष्ण, बलराम, छोड़के सब धन धाम, अपना प्राण लेके तुम्हारे त्रासके मारे नंगे पाओं भागे चले जाते हैं. इतनी बात मंत्रीसे सुन जरासंधभी यों पुकार करताहुआ सेना ले उनके पीछे दौड़ा.

चौ॰काहे डरके भागें जात, ठाढ़े रहौ करौ कुछ बात ॥
परत उठत कंपत क्यों भारी,आई है ढिग मीच तिहारी॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले—कि पृथ्वीनाथ! जब श्री कृष्ण और बलदेवजीने भागके लोकरीति दिखाई तब जरासंधके मनसे पिछला सब शोक गया और अति प्रसन्न हुआ. ऐसा कि, जिसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता. आगे श्रीकृष्ण बलराम भागते २ एक गौतमनाम पर्वत ग्यारह योजन ऊंचा था वहां चढ़गये और उसकी चोटीपर जाय खड़े भये.

चौ॰देख जरासिंधु कहै पुकारी, शिखर चढ़े बलभद्र मुरारी
अब किमि हमसों जांय पलाय, पर्वतको या देहुजलाय ॥

इतना वचन जरासंधके मुखसे निकलतेही सब असुरोंने उस पहाड़को जा घेरा और नगर नगर गांव गांवसे काठ कबाड़ लाय उसके चारों ओर चुनदिया. तिसपर गड़गूदड़ घी तेलसें भिगो २ डालकर आग लगादी. जब वह आग पर्वतकी चोटीतक लगी, तब उन दोनों भाइयोंने वहांसे इस भांति द्वारकाकी वाट ली कि, किसीने उन्हें जातेभी न देखा और पहाड़ जलकर भस्म होगया. उसकाल जरासंध श्रीकृष्ण बलरामको उस पर्वतके संग जला मरा जान अति सुख मान सब दल साथ ले मथुरापुरीमें आया और वहांका राज्य ले नगरमें ढंढोरा दे उसने अपना थाना बैठाया. जितने उग्रसेन वसुदेवके पुराने मंदिर थे सो सब ढवाए और उसने आप अपने नये बनवाए. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा कि महाराज! इसरीतिसे जरासंधको धोखा दे श्रीकृष्ण बलरामजी तो द्वारकामें जाय बसे, और जरासंधभी मथुरानगरीसे चल सब सेना ले अतिं आनंद करता निःशंक हो अपने घर आया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे कालयवनमरणं मुचुकुंदतरणं श्रीकृष्णबलरामद्वारकागमनं नाम द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः समाप्तः॥५२

अध्याय ५२.

बलरामका रेवतीके साथ विवाह और रुक्मिणीको शिशुपालको देनेकी रुक्मकी तैयारी.

श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि महाराज! अब आगे कथा सुनिये कि जब कालयवनको मार मुचुकुंदको तार जरासंधको धोखा दे बलदेवजीको साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र आनंदकंद ज्यों द्वारकामें गये त्यों सब यदुवंशियोंके जीमें जी आया और सारे नगरमें सुख छाया. सब चैन आनंदसे पुरबासी रहने लगे. इसमें कितनेएक दिन पीछे एक दिन कईएक यदुबंशियोंने राजा उग्रसेनसों जा कहा कि महाराज! अब कहीं बलरामजीको विवाह किया चाहिये, क्योंकि ये समर्थ हुए. इतनी बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने एक ब्राह्मणको बुलाय अतिसमझाय बुझायके कहाकि, देवता! तुम कहीं जाकर अच्छा कुलघर देख बलरामजीकी सगाई कर आओ. इतना कह रोरी अक्षत रुपया नारियल मँगवाय उग्रसेनजीने उस ब्राह्मणको तिलककर रुपया नारियल दे बिदा किया. वह चला चला आनर्तदेशमें राजा रैवतके यहांगया और उनकी कन्या रेवतीसे बलरामजीकी सगाईकर लग्न ठहराय उस ब्राह्मणके साथ टीका लिवाय द्वारकामें राजा उग्रसेनके पास लेआया; और उसने वहांका सब ब्योरा कह सुनाया. सुनतेही राजा उग्रसेनने अतिप्रसन्न हो उस ब्राह्मणको बुलाय जो टीका लेआथा उसे बिदा किया, पीछे आप सब यदुबंशियोंको साथ ले बड़ी धूमधामसे आनर्तदेशमें जाय बलरामजीका व्याह करलाए.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनिने राजासे कहा कि-पृथ्वीनाथ! इस रीतिसे तो सब यदुवंशी बलदेवजीको व्याहकर लाए और श्रीकृष्णचंद्रजी आपही भाईको साथ ले कुंडिनपुरमें जाय भीष्मकनरेशकी बेटी रुक्मिणी शिशुपालकी मांगको राक्षसोंसे युद्ध कर छीनलाए, उसे घरमें लाय व्याह किया. यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूंछा कि, कृपासिंधु! भीष्मकसुता रुक्मिणीको श्रीकृष्णचंद्र कुंडिनपुरमें जाय असुरोंको मार किसतरहसे लाए? सो तुम मुझे समझाकर कहो. श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! आप मन लगाय सुनिये. मैं सब भेद वहांका समझाकर कहता हूं. विदर्भ देशमें कुण्डिनपुरनाम एक नगर है तहां भीष्मक नाम नरेश, जिसका यश छाय रहा चहुं देश. उनके यहां जाय श्रीसीताजीने अवतार लिया. कन्याके होते ही राजा भीष्मकने ज्योतिषियोंको बुलाय भेजा, उन्होंने आय लग्न साध उस लड़कीका नाम रुक्मिणी धरकर कहा कि, महाराज! हमारे विचारमें ऐसा आता है कि यह कन्या अति सुशील रूपनिधान गुणोंमें लक्ष्मीसमान होगी. और आदि पुरुषसे व्याही जायगी. इतना बचन ज्योतिषियोंके मुखसे निकलते ही राजा भीष्मकने अति सुख मान बड़ा आनन्द किया और बहुतसा कुछ ब्राह्मणोंको दिया. आगे वह लड़की चन्द्रकलाकी भाँति लगी दिन दिन बढ़ने और बाललीला कर माता पिताको सुख देने. इसमें कुछ बडी हुई तो लगी सखी सहेलियोंकेसाथ अनेक अनेक प्रकारके अनूठे अनूठे खेल खेलने. एक दिन वह मृगनयनी चम्पकबरनी चन्द्रमुखी सखियोंके संग आँख मिचौली खेलने गई तो खेलसमय सब सखियां उससे कहने लगी कि रुक्मिणी! तू हमारा खेल बिगाड़नेको आई है. क्योंकि जहां तू हमारे साथ अन्धेरेमें छिपती है, तहां तेरे मुखचन्द्रकी ज्योतिसे चांदनी होजाती है, इससे हम छिप नहीं सकतीं. यह सुन वह हँसकर चुप होरही. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने कहा कि महाराज! इसीभांति वह सखियोंके संग खेलती थी और दिनादिन छबि उसकी दूनी होती थी, इस बीच एकदिन नारदजी कुंडिनपुरमें आये और रुक्मि-

णीको देख श्रीकृष्णचन्द्रके पास द्वारकामें जाय उन्होंने कहा कि महाराज! कुंडिनपुरमें राजा भीष्मकके घर एक कन्या रूपगुणशीलकी खान लक्ष्मीजीसमान जन्मी है, सो तुम्हारे योग्य है. यह भेद जबसे नारदमुनिसे सुन पाया तभीसे रात दिन हरिने अपना मन उसपर लगाया. महाराज ! इस रीति करके तो श्रीकृष्णचन्द्रजीने रुक्मिणिका नाम गुण सुना और जैसे रुक्मिणीने प्रभुका नाम और यश सुना सो कहताहूं कि एक समय देशदेशके कितने एक याचकोंने जाय कुंडिनपुरमें श्रीकृष्णचन्द्रका यश गाया जैसे प्रभुने मथुरामें जन्म लिया और गोकुल बृन्दाबनमें जाय ग्वालबालोंके संग मिल बालचरित्र किया, और असुरोंको मार भूमिका भार उतार यदुवंशियोंको सुख दियाथा तैसे ही गाय सुनाया.

हरिके चरित्र सुनतेही सब नगरनिवासी अतिआश्चर्य कर आपसमें कहने लगे कि जिनकी लीला हमने कानसे सुनी. तिन्हें कब नयनोंसे देखेंगे इसबीच याचक किसी ढबसे राजा भीष्मककी सभामें जाय प्रभुका चरित्र और गुण गाने लगे. उसकाल—

चौ॰ चढ़ी अटा रुक्मिणि सुन्दरी, हरि चरित्रध्वनि श्रवण न परी॥ अचरज करै भूलि मन रहै, फेर उझक कर देखत चहै॥ सुनिकै कुवंरि रही मनलाय, प्रेमलता उर उपजी आय॥ भई मग्न बिह्वल सुन्दरी, वाकी सुधि बुधि हरिगुण हरी॥

यों कह श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! इस भाँति श्रीरुक्मिणीजीने प्रभुका यश और नाम सुना तो उसीदिनसे रातदिन आठ पहर चौसठ घड़ी सोते, जागते, बैठते, खडे, चलते, फिरते, खाते, पीते, खेलते उन्हींका ध्यान किये रहे और गुण गाया करे. नित भोरही उठ स्नानकर मट्टीकी गौरी बनाय रोरी, अक्षत, पुष्प, चढ़ाय धूप दीप कर मनाय हाथ जोड़ शिर नाय उसके आगे कहाकरे.

चौ॰ मोपर गौरि कृपातुम करौ, यदुपति पति दै ममदुखहरौ॥

इसीरीतसे सदा रुक्मिणी रहने लगी. एक दिन सखियोंके सङ्ग खेलतीथी, कि राजा भीष्मक उसे देख अपने मनमें चिन्ता कर कहने

लगा, कि अब यह हुई व्याहन योग्य, इसे शीघ्र कहीं न दीजे तो हँसेंगे लोग. कहा है कि जिसके घरमें कन्या बड़ी होय तिसका दान पुण्य जप तप करना वृथा है; क्योंकि कियेसे तबतक कुछ धर्म नहीं होता, जबतक कन्याके ऋणसे नहीं उद्धार होय. यों विचार राजा भीष्मक अपनी सभामें आये सब मंत्री और कुटुंबके लोगोंको बुलाय बोले, भाइयो! कन्या व्याहने योग्य हुई, इसके लिये कुलवान् गुणवान् रूपनिधान शीलवान् कहीं वर ढूंढा चाहिये. इतनी बातके सुनतेही उन लोगोंने अनेक अनेक देशोंके नरेशोंके कुल, गुण, रूप, और पराक्रम कह सुनाए. पर राजा भीष्मकके चित्त किसीकी बात कुछ न आई. तब उनका बड़ा बेटा जिसका नाम रुक्म सो कहने लगा, कि पिता! नगर चंदेरीका राजा शिशुपाल अति बलवान् है और सब भांतिसे हमारे समान है, उससे रुक्मिणीकी सगाई वहा कीजे, और जगतमें यश लीजे. महाराज! जब उसकीभी बात राजाने सुनी अनसुनी की तब रुक्मकेश नाम उसका छोटा लड़का बोला—

चौ०—रुक्मिणी पिता कृष्णको दीजै, वासुदेवसों नाता कीजै ॥ यह सुन भीष्मक हरषे गात, कही पूत तैं नीकी बात ॥ तू बालक सबसों अतिज्ञानी, तेरी बात भली हम मानी ॥

दोहा—छोटे बड़ेनि पूछकै, कीजै मन परतीत ॥
सार बचन गह लीजिये, यही जगतकी रीत ॥

ऐसे कह फिर राजा भीष्मक बोले, कि यह तो रुक्मकेशने भली बात कही. यदुवंशियोंमें राजा शूरसेन बड़े यशी और प्रतापी हुये तिनहींके पुत्र वसुदेवजी हैं सो कैसे हैं कि, जिनके घरमें आदिपुरुष अविनाशी सकल देवनके देव श्रीकृष्णचंद्रने जन्म ले महाबली कंसादिक राक्षसोंको मारा और भूमिका भार उतार यदुकुलको उजागर किया. और सब यदुवंशियोंसमेत प्रजाको सुख दिया; ऐसे जो द्वारकानाथ श्रीकृष्णचंद्र उसे रुक्मिणी दें तो जगतमें यश और बड़ाई लें. इतनी बातके सुनतेही सब सभाके लोग अति प्रसन्न हो बोले, कि महाराज! यह तो तुमने

भली विचारी ऐसा वर घर कहीं और नहीं मिलेगा इससे उत्तम यही है कि, श्रीकृष्णचंद्रजीको रुक्मिणी व्याह दीजै, महाराज! जब सब सभाके लोगोंने यों कहा; तब राजा भीष्मकका बड़ा बेटा जिसका नाम रुक्म सो सुन निपट झुंझलायके बोला-

चौ०--समझ न बोलत महागँवार, जानत नहीं कृष्ण-ब्योहार॥ सोरह वर्ष नंदके रह्यो, तब अहीर सब काहू कह्यो॥ कामरि ओढ़ी गाय चराई, बरहे बैठि छाक जिन खाई॥

वह तो गँवार ग्वाल है, उसकी जात पाँतका क्या ठिकाना और जिसके मा बापहीका भेद नहीं जाना जाता; उसे हम पुत्र किसका कहैं? कोई नंदगोपका जानता है, कोई वसुदेवका कर मानता है. पर आजतक यह भेद किसीने न पाया कि कृष्ण किसका बेटा है; इसीसे जो जिसके मनमें आता है सो गाता है. हम राजा, हमें सब कोई जानता मानता है और यदुवंशी राजा कब भये? क्याहुआ जो थोड़े दिनोंसे बलकर उन्होंने बड़ाईपाई? पहले कलंक तो अब न छूटेंगे. वह उग्रसेनका चाकर कहाता है, उससे सगाई कर क्या हम कुछ संसारमें यश पावेंगे? कहा है; व्याह, बैर और प्रीति समानसे करिये तो शोभा पाइये और जो रुक्मिणी कृष्णको देंगे तो हमको लोग कहैंगे ग्वालका साला; तिससे अब जायगा नाम और यश हमारा. महाराज! यों कह फिर रुक्म बोला, कि नगर चंदेरीका राजा शिशुपाल बड़ा बली और प्रतापी है. उसके डरसे सब राजा थरथर कांपते हैं और परंपरासे उसके घरमें राजगद्दी चली आती है इससे अब उत्तम यही है कि रुक्मिणी उसीको दीजै, और मेरे आगे फेर कृष्णका नामभी न लीजै. इतनी बातके सुनतेही सब सभाके लोग मारे डरके मनहींमन अछता पछताके चुप हो रहे. और राजा भीष्मकभी कुछ न बोला. इतनेमें रुक्मने ज्योतिषियोंको बुलाय शुभ दिन लग्न ठहराय एक ब्राह्मणके हाथ राजा शिशुपालके यहां टीका भेज दिया. वह ब्राह्मण टीका लिये चला चला नगर चंदेरीमें जाय; राजा शिशुपालकी सभामें पहुँचा. देखतेही राजाने प्रणाम कर जब ब्राह्मणसे पूंछा कि; कहो देवता! आपका आना

कहांसे हुआ? और यहां किस मनोरथके लिये आये? तब तो उस विप्रने आशीश दे अपने आनेका सब व्योरा कहा.सुनतेही प्रसन्न हो राजा शिशुपालने अपने पुरोहितको बुलाय टीका लिया: और उस ब्राह्मणको बहुतसा कुछ दे बिदाकिया-पीछे जरासंधआदि सब देश देशके नरेशोंको नौत बुलाया.वे अपना दल ले ले आए तब यहभी अपना सब कटक ले व्याहन चला. उस ब्राह्मणने आ राजा भीष्मकसे कहा, जो टीका लेगया था कि महाराज! मैं राजा शिशुपालको टीका दे आया. वह बड़ी धूमधामसे बरात ले व्याहनेको आता है, आप अपना कार्य कीजै, यह सुन राजा भीष्मक पहले तो निपट उदास हुये. पीछे शोच समझ मंदिरमें जाय उन्होंने पटरानीसे कहा. वह सुनकर लगी मंगलामुखी और कुटुंबकी नारियोंको बुलवाय मंगलाचार करवाय व्याहकी सब रीति भांति करने. फिर राजाने बाहर आ प्रधान और मंत्रियोंको आज्ञा दी कि, कन्याके विवाहमें हमें जो जो वस्तु चाहिये सो सो सब इकठी करो. राजाकी आज्ञा पातेही मंत्री और प्रधानने सब वस्तु बातकी बातमें बनवाय मँगवाय लाय धरी. लोगोंने देखा सुना तो यह चर्चा नगरमें फैली, कि रुक्मिणीका विवाह श्रीकृष्णचंद्रसे होताथा सो दुष्ट रुक्मने होने न दिया. अब शिशुपालसे होगा.

इतनी कथा सुन श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि पृथ्वीनाथ! नगरमें तो यह घरघर बात हो रहीथी और राजमंदिरमें नारियां गाय बजायके रीति भांति करतींथीं; ब्राह्मण वेद पढ़ पढ़ टहल करवातेथे, ठौर ठौर दुंदुभी बाजतेथे, द्वार द्वार सपल्लव केलेके खंभ गाड़ गाड़ सोनेके कलश भरभर लोग धरते थे. और तोरन बंदनवार बांधतेथे. और नगरनिवासी न्यारेही हाट बाट चौहटे झाड़ बहार पटसे पाटतेथे. इस भांति घर और बाहरसे धूम मच रहीथी कि उसी समय दोचार सखियोंने जा रुक्मिणीसे कहा. कि—

चौ० तोहिं रुक्म शिशुपालहिं दई, अब तू रुक्मिणि रानी भई ॥ बोली शोच नायकर शीश, मन बच मेरे पण जगदीश ॥

इतना कह रुक्मिणीने अतिचिंता कर एक ब्राह्मणको बुलाय हाथ जोड़ उसकी बहुतसी बिनती और बड़ाई कर अपना मनोरथ उसे सब सुनायके कहा, कि महाराज! मेरा संदेशा द्वारकामें लेजाओ, और द्वारकानाथको सुनाय उन्हें साथकर लेआओ तो मैं बड़ा गुण मानूंगी और यह जानूंगी कि तुमनेही दयाकर मुझे श्रीकृष्ण वर दिया. इतनीबातके सुनतेही वह ब्राह्मण बोला अच्छा, तुम संदेशा कहो मैं ले जाऊंगा और श्रीकृष्णचंद्रजीको सुनाऊंगा. वे कृपानाथ हैं जो कृपाकर मेरे संग आवेंगे तो ले आऊंगा. इतना बचन जो ब्राह्मणके मुखसे निकला त्यों रुक्मिणीजीने एक पाती प्रेमरंगराती लिख उसके हाथ दी, और कहा कि श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदको पाती दे मेरी ओरसे कहियो कि, उस दासीने कर जोड़ अतिविनती कर कहा है कि आप अंतर्यामी हैं घटघटकी जानतेही हैं अधिक क्या कहूंगी; मैंने तुम्हारी शरण ली है अब मेरी लाज तुम्हें है. जिसमें रहे सो कीजे, और इस दासीको आय बेग दर्शन दीजै. महाराज! ऐसे कह जब रुक्मिणीजीने उस ब्राह्मणको बिदा किया; तब वह प्रभुका ध्यान कर नाम लेता द्वारकाको चला, और हरिइच्छासे बातके कहते जा पहुँचा. वहां जाय देखे तो समुद्रके बीच वह पुरी है, जिसके चहूं ओर बड़े बड़े पर्वत और बन उपबन शोभा देरहे हैं. तिनमें भांति भांतिके पशु पक्षी बोल रहे हैं और निर्मल जल भरे सुथरे सरोवर उनमें कमल डहडहाय रहे हैं, तिनपर भौंरोंके झुंडके झुंड गुंज रहे हैं. और तीरपै हंस सारस आदि पक्षी कलोलें कररहे हैं, कितनेक कोसोंतक अनेक अनेक प्रकारके फूल फलोंकी बाड़ियां चली गई हैं. तिनकी बाड़ोंपर पनवाड़िया लहलहा रही हैं, बावड़ी इंदारोंपे खड़े मीठे सुरोंसे गाय गाय माली रहँट परोहे चलाय चलाय ऊंचे नीचे नीर सींच रहे हैं; और पनघटोंपर पनहारियोंके ठटके ठट लगे हुए हैं यह छबि निरख निरख वह ब्राह्मण जो आगे[illegible] तो देखता क्या है कि, नगरके चारों ओर अतिऊंचा कोट उस[illegible] फाटक तिनमें कंचनखचित जड़ाऊ किंवाड़ लगेहुये हैं, और पुरी[illegible]तर चादी सोनेके मणिमय पंचखने सतखने मंदिर ऐसे ऊंचे कि अ[illegible]-

शमें बातें करें जगमगाय रहे हैं. तिनके कलश कलशियां बिजलीसी चमकती हैं. बर्णवर्णकी ध्वजा पताका फहराय रही हैं, खिड़की झरोखां मोरियां जालियोंसे सुगंधकी लपटें आय रही हैं. द्वार द्वार सपल्लव केलेके खंभ और कंचनकलश भरे धरे हैं, तोरन बंदनवारे बँधे हुये हैं और घरघर आनंदके बाजन बाज रहे हैं. ठौर ठौर कथा पुराण और हरिचर्चा होरहीहै अठारह वर्ण सुखचैनसे वास करते हैं. सुदर्शनचक्र पुरीकी रक्षा करताहै. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि राजा ! ऐसी जो सुंदर सुहावनी द्वारकापुरी तिसे देखता देखता वह ब्राह्मण राजा उग्रसेनकी सभामें जा खड़ा हुआ, और आशीश कर वहां इनको पूंछा, कि श्रीकृष्णचंद्रजी कहां बिराजते हैं? तब किसीने इसे हरिका मंदिर बताय दिया यह जो द्वारपर जाय खड़ाहुआ तो द्वारपालोंने इसे देख दंडवत कर पूंछा.

चौ०कहिये आपकहांते आए, कौन देशकी पाती लाए॥

यह बोला मैं ब्राह्मण हूं और कुंडिनपुरका रहनेवाला राजा भीष्मककी कन्या रुक्मि[illegible]की चिट्ठी श्रीकृष्णचंद्रको देने आया हूं. इतनी बातके सुनतेही पौ[illegible]ने कहा महाराज! आप मंदिरमें पधारिये श्रीकृष्णचंद्र सोहीं सिंह[illegible]र बिराजते हैं. यह वचन सुन ब्राह्मण जो भीतर गया, तो हा[illegible]खतेही सिंहासनपर बिठाय चरण धोय चरणामृत लिया और ऐसे से[illegible]रने लगे जैसे कोई अपने इष्टकी सेवा करे. निदान प्रभुने सुगंध [illegible] लगाय न्हिलाय धुलाय पहले तो उसे षड्रस भोजन करवाय बीड़[illegible] केसर चंदनसे चरच फूलोंकी माला पहिराय मणिमय मंदिरमें लेजा[illegible] सुथरे जड़ाऊ छपरखटमें लिटाया. महाराज! वहभी बाटका हारा थ[illegible] लेटतेही सुख पाय सोगया. श्रीकृष्णजी कितनीएक बेरतक तो [illegible]की बातें सुननेकी अभिलाषा किये वहां बैठ मनही मन कहते रहे कि [illegible]ब उठें अब उठे, निदान जब देखा कि न उठा, तब आतुर हो उसके पैंताने बैठ लगे पांव दाबने, इतनेमें उसकी नींद टूटी तो वह उठ बैठा, तब हरिने उसकी क्षेम कुशल पूंछ, पूंछा—

चौ॰ नीके राजदेशतुमतनो, हमसों भेद कहो आपनो ॥
कौन काज यहँ आवनभयो, दरशदिखाय हमेंसुखदयो ॥

ब्राह्मण बोला कि कृपानिधान ! आप मन दे सुनिये मैं अपने आनेका कारण कहता हूं, कि महाराज ! कुंडिनपुरके राजा भीष्मककी कन्याने जबसे आपका नाम और गुण सुना है तभीसे वह निशिदिन तुम्हाराही ध्यान किये रहती है, और कोमल चरणोंकी सेवा किया चाहती थी, संयोगभी आय बनाथा पर बात बिगड़ गई. प्रभु बोले, सो क्या ? ब्राह्मणने कहा दीनदयाल ! एकदिन राजा भीष्मकने अपने सब कुटुंब और सभाके लोगोंको बुलायके कहा कि भाइयो ! कन्या ब्याहने योग्य हुई, अब इसके लिये वर ठहराया चाहिये. इतना बचन राजाके मुखसे निकलतेही उन्होंने अनेक राजाओंका [illegible] गुण नाम और पराक्रम कह सुनाया. पर इनके मनमें एकभी न [illegible]. तब रुक्मकेशने आपका नाम सुनाया. तो प्रसन्न हो राजाने [illegible] कहना मानलिया. और सबसे कहा, कि भाइयो ! मेरे मनमें [illegible]की बात पत्थर की लकीर होचुकी. तुम क्या कहते हो ? वे बोले म[illegible] ! ऐसा वर जो त्रिलोकमें ढूंढ़ियेगा तोभी न पाइयेगा; इससे अब उ[illegible] यही है कि, विलंब न कीजे, शीघ्र श्रीकृष्णचंद्रसे रुक्मिणीका विवाह करदीजे; महाराज! यही बात ठहर चुकीथी इसमें रुक्मने भांजी कर रुक्मिणीकी सगाई शिशुपालसे की; अब वह सब असुरदल साथ ले ब्याहनेको चढ़ा है.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले पृथ्वीनाथ! ऐसे उस ब्राह्मणने समाचार कह रुक्मिणीजीकी चिट्ठी हरिके हाथ दी. प्रभुने अतिहितसे पाती ले छातीमें लगायली और पढ़कर प्रसन्न हो ब्राह्मणसे कहा देवता! तुम किसी बातकी चिंता मत करो, मैं तुम्हारे साथ चल असुरोंको मार उनका मनोरथ पूर्ण करूंगा. यह सुन ब्राह्मणको तो धीरज हुआ, पर हरि रुक्मिणीका ध्यान कर चिंता करने लगे. इति. श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीरुक्मिणीसंदेशो नाम त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

अध्याय ५४.

कुलदेवीकी पूजा करके पीछे फिरनेवाली रुक्मिणीको हरण करना.
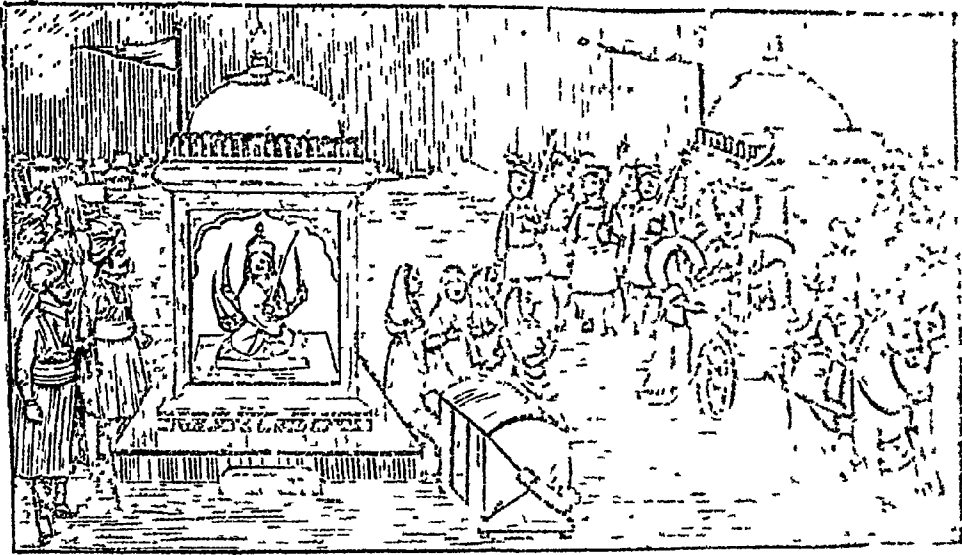
श्रीशुकदेवजी बोले, कि हे राजा! श्रीकृष्णचंद्रने ऐसे उस ब्राह्मणको ढाढस बँधाय फिर कहा—

दो०--जैसे घिसके काठते, काढ़हिं ज्वाला जारि ॥
[illegible] असुरदल मारि ॥

[illegible] कह फिर सुथरे [illegible] नते पहन राजा उग्रसेनके पास जाय हाथ जोड़कर कहा महाराज! कुंडिनपुरके राजा भीष्मकने अपनी कन्या देनेको पत्र लिख पुरोहितके हाथ मुझे अकेला बुलाया है जो आप आज्ञा दो तो जाऊं और उसकी बेटी व्याहलाऊं.

चौ०--सुनकर उग्रसेन यों कहै, दूरदेश कैसे मन रहै ॥
तहां अकेले जात मुरारी, मत काहूसों उपजै रारी ॥

तब तुम्हारा समाचार हमें यहां कौन पहुँचावेगा. यों कह पुनि उग्रसेन बोले कि, अच्छा जो तुम वहां जाया चाहते हो तो अपनी सब सेना साथले दोनों भाई जाओ और व्याह कर शीघ्र चले आओ. वहां किसीसे झगड़ा लड़ाई न करना, क्योंकि तुम चिरंजीव हो तो सुंदरी बहुत आय रहेंगी. आज्ञा पातेही श्रीकृष्णचंद्र बोले कि महाराज! तुमने सच कहा. पर मैं आगे चलताहूं. आप कटकसमेत बलरामजीको पीछेसे

भेज दीजेगा. ऐसे कह हरि उग्रसेन वसुदेवसे बिदा हो उस ब्राह्मणके निकट आए और रथसमेत अपने दारुक सारथीको बुलवाया, वह प्रभुकी आज्ञा पातेही चार घोड़ेका रथ तुरंत जोतलाया. तब श्रीकृष्णचंद्र उसपर चढ़े और ब्राह्मणको पास बिठाय द्वारकासे कुंडिनपुरको चले, जो नगरके बाहर निकले तो देखते क्या हैं कि दाहनी ओर तो मृगके झुंडके झुंड चले जाते हैं, और सन्मुखसे सिंह सिंहिनी अपना भक्ष्य लिये गरजते आते हैं, यह शुभ शकुन देख ब्राह्मण अपने जीमें विचार कर बोला कि महाराज! इस समय इस शकुनके देखनेसे मेरे विचारमें यह आता है कि, ये जैसे अपना काज साधके आते हैं तैसेही तुमभी अपना काज सिद्ध कर आओगे. श्रीकृष्णचंद्र बोले आपकी कृपासे. इतना कह हरि वहांसे आगे बढ़े और नये नये देश नगर गांव देखते देखते कुंडिनपुरमें जा पहुँचे, तो वहां देखा कि ठौर ठौर ब्याहकी सामा जो संयोगी धरी है तिससे नगरकी छबि कुछ औरकी औरही होरही है.

चौ० झारें गली चौहटे छावें, चोआ चंदनसा छिरकावें ॥
पान सुपारी झोरा किये, बिचबिच कनकनारियलदिये ॥
हरे पात फल फूल अपार, ऐसी घरघर बंदनवार ॥
ध्वजा पताका तोरण तने, सुढब सकल कंचनके बने ॥

और घरघरमें आनंद हो रहा है. महाराज! यह तो नगरकी शोभा थी और राजमंदिरमें जो कुतूहल हो रह था उसका वर्णन कोई क्या करे? वह देखतेही बनि आवे. आगे श्रीकृष्णचंद्रने नगर देख राजा भीष्मककी बाड़ीमें डेरा किया व शीतल छाँहेमें बैठ ठंढे हो उस ब्राह्मणसे कहा, देवता! तुम पहिले हमारे आनेका समाचार रुक्मिणीजीको जा सुनाओ. जो वे धीरज धर अपने मनका दुःख हरें पीछे वहांका भेद हमें आ बताओ, जो हम फिर उसका उपाय करें. ब्राह्मण बोला कि कृपानाथ! आज ब्याहका पहिला दिन है. राजमंदिरमें बड़ी धूमधाम होरही है, मैं जाता हूं पर रुक्मिणीजीको अकेली पाय आपके आनेका भेद कहूंगा. यों सुनाय ब्राह्मण वहांसे चला. महाराज! इधरसे हरि तो यों चुपचाप अकेले

पहुँचे, और उधरसे राजा शिशुपाल जरासंधसमेत सब असुरदल लिये इस धूमधामसे आया, कि जिसके बोझसे लगा शेषनाग डगमगाने और पृथ्वी उथलने. उसके आनेकी सुध पाय राजा भीष्मक मंत्री और कुटुंबके लोगोंसमेत आगू बढ़ लेने गये. और बड़े आदर मानसे आगोनी कर सबको पहरावनी पहराय रत्नजड़ित वस्त्रआभूषण और हाथी घोड़े दे उन्हें नगरमें ले आय जनवास दिया. फिर खाने पीने-का सन्मान किया. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, महाराज! अब मैं अन्तर कथा कहताहूं आप चित्त लगाय सुनिये, कि जब श्री-कृष्ण द्वारकासे चले तिसी समय सब यदुवंशियोंने जाय राजा उग्रसे-नसे कहाकि महाराज! हमने सुना है, कि कुंडिनपुरमें राजा शिशुपाल जरासंधसमेत सब असुरदल ले व्याहने गया है, और हरि अकेले गये हैं इससे हम जानते हैं कि वहा श्रीकृष्णजीसे और उनसे युद्ध होगा. यह बात जानकेभी हम अजान हो हरिको छोंड़ यहां कैसे रहें? महा-राज! मन तो मानता नहीं आगे जो आप आज्ञा कीजे सो करें. इस-बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने अति घबराय. भय खाय बलरामजीको निकट बुलाय समझायके कहा, कि तुम हमारी सब सेना ले श्रीकृष्ण-के पहुँचते पहुँचते शीघ्र कुंडिनपुरमें जाओ. और उन्हें अपने संग कर ले आओ. राजाकी आज्ञा पातेही बलदेवजी छप्पन करोड यादव जोड़ ले कुंडिनपुरको चले. उसकाल कटकके हाथी काले धोले धूमरे दल बादलसे जातेथे और उनके श्वेत श्वेत दांत बगपांतिसे धोंसा मेघसा गाज-ताथा और शस्त्र बिजुलीसे चमकतेथे. राते पीले बागे पहने घुड़चढ़ों-के टोलके टोल जिधर उधर दृष्टि आतेथे. रथोंके ताँतोंके ताँतें झमझ-माते चले जाते थे; तिनकी शोभा निरख हर्ष हर्ष देवता अतिहितसे अपने अपने विमानोंपर बैठे आकाशसे फूल बरसाय श्रीकृष्णचंद्र आ-नंदकंदकी जय मनातेथे. इसबीच सब दल लिये चले चले कुंडिनपुर-में हरिके पहुँचतेही बलरामजीभी जापहुँचे. यों सुनाय फिर श्रीशुक-देवजी बोले, कि महाराज! श्रीकृष्णचंद्र रूपसागर जगतउजागर इस भांति कुंडिनपुर पहुँच चुके थे, पर रुक्मिणीने इनके आनेका समाचार न पाया.

चौ०बिलखबदनचितवै चहुँ ओर, जैसे चंदमलिन भयेभोर ॥ अतिचिंता सुंदरि जिय बाढ़ी, देख ऊंच अँटापर ठाढ़ी ॥ चढ़ि चढ़ि उझके खिरकीद्वार। नैननते छोंड़े जलधार ॥

दो०-बिलखबदन अति मलिन मन,लेत उसासनि साँस॥
व्याकुल बरषा नैनजल, मोचति कहति उदास ॥

कि अबतक क्यों नहीं हरि आए? उनका तो नाम है अंतर्यामी ऐसे मुझसे क्या चूकपड़ी जो अबलग उन्होंने मेरी सुध न ली. क्या ब्राह्मण वहां न पहुँचा? कै हरिने मुझे कुरूप जान मेरी प्रीतिकी प्रतीति न करी? कै जरासंधका आना सुन प्रभु न आए? कल ब्याहका दिन है और असुर आय पहुँचा. जो वह कल मेरा कर गहेगा तो यह पापी जीव हरि बिन कैसे रहेगा ? जप तप नेम धर्म कुछ आगे न आया. अब क्या करूं और किधर जाऊं?

चौ०ले बरात आया शिशुपाल, कैसे बिरमे दीनदयाल ॥

इतनी बात जब रुक्मिणीके मुखसे निकली, तब एक सखिने तो कहा, कि दूरदेश बिन पिता बंधुकी आज्ञा हरि कैसे आवेंगे ? और दूसरी बोली कि जिनंका नाम है अंतर्यामी दीनदयाल वे बिन आये न रहेंगे, रुक्मिणी ! तू धीरज धर व्याकुल न हो; मेरा मन यह हामी भरता है कि अभी आय कोई यों कहता है कि हरि आये; महाराज! ऐसे वे दोनों आपसमें बातें कह रही थीं कि, वा समय ब्राह्मणने जाय आशीश दे कहा कि—श्रीकृष्णचंद्रजीने आय राजवाड़ीमें डेरा किया. और सब दल लिये बलदेवजी पीछेसे आते हैं. ब्राह्मणको देखते और इतनी बात सुनतेही रुक्मिणीजीके जीमें जी आया. और उन्होंने उसका ऐसा सुख माना, कि—जैसे तपी तपका फल पाय, सुख माने. आगे श्रीरुक्मिणीजी हाथ जोड़ शिर झुकाय उस ब्राह्मणके सन्मुख कहने लगी, कि—आज तुमने आय हरिका आगमन सुनाय मुझे प्राणदान दिया; मैं इसके पलटे क्या दूं? जो त्रिलोकीकी माया दूं तोभी तुम्हारे

ऋणसे उद्धार न हूँ. ऐसे कह मनमार सकुचाय रही, तब वह ब्राह्मण अतिसंतुष्ट हो आशीर्वाद कर वहांसे उठ राजा भीष्मकके पास गया और उसने श्रीकृष्णके आनेका व्योरा समझायके कहा. सुनतेही प्रणाम कर राजा भीष्मक उठधाया, और चला चला वहा आया जहा बाड़ीमें श्रीकृष्ण बलराम सुखधाम विराजतेथे. आतेही साष्टांग प्रणाम कर सन्मुख खड़े हो हाथ जोड़के राजा भीष्मकने कहा कि-

चौ० मेरे मन बच हो तुम हरी, कहा कहों जो दुष्ट निकरी

अब मेरा मनोरथ पूर्ण हुआ, जो आपने आय दर्शन दिया. यों कह प्रभुके डेरे करवाय राजा भीष्मक तो अपने घर आय चिंता कर ऐसे कहने लगा.

चौ० हरिचरित्र जाने नहिं कोई, क्या जानें अब कैसी होई

और जहां श्रीकृष्ण बलदेव थे तहां नगरनिवासी क्या स्त्री क्या पुरुष आय शिर नाय नाय प्रभुका यश गाय गाय सराहि२आपसमें यों कहतेथे कि, रुक्मिणीके योग्य वर श्रीकृष्णही हैं. विधना करे यह जोरी जुरै और चिरंजीव रहै. इसबीच दोनों भाइयोंके जीमें कुछ यों आया. तो नगर देखने चले. उस समय ये दोनों भाई जिस हाट बाट चौहटेमें होके जातेथे; तहीं नगरनारियोंके ठट्टके ठट्ट लगजातेथे; और वे इनके ऊपर चोआ चंदन गुलाब नीर छिड़कछिड़क फूल बरसाय हाथ बढ़ाय बढ़ाय प्रभुको आपसमें यों कह कह बतातेथे-

चौ० नीलांबर ओढ़े बलराम, पीतांबर पहने घनश्याम ॥
कुंडल चपल मुकुट शिरधरे, कमलनयन चाहत मनहरे॥

और ये देखते जातेथे, निदान सब नगर और राजा शिशुपालका कटक देख ये तो अपने दलमें आए; और इनके आनेका समाचार सुन राजा भीष्मकका बड़ा बेटा अतिक्रोधकर अपने पिताके निकट आय कहने लगा, कि-सच कहो, श्रीकृष्ण यहां किसका बुलाया आया ? यह भेद मैंने न पाया. बिन बुलाये यह कैसे आया ?-

चौ० व्याहकाज यह है सुखधाम, इसमें इसका क्या है काम

ये दोनों कपटी कुटिल जहां जाते हैं तहांही उत्पात मचाते हैं. जो तुम अपना भला चाहो तो मुझसे सत्य कहो. ये किसके बुलाये आए?

महाराज! रुक्म ऐसे पिताको धमकाय वहांसे उठ सात पांच करता वहां गया, जहां राजा शिशुपाल और जरासंध अपनी सभामें बैठेथे; और उनसे कहा कि, यहां राम कृष्ण आये हैं. तुम अपने सब लोगोंको जता दो जो सावधानीसे रहैं. इन दोनों भाइयोंका नाम सुनतेही राजा शिशुपाल तौ हरिचरित्रका लख ब्योहार मनहीमन विचार करनेलगा; और जरासंधने कहा, कि सुनो जहा ये दोनों जाते हैं तहां कुछ न कुछ उपद्रव मचाते हैं ये महाबली और कपटी हैं इन्होंने ब्रजमें कंसादिक बड़े बड़े राक्षस सहजस्वभावही मारे हैं इन्हें तुम मत जानो बारे, एकभी बखत किसीसे लड़कर नहीं हारे. श्रीकृष्णने सत्रहबेर मेरा दल हना. जब मैं अठारहवीं बेर चढ़ आया तब यह भाग पर्वतपै जाय चढ़ा, जो मैंने उसमें आग लगाई तो यह छलकर द्वारकाको चलागया.

चौ० याको काहू भेद न पायो, अब यहँ करन उपद्रव आयो॥
है यह छली महाछल करै, काहूपै नहिं जान्यो परै॥

इससे अब ऐसा कुछ उपाय कीजै जिससे हम सबोंकी पत रहै इतनी बात जब जरासंधने कही तब रुक्म बोला कि, वे क्या वस्तु हैं जिनके लिये तुम इतने भावित हो. उन्हें तो मैं भली भांतिसे जानता हूं कि बन बन नाचते गाते वेणु बजाते धेनु चराते फिरते थे; वे बालक गँवार युद्धविद्याकी रीति क्या जाने? तुम किसी बातकी चिंता अपने मनमें मत करो. हम सब यदुवंशियोंसमेत कृष्ण बलरामको क्षणभरमें मार हटावेंगे.

श्रीशुकदेवजी बोले; कि महाराज! उस दिन रुक्म तो जरासंध और शिशुपालको समझाय बुझाय ढाढस बँधाय अपने घर आया; और उन्होंने सात पाचकर रात गवाँई, भोर होतेही इधर राजा शिशुपाल और जरासंध तो ब्याहका दिन जान बरात निकलनेकी धूमधाममें लगे; और उधर राजा भीष्मकके यहांभी मंगलाचार होने लगे, इतनेमें रुक्मिणीजीने उठतेही एक ब्राह्मणके हाथ श्रीकृष्णचंद्रसे कहला भेजा कि, कृपानिधान! आज ब्याहका दिन है. दो घड़ी दिन रहे नगरके पूर्व देवीका मंदिर है तहां मैं पूजा करने जाऊंगी. मेरी लाज

तुम्हें है, जिसमें रहे सो करियेगा, आगे पहर एक दिन चढ़े सखी स-
सहेली और कुटुंबकी स्त्रियां आई उन्होंने आतेही पहले तो आंगनमें
राजमोतियोंका चौक पुरवाय कंचनकी जड़ाऊ चौकी बिछाय तिसपर
रुक्मिणीको बिठाय सात सुहागनोंसे तेल चढ़वाय पीछे सुगंध उबटन
लगाय न्हिलाय धुलाय उसे सोलह शृंगार करवाय बारह आभूषण
पहराय ऊपरसे राता चोला उढ़ाय बनि बनाय बिठाया. इतनेमें घड़ी
चारएक दिन पिछला रहगया. उसकाल रुक्मिणी अपनी सब सखी
सहेलियोंको साथले बाजेगाजेसे देवीकी पूजा करनेको चली.
तो राजा भीष्मकने अपने लोग रखवालीको उसके साथ कर दिये
थे. समाचार पाया कि, राजकन्या नगरके बाहर देवी पूजने चली है,
राजा शिशुपालनेभी श्रीकृष्णचंद्रके डरसे अपने बड़े बड़े रावत
शूरबीर योद्धाओंको बुलाय सब भांति ऊंच नीच समझाय बुझाय
रुक्मिणीजीकी चौकशीको भेजदिया. वेभी आय अपने अपने अस्त्र
शस्त्र सँभाल राजकन्याके संग होलिये, इस बिरयां रुक्मिणीजी सब
शृंगार किये सखी सहेलियोंके झुंडके झुंड लिये अंतरपटकी ओटमें
और काले काले शस्त्रोंके कोटमें जाते ऐसी शोभायमान लगतीथीं कि
जैसे श्यामघटाके बीच तारामंडलसमेत चंद्रनिधान. कितनी एक वेरमें
चली चली देवीके मंदिरमें पहुँची; वहां जाय हाथ पांव धोय
आचमन कर श्रद्धासमेत वेदकी विधिसे देवीकी पूजा की, पीछे ब्राह्म-
णियोंको इच्छाभोजन करवाय सुथरी तियले पहराय रोरीकी खौर काढ
अक्षत लगाय उन्हें दक्षिणा दी और उनसे आशीश ली. आगे देवीकी
परिक्रमा दे वह चंद्रमुखी चंपकबरनी, मृगनयनी, पिकबचनी, गजगामि-
नी, सखियोंको साथ ले हरिके मिलनेकी चिंता किये जो यहांसे
निश्चिंत हो चलनेको हुई तो श्रीकृष्णचंद्रभी अकेले रथपर बैठ वहां
पहुँचे, जहां रुक्मिणीके साथ सब शूर अस्त्र शस्त्रसे जकड़े खड़ेथे.
इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले—

दो॰ — पूजि गौरि जबहीं चली, एक कहति अकुलाय ॥
सुन सुंदरि आए हरी, देख ध्वजा फहराय ॥

यह बात सखीसे सुन और प्रभुके रथकी ओर देख देख राजकन्या अति आनंदकर फूली अंग न समातीथी; और सखीके हाथपर हाथ दिये मोहनीरूप किये हरिके मिलनेकी आश लिये कुछ कुछ मुसुकुराती ऐसे सबके बीच मंदगति जातीथी, कि जिसकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती. आगे श्रीकृष्णचंद्रको देखतेही सब रखवाले भूलेसे खड़े होरहे, और अंतरपट उनके हाथसे छूट पड़े. इसमें मोहनीरूपसे रुक्मिणीको जो उन्होंने देखा तो औरभी मोहित हो ऐसे शिथिल हुए कि, जिन्हें अपने तन मनकी सुध न थी.

सो०-भृकुटी धनुष चढ़ाय, अंजनबर्णी पनच कै॥
लोचनबाण चलाय, मारेपै जीवत रहै॥

महाराज! उसकाल सब राक्षस तो चित्रसे खड़े खड़े देखतेही रहे. और श्रीकृष्णचंद्र सबके बीच रुक्मिणीके पास रथ बढ़ाय खड़े हुए. प्राणपति को देखतेही उसने सकुचाकर मिलनेको जो हाथ बढ़ाया तो प्रभुने बाँये हाथसे उठाय उसे रथपर बैठाया.

चौ०कांपत गात सकुच मनभारी, छांड़सबन हरिसंग सिधारी॥ ज्यों बैरागी छोड़े गेह, कृष्ण-चरणसों करे सनेह॥

महाराज! रुक्मिणीने तो जप, तपाव्रत पुण्य कियेका फल पाया, और पिछला दुःख सब गँवाया. बैरी अस्त्र शस्त्र लिये खड़े मुख देखतेही रहे, प्रभु उनके बीचसे रुक्मिणीको ले ऐसे चले कि-

दो०ज्यों बहु झुंडनि स्यारके, परे सिंह बिच आय॥
अपनो भक्षण लेइकै, चले निडर घहराय॥

आगे श्रीकृष्णचंद्रके चलतेही बलरामजीभी पीछेसे धौंसा दे सब दल साथ ले जामिले. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे रुक्मिणीहरणं नाम चतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५४॥

अध्याय ५५.

शिशुपाल और श्रीकृष्णका युद्ध.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! कितनी एक दूर जाय श्रीकृष्णचंद्रजीने रुक्मिणीको शोच संकोचयुत देखकर कहा, कि सुंदरि ! अब तुम किसी बातकी चिंता मत करो. मैं शंखध्वनि कर सब तुम्हारे मनका डर हरूंगा, और द्वारकामें पहुँच वेदकी विधिसे वरूंगा. यों कह प्रभुने उसे अपनी माला पहिराय बांई ओर बिठाय ज्यों शंखध्वनि करी त्यों शिशुपाल और जरासंधके साथी सब चौंकपड़े, यह बात सारे नगरमें फैलगई कि हरि रुक्मिणीजीको हर ले गये. इतनेमें शिशुपालने रुक्मिणीहरण अपने उन लोगोंके मुखसे सुना कि, जो चौकशीको राजकन्याके संग गये थे. राजा शिशुपाल और जरासंध अति क्रोधकर झिलम टोप पहन पेटी बांध सब शस्त्र लगाय अपना कटक ले लड़नेको श्रीकृष्णके पीछे चढ़ दौडे और उनके निकट जाय आयुध सँभाल सँभाल ललकारे अरे ! भागे क्यों जाते हो ? खड़े रहो शस्त्र पकड़ लड़ो. जो क्षत्री शूर बीर हैं वे क्षेत्रमें पीठ नहीं देते. महाराज, इतनी बातके सुनतेही यादव फिर सन्मुख हुए और लगे दोनों ओरसे अस्त्र चलने, उसकाल रुक्मिणी बाल अति भयमान घुंघटकी ओट किये आंशू भर भर लंबी श्वासें लेती थी, और प्रीतमका मुख निरख२मनहीं मन विचार कर यों कहती थी, कि ये मेरे लिये इतना दुःख पाते हैं. अंतर्यामी प्रभु रुक्मिणीके मनका भेद जान बोले कि, सुंदरी ! तूं क्यों डरती है ? तेरे देखतेही देखते सब असुरदलको मार भूमिका भार उतारताहूँ. तू अपने मनमें

किसी बातकी चिंता मतकर. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, राजा ! उसकाल देवता अपने अपने विमानोंमें बैठे आकाशसे देखते क्या हैं कि-

दो०-यादव असुरनसों लरत, होत महासंग्राम ॥
ठाढ़े देखत कृष्ण हैं, करत युद्ध बलराम ॥

मारू बाजता है. कड़खेत कड़खा गाते हैं. चारण यश बखानते हैं. अश्वपाति अश्वपतिसे, रथी रथीसे, पैदल पैदलसे, भिड़ रहे हैं. इधर उधरके शूरबीर पिल पिलके हाथ मारते हैं; और कायर खेत छोड़ अपना जी ले २ भागते हैं. घायल खड़े झूमते हैं, कबंध हाथमें तलवार लिये चारों ओर घूमते हैं और लोथेंपे लोथें गिरतीं हैं. तिनसे लोहूकी नदी बहचली है, तिनमें जहां तहां हाथी जो मरे पड़े हैं सो टापूसे जनाते हैं और सूंड़ें मगरसी. महादेव भूत, प्रेत, पिशाच संग लिये शिर चुन चुन मुंडमाल बनाय २ पहनते हैं और [illegible] श्रृगाल, कूकुर आपसमें लड़ लड़ लोथें खेंच खेंच लाते और [illegible] फाड़ खाते हैं. कौए आंखें निकाल निकाल धड़ोंसे ले जाते हैं. निदान देवताओंके देखतेही देखते बलरामजीने सब असुरदल यों काटडाला, कि ज्यों किसान खेती काटडाले. आगे जरासंध और शिशुपाल सब दल कटाय कईएक घायल संग लिये भागके एक ठौर जा खड़े रहे. तहां शिशुपालने बहुत अछताय पछताय शिर डुलाय जरासंधसे कहा, कि अब तो अपयश आया और कुलको कलंक लगाया. संसारमें जीना उचित नहीं, इससे आप आज्ञा दो तो मैं रणमें जाय लड़ मरूं.

चौ०-नातरहौं करिहौ बनवास,लेऊंयोग छांड़िसब आस॥
गईआजपतअबक्योंजीजै,राखिप्राणक्योंअपयशलीजै ॥

इतनी बात सुन जरासंध बोला, कि महाराज ! आप ज्ञानवान् हो और सब बातें जानते हो मैं तुम्हें क्या समझाऊं ? जो ज्ञानी पुरुष हैं सो हुई बातका शोच नहीं करते; क्योंकि भले बुरेका कर्त्ता औरही है. मनुष्यका कुछ बश नहीं, यह परबश पराधीन है. जैसे काष्ठकी पूतलीको

नट ज्यों नचाता हैं त्यों नाचाती है ऐसेही मनुष्य कर्त्ताके वश है. वह जो चाहता है सो करता है. इससे सुख दुःखमें हर्ष शोक न कीजे सब स्वप्नसा जानलीजै. मैं, तेईस२अक्षौहिणी सेना ले मथुरापुरीपर सत्रहवेर चढ़गया; और कृष्णने सत्रहवेर मेरा सब दल हना. मैंने कुछ शोच न किया और अठारहवींबेर जब इसका दल मारा तब कुछ हर्ष भी न किया. यह भाग पहाड़पर जा चढ़ा, मैंने इसे वहीं फूंकदिया, न जानिये यह क्यों कर जिया, इसकी गति कुछ जानी नहीं जाती. इतना कह फिर जरासंध बोला, महाराज ! अब उचित यह है कि, इस समयको टाल दीजै. कहा है कि, प्राण बचें तो पीछे सब हो रहता है, जैसे हमें हुआ कि सत्रहबार हारे अठारहवीं बेर जीते. इससे जिसमें अपनी कुशल होय सो कीजै, और हठ छोड़ दीजै. महाराज जब जरासंधने ऐसे समझायके कहा. तब उसे कुछ धीरज हुआ, और जितने घायल योद्धा बचेथे तिन्हें साथ ले अछताय पछताय जरासंधके संग होलिया. ये तो यहासे यों हारके चले, और जहां शिशुपालका घर था तहाकी बात सुनो कि पुत्रके आवनेका विचार शिशुपालकी मा जो मंगलाचार करने लगी तो सन्मुख छींक हुई, और दाहनी आंख उसकी फड़कने लगी. यह अपशकुन देख उसका माथा ठनका, कि इसबीच किसीने आय कहा कि तुम्हारे पुत्रकी सब सेना कटगई, और दुलहिनभी न मिली, अब वहांसे भाग अपना जीव लिये आताहै. इतनी बातके सुनतेही शिशुपालकी महतारी अति चिंता कर अवाक होरही. आगे शिशुपाल और जरासंधका भागना सुन रुक्म अतिक्रोध कर अपनी सभामें आन बैठा, और सबको सुनाय कहने लगा कि, कृष्ण मेरे हाथसे बच कहां सक्ता है ? अभी जाय उसे मारूं रुक्मिणीको ले आऊं तो मेरा नाम रुक्म नहीं तो फिर कुंडिनपुरमें नहीं आऊं. महाराज ! ऐसे पैज कर रुक्म एक अक्षौहिणी सेना ले श्रीकृष्णचंद्रसे लड़नेको चढ़धाया; और उस यादवोंको दल जा घेरा. उसकाल उसने अपने लोगोंसे कहा कि, तुम तो यादवोंको मारो, और मैं आगे जाय श्रीकृष्णजीको जीता पकड़ लाताहूं. इतनी बातके सुनतेही उसके साथी तो

यदुवंशियोंसे युद्ध करने लगे; और वह रथ बढ़ाय श्रीकृष्णचन्द्रके निकट जाय ललकारके बोला- अरे कपटी ! गँवार ! तू क्या जाने राज्य-व्यवहार ? बालकपनमें जैसे तैंने दूध दहीकी चोरी करी, तैसे तूने यहांभी आय सुंदरी हरी—

चौ०-व्रजबासी हम नहीं अहीर, ऐसे कहकर लीने तीर
विषके बुझे लियेउन बीन, खैंच धनुष शर छोड़े तीन ॥

उन बाणोंको आते देख श्रीकृष्णचंद्रने बीचमेंही काटा, फिर रुक्मने और बाण चलाए, प्रभुने वेभी काट गिराए; और अपना धनुष सँभाल कईएक बाण ऐसे मारे कि, रथके घोड़ोंसमेत सारथी उड़गया और धनुष उसके हाथसे कट नीचे गिरा- पुनि जितने आयुध उसने लिये, हरिने सब काट काट गिरा दिये- तब तो वह अति झुंझलाय फिर खांड़ा उठाय रथसे कूद श्रीकृष्णचंद्रकी ओर यों झपटा कि, जैसे बावला गीदड़ गजपर आवे, कै ज्यों पतंग दीपपर धावे. निदान जातेही उसने हरिके रथपर एक गदा चलाई, कि प्रभुने झट उसे पकड़ बांधा और चाहा कि मारौं, इसमें रुक्मिणीजी बोलीं—

चौ०-मारो मत भैया है मेरो, छांड़ो नाथ तिहारे चेरो ।
मूरख अंध कहा यह जाने, लक्ष्मीकंतहि मानुष माने ।
तुम योगीश्वर आदि अनंत, भक्तहेतु जो खड़े भगवंत ।
यह जड़ कहा तुम्हेंपहचाने, दीनदया[illegible]रासंधसे [illegible]चाने ।

इतना कह फिर कहने लगी, कि जड़ और [illegible] संसारमें अपराध मनमें नहीं लाते. जैसे कि सिंह श्वानके भूकनेपर ध्य[illegible] करता और जो तुम इसे मारोगे तो होगा मेरे पिताको शोक, [illegible] करना तुम्हें नहीं है योग. जिस ठौर तुम्हारे चरण पड़ते हैं, तहांके सब प्राणी आनंदमें रहते हैं- यह बड़े अचरजकी बात है, कि तुमसा सगा रहतेभी राजा भीष्मक पुत्रका दुःख पावे- महाराज ! ऐसे कह एक बार तो रुक्मिणीजी यों बोली, कि महाराज! तुमने भला हितसंबंधीसे किया जो पकड़ बांध और खड्ग हाथमें ले मारनेको उपस्थित हुए पुनि व्याकुल हो थरथ-

राय आंखे डबडबाय बिसूर बिसूर पांओंपड़ गोद पसार कहने लगीं.

चौ०-बंधुभीख प्रभु मोको देऊ, इतनो यश तुम जगमें लेऊ।

इतनी बातके सुननेसे और रुक्मिणीजीकी ओर देखनेसे श्रीकृष्ण चंद्रजीका सब क्रोप शांत हुआ. तब उन्होंने उसे जीवसे तो न मारा पर सारथीको सैन करी उसने उठ उसकी पगड़ी उतार ढूंढ़िया चढ़ाय मूंछ डाढ़ी और शिर मूंड़ सात चोटी रख रथके पीछे बांध लिया. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! रुक्मकी तो श्रीकृष्णजीने यहां यह अवस्था की; और बलदेवजी वहांसे सब असुरदलको मार भगाय कर भाईके मिलनेको ऐसे चले, कि जैसे श्वेतगज कमलदलमें कमलोंको तोड़ खाय विथराय अकुलायके भागता होय; निदान कितनीएक बेरमें प्रभुके समीप आय पहुंचे; और रुक्मको बँधा देख श्रीकृष्णसे अतिझुंझलायके बोले कि, तुमने यह क्या काम किया? जो सालेको पकड़ बांधा, तुम्हारी कुटेव नहीं जाती?

चौ०-बांध्योयाहिकरीबुधिथोरी, यहतुमकृष्णसगाईतोरी।
औयदुकुलकोलीकलगाई, अबहमसोंकोकरिहिसगाई॥

जिस समय यह युद्ध करनेको आपके सन्मुख आया तब तुमने इसे समझाय बुझायके उलटा क्यों न फेर दिया. महाराज! ऐसे कह बलरामजीने रुक्मको तो सील समझाय बुझाय अति शिष्टाचार कर बिदा किया. फिर हाथ जोड़ अतिविनती कर बलराम सुखधाम रुक्मिणीसे कहने लगे कि, हे सुन्दरी! तुम्हारे भाईकी जो यह दशा हुई इसमें कुछ हमारी चूक नहीं. यह इसके पूर्वजन्मके किये कर्मका फल है और क्षत्रियोंका धर्मभी है कि, भूमि धन, स्त्रियोंके काज, करते हैं युद्ध दल परस्पर साज. इस बातको तुम दिलमें मत मानो, मेरा कहा सचाही जानो. हार जीतभी उसके साथही लगी है और यह संसार दुःखका समुद्र है, यहां आय सुख कहां? पर मनुष्य मायाके बश हो दुःख सुख भलाबुरा हारजीत संयोगवियोग मनही मनसे मान लेते हैं. पै इसमें हर्ष शोक जीवको नहीं होता, तुम अपने भाईके विरूप होनेकी चिंता मत करो, क्योंकि ज्ञानी लोग जीव अमर और देहका नाश कहते हैं इस लेखे देहकी पत जानेसे कुछ जीवकी नहीं गई.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, धर्मावतार! जब बलरामजीने ऐसे रुक्मिणीको समझाया तब—

दो०-सुनि सुंदरि मन समझकै, किये जेठकी लाज ॥
मनमाहिं पियसों कहत, हाँकहु रथ ब्रजराज ॥

चौ०-घुंघुट ओट बदनकी करै, मधुर बचन हरिसों उचारै ॥
सन्मुख ठाढ़ेहैं बलदाऊ, अहो कंथ रत बेग चलाऊ

इतना बचन रुक्मिणजिके मुखसे निकलतेही इधर तो श्रीकृष्णजीने रथ द्वारकाकी ओर हांका; और उधर रुक्म अपने लोगोंमें जाय अतिचिंता कर कहने लगा, कि मैं कुंडिनपुरसे यह पैज करके आयाथा; कि अभी जाय कृष्ण बलरामको सब यदुवंशियोंसमेत मार रुक्मिणीको ले आऊंगा सो मेरा पण पूरा न हुआ और उलटी अपनी पत खोई. अब जीता न रहूंगा इस देश और गृहस्थाश्रमको छोड़ वैरागी हो कहीं जाय मरूंगा. जब रुक्मने ऐसे कहा तब उसके लोगोंमेंसे कोई बोला, महाराज! तुम महाबीर हो और बडे प्रतापी तुम्हारे हाथसे श्रीकृष्णादि बचगये सो उनके भले दिन थे, अपने प्रारब्धके बलसे निकलगये नहीं तो आपके सन्मुख हो कोई शत्रु कब बच सक्ता है? तुम सज्ञान हो ऐसी बात क्यों विचारते हो? कभी हार होती है कभी जीत, पर शूरवीरोंका धर्म है जो साहस नहीं छोंडते भला रिपु आज बच गया, फिर मारलेंगे. महाराज! यों जब उसने रुक्मको समझाया तब वह यह कहने लगा कि सुनो—

चौ०-हार्‍यो उनसों औ पतगई, मेरे मन अति लज्जा भई ॥
जन्म न हों कुंडिनपुर जाऊं, वरण औरही गांव बसाऊं ॥
यों कह उन इक नगर बसायो, सुत दारा धन तहां मँगायो॥
ताको धर्‍यो भोजकट नाम, ऐसे रुक्म बसायो गाम॥

महाराज! उधर रुक्म तो राजा भीष्मकसे बैर कर वहां रहा और इधर

श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजी चले चले द्वारकाके निकट आय पहुँचे.

चौ०उड़ी रेणु आकाशज्यु छाई, तबहीं पुरबासिन सुध पाई

दो०आवत हरि जाने जबहि, राख्यो नगर बनाय ॥
शोभा भइ तिहुं लोककी, कही कौनपै जाय ॥

उसकाल घरघर मंगलाचार हो रहेथे. द्वार द्वार [illegible]के खंभ गड़े, कलश सजल सपल्लव धरे. ध्वजापताका फहराय रहीं, तोर[illegible]नवार बँधी हुई और घर २ हाट बाट चौहटोंमें चौमुखे दिये लिये युवति[illegible]के यूथ खडे और राजा उग्रसेनभी सब यदुवंशियोंसमेत बाजे [illegible] गाऊ जाय रीति भांतिकर बलराम सुखधाम और श्रीकृष्णचंद्र [illegible] नगरमें ले आये. उस समयके बनावकी छबि कुछ बर्णी नहीं ज[illegible] क्या स्त्री क्या पुरुष सबहीके मनमें आनंद छाय रहाथा. प्रभुके सोहे[illegible] आय सब भेंट देदे भेंटतेथे; और नारियां अपने अपने द्वारों बागे[illegible] वारों कोठोंपरसे मंगल गीत गाय गाय आरती उतार फूल बरसावतींथीं और श्रीकृष्णचंद्र और बलदेवजी यथायोग्य सबकी मनुहार करते जातेथे. निदान तिसी रीतसे चले चले राजमंदिरमें जा बिराजे. आगे कईएक दिन पीछे एक श्रीकृष्णचंद्रजी राजसभामें गये, जहां राजा उग्रसेन, शूरसेन, वसुदेव आदि सब बड़े बड़े यदुवंशी बैठेथे, और प्रणाम कर इन्होंने उनके आगे कहा कि, महाराज! युद्ध जीत जो कोई सुंदरी लाता है वह राक्षसब्याह कहाता है इतनी बातके सुनतेही शूरसेनजीने पुरोहित बुलाय उसे समझायके कहा, कि तुम श्रीकृष्णके विवाहका दिन ठहरादो, उसने झट पत्री खोल भला महीना, दिन, वार, नक्षत्र देख शुभ सूर्य्य चंद्रमा बिचार ब्याहका दिन ठहराय दिया, तब राजा उग्रसेनने अपने मंत्रियोंको तो यह आज्ञा दी कि, तुम ब्याहका सामान इकट्ठा करो; और आप बैठ पत्र लिख लिख पांडव कौरव आदि सब देशके राजाओंको ब्राह्मणके हाथ बोलवा भिजवाए. महाराज! चिट्ठी पातेही सब राजा प्रसन्न हो हो उठ धाए, तिन्होंके साथ ब्राह्मण, पंडित, भाट, भिखारीभी होलिये; और यह समाचार पाय राजा भीष्म-

कनेभी बहुत वस्त्र, शस्त्र, जड़ाऊ आभूषण और रथ, हाथी, घोड़े, दास, दासियोंके डोले एक ब्राह्मणको दे कन्यादानका संकल्प मनहीं मन कर अतिबिनती कर द्वारकाको भेज दिया. उधरसे तो देशदेशके नरेश आए, और इधर राजा भीष्मकका पठाया सब सामा लिये वह ब्राह्मणभी आया. उस समयकी शोभा द्वारकापुरीकी कुछ बर्णी नहीं जाती. ब्याहका दिन आया तो सब रीति भांति कर बरकन्याको मंडपके नीचे ले जा बैठाया. और सब बड़े बड़े झुंड यदुवंशियोंकेभी आय बैठे. उस बिरियां

चौ०-पंडित तहां वेद उचरें, रुक्मिणि संग हरि भावँर फिरें
ढो॰ दुंदुभी भेरि बजावें, हर्षहिं देव पुहुप बरसावें ॥
[illegible] साधु चारण गंधर्व, अंतरिक्षभये देखें सर्व ॥
चढ़े विमान धीर शिर नावें, देवबधू सब मंगल गावें ॥
हाथ गह्यो प्रभु भांवरि पारी, बाम अंग रुक्मिणि बैठारी
छोरी गांठ पटा तब दियो, कुलदेवीको पूजन कियो ॥
छोरत कंकन हरि सुंदरी, खेलत दूधा भाती करी ॥
अति आनंदरच्यो जगदीश, निरखिहरषिसबदेहिंअशीश
हरिरुक्मिणिजोरीचिरजीवो, जिनकोचरितसुधारसपीवो
दीनो दान बिप्र जे आए, मागध बंदीजन पहिराए ॥
जे नृप देश देशके आए, दीनी बिदा सबै पहुंचाए ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! जो जन हरि रुक्मिणीका चरित्र पढ़ै सुनैगा और पढ़ सुनके सुमिरन करेगा; सो भुक्ति मुक्ति यश पावेगा. पुनि जो फल होता है अश्वमेधादि यज्ञ, गौ आदि दान, गंगादि तीर्थके करनेसे, सोई फल मिलता है हरिकथा सुननेसे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे रुक्मिणीपरिणयचरित्रं नाम पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥

अध्याय ५६.

प्रद्युम्नका शंबरासुरको मारके रतीकेसाथ विमानमें बैठकर द्वारकामें आना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! एक दिन श्रीमहादेवजी अपने स्थानके बीच ध्यानमें बैठेथे कि एकाएकी कामदेवने आ सताया तो हरका ध्यान छूटा; और लगे अज्ञान हो पार्वतीजीके साथ क्रीड़ा करने, इसमें कितनीएक बेर पीछे शिवजीको केलि करते जब ज्ञान हुआ तब क्रोधकर कामदेवको जलाय भस्म किया.

दो०-कामबली जब शिव दह्यो, तब रति धरत न धीर ॥
पति बिन अति तलफत खरी, बिह्वल बिकल शरीर ॥
चौ०-कामनारि अतिलोटतफिरै, कंतकंतकहि क्षितिभुजभरै
प्रियबिनतियमहदुखिया जान, तबयोंगौरीकियो बखान

कि हे रति! तू चिंता मत कर, तेरा पति तुझे जिस भांति मिलेगा तिसका भेद सुन मैं कहती हूं. कि पहले वह तो श्रीकृष्णचंद्रके घरमें जन्म लेगा, और उसका नाम प्रद्युम्न होगा. पीछे उसे शंबर ले जाय समुद्रमें बहावेगा. फिर वह मच्छके पेटमें हो शंबरहीकी रसोईमें आवेगा, तू वहीं जायके रह. जब वह आवे तब उसे ले पालियो, पुनि वह शंबरको मार तुझे साथ ले द्वारकामें सुखसे जाय बसेगा. महाराज!

चौ०-शिवरानीयोंरतिसमझाई, तबतनधरशंबरघर आई॥
सुंदरिबीच रसोंई रहै, निशिदिन मारग प्रियको चहै ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा! उधर रति तो प्रियके मिलनेकी आश कर यों रोने लगी; और इधर रुक्मिणीजीको गर्भ रहा, और दश महीनेसे पूरे दिनों, लड़का भया. यह समाचार पाय ज्योतिषियोंने आय लग्न साध वसुदेवजीसे कहा कि महाराज! इस बालकके शुभ ग्रह देख हमारे विचारमें यों आता है कि, रूप, गुण, पराक्रममें यह श्रीकृष्णजीके समान होगा. पर बालकपनभर जलमें रहेगा पुनि रिपुको मार स्त्रीसमेत आ मिलेगा. यों कह प्रद्युम्ननाम धर ज्योतिषी तो दक्षिणा ले ले बिदा हुए; और वसुदेवजीके घरमें रीति भांति और मंगलाचार होने लगे. आगे श्रीनारदमुनिजीने आय उसी समय समझाय शंबरसे कहा कि, तू किस नींदमें सोता है तुझे चेत है नहीं? वह बोला कि, क्या? उन्होंने कहा, तेरा बैरी कामका अवतार प्रद्युम्न नाम श्रीकृष्णचंद्रके घरमें जन्म ले चुका. राजा! नारदजी तो शंबरको यों चिताय चले गये, और शंबरने शोच विचारकर मनहीं मनमें यह उपाय ठहराया कि, पवनरूप हो वहां जाय उसे हरलाऊं, और समुद्रमें बहाउं तो मेरे मनकी चिंता मिटै और निर्भय हो रहूं. यह बिचार कर शंबर वहांसे उठ अलक्ष्य हो चला चला श्रीकृष्णके मंदिरमें आया, कि जहां रुक्मिणीजी अंतरमें हाथसों दबाये छातीसे लगाये बालकको दूध पिलातींथीं, और आप चुपचाप दृष्टि लगाय खड़ा रहा, ज्यों बालकपरसे रुक्मिणीजीका हाथ अलग हुआ त्यों असुर अपनी माया फैलाय उसे उठाय ऐसे ले आया कि, जितनी स्त्रियां वहां बैठींथीं तिनमेंसे किसीने न देखा न जाना कि कौन किस रूपसे आय क्योंकर उठाय लेगया, बालकको आगे न देख रुक्मिणीजी अति घबराई; और रोने लगीं. उनके रोनेका शब्द सुन सब यदुवंशी क्या स्त्री क्या पुरुष घर आए और अनेक२प्रकारकी बातें कह कह चिंता करने लगे. इसबीच नारदमुनिजी आय सबको समझाय कर कहा कि, तुम बालकके जानेकी कुछ भावना मतकरो, उसे किसी बातका डर नहीं. वह कहीं जाय पर उसे काल न व्यापेगा; और बाल[illegible] व्यतीत कर एक सुंदरी नारी साथले तुम्हें आय मिलेगा. महारा[illegible] ऐसे सब यदुवंशियोंको भेद बताय समझाय बुझाय नारदमुनि

बिदा हुए तब वेभी शोच समझ संतोष कररहीं. अब आगे कथा सुनिये कि ---शंबर जो प्रद्युम्नको लेगयाथा, इसने उन्हें समुद्रमें डालदिया, वहा एक मछली इन्हें निगल गयी, उस मछलीको एक और बड़ी मछली निगलगई इसमें एक मछुयेने जाय समुद्रमें जो जाल फेंका तो वह मीन जालमें आई. धीमर जाल खेंच उस मत्स्यको देख अति प्रसन्न होले अपने आया. निदान वह मछली उसने जा राजा शंबरको भेंट दी, राजाने ले अपने रसोंईघरमें भेजदी, रसोंई करनेवालीने जो उस मछलीको चीरा तो उसमेंसे एक और मछली निकली. उसका पेट फाड़ा तो एक लड़का श्यामवर्ण अतिसुंदर उसमेंसे निकला. उसने देखतेही अति अचरज किया; और वह लड़का ले जाय रतिको दिया. उसने महाप्रसन्न हो लेलिया. यह बात शंबरने सुनी तो रतिको बुलायके कहा—कि, इस लड़केको भली भांतिसे यत्न कर पाल. इतनी बात राजाकी सुन रति उस लड़केको ले निजमंदिरमें आई. उसकाल नारदजीने रतिसे कहा

चौ०-अवतूयाहिपालचितलाय, तोपतिप्रदुमनप्रकट्यो आय॥शंबरमार तोहिं लै जैहै, बालरूपन या ठौर बितै है ॥

इतना भेद बताय नारदमुनि चले गये और रति अतिहितसे चित्त लगाय पालने लगी. ज्यों ज्यों वह बालक बढ़ताथा, त्यों त्यों पतिके मिलनेका चाव होताथा, कभी वह उसका रूप पेख प्रेम करके हियेसे लगातीथी. कभी दृग मुख कपोल चूम आपही बिँहस उसको गले लगती; और यों, कहती थी कि—

चौ०-ऐसे प्रभु संयोग बनायो, मछरीमाहिं कंत मैं पायो

और महाराज !

दो०-प्रेमसहित पय ल्यायकै, हितसों प्यावत ताहि ॥
हलरावत गुण गायकै, कहत कंत चितचाहि ॥

आगे जब प्रद्युम्नजी पाच वर्षके हुए तब रति अनेक अनेक भांतिके वस्त्र आभूषण पहनाय पहनाय अपने मनके साथ पूजा करनेलगी और नयनोंको सुख देने. उसकाल वह बालक जो रतिका अंचल

पकड़ पकड़ मा कहने लगा तो वह हँस कर बोली—हे कंत ! तुम यह क्या कहते हो ? मैं तुम्हारी नारी तुम देखो अपने हिये बिचार. मुझे पार्वतीजीने यह कहा था कि, तुम शंबरके घरमें जायके रहो, तेरा पति श्रीकृष्णके घरमें जन्म लेगा. सो मछलीके पेटमें हो तेरे पास आवेगा. और नारदजी भी कह गये थे कि, तू उदास मत हो तेरा स्वामी तुझे आय मिलेगा. तभीसे मैं तुम्हारे मिलनेकी आश किये यहां बास कर रही हूं. तुम्हारे आनेसे मेरी आश पूरी भई. ऐसे कह रतिने फिर पतिको धनुषबिद्या सब पढ़ाई. जब वे धनुषविद्यामें निपुण हुए तब, एक दिन रतिने कहा कि, स्वामी! अब यहां रहना उचित नहीं, क्योंकि तुम्हारी माता श्रीरुक्मिणीजी तुम बिन ऐसे दुःख पाय अकुलाती हैं जैसे बच्छ बिन गाय. इससे अब उचित यह है, कि असुर शंबरको मार मुझे संग ले द्वारकामें चल मातापिताको दर्शन दीजें; और उन्हें सुख दीजे. जो आपके देखनेकी लालसा किये हुए हैं, श्रीशुकदेवजी यह प्रसंग सुनाय राजासे कहने लगे, कि महाराज! इसी रीतसे रतिकी बातें सुनते सुनते प्रद्युम्नजी जब सयाने हुए, तब एकदिन खेलते खेलते राजा शंबरके पास गये वह इन्हें देखतेही अपनेही लड़केके समान लाड़ कर बोला कि, इस बालकको मैंने अपना लड़का कर पाला है. इतनी बातके सुनतेही प्रद्युम्नजीने अति क्रोधकर कहा कि, मैं बालक हूं बैरी तेरा, अब तू लड़कर देख बल मेरा. यों सुनाय ताल ठोंक सन्मुख हुआ. तब हँसकर शंबर कहने लगा कि, भाई! यह मेरेलिये दूसरा प्रद्युम्न कहांसे आया? क्या दूध पिलाय मैंने सर्प बढ़ाया? जो ऐसी बातें करता है. इतना कह फिर बोला, अरे बेटा! तू क्यों कहता है ये बैन; क्या तुझे यमदूत आये हैं लैन? महाराज! इतनी बात शंबरके मुखसे सुनतेही वह बोला प्रद्युम्न मेराही है नाम, मुझसे आज तू कर संग्राम. तैंने तो मुझे सागरमें बहाया, पर अब कौन किसका बेटा! और कौन किसका बाप ? मैं अपना बैर लेने फिर आया, तूने अपने घरमें अपना काल बढ़ाया.

दोहा—सुन शंबर आयुध गहे, बढ़यो क्रोध मनभाव ॥
मनहु सर्पकी पूंछपर, पड़यो अँधेरे पाँव ॥

आगे शंबर अपना दल मँगवाय प्रद्युम्नको बाहर ले आय क्रोधकर गदा उठाय मेघकी भांति गर्जकर बोला, देखूं अब तुझे कालसे कौन बचाता है? इतना कह जो उसने दपटके गदा चलाइ तो प्रद्युम्नजीने सहजही काट गिराई. फिर उसने रिसाय कर अग्निबाण चलाए, इन्होंने जलबाण छोड़ बुझाय गिराए, तब तो शंबरने महाक्रोध कर जितने आयुध उसके पास थे वे सब चलाये, और इन्होंने काट काट गिराये, जब कोई आयुध इसके पास न रहा, तब क्रोधकर धाय प्रद्युम्नजी जाय लिपटे, और दोनोंसे मल्लयुद्ध होने लगा, कितनी एक बेर पीछे ये उसे आकाशको ले उड़े वहां जाय खड्गसे उसका शिर काट गिराय दिया और फिर आय असुरदलका वध किया; शंबरको मरा देख रतिने सुख पाया. और उसी समय एक विमान स्वर्गसे आया उसपर रति और उसका पति प्रद्युम्न दोनो चढ़ बैठे और द्वारकाको चले, ऐसे कि जैसे दामिनीसमेत सुंदर मेघ जाता है और चले चले वहां पहुँचे कि, जहां कंचनके मंदिर ऊंचे सुमेरुसे जगमगाय रहेथे, विमानसे उतर अचानक दोनों रनवासमें गये. उन्हे देख सब सुंदरी चौंक उठीं; और यों समझीं कि, श्रीकृष्ण एक सुंदरी नारी संग ले आये हैं [illegible] रहीं. पर यह भेद किसीने न जाना कि प्रद्युम्न है [illegible] हतीं थीं. इसमें जब प्रद्युम्नजीने कहा, कि हमारे माता [illegible] रुक्मिणीजी अपनी सखियोंसे कहने लगीं कि, हे [illegible]! यह [illegible]रिका [illegible]र कौन है? वे बोलीं हमारी समझमें तो [illegible]सा आत[illegible] कि हो न हो यह श्रीकृष्णजीका पुत्र है. इतनी [illegible]क सुनतेही रुक्मिणीजीकी छातीसे दूधकी धार [illegible] निकली; और [illegible] बाँह फड़कने लगी व मिलनेको मन घबराया पर बिन पतिकी आज्ञा मिल न सकी. उसकाल वहां नारदजी आय पूर्वकथा कह सबके मनका संदेह मिटा गये. तब तो रुक्मिणीजीने दौड़कर पुत्रका शिर चूम उसे छातीसे लगाया और रीतिभांतिसे व्याहकर बेटे बहूको घरमें लिया. उस समय क्या स्त्री क्या पुरुष सब यदुवंशियोंने आय मंगलाचार कर अति आनंद किया, घर घर बधाई बाजने लगी, और सारी द्वारकापुरीमें सुख छाय गया. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने

राजा परीक्षितसे कहा. महाराज! ऐसे प्रद्युम्नजी जन्म ले बालक पन बिताय रिपुको मार रतिको ले द्वारकापुरीमें आये. तब घर घर मंगल आनंद हुए बधाये. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे प्रद्युम्नजन्म शंबरवधो नाम षट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

अध्याय ५७.

सत्राजितका श्रीकृष्णको स्यमंतमणिकी चोरी लगाना, पीछे झूंठ समझ अपनी कन्या सत्यभामाका श्रीकृष्णके संग विवाह करना.

श्रीशुकदेवमुनि बोले कि, महाराज! सत्राजितने पहले तो श्रीकृष्णचंद्रको मणिकी चोरी लगाई, पीछे झूंठ समझ लज्जित हो उसने अपनी कन्या सत्यभामा हरिको ब्याह दी. यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूछा कि, कृपानिधान! सत्राजित कौन था? मणि उसने कहां पाई? और कैसे हरिको चोरी लगाई, फिर क्योंकर झूंठ समझ कन्या ब्याह दी, यह तुम मुझे बुझायके कहो. श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! सुनिये; मैं सब समझाकर कहता हूं. सत्राजित एक यादव था. तिसने बहुत दिनतक सूर्यकी अतिकठिन तपस्या की, तब सूर्यदेवताने प्रसन्न हो उसे निकट बुलाय मणि देकर कहा, कि स्यमंतकमणि इस मणिका नाम, इसमें है सुख संपत्तिका विश्राम. सदा इसे मानियो, और बल तेजमें मेरे समान जानियो, जो तू इसे जप तप संयम व्रत कर ध्यावेगा, तो इससे मुँह मागा फल पावेगा. जिस देश नगर घरमें यह जावेगा, वहां दुःख दरिद्र कालभी न आवेगा, सर्वदा सुकाल रहेगा और ऋद्धि सिद्धिभी रहेगी. महाराज! ऐसे कह

सूर्यदेवताने सत्राजितको बिदा किया. वह मणि ले अपने घर आया. आगे प्रातही उठ वह प्रातःस्नान कर संध्यातर्पणसे निश्चिंत हो नित्य चंदन, अक्षत, पुष्प, धूप,दीप, नैवेद्यसहित मणिकी पूजा किया करे और उस मणिसे जो आठ भार सोना निकले सो ले और प्रसन्न रहे. एक दिन पूजा करते करते सत्राजितने मणिकी शोभा और कांति देख निजमनमें विचारा कि, यह मणि श्रीकृष्णचंद्रजीको लेजाकर दिखाइये तो भला. यों विचार मणि कंठमें बांध सत्राजित यदुवंशियोंकी सभामें चला. मणिका प्रकाश दूरसे देख यदुवंशी खड़े हो श्रीकृष्णचंद्रजीसे कहने लगे कि, महाराज ! तुम्हारे दर्शनकी अभिलाषा किये सूर्य चला आता है. तुमको ब्रह्मा रुद्र इंद्रादि सब देवता ध्यावते हैं और आठ प्रहर ध्यान धर तुम्हारा यश गावते हैं. तुम हो आदिपुरुष अविनाशी, तुम्हें नित सेवती कमला भई दासी

चौ०-तुमहो सब देवनके देव,कोई नहीं जानत तुम्हारो भेव
तुम्हरेगुण अरुचरित अपार, क्यों प्रभुछिपौ आयसंसार ॥

महाराज! जब सत्राजितको आता देख सब यदुवंशी यों कहने लगे तब हरि बोले, कि यह सूर्य नहीं सत्राजित यादव है. इसने सूर्यकी तपस्या कर एक मणि पाई है; उसका प्रकाश सूर्यकी समान है. वही मणि बाधे चला आता है. महाराज! इतनी बात जबतक श्रीकृष्णजी कहैं तबतक वह आय सभामें बैठा; जहा यादव पंसासार खेल रहेथे. मणिकी काति देख सबका मन मोहित हुआ, और श्रीकृष्णचंद्र भी देख रहे तब सत्राजित कुछ मनहीं मन समझ उस समय बिदा हो अपने घर गया; आगे वह मणि गलेमें बांध नित आवे. एकदिन सब यदुवंशियोंने हरिसे कहा, कि—महाराज! सत्राजितसे मणि ले राजा उग्रसेनको दीजै; और जगतमें यश लीजै! यह मणि इसे नहीं फबती; यह राजाके योग्य है. इस बातके सुनतेही श्रीकृष्णजीने हँसते हँसते सत्राजितसे कहा, कि यह मणि राजाजीको दो; और संसारमें यश बढ़ाई लो. देनेका नाम सुनतेही वह प्रणाम कर चुपचाप वहांसे उठ शोच विचार करता. अपने भाईके पास जा बोला; कि आज श्रीकृष्णजी-

ने मुझसे मणि मागी. और मैंने न दी: इतनी बात जो सत्राजितके मुँहसे निकली तो क्रोधकर उसके भाई प्रसेनने वह मणि ले अपने गलेमें डाली और शस्त्र लगाय घोड़ेपर चढ़ अहेरको निकला. महावनमें जाय धनुष चढ़ाय लगा साबर, चितले, पाढ़े और मृग मारने. इसमें एक हरिण जो उसके आगेसे झपटा, तो इसनेभी खिझलायके उसके पीछे घोड़ा दपटा; और चला चला अकेला कहां पहुँचा कि जहा युगानुयुगकी एक बड़ी अंधी गुफा थी. मृग और घोड़ेके पांवका आहट पाय उसमेंसे एक सिंह निकला,वह इन तीनोंको मार मणिले उस गुफामें बढ़गया. मणिके जातेही उस महाअंधेरी गुफामें ऐसा प्रकाश हुआ कि पातालतक चांदना होगया, वहां जाम्बवंत नाम रीछ जो रामचंद्रके साथ रामावतारमें था, सो त्रेतायुगसे तहां कुटुंबसमेत रहताथा,गुफामें उजाला देख उठधाया,और चला चला सिंहके पास आया. फिर वह सिंहको मार मणि ले अपनी स्त्रीके निकट गया, उसने मणि ले अपनी पुत्रीके पालनेमें बांधी, वह उसे देख नित हँस हँस खेला करे; और सारे स्थानमें आठ प्रहर प्रकाश रहै. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! मणि यों गई और प्रसेनकी यह गति भई, तब प्रसेनके साथ जो लोग गयेथे तिन्होंने आ सत्राजितसे कहा कि महाराज!

चौ०-हमकोत्याग अकेलोधायो,जहांगयोतहँखोजनपायो
कहत न बने ढूंढ़ फिर आए, कहूं प्रसेन न वनमें पाए

इतनी बातके सुनतेही सत्राजितने खाना पीना छोंड़ अतिउदास हो चिंता कर मनहीमन कहने लगा कि; यह बात श्रीकृष्णकी है, जो मेरे भाईको मणिके लिये मार मणिले घरमें आय बैठा है, पहले मुझसे मांगताथा मैंने न दी, अब उसने यों ली, ऐसा वह मनहींमन कहै, और रातदिन महाचिंतामें रहै; एकदिन वह रात्रिसमय स्त्रीके पास सेजपर तनछीन मन मलीन मत्थमारे बैठा मनही मन कुछ शोच विचार करताथा कि उसकी नारीने—

चौ०-कहा कंत मन शोचत रहो,मोसों भेद आपनो कहो॥

सत्राजित बोला कि, स्त्रीसे कठिन बातका भेद कहना उचित नहीं; क्योंकि उसके पेटमें बात नहीं रहती. जो घरमें सुनती है सो बाहर प्रकाश कर देती है. यह अज्ञान, इसे किसी बातका ज्ञान नहीं, भला हो के बुरा. इतनी बातके सुनतेही सत्राजितकी स्त्री खिझलाकर बोली, कि मैंने कब कोई बात घरमें सुन बाहर कही है जो तुम कहते हो, सब नारी क्या समान होतीं हैं यों सुनाय फिर उसने कहा कि, जबतक तुम अपने मनकी बात मेरे आगे न कहोगे तबतक मैं अन्नपानी भी न खाऊंगी. यह वचन नारीसे सुन सत्राजित बोला कि झूठ सचकी तो भगवान् जाने पर मेरे मनमें एक बात आई है सो मैं तेरे आगे कहताहूं, परंतु किसीके सोहीं मत कहियो, उसकी स्त्री बोली अच्छा मैं न कहूंगी; सत्राजित कहने लगा कि, एक दिन श्रीकृष्णजीने मुझसे मणि मांगी, और मैंने न दी, इससे मेरे जीमें आता है कि, उसीने मेरेभाईको बनमें जाय मारा और मणि ली. यह उसका काम है, दूसरेकी सामर्थ्य नहीं जो ऐसा कामकरे.

इतनी कथा कह श्री[illegible]कदेवजी बोले कि महाराज! इस बातके सुनतेही उसको रातभर [illegible] न आई, और सात पांचकर रैनि गँवाई, भोर होतेही उसने जा सखी सहेली और दासियोंसे कहा कि, श्रीकृष्णजीने प्रसेनको मारा और मणि ली. यह बात रात मैंने अपने कंतके मुखसे सुनी है, परंतु तुम किसीके आगे मत कहियो. वे वहांसे तो भला कह चुपचाप चली आई पर अचरजकर एकांत बैठ आपसमें चर्चा करने लगीं, निदान एक दासीने यह बात श्रीकृष्णचंद्रके रनवासमें जा सुनाई सुनतेही सबके जीमें आया, कि जो सत्राजितकी स्त्रीने यह बात कही है सो झूठ न होगी, ऐसे समझ उदास हो सब रनवास श्रीकृष्णको बुरा कहने लगा, इसबीच किसीने आय श्रीकृष्णचंद्रसे कहा कि महाराज! तुम्हें प्रसेनको मारने और मणिके लेनेका कलंक लग चुका, तुम क्या बैठे करतेहो? कुछ इसका उपाय करो.

इतनी बात सुनतेही श्रीकृष्णजी पहले तो घबराए. पीछे कुछ शोच समझ वहां आए. जहां उग्रसेन वसुदेव और बलराम सभामें बैठेथे, और बोले कि, महाराज! हमे सब लोग यह कलंक लगाते हैं कि,

कृष्णने प्रसेनको मार मणि लेली, इससे आपकी आज्ञा ले प्रसेन और मणिके ढूंढ़नेको जाते हैं. जिससे यह अपयश छूटै. यों कह श्रीकृष्णजी वहांसे आय कितनेएक यदुवंशियों और प्रसेनके साथियोंको साथ ले बनको चले. कितने एक दूर जाय देखें तो घोड़ोंके चरणचिह्न दृष्टि पड़े, उन्हीको देखते वहां जाय पहुँचे जहां सिंहने तुरंगसमेत प्रसेनको मार खायाथा. दोनोंकी लोथ और सिंहके पाओंका चिन्ह देख सबोंने जाना कि उसे सिंहने मार खाया. यह समझ मणि न पाय श्रीकृष्णचंद्र सबको साथ लिये लिये वहां गये, जहां वह औंड़ी अँधेरी महाभयावनी गुफाथी उस्के द्वारपर देखते क्या हैं, कि सिंह मरा पड़ा है पर मणि वहांभी नहीं, ऐसा अचरज देख सब श्रीकृष्णचंद्रसे कहने लगे कि, महाराज! इस बनमें ऐसा बली जंतु आया जो सिंहको मार मणि ले गुफामें पैठा अब इसका कुछ उपाय नहीं. जहांतक ढूंढ़नेका धर्म था तहांतक आपने ढूंढा, तुम्हारा कलंक छूटा, अब नाहरके शिर अपयश पड़ा. श्रीकृष्ण-जी बोले चलो इस गुफामें धँसके देखे कि नाहरको मार मणि कौन लेगया? वे सब बोले कि महाराज! जिस गुफाका मुख देखे हमें डर लगता है उसमें धँसेंगे कैसे. बरन हम तुमसेभी बिनती कर कहते हैं कि इस महाभयावनी गुफामें आपभी न जाईये, अब घरको पधारिये; हम सब मिल नगरमें जाय कहेंगे कि प्रसेनको मार सिंहने मणि ली और सिंहको मार कोई जंतु एक अतिडरावनी औंड़ी गुफामें गया. यह हम सब अपनी आखोंसे देख आए. श्रीकृष्णचंद्रजी बोले मेरा मन मणिमें लगा है, मैं अकेला गुफामें जाताहूं दशदिन पीछे आऊंगा. तुम दश दिनतक यहां रहियो. इसमें बिलंब होय तो घर जाय संदेशा कहियो. महाराज! इतनी बात कह हरि उस अंधेरी भयावनी गुफामें पैठे और चले चले वहां पहुँचे जहां जाम्बवंत सोताथा और इसकी स्त्री अपनी लड़कीको खड़ी पालनेंमे झुल तीथी, वह प्रभुको देख भय खाय पुकारी और जाम्बवंत जागा, तो धाय हरिसे लिपटा; और मल्लयुद्ध करने लगा. जब उसका कोई दाँव और बल हरिपर न चला तब मनही मन बिचार कर कहने लगा कि मेरे बलके तो हैं लक्ष्मण राम, और

इस संसारमें ऐसा बली कौन है जो मुझसे करै संग्राम. महाराज ! जाम्बवंत मनहीमन ज्ञानसे यों बिचार फेर प्रभुका ध्यानकर बोला—

चौ०ठाढ़ोभयोजोरकै हाथ, बोल्यो दरश देहुरघुनाथ ।
अंतर्यामी मैं तुमजाने, लीला देखतही पहिंचाने ॥
भली करी लीन्हो अवतार, करिहौ दूरि भूमिको भार ।
त्रेता युगते इहि ठां रह्यो, नारद भेद तुम्हारो कह्यो ॥
मणिके काजे प्रभु इत ऐहैं, तबहीं तोको दर्शन दैहैं ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि हे राजा ! जिस समय जाम्बवंतने प्रभुको जान यों बखान किया [illegible] श्रीमुरारि भक्तहितकारीने जाम्बवंतकी लग्न देख [illegible] रामका वेष कर धनुष बाण धर दर्शन दिया. तब जाम्बवंतने सा[illegible] प्रणाम कर खड़े हो हाथ जोड़ अतिदीनतासे कहा, कि हे कृपा[illegible] दीनबंधु ! जो आपकी आज्ञा पाऊं तो अपना मनोरथ कह सुना[illegible] प्रभु बोले अच्छा,कह. तब जांबवंतने कहा कि, हे पतितपावन [illegible]नाथ! मेरे चित्तमें यों है कि यह कन्या जाम्बवंती आपको ब्याह [illegible] और जगतमें यश बड़ाई लूं. भगवानने कहा जो तेरी इच्छामें [illegible] आया तो हमेभी प्रमाण है. इतना बचन प्रभुके मुखसे निक[illegible] जाम्बवंतने पहले तो श्रीकृष्णकी चंदन, अक्षत, धूप, दीप, नै[illegible] ले पूजा की. पीछे बेदकी बिधिसे अपनी बेटी ब्याह दी और उस[illegible] यौतुकमें वह मणिभी धरदी.

इतनी कथा [illegible] श्रीशुकदेवमुनि बोले कि हे राजा! श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद तो म[illegible]मेत जाम्बवंतीको ले गुफासे चले. यों और जो यादव गुफासे मुँहपर [illegible] और श्रीकृष्णके साथी खड़े थे, अब तिनकी कथा सुनिये. गुफाके [illegible]हर उन्हें जब अट्ठाइस दिन बीते और हरि न आये तब वे वहांसे [illegible]श हो अनेक अनेक प्रकारकी चिंता करते और रोते पीटते द्वाका[illegible] आए,ये समाचार पाय सब यदुवंशी निपट घबराये; और श्रीकृष्णका [illegible] लेले महाशोक कर रोने पीटने लगे और सारे रनवासमें कुहरा [illegible]या. निदान सब रानियां अति व्याकुल हो तनछीन म-

नमलीन रजामंदिरसे निकल रोतीं पीटतीं वहां आईं जहां नगरके बाहर एक कोसपर देवीका मंदिर था. पूजाकर गौरीको मनाय हाथ जोड़ शिर नाय कहने लगीं, हे देवि! तुझे सुर, नर, मुनि, सब ध्यावते हैं; और तुझसे जो वर मांगे हैं सो पावे हैं; तू भूत भविष्य वर्तमानकी सब बात जानती है, कह श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद कब आवेंगे? महाराज! सब रानियां तो देवीके द्वार धरना दे यों मनाय रहींथीं. और उग्रसेन बलदेव आदि सब यादव महाचिंतामें बैठेथे, कि इसबीच श्रीकृष्णचंद्र अविनाशी द्वारकाबासी हँसते हँसते जाम्बवंतीको लिये आय राजसभामें खड़े हुए, प्रभुका मुखचंद्र देख सबको आनंद हुआ, और यह शुभ समाचार पाय सब रानियांभी देवीपूजा कर आईं और मंगलाचार करने लगीं. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! श्रीकृष्णजीने सभामें बैठतेही सत्राजितको बुलाभेजा; और वह मणि देकर, कहा कि यह मणि हमने न लीथी तुमने झुंठ मूठ हमको कलंक दियाथा.

चौ०–यहमणिजाम्बवंतहीलीनी, सुतासमेतमोहितिन दीनी ॥ मणिलेतबहिंचल्योशिरनाय, सत्राजित मन शोचत जाय ॥ हरिअपराध कियो मैं भारी, अनजाने दीनी कुलगारी ॥ यादवपतिहिं कलंक लगायो ॥ मणिके काजे बैर बढ़ायो ॥ अब यह दोष कटे सो कीजे ॥ सतिभामा मणि कृष्णहिं दीजे ॥

महाराज! ऐसे मनहींमन शोच विचार करता मणि लिये मनमारे सत्राजित अपने घर गया; और उसने सब अपने जीका विचार स्त्रीसे कह सुनाया. उसकी स्त्री बोली स्वामी! यह बात तुमने अच्छी बिचारी, सत्यभामा श्रीकृष्णको दीजे, और जगतमें यश लीजे. इतनी बातके सुनतेही सत्राजितने एक ब्राह्मणको बुलाय शुभ लग्न मुहूर्त ठहराय रोरी, अक्षत, रुपिया, नारियल, एक थालीमें धर पुरोहितके हाथ श्रीकृष्णचंद्रके यहां टीका भेजदिया. श्रीकृष्णजी बड़ी धूम धामसे मौर बांध ब्याहन आये. तब सत्राजितने सब रीतिभाँतिकर वेदकी विधिसे कन्यादान

किया; और बहुतसा धन दे यौतुकमें उस मणिकोभी धरदिया. मणिको देखतेही श्रीकृष्णजीने उसमेंसे निकाल बाहार किया और कहा कि यह मणि हमारे किसी कामकी नहीं, क्यों कि तुमने सूर्यकी तपस्या कर पाई, हमारे कुलमें श्रीभगवान् छुँड़ाय और देवताकी दी वस्तु नहीं लेते. यह तुम अपने घरमें रक्खो. महाराज! श्रीकृष्णचंद्रजीके मुखसे इतनी बात निकलतेही सत्राजित मणि ले लजाय रहा, और श्रीकृष्णजी सत्यभामाको ले बाजेसे निजधाम पधारे और आनंदसे सत्यभामासमेत राजमंदिमें जा विराजे. इतनी कथा सुनाय राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूंछा कि, कृपानिधान! श्रीकृष्णको कलंक क्यों लगा ? सो कृपाकर कहो. शुकदेव बोले—

दो०—चांद चौथिको देखिये, मोहन भादौंमास ॥
तातें लग्यो कलंक यह, अति मन भयो उदास ॥

और सुनो.

दो०—जों भादोंकी चौथिको, चांद निहारे कोय ॥
यह प्रसंग श्रवणनि सुने, ताहि कलंक न होय ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे जाम्बवतीसत्यभामाविवाहवर्णनं नाम सप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

अध्याय ५८.

शतधन्वाका सत्राजितको मार अक्रूरको मणि दे भागना और श्रीकृष्णके हाथसे उसका वध.
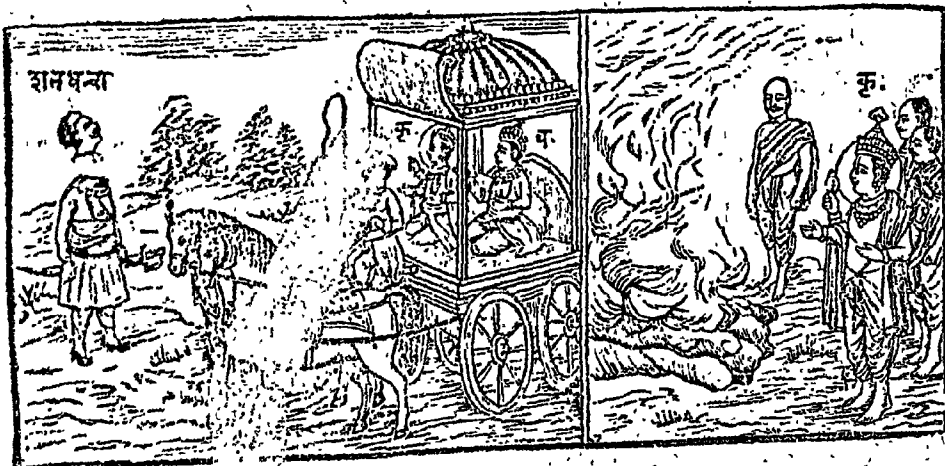
श्रीशुकदेवजी [illegible]ले, कि महाराज! मणिके लिये जैसे शतधन्वा

सत्राजितको मार मणि ले अक्रूरको दे द्वारका छोड़ भागा तैसे मैं सब कथा कहताहूं तुम चित्त दे सुनो. एकदिन हस्तिनापुरसे आय किसीने बलराम सुखधाम और श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदसे यह संदेशा कहा कि-

दो०पांडव न्योते अंधसुत, घरके बीच सुवाय ॥
अर्द्धरात्रि चहुँ ओरते, दीनी आग लगाय ॥

इतनी बातके सुनतेही दोनों भाई अतिदुःख पाय घबराय तत्काल दारुक सारथीसे अपना रथ मँगवाय तिसपर चढ़ हस्तिनापुरको गए और रथसे उतर कौरवोंकी सभामें जाय खड़े रहे. वहां देखते क्या हैं कि, सब तन छीन मन मलीन बैठे हैं. दुर्योधन मनहींमन कुछ शोचताहै, भीष्म नयनोंसे जल मोचता है, धृतराष्ट्र बड़ा दुःख करता है, द्रोणाचार्यकीभी आंखोंसे पानी चलता है,विदुरजीभी पछताते हैं, गांधारी उसके पास आय बैठी औरभी जो कौरवोंकी स्त्रियां थीं. सोभी पांडवोंकी सुधकर रोरहींथीं और सारी सभा शोकमय होरहीथी. महाराज! वहांकी यश दशा देख श्रीकृष्ण बलरामजीभी उसके पास जा बैठे. और इन्होंने पांडवोंका समाचार पूंछा, पर किसीने कुछ भेद न कहा. सब चुप होरहे.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि महाराज! श्रीकृष्ण बलरामजी तो पांडवोंके जलनेका समाचार पाय हस्तिनापुरको गये, और द्वारकामें शतधन्वा नाम एक यादव था, कि जिसने पहले सत्यभामा मांगी थी, तिसके यहां अक्रूर और कृतवर्मा मिलकर गये; और दोनोंने उससे कहा कि, हस्तिनापुरको गये श्रीकृष्ण बलराम, अब आय पड़ा है तेरा दाँव. सत्राजितसे तू अपना बैर ले,क्योंकि उसने तेरी बड़ी चूक की जो तेरी मांग श्रीकृष्णको दी, और तुझे गाली चढ़ाई, अब यहां उसका कोई नहीं है सहाई. इतनी बातके सुनतेही शतधन्वा अतिक्रोधकर उठा और रात्रिसमय सत्राजितके घर जा ललकारा, निदान छल बल कर उसे मार वह मणि ले आया, तब शतधन्वा अकेला घरमें बैठ कुछ शोच विचार कर मनहींमन पछताय कहने लगा.

चौ०मैं यह वैर कृष्णसोंकियो, मतोअक्रूरकेमन लियो
दो०कृतवर्मा अक्रूर मिलि, मतो दियो मोहिं आय ॥
साधक है जो कपटको, तासौं कहा बसाय ॥

महाराज! इधर शतधन्वा तो इस भांति अछताय पछताय बार बार कहताथा कि होनहारसे कुछ न बसाय; कर्मकी गति किसीसे जानी न जाय. और उधर सत्राजितको मरा निहार, उसकी नारी रो रो कंत! कंत! कर उठी पुकार. इसके रोनेकी ध्वनि सुन सब कुटुंबके लोग क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक अनेक भांतिकी बातें कह कह रोने पीटने लगे और सारे घरमें कुहराट पड़गया. पिताका मरना सुन उसी समय सत्यभामाजी आय सबको समझाय बापकी लोथ तेलमें डलवाय अपना रथ मँगवाय तिसपर चढ़ श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके पास चलीं, और रात्र दिनके बीच जा पहुँचीं.

चौ०देखतही उठबोले हरी, घरहै कुशल क्षेम सुंदरी ॥
सतिभामाकहहिजोरेहाथ,तुमबिनकुशलकहां यदुनाथ ॥
हमहिंविपतशतधन्वादई, मेरो पिताहत्योमणिलई ॥
धरे तेलमें ससुर तिहारे, करौ दूर सब शूल हमारे ॥

इतनी बात कह सत्यभामाजी श्रीकृष्ण बलदेवजीके सोंही खड़ीं हो हायपिता! हायपिता! कर हायमार रोने लगीं. उनका रोना सुन श्रीकृष्ण बलरामजीनेभी पहले तो अति उदास हो शोककर लोकरीति दिखाई; पीछे सत्यभामाको आशा भरोसा दे ढाढस बँधाय वहांसे साथले द्वारकामें आए. श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! द्वारकामें आतेही श्रीकृष्णचंद्रने सत्यभामाको महादुःखी देख प्रतिज्ञा कर कहा कि, सुंदरि! तुम अपने मनमें धीरज धरो. और किसी बातकी चिंता मत करो. जो होना था सो हुवा, पर अब मैं शतधन्वाको मार तुम्हारे पिताका बैरं लूंगा, तब मैं और काम करूंगा.

महाराज! रामकृष्णके आतेही शतधन्वा अतिभय खाय घर छोंड़ मनहींमन यह कहताथा, कि पराए कहे मैंने श्रीकृष्णजीसे बैर किया

अब शरण किसकी लूं ? कृतवर्माके पास आया; और हाथ जोड़ अतिविनती कर बोला, कि महाराज! आपके कहेसे मैंने किया यह काम, मुझपर कोपे हैं श्रीकृष्ण और बलराम. इससे मैं भागकर तुम्हारी शरण आयाहूं मुझे कहीं रहनेको ठौंर बताइये. शतधन्वासे यह बात सुन कृतवर्मा बोला, कि सुनो हमसे कुछ नहीं होसक्ता. जिसका बैर श्रीकृष्णचंद्रसे भया, सो नर सबहीसे गया. तू क्या नहीं जानताथा? कि हैं अतिबली मुरारी, तिनसे बैर किये होगी हार हमारी. किसीके कहेसे क्या हुआ, अपना बलविचार काम क्यों न किया ? संसारकी रीति है कि बैर, व्याह और प्रीति समानहीसे कीजे. तू हमारा भरोसा मत रख, हम श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके सेवक हैं. उनसे बैर करना हमें नहीं शोभता. जहां तेरे सींग समायँ तहां जा. महाराज! इतनी बात सुन शतधन्वा निपट उदास हो वहांसे चल अक्रूरके पास आया और हाथ बाँध शिर नाय बिनती कर हाहाखाय कहने लगा कि—

चौ०-प्रभुतुमहोयादवपतिईश, तुम्हेनवावतहैंसबशीश
साधुदयालुधर्मतुमधीर, दुखसहआपहरतपरपीर ॥
बचनकहेकीलाजहैतुमें, अपनीशरणरखोतुमहमें ॥

मैंने तुम्हाराही कहा मान यह काम किया. अब तुमहीं कृष्णके हाथसे बचाओ. इतनी बातके सुनतेही अक्रूरजीने शतधन्वासे कहा, कि तू बड़ा मूर्ख है जो हमसे ऐसी बात कहता है, क्या तू नहीं जानता? कि श्रीकृष्णचंद्र सबके कर्ता दुःखहर्ता हैं, उनसे बैर कर संसारमें कब कोई रह सक्ता है? कहनेवालेका क्या बिगड़ा? अब तो [illegible] शिरपर आन पड़ी. कहा है, " सुर नर मुनिकी याही रीति, स्वा[illegible] [illegible]ाग करैं सब प्रीति " और जगतमें बहुत भांतिके लोग हैं सो [illegible] अनेक प्रकारकी बातें अपने स्वार्थकी कहते हैं इसमें मनुष्यको [illegible]त है, कि कहे पर न जाय, जो काम करे तिसमें पहले अपना भला [illegible] विचार ले पीछे उस काममें पांव दे. तूने बे समझ बूझकर किया [illegible] काम, अब तुझे कहीं जगतमें रहनेको नहीं है थाम. जिसने कृष्ण[illegible] बैर किया वह फिर न जिया, जहां भागके रहा तहां मारा गया. मु[illegible]रना नहीं

जो तेरा पक्ष करूं. संसारमें जी सबको प्यारा है. महाराज अक्रूरजीने जब शतधन्वाको यों रूखे सूखे बचन सुनाये, तो निराश हो जीनेकी आश छोड़ मणि अक्रूजीके पास रख रथपर चढ़ नगर छोड़ भागा; और उसके पीछे रथपर चढ़ श्रीकृष्ण बलरामजीभी उठ दौड़े और चलते चलते उन्होंने उसे सौ योजनपर जाय लिया, उनके रथकी आहट पाय शतधन्वा अतिघबराय रथसे उतर मिथिलापुरमें जा पड़ा. प्रभुने उसे देख क्रोधकर सुदर्शनचक्रको आज्ञा दी की तू अभी शतधन्वाका शिर काट. प्रभुकी आज्ञा पातेही सुदर्शनचक्रने उसका शिर जा काटा. तब श्रीकृष्णचंद्रने उसके पास जाय मणि ढूंढी पर न पाई. फिर उन्होंने बलदेवजीसे कहा, कि भाई! शतधन्वाको मारा और मणि न पाई. बलरामजी बोले कि, भाई! वह मणि किसी बड़े पुरुषने पाई, तिसने हमें लाय न दिखाई, वह मणि किसीके पास छिपनेकी नहीं. तुम देखियो निदान कहीं न कहीं प्रकटेगी. इतनी बात कह बलदेवजीने श्रीकृष्णचंद्रसे कहा, कि भाई! अब तुम तो द्वारकापुरीको सिधारो, और हम हमारे परमप्रिय विदेहराजको देखना चाहते हैं. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि महाराज! श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद तो शतधन्वाको मार द्वारका पुरीको पधारे और बलराम सुखधाम मिथिलापुरीमें जा पहुँचे. इनके पहुँचनेके समाचार पाय मिथिलापुरीका राजा उठधाया. आगे बढ़ भेंटकर भेंट दे प्रभुको गाजे बाजेसे पाटंबरके पांवड़े डालता निजमंदिरमें ले आया. सिंहासनपर बिठाय अनेक प्रकारसे पूजाकर भोजन करवाये. ऐसे राजा जनकसे मानित बलदेव दाऊ कितनेएकबरस वहई रहे इतनेहीकालमें धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्योधन गदायुद्ध सीखते भया आगे श्रीकृष्णजीके पहुँचनेके उपरांत कितने एक दिन पीछे बलरामजी

१ अहं विदेहमिच्छामि द्रष्टुं प्रियतमं मम ॥ स्कं० १० उ० अ० ५७ श्लो २४

२ ततोऽशिक्षद्गदां काले धार्तराष्ट्रः सुयोधनः ॥ स्कं० १० उत्तर० अध्याय ५७ श्लो० २६ इसके शिवाय भागवतविरुद्ध अयोध्याके राजा दुर्योधनने गदायुद्ध सीखा भागवतमें कुछ आधार नहीं ॥

श्री द्वारकानगरीमें आए. तो श्रीकृष्णजीने सब यादव साथ ले सत्राजितको तेलसे निकाल अग्निसंस्कार किया; और अपने हाथों दाह दिया. जब श्रीकृष्णजी क्रियाकर्मसे निश्चिंत हुये तब अक्रूर कृतवर्मा कुछ आपसमें शोच बिचारकर श्रीकृष्णजीके पास आय उन्हें एकांत ले जाय मणि दिखाय कर बोले कि, महाराज ! यादव सबही मूरख भये, और मायामें मोह गये. तुम्हारा सुमिरन ध्यान छोड़ धनांध हो रहेहैं. जो ये अब कुछ कष्ट पावें, तो प्रभुकी सेवामें आवें इसलिये हम नगर छोड़ मणि ले भागते हैं. जब हम इनसे आपका भजन सुमिरण करावेंगे तभी द्वारकापुरीमें आवेंगे. इतनी बात कह अक्रूर और कृतवर्मा सब कुटुंबसमेत आधीरातको श्रीकृष्णचंद्रके भेदसे द्वारकापुरीसे भागे ऐसे कि, किसीने न जाना कि किधर गये. भोर होतेही सारे नगरमें यह चर्चा फैली कि, न जानिये रातकी रातमें अक्रूर और कृतवर्मा कुटुंबसमेत किधर गये; और क्या हुए ? इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! इधर द्वारकापुरीमें नित घरघर यह चरचा होने लगी, और उधर अक्रूरजी प्रथम प्रयोगमें जाय मुंडन करवाय त्रिवेणी न्हाय बहुतसा दान पुण्य कर तहां हरिपैंड़ी बँधवाय गयाको गये. वहांभी फल्गूनदीके तीर बैठ शास्त्रकी रीतिसे श्राद्ध किया, और गयालियोंको जिमाय बहुतही दान दिया. पुनि गदाधरके दर्शन करके तहांसे चले काशीपुरीमें आये. इनके आनेका समाचार पाय इधर उधरके राजा सब आय आय भेंटकर भेंट धरने लगे, और ये वहां यज्ञ दान तप व्रत कर रहने लगे. इसमें कितने एक दिन बीच श्रीमुरारि भक्तहितकारीने अक्रूरजीका बुलाना जीमें ठान बलरामजीसे आनके कहा, कि भाई ! अब प्रजाको कुछ दुःख दीजै और अक्रूरजीको बुलवा लीजै, बलदेवजी बोले, महाराज ! जो आपकी इच्छामें आवे सो कीजै; और साधुओंको सुख दीजै. इतनी बात बलरामजीके मुखसे निकलतेही श्रीकृष्णचंद्रजीने ऐसा किया. कि द्वारकापुरीमें घर घर ताप, तिजारी, मिरगी, क्षयी, दाद, खाज, आधाशीशी; कोढ़, महाकोढ़, जलोदर, भगंदर, कठोदर, अतीसार, आंव, मरोड़ा, खांसी, शूल, अर्द्धांग, शीतांग, झोला, सन्निपात, आदि व्याधी

फैलगई. और चार महीने वर्षाभी नहीं हुई. तिससे सारे नगरकी नदी नाले सरोवर सूख गये, तृण अन्नभी कुछ न उपजा, नभचर, जलचर, थलचर, जीव, जंतु, पक्षी और ढोर व्याकुल हो, सूख २ मरने, और पुरवासी सारे भूखोके मारे त्राहि त्राहि करने; निदान सब नगरनिवासी महाव्याकुल हो घबराय श्रीकृष्णचंद्र दुःखनिकंदजीके पास आय और अति गिड़गिड़ाय अधिक आधीनता कर हाथ जोड़ शिर नाय कर कहने लगे कि–

चौ०–हम तो शरणतिहारी रहैं, कष्ट महाअबक्योंकरसहैं
मेघ न बरष्यो पीडा भई, कहा बिधाताने यह ठई ॥

इतना कह फिर कहने लगे कि, हे द्वारकानाथ ! दिनदयालु ! हमारे तो कर्ता दुःखहर्ता तुम्ही हो, तुम्हें छोंड़ कहां जांय ? और किससे कहैं ? यह उपाधें बैठे बिठायेमें वहांसे आंई ? और क्यों हुई ? सो कृपाकर कहिये.

श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि महाराज ! इतनी बातके सुनतेही श्रीकृष्णचंद्रजीने उनसे कहा, कि सुनो, जिस पुरसे साधुजन निकल जातेहैं तहां आपसे आप आपत्काल दरिद्र दुःख आता है जबसे अक्रूरजी इस नगरसे गये हैं तभीसे यह गति हुई है. जहां रहते हैं साधु सत्यवादी और हरिदास, तहां होता है अनुभव अकाल-विपत्तिका नाश. इंद्र रखता हरिभक्तोंका स्नेह, इसलिये उस नगरमें भली भांति वर्षता है मेह. इतनी बातके सुनतेही सब यादव बोल उठे कि महाराज! आपने सत्य कहा यह बात हमारे भी जीमें आई. क्योंकि अक्रूरके पिताका नाम श्वफल्क है वेभी बड़े साधु सत्यवादी धर्मात्मा हैं. जहां वे रहते हैं तहा कभी दुःख दरिद्र और नहीं होता है अकाल, सदा समयपर मेह वर्षता है उससे होता है सुकाल. और सुनिये कि, एक समय काशीपुरीमें बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा. तहां काशीका राजा श्वफल्कको बुलाय लेगया. महाराज! श्वफल्कके जाते ही उस देशमें मेह मनमाना वर्षा समय हुआ और सबका दुःख गया, पुनि काशीपुरीके राजाने अपनी लड़की श्वफल्कको ब्याहदी

वेआनंदसे वहां रहने लगे; उस राजकन्याका नाम गांदिनी था· तिसीका पुत्र अक्रूर है, इतना कह सब यादव बोले कि, महाराज! हम तो यह बात आगेसे जानतेथे, अब जो आप आज्ञा कीजे सो करैं· श्रीकृष्णचंद्र बोले कि, अब तुम अति आदर मानकर अक्रूरजीको जहां पाओ· तहांसे ले आओ. यह बचन प्रभुके मुखसे निकलतेही सब यादव मिल मिल अक्रूरके ढूंढ़नेको निकले; और चले चले वाराणसीपुरीमें पहुँचे· अक्रूरजीसे भेंटकर भेंट दे हाथ जोड़ शिर नाय सन्मुख खड़े हो बोले—

चौ०चलोनाथबोलतबलश्याम; तुमबिनपुरवासीहैंबिराम॥
जितहीतुम तितहीसुखवास, तुमबिनकष्टदरिद्र निवास॥
यद्यपि पुरमें श्रीगोपाल, तऊ कष्टदै पऱ्यो अकाल॥
साधुनके बश श्रीपति रहैं, तिनते सब सुखसंपति लहैं॥

महाराज! इतनी बातके सुनतेही अक्रूरजी वहांसे अति आतुरहो कुटुंबसमेत कृतवर्माको साथ ले सब यदुवंशियोंको लिये बाजे गाजेसे चल खड़े हुये; और कितने एक दिनोंके बीच आ सबसमेत द्वारकापुरीमें पहुँचे· इनके आनेका समाचार पाय श्रीकृष्णजी और बलराम आगे बढ़ आय इन्हें अति मान सन्मानसे नगरमें लिवाय लेगये. हे राजा! अक्रूरजीको पुरीमें प्रवेश करतेही मेह वर्षा; और समय हुआ. सारे नगरका दुःख दरिद्र बहगया· अक्रूरकी महिमा हुई· सब द्वारकावासी आनंद मंगलसे रहनेलगे.

आगे एक दिन श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदने अक्रूरजीको निकटबुलाय एकांत लेजायके कहा कि तुमने सत्राजितकी मणि ले क्या की? वह बोला—महाराज! मेरे पास है· फिर प्रभुने कहा जिसकी वस्तु तिसको दीजै; और वह न होय तो उसके पुत्रको सौंपिये, पुत्र न होय तो उसके भाईको दीजै, भाई न होय तो उसके कुटुंबको सौंपिये. कुटुंबभी न होय तो उसके गुरुपुत्रको दीजै, गुरुपुत्र न होय तो ब्राह्मणको दीजिये· पर किसीका द्रव्य आप न लीजिये· यह न्याय है, इससे अब तुम्हें उचित है, कि सत्राजितकी मणि उसके नातिनको दो और जगतमें

बड़ाई लो. महाराज! श्रीकृष्णचंद्रके मुखसे इतनी बातके निकलतेही अक्रूरजीने मणि लाय प्रभुके आगे धर हाथ जोड़ अति बिनती कर कहा; कि दीनदयालु! यह मणि आप लीजिये और मेरा अपराध दूर कीजिये. इस मणिसे सोना निकला सो मैंने तीर्थयात्रामें उठाया है. प्रभु बोले अच्छा किया. यों कह मणि ले हरिने सत्यभामाको जा दिया. और उसके चित्तकी सब चिंता दूर की. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे शतधन्वावधो नाम अष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

अध्याय ५९.

श्रीकृष्ण और पांडवोंका अहेरको जाना, श्रीकृष्णका कालिंदीको वरना और खांडव वन अग्निको देकर इंद्रसे वनकी रक्षा करना.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! एकदिन श्रीकृष्णचंद्र जगद्बंधु आनंदकंदजीने यह विचार किया, कि अब चलकर पांडवोंको देखिये जो आगसे बच जीते जागते हैं. इतनी बात कह हरि कितने एक यदुवंशियोंको साथ ले द्वारकापुरीसे चल हस्तिनापुरीको आये. इनके आनेका समाचर पाय युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, पांचो भाई अति हर्षित हो उठधाए और नगरके बाहर आय मिल बड़ी भावभक्ति कर लिवाय घर लेगये. घरमें जातेही कुंती और द्रौपदीने पहले तो सात सुहागिनोंको बुलाय मोतियोंका चौक पुरवाय तिसपर कंचनकी चौकी बिछवाय उसपै श्रीकृष्णको [illegible]य मंगलाचर करवाय अपने हाथों आरती उतार पीछे प्रभुके पां[illegible]लवाय रसोंईमें लेजाय षड्रस भोजन करवाये. महाराज! जब श्रीकृ[illegible]जी भोजन कर पान खाने लगे तब—

चौ० कुंती ढिगबैठीकहबात, पिता बंधु पूंछतकुशलात ॥
नीके शूरसेन वसुदेव, बंधु भतीजे अरु बलदेव ॥
तिनमें प्राणहमारोरहे, तुमबिन कौन कष्ट दुख सहै ॥
जबजबविपतिपरी अतिभारी, तबतुमरक्षाकरीहमारी ॥
अहोकृष्णतुमपरदुखहरणा, पांचो बंधुतुम्हारीशरणा ॥
ज्योंमृगनी वृक झुंडकेत्रासा, त्यौंये अंधसुतनकेवासा ॥

महाराज! जब कुंती यों कहचुकी—

चौ० तबहिंयुधिष्ठिरजोरेहाथ, तुमहोप्रभुयादवपतिनाथ
तुमकोयोगेश्वरनितध्यावत, शिवबिरंचिकेध्याननआवत
हमको घरही दर्शनदीनो, ऐसोकहा पुण्य हम कीनो
चारमास रहके सुख दैहो, बरषाऋतु बीते घरजैहो ।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! इसबातके सुनतेही भक्तहितकारी श्रीविहारी सबको आशा भरोसा दे वहां रहे और दिन दिन आनन्द प्रेम बढ़ाने लगे. एक दिन राजा युधिष्ठिरके साथ श्रीकृष्णचंद्र, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेवको लिये धनुष बाण कर गहे रथपर चढ़ वनमें अहेरको गये, वहां जाय रथसे उतर फेंट बांध बाहें चढ़ाय शर साध जंगला झाड़ झाड़ लगे सिंह, बाघ, गैंड़े, अरने, साबर, शूकर, हरिण, ऋच्छ मार मार राजा युधिष्ठिरके सन्मुख लाय लाय धरने, और राजा युधिष्ठिर हँस हँस रीझ रीझ लेने, और जो जिसका भक्ष्य था तिसे देने, और हरिण सांबर रसोंईमें भेजने.

तिसी समय श्रीकृष्णचंद्र और अर्जुन ओखट करते करते कितनी एक दूर सबसे आगे जाय एक वृक्षके नीचे खड़े हुये, फिर नदीके तीर जाके दोनोंने जल पिया, इसमें श्रीकृष्णजी देखते क्या हैं कि, नदीके तीर एक अतिसुंदरी नवयौवना चंद्रमुखी चंपकबरनी मृगनयनी पिकबचनी गजगामिनी कटिकेहरी नखशिखसे सिंगार किये अनंगमद पिये महाछवि लिये अकेली फिरती है. इसे देखते हरि चकित थकित हो बोले,

चौ०—यहको सुंदरि बिहरति अंग, कोऊ नहींतासुकेसंग ॥

महाराज ! इतनी बात प्रभुके मुखसे सुन और [illegible] देख अर्जुन हड़बड़ाय दौड़कर वहां गया; जहां वह महासुंदरी नदीके [illegible] चरतीथी और पूंछने लगा कि, कह सुंदरि ! तू कौन है ? और कहा [illegible] है ? और किसलिये यहां अकेली फिरती है ? यह भेद अपन[illegible] मुझे समझाकर कह. इतनी बातके सुनतेही—

चौ०-सुंदरि कथा कहै है अपनी, मैं कन्या हौं सूरजत[illegible]
कालिंदी है मेरो नाम, पिता दियो जलमें विश्राम
रचै नदीमें मंदिर आय, मोसौंपिता कह्यो समझाय॥
कीजोसुतानदीढिग फेरो, आयमिलैगोयह वरतेरो ॥
यदुकुलमाहिंकृष्णअवतरे, ताकारजइहिंठांअनुसरे ॥
आदिपुरुष अविनाशी हरी, ताकाजे तू है अवतरी ॥
ऐसे जबहिं तातरविकह्यो, तबतेमैंहरिपदकोचह्यो ॥

महाराज ! इतनी बातके सुनतेही अर्जुन अतिप्रसन्न हो बोला कि हे सुंदरी ! जिनके कारण तू यहां फिरती है, वेही प्रभु अविनाशी द्वारकावासी श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद आय पहुँचे. महाराज ! ज्यों अर्जुनके मुँहसे इतनी बात निकली, त्यों भक्तहितकारी श्रीबिहारीभी रथ वढ़ाय वहां जा पहुँचे. प्रभुको देखतेही अर्जुनने जब उन्हे रथपर सब भेद कह सुनाया, तब श्रीकृष्णचंद्रजीने हँसकर झट उसे रथपर चढ़ाय नगरकी बाट ली. जितनेमें श्रीकृष्णचंद्र नगरमें बनसे आए, तितनेमें विश्वकर्माने एक मंदिर अतिसुंदर सबसे निराला प्रभुकी इच्छा देख बनाया. हरिने आतेही कालिंदीको वहां उतारा और आपभी रहने लगे. आगे कितने एक दिन पीछे एक दिन श्रीकृष्णचंद्र और अर्जुन रातकी बिरियां किसी स्थानपर बैठेथे, कि अग्निने आय हाथ जोड़ शिर नाय हरिसे कहा कि महाराज ! मैं बहुत दिनकी भूंखी सारे संसारमें फिर आई, पर खानेको कहीं न पाया, अब एक आश आपकी है जो आज्ञा पाऊं, तो बन जंगल जाय खाऊं. प्रभु बोले अच्छा जाय खा. फिर अग्निने कहा, कृपानाथ ! मैं बनमें अकेली नहीं जा

सकती; जो जाऊं तो इंद्र आय मुझे बुझाय देगा. यह बात सुन श्रीकृष्णजीने अर्जुनसे कहा, कि बंधु! तुम जाय अग्निको चराय लाओ यह बहुत दिनसे भूखी मरती है.

श्रीकृष्णचंद्रके मुखसे इतनी बात निकलतेही अर्जुन धनुषबाण ले अग्निके साथ हुए; और आग बनमें जाय भड़की, और लगे आम, इमली, बड़, पीपल, पाकड़, ताल, तमाल, महुआ, जामुन, खिरनी, कचनार, दाख, चिरौंजी, केला, निंबू, बेर आदि वृक्ष सब जलने; और—

चौ० फटकेकांसबांसअतिचटके, बनकेजीवफिरेमगभटके

जिधर देखिये तिधर सारे बनमें आग हूहकर जलती है. और धुआं मंड़लाय आकाशको गया, उस धुयेंको देख इंद्रने मेघपतिको बुलायके कहा कि, तुम जाय अति वर्षा कर अग्निको बुझाय बन और बनके पशु, पक्षी, जीव, जंतुओंको बचाओ. इतनी आज्ञा पाय मेघपति दल बादल साथ ले वहां आय गहराय जो वर्षनेको हुआ, तो अर्जुनने ऐसे पवन[illegible] मारे कि बादल राई काई हो यों उड़गये, कि जैसे रुईका पहल [illegible] झोंकसे उड़ज[illegible] न किसीने आते देखे न जाते, ज्यों आये त[illegible] जहीं बिलायगये; औ[illegible] बन झाड़खंड जलाती जलाती क[illegible] आई कि जहां मय नाम असु[illegible] आती देख मय महाभय खाय नंगे पां[illegible] गलमें कपड़ा डाल हाथ बांध मंदिरसे निकल अर्जुनके सन्मुख आय खडा हुआ; और अष्टांग प्रणाम कर अति गिड़ गिड़ायके बोला; हे प्रभु! इस आगसे बचाय वेग मेरी रक्षा करो.

चौ० चरी अग्निपायो संतोष, अबतुममानो जिन कछुदोष
मेरी बिनती मनमें लाओ, वैश्वानरसे मोहिं बचाओ

महाराज! इतनी बात मय दैत्यके मुखसे निकलते अग्निबाण वैश्वानरने धरे और अर्जुनभी सचुप खड़े रहे, निदान वे दानों मय-को साथ ले श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके निकट जा बोले कि महाराज!

चौ० यह मयासुर आयाहै काम, तुम्हरे लिये बनैहै धाम
अबहीं सुध तुम याकी लेहु, अग्नि बुझाय अभय करदेहु।

इतनी बात कह अर्जुनने धनुष शरसमेत हाथसे भूमिमें रक्खा, तब प्रभुने आगकी ओर आंख दबाय सैन की, वह तुरंत बुझगई; और सारे बनमें शीतलता हुई. और प्रसन्न हो, अग्निने अर्जुनके लियेअति श्वेत हंसबरन मनहरन घोड़े जिसमें जोड़े ऐसा रमणीक रथ और दो कर्कश तर्कश तथा कोई शस्त्र अस्त्रोंसे कटे नहीं ऐसा बर्म (झिलिम–बखतर) दिये. फिर हे राजा! श्रीकृष्णचंद्र अर्जुनसहित मयको साथले आगे बढ़े वहां जाय मयने कंचनके मणिमय मंदिर अतिसुंदर सुहावने मनभावने क्षणभरमें बनाय खड़े किये, ऐसे कि जिनकी शोभा कुछ बर्णी नहीं जाती. जो देखनेको आता सो चकित हो चित्रसा खड़ा रहजाता. आगे श्रीकृष्णजी वहां चार महीने बिरमें. पीछे वहांसे चल कहां आए कि जहां राजसभामें राजा युधिष्ठिर बैठे थे, आतेही प्रभुने राजासे द्वारका जानेकी आज्ञा मांगी, यह बात श्रीकृष्णचंद्रके मुखसे निकलतेही सभासमेत राजा युधिष्ठिर अति उदास हुए; और नगरबासीभी क्या स्त्री क्या पुरुष सब चिंता करने लगे. निदान प्रभु सबको यथायोग्य समझाय बुझाय आशा भरोसा दे अर्जुनको साथले युधिष्ठिरसे बिदा हो हस्तिनापुरसे चल हँसते खेलते कितने एक दिनोंमें द्वारकापुरीमें आ पहुँचे. इनका आना सुन सारे नगरमें आनन्द होगया; और सबका विरहदुःख गया. पिता माताने पुत्रमुख देख सुख पाया, और मनका खेद सब गँवाया. आगे एक दिन श्रीकृष्णजीने राजा उग्रसेनके पास जाय कालिंदीका भेद सब समझायके कहा, कि महाराज! भानुसुता कालिंदीको हम ले आए हैं; तुम बेदकी बिधिसे हमारा उसके साथ व्याह करदो. यह बात सुन उग्रसेनने मंत्रीको आज्ञा दी कि तुम अबहीं जाय व्याहकी सामग्री लाओ. आज्ञा पाय मंत्रीने बिवाहकी सामग्री बातकी बातमें सब लाय दी; तिसी समय उग्रसेन वसुदेवने एक ज्योतिषीको बुलाय शुभदिन ठहराय श्रीकृष्णजीका कालिंदीके साथ वेदकी विधिसे व्याहकरादिया.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि हे राजा! कालिंदीका विवाह तो यों हुआ, अब आगे जैसे मित्रबिंदाको हरि लाए और व्याहे

तैसे कथा कहताहूं तुम चित्त दे सुनो. शूरसेनजीकी बेटी श्रीकृष्णजीकी फूफी तिसका नाम राजाधिदेवी, उसकी कन्या मित्रविंदा, जब वह ब्याहने योग्य हुई तब उसने स्वयंवर किया, तहां सब देश देशके नरेश गुणवान् रूपनिधान महाराज बलवान् शूरवीर अतिधीर बन ठनके एकसे एक अधिक जा उज्जेन नगरीमें इकट्ठे हुए. ये समाचार पाय श्रीकृष्णचंद्रभी अर्जुनको साथ ले वहां गये और जाके वीचोंवीच स्वयंबरके खड़े हुए.

चौ०हरषि सुंदरीदेखिमुरारी, हारडारमुखरहीनिहारी ॥

महाराज!यह चरित्र देख सब देश देशके राजा तो लज्जित हो मनहीं मन अनखाने लगे; और दुर्योधनने जाय उसके भाई अपने परम मित्र विन्दं और अनुविन्दसे कहा, कि बंधु तुम्हारे मामाका बेटा है हरि, तिसे देख भूली है सुंदरी. यह लोकविरुद्ध रीति है, इसके होनेसे जगमें हँसी होगी. तुम जाय बहनको कहो, कि कृष्णको नहीं बरै; नहीं तो सब राजाओंकी भीड़में हँसी होगी. इतनी बातके सुनतेही उन्होंने जाय बहनको बुझायके कहा. भाईकी बात सुन समझ जो मित्रविंदा प्रभुके पाससे हटकर अलग दूर हो खड़ी हुई. तो अर्जुनने झुककर श्री कृष्णके कानमें कहा कि महाराज! अब आप किसकी कान करते हैं? बात बिगड़ चुकी, जो कुछ करना हो सो कीजे, विलंब न करिये. अर्जुनकी बात सुनतेही श्रीकृष्णने स्वयंवरके बीचसे उठ हाथ पकड़ मित्रविंदाको उठाय रथमें बैठाय लिया, और वहीं सबके देखते रथ हांक दिया. उसकाल सब भूपाल तो अपने२ शस्त्र ले ले घोड़ोंपर चढ़ चढ़ प्रभुको आगे घेर लड़नेको जा खड़े हुए, और नगरनिवासी लोग हँस हँस तालियाँ बजाय बजाय गालियां दे दे यों कहने लगे,

चौ०फूफीसुताकोब्याहनआयो, यहतुमकृष्णभलोयशपायो

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! जब श्रीकृष्णजीने देखा, चारों ओरसे जो असुरदल घिर आया है सो लड़े विना

१ 'विन्दानुविन्दावावन्त्यौदुर्योधनवशानुगौ'इत्यादि भा०स्कं० १० उ०अ० ५८ श्लो० ३०

न रहेगा. तब उन्होंने कईएक बाण निषंगसे निकाल धनुष तान ऐसे मारे कि, वह सब सेना असुरोंकी छीती छानहो वहांकी वहां बिलाय गई, और प्रभु निर्द्वंद्व आनंदसे द्वारका पहुँचे.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! श्रीकृष्णचंद्रजीने मित्रबिंदाको तो यों लेजाय द्वारकामें ब्याहा. अब आगे जैसे सत्याको प्रभु लाये सो कथा कहताहूं, तुम चित्त लगाय सुनो. कौशलदेशमें नग्नजित अतिधार्मिक राजा हुआ, उसके सत्यानामक कन्या हुई. तब राजाने सात बैल अति ऊंचे भयावने बड़े पैने सिंगोवाले विनानथे मँगवाय यह प्रतिज्ञा कर देशमें छुड़वाय दिये कि, जो [illegible] वृषभोंको एकबार [illegible] लावेगा, उसे मैं अपनी कन्या ब्याह दूंगा. [illegible]हाराज ! वे [illegible] बैल शिर झुकाय पूंछ उठाय भू खूंद खूंद डका[illegible] फिरैं, औ[illegible] जैसे पावैं तिसे हनैं. आगे यह समाचार पाय श्रीकृ[illegible]द्र अ[illegible] साथ ले वहां गये, और जा राजा नग्नजितके सन्मुख [illegible] हुए [illegible]को देखतेही राजा सिंहासनसे उतर प्रणाम कर इन्हें सिंह[illegible] [illegible]आय चंदन अक्षत पुष्प चढ़ाय, धूप, दीप कर, नैवेद्य आगे [illegible], हाथ जोड़, शिर नाय, अति विनती कर बोला कि, आज मेरे [illegible] जागे, जो शिवविरंचिके कर्ता प्रभु मेरे घर आए. यों सुनाय [illegible] बोला कि महाराज ! मैंने एक प्रतिज्ञा किया है सो पूरी होनी [illegible]ठिन थी पर अब मुझे निश्चय हुआ कि वह आपकी कृपासे [illegible] पूरी होगी. प्रभु बोले ऐसी क्या तूने प्रतिज्ञा की है कि जि[illegible] होना कठिन है ? तभी राजाने कहा, कि कृपानाथ ! मैंने [illegible] बैल अननाथे छुड़वाय यह प्रतिज्ञा की है कि जो इन सातों बैलों[illegible] एक वेर नाथेगा तिसे मैं अपनी कन्या ब्याहूंगा. श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज !

चौ०–सुन हरि फेंटबांध तहँ गये, सातरूपधर ठाढ़े भये
काहु नलख्योअलख व्यवहार, सातोनाथेएकहिबार

वे वृषभ नाथनेके समय ऐसे खड़ेरहे कि जैसे काष्ठके बैल खड़े होय प्रभु सातोंको नाथ एक रस्सीमें गूँथ राजसभामें ले आए. यह चरित्र

देख नगरनिवासी तो क्या स्त्री क्या पुरुष अचरज कर धन्य धन्य कहने लगे; और राजा नग्नजितने उसी समय पुरोहितको बुलाय वेदकी विधिसे कन्यादान किया. तिसके यौतुकमें दशसहस्र गाय और सुंदर कपड़े दगीनेसे सुशोभित तीन हजार ३००० दासी, नौ हजार ९००० हाथी, नौ लाख ९००००० रथ, नौ कोटि ९०००००००[1] घोड़े, नौ ९००००००००० पद्म पैदर दिये. श्रीकृष्णचंद्र सब ले वहांसे जब चले, तब खिजलाय सब राजाओंने प्रभुको मार्गमें आय घेरा. तहां मारे बाणोंके अर्जुनने सबको मार भगाया. हरि आनंद मंगलसे सबसमेत द्वारकापुरीमे पहुँचे; उसकाल सब द्वारकावासी आगे आय प्रभुको बाजे गाजेसे पाटंबरके पांवड़े डालते राजमंदिरमें लेगए. और यह यौतुक देख सब अचंभे रहे.

चौ० नग्नजीतकी करी बड़ाई, कहत लोग यह बड़ी सगाई ॥
भलोब्याहकोशलपति कियो, कृष्णहिं इतो दायजो दियो !

महाराज ! नगरनिवासी तो इस ढबकी बातें कर रहेथे कि उसी समय श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजीने वहां आके राजा नग्नजितका दिया हुवा सब दायजा अर्जुनको दिया; और जगतमें यश लिया; आगे अब जैसे श्रीकृष्णजी भद्राको ब्याह लाए. सो कथा कहता हूं तुम चित्त लगाय निश्चिंत हो सुनो. केकयदेशके राजाकी बेटी भद्राने स्वयंबर किया और देश देशके नरेशोंको पत्र लिख भेजा, वे आय आय इकट्ठे हुए. तहां श्रीकृष्णचंद्रभी अर्जुनको साथ लेकर गये, और स्वयंबरके बीच सभामें जा खडेहुये, जब राजकन्या माला हाथमें लिये सब राजाओंको देखती भालती रूपसागर जगत उजागर श्रीकृष्णचंद्रके निकट आई, तो देखतेही भूल रही; और उसने माला उनके गलेमें डाली. यह देख उनके मातापिताने प्रसन्न हो, वह कन्या हरिको वेदकी विधिसे ब्याह दी. उसके दाय दायजेमें बहुत कुछ दिया, कि जिसका पारावार नहीं. इतनी कथा

१ 'नव नागसहस्राणि नागाच्छतगुणान्रथान् ॥ रथाच्छतगुणानश्वानश्वाच्छतगुणान्नरान्' ॥ भा० स्कं० १० उ० अ० ५९ श्लो० ५९.

कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज ! श्रीकृष्णचंद्र भद्रको तो यों ब्याह लाए फिर जैसे प्रभुने लक्ष्मणको ब्याहा, सो कथा कहताहूं तुम सुनो. मद्रदेशका नरेश अति बली और बड़ा प्रतापी जिसकी कन्या लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्य हुई, तब उसने स्वयंबर कर चारों देशके नरेशोंको पत्र लिख लिख बुलाया वे अति धूमधामसे अपनी २ सेना साज साज वहां आय और स्वयंबरके बीच बड़े बनावसे पांति पांति जा बैठे: श्रीकृष्णचंद्रजीभी अर्जुनको साथ ले तहां गये; और जो स्वयंबरके बीच जा खड़े भये तो लक्ष्मणाने सबको देख आ श्रीकृष्णचंद्रजीके गलेमें माला डाली. उसके पिताने वेदकी विधिसे प्रभुके साथ लक्ष्मणाका ब्याह करदिया सब देश देशके नरेश जो वह आयेथे सो महालज्जित हो आपसमें कहने लगे कि देखें, हमारे रहते किस भांति कृष्ण लक्ष्मणाको लेजाता है. ऐसे कह वे सब अपनाअपना दल साज मार्ग रोंक जा खड़े हुए. ज्यों श्रीकृष्णचंद्र और अर्जुन लक्ष्मणासमेत रथ ले आगे बढ़े त्यों उन्होंने इन्हें आय रोंका, [illegible] द करने लगे, नि[illegible] कितनी एक बेरमें मारे बाणोंके अर्जुन और श्रीकृष्णजीने [illegible] मार भगाया; और आप अतिआनंद मंगलसे नगर द्वारका प[illegible] इनके जातेही सारे नगरमें घर घर—

चौ०-भई बधाई मंगलचार, कीन्[illegible] वेदरीति ब्योहार ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बो[illegible] कि महाराज ! इस भांति श्रीकृष्णजी और पाच कन्या ब्याहक[illegible] लाए. तब द्वारकामें आठौं पटरानियोंसमेत सुखसे रहने लगे औ[illegible] पटरानियां आठौं पहर सेवा करने लगीं. "पटरानियोंके नाम" रु[illegible] १, जाम्बवती २, सत्यभामा ३ कालिंदी ४, मित्रविंदा ५, सत्या ६, [illegible] ७, लक्ष्मणा ८, ऐसे हैं. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीकृ[illegible]विवाहवर्णनं नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

अध्याय ६०.

श्रीकृष्णका भौमासुरको मारना और सोलह सहस्र एकसौ राजकन्या-ओंके साथ विवाह करना.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि हे राजा! एक समय पृथ्वी मनुष्यतनु धारण कर अतिकठिन तप करने लगी. तहां ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र इन तीनों देवताओंने आ उससे पूंछा कि तू किसलिये इतनी कठिन तपस्या करतीहै? धरती बोली, कृपासिंधु! मुझे पुत्रकी वासना है इसकारण महातपस्या करती हूं. दया कर मुझे एक पुत्र अतिबलवंत, महाप्रतापी, बड़ा तपस्वी दो, ऐसा कि, जिसका सामना संसारमें कोई न करै, न वह किसीके हाथसे मरै, यह वचन सुन प्रसन्न हो तीनों देवताओंने वर दे उससे कहा कि तेरा सुत नरकासुर नाम अतिबली महाप्रतापी होगा. उससे लड़ कोई न जीतेगा. वह सृष्टिके सब राजा-ओंको जीत अपने बश करेगा. स्वर्गलोकमें जाय देवताओंको मार भगाय अदितिके कुंडल छीन आप पहनेगा, और इंद्रका छत्र छिनाय लाय अपने शिर धरेगा,संसारके राजाओंकी कन्या सोलहसहस्र एकसौ लाय अनब्याही घरमें रक्खेगा. तब श्रीकृष्णचंद्र अपना सब कटक ले उसपर चढ़ जायँगे; और उनसे तू कहेगी इसे मारो, पुनि वे मार सब राजकन्याओंको ले द्वारकापुरी पधारेंगे.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि महाराज! तीनों देवताओंने बर दे जब यों कहा, तब भूमि इतना

कह चुप होरही, कि मैं ऐसी बात क्यों कहूंगी, कि मेरे बेटेको मारो. आगे कितनेएक दिन पीछे भूमिपुत्र भौमासुर हुआ तिसको नरकासुरभी कहते हैं, वह प्राग्ज्योतिषपुरमें रहने लगा; उस पुरके चारोंओर पहाड़ोंकी ओट और जल, अग्नि, पवनका कोट बनाय सारे संसारके राजाओंकी कन्या बलकर छीन छीन धाय समेत लाय लाय उसने वहां रक्खीं. नित उठ उन सोलहसहस्र एकसौ राजकन्याओंके खाने पीने पहरनेकी चौकशी कियाकरे; और बड़े यत्नसे उन्हे पलवावै. एकदिन भौमासुर अतिकोप कर जो लंकासे लायाथा उस पुष्पकविमानमें बैठ सुरपुरमें गया. और लगा देवताओंको सताने, उसके दुःखसे देवता स्थान छोंड़ छोंड़ अपना जीव लेले जिधर तिधर भागगये. तब वह अदितिके कुंडल और इंद्रका छत्र छीन लाया; और सब सृष्टिके सुर नर मुनियोंको अतिदुःख देने लगा. उसका सब कारण सुन श्रीकृष्णचंद्र जगद्बंधुजीने अपने जीमें कहा—

चौ०-वाहिमारसुंदरिसबल्याऊं, सुरपतिछत्रतहांपहुँचाऊं
जाय अदितिके कुंडल देहौं, निर्भय राज्यइंद्रको कैहौं॥

इतना कह पुनि श्रीकृष्णचंद्रजीने सत्यभामासे कहा, कि हे नारि! तू मेरे साथ चले तो भौमासुर माराजाय, क्योंकि तू भूमिका अंश है इस लेखे उसकी मा हुई, जब देवताओंने भूमिको वर दियाथा, तब कह दियाथा, कि जब तू मारनेको कहेगी, तब तेरा पुत्र मरेगा; नहीं तो किसीसे किसी भांति मारा न मरेगा. इस बातके सुनतेही सत्यभामाजी कुछ मनहीं मन शोच समझ इतना कह अनमनी होरहीं कि, महाराज! मेरा पुत्र आपका सुत हुआ, तुम उसे क्योंकर मारोगे? प्रभुने उस बातको टाल कहा कि उसके मारनेकी तो मुझे कुछ इतनी चिंता नहीं पर एक समय मैंने तुझे बचन दियाथा, तिसे पूरा किया चाहता हूं. सत्यभामा बोली सो क्या? प्रभु कहने लगे. कि एक समय नारदजीने आय मुझे कल्पवृक्षका फूल दिया वह लै मैंने रुक्मिणीको भेजा,

यह बात सुन तू रिसाय रही. तब मैंने यह प्रतिज्ञा करी, कि तू उदास मत हों, मैं तुझे कल्पवृक्षको लादूंगा. सो अपना बचन प्रतिपालनेको और तुझे बैकुंठ दिखानेको, साथले चलता हूं. इतनी बातके सुनतेही सत्यभामाजी प्रसन्न हो हरिके साथ चलनेको उपस्थित हुईं: तब प्रभु उसे गरुड़पर अपने पीछे बैठाय साथ ले चले. कितनी एक दूर जाय श्रीकृष्णचंद्रजीने सत्यभामाजीसे पूंछा, कि सत्य कह सुंदरि! इस बातको सुन तू पहले क्या समझ अप्रसन्न हुई थी? उसका भेद मुझे समझायके कह जो मेरे मनका संदेह जाय. सत्यभामा बोली, कि महाराज! तुम भौमासुरको मार सोलह सहस्र एकसौ राजकन्या लाओगे, तिनमें मुझेभी गिनोगे, यह समझ अनमनी हुई थी. श्रीकृष्ण बोले कि तू किसी बातका चिंता मत कर, मैं कल्पवृक्ष लाय तेरे घर रक्खूंगा; और तू उसके साथ मुझे नारदमुनिको दान कीजो. फिर मोल ले मुझे अपने पास रखना मैं तेरे सदा अधीन रहूंगा, ऐसेही इंद्राणीने इंद्रको वृक्षके साथ दान कियाथा; और अदितिने कश्यपको, इस दानके करनेसे कोई नारि तेरे समान मेरे न होगी. महाराज! इस भांतिकी बातें कहते कहते श्रीकृष्णजी प्राग्ज्योतिषपुरके निकट जा पहुँचे. वहां पहाड़का कोट, अग्नि, जल, पवनकी ओट, देखते ही गरुड और सुदर्शन चक्रको आज्ञा की. उन्होंने पलभरमें धाय ढहाय बुझाय बहाय अच्छे पंथ बनाय दिये.

ज्यों हरि आगे बढ़ नगरमें जाने लगे त्यों गढ़के रखवाले दैत्य लड़नेको चढ़ आए, प्रभुने तिन्हे गदासे सहजही मार गिराए. उनके मारनेका समाचार पाय मुरनामक राक्षस पांच शीशवाला जो इसपर गढ़का रखवाला था, सो अतिक्रोध कर त्रिशूल हाथमें ले श्रीकृष्णचंद्र जीपर चढ़आया, और लगा आंखें लाल लाल कर दांत पीस पीस कहने कि—

चौ०-मोंते बली कौन जग और: वाहिपेखिहों मैंयही ठौर

महाराज! इतना कह मुर दैत्य श्रीकृष्णचंद्रपर यों दपटा, कि

ज्यों गरुड़ सर्पपर दपटे. आगे उसने त्रिशूल चलाया, सो प्रभुने चक्र से काट गिराया, फिर खिजलाय मुरने जितने शस्त्र हरिपर डाले, तितने प्रभुने सहजही काट डाले, पुनि वह हकबकाय दौड़कर प्रभुसे आय लिपटा और मल्लयुद्ध करने लगा, कितनी एक बेरमें युद्ध करते करते श्रीकृष्णजीने सत्यभामाको महाभयमान जान सुदर्शनचक्रसे उसके पांचों शिर काट डाले. धड़से शिर गिरतेही धमका सुन भौमासुर बोला, कि यह अतिशब्द काहेका हुआ ? इसबीच किसीने जाके सुनाया, कि महाराज ! श्रीकृष्णने आय मुरदैत्यको मारडाला, इतनी बातके सुनतेही प्रथम तो भौमासुरने अतिखेद किया; पीछे अपने सेनापतिको युद्ध करनेको आज्ञा दी. वह सब कटक सज लडनेको गड़के द्वारपर जा उपस्थित हुआ और उसके पीछे अपने पिताका मरना सुन मुरके सात बेटे जो अतिबलवान् और बड़े योद्धा थे, सोभी अनेक प्रकारसे अस्त्र शस्त्र धारण कर श्रीकृष्णजीके सन्मुख लड़नेको जा खड़े हुए, पीछेसे भौमासुरने अपने सेनापति और मुरके बेटोंसे कहला भेजा, कि तुम सावधानीसे युद्ध करो, मैंभी आताहूं. लड़नेकी आज्ञा पातेही सब असुरदल साथ ले मुरके बेटोंसमेत भौमासुरका सेनापति श्रीकृष्णजीसे युद्ध करनेको चढ़ आया; और एकाएकी प्रभुके चारों ओर सब कटक बादलसा जाय छाया. सब ओरसे अनेक अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र भौमासुरके शूर बीर श्रीकृष्णचंद्रपर चलातेथे; और वे सहज स्वभावही काट काट ढेर करते जातेथे. निदान हरिने सत्यभामाजीको महाभयातुर देख असुरदलको मुरके सातों बेटोंसमेत सुदर्शनचक्रसे बातकी बातमें यों काट गिराया जैसे किसान ज्वारकी खेतीको काट गिरावे.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि महाराज ! मुरके पुत्रोंसमेत सब सेना कटी. यह सुन पहले तो भौमासुर अतिचिंता कर महाघबराया, पीछे शोच समझ धीरज धर कितनेएक महाबली राक्षसोंको अपने साथ ले लाल लाल आंखें क्रोधसे किये कसकर फेंट बांधे शर सांधे बकता झकता श्रीकृष्णजीसे लड़नेको आय उपस्थित हुआ. ज्यों भौमासुरने प्रभुको देखा, त्यों उसने एक बार

अति रिसाय मूठकी मूठ बाण चलाए. सो हरिने तीन तीन टुकड़े कर काट गिराए. उसकाल–

चौ० काढ़ खड्ग भौमासुर लियो, कोपि हँकारि कृष्ण उर दियो
करै शब्द अति मेघसमान, अरे गँवार न पावै जान
कर्कश बचन तहां उच्चरै, महायुद्ध भौमासुर करै.

महाराज! वह तो अतिबल कर इनपर गदा चलाताथा और श्रीकृष्णजीके शरीरमें उसकी चोट यों लगती थी ज्यों हाथीके अंगमें फूलकी छड़ी, आगे वह अनेक अस्त्र शस्त्र ले प्रभुसे लड़ा; और श्रीकृष्णचंद्रजीने सब काट डाला. तब वह फिर घर जाय एक त्रिशूल ले आया; और युद्ध करनेको उपस्थित हुआ.

चौ० तब सतिभामा टेर सुनाई, अब क्यों नाहिं हतो यदुराई ॥
बचन सुनत प्रभु चक्र सँभाऱ्यो, काटि शीश भौमासुर माऱ्यो
कुंडल मुकुट सहित शिर पऱ्यो, धरते गिरत शेश थरथऱ्यो।
तिहूं लोकमें आनँद भयो, शोच दुःख सबहीको गयो ।
तासु ज्योति हरिदेह समानी, जैजै शब्द करें सुरज्ञानी ॥
खड़े विमान पुष्प बरषावैं, वेद बखानि देव यशगावैं ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले, कि महाराज ! भौमासुरकी स्त्री पुत्रसमेत आय प्रभुके सन्मुख हाथ जोड़ शिर नवाय अति विनती कर कहने लगी. हे ज्योतिरूप ! ब्रह्मस्वरूप! भक्तहितकारी विहारी! तुम साधुसंतके हेतु धरतेहो भेष अनंत, तुम्हारी महिमा लीला माया है अपरंपार. तिसे कौन जाने? और किसे इतनी सामर्थ्य है जो बिनकृपा तुम्हारी उसे बखाने. तुम सब देवोंके हो देव, कोई नहीं जानता तुम्हारा भेव. महाराज ! ऐसे कह, छत्र, कुंडल, पृथिवी प्रभुके आगे धर फेर बोली; दीननाथ दीनबंधु ! कृपासिंधु ! यह सुभगदत्त भौमासुरका बेटा आपकी शरण आया है, अब करुणा कर अपना कोमल कमलसा कर इसके शिर पर दीजे, और अपने भयसे इसे निर्भय कीजे. इतनी सुनतेही करुणानिधान श्रीकान्हने करुणाकर सुभगदत्तके शीशपर हाथ धरा और अपने

डरसे उसे निडर किया. तब भौमावती भौमासुरकी स्त्री बहुतसी भेंट हरिके आगे धर अतिबिनती कर हाथ जोड़ शिर झुँकाय खड़ी हो बोली हे दीनदयाल ! कृपाल ! जैसे आपने दर्शन दे हम सबको कृतार्थ किया तैसे अब चल कर मेरा घर पवित्र कीजै. इस बातको सुनतेही अंतर्यामी भक्तहितकारी श्रीमुरारी भौमासुरके घर पधारे. उसकाल वे दोनों माँ बेटा हरिको पाटंबरके पाँवड़े डाल घरमें ले जाय सिंहासनपर बिठाय अर्घ्य दे चरणामृत ले अतिदीनता कर बोले. हे त्रिलोकीनाथ ! आपने भला किया जो इस महाअसुरका वध किया; हरिसे विरोध कर किसने संसारमें सुख पाया ? रावण, कुंभकर्ण, कंसादिकने वैरकर अपना जी गवाँया और जिन जिनने आपसे द्रोह किया तिन तिनका जगतमें नाम लेवा पानी देवा कोई न रहा. इतना कह फिर भौमावती बोली, हे नाथ! अब आप मेरी बिनती मान सुभगदत्तको निजसेवक जान जो सोलहसहस्र एकसौ राजकन्या इसके बापने अनब्याही रोंक रक्खीं हैं सो अंगीकार कीजे. महाराज ! यों कह उसने सब राजकन्याओंको निकाल प्रभुके सोहीं पांतकी पांत ला खड़ा किया. वे जगतउजागर रूपसागर श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदको देखतेही मोहित हो अति गिड़गिड़ाय हाहा खाय हाथ जोड़ बोलीं, नाथ ! जैसे आपने आय हम अबलावोंको इस महादुष्टकी बंदीसे निकाला, तैसे अब कृपा कर इन दासियोंको साथ ले चलिये और निजसेवामें रखिये तो भला. यह बात सुन श्रीकृष्णचंद्रजीने उन्होंसे इतना कहा, कि हम तुम्हारेको साथ ले चलनेको रथपालकियां मँगवाते हैं. यह कह सुभगदत्तकी ओर देखा. सुभगदत्त प्रभुके मनका कारण समझ, अपनी राजधानीमें जाय, हाथी घोड़े सजवाय, घुड़बहल और रथ झमझमाते जगमगाते जुतवाय, सुखपाल, पालकी, नालकी, डोली, चंडोल, झूला, बारेके बारेके कसवाय लिवाय लाया. हरि देखतेही सब राजकन्याओंको उसपर चढ़नेकी आज्ञा दे सुभगदत्तको साथले राजमंदिरमें जाय उसे राजगद्दीपर बिठाय राजतिलक निजहाथसे दे आप जिसकाल सब राजकन्याओंको साथ ले वहांसे द्वारकाको चले, तिस समयकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती. कि हाथी बैलोंकी झूलें और गंगाजमुनी झूलोंकी

चमक, और घोड़ोंकी पाखरोंकी दमक और सुखपाल, पालकी, नालकी, डोली, चंडोल, रथ, घुड़बहलोंके घटाटोपोंकी ओप और उनकी मोतियोंकी झालरोंकी ज्योति सूर्यकी ज्योतिसे मिल एक होय जगमगाय रहींथीं. आगे श्रीकृष्णचंद्र सब राजकन्याओंको लिये कितनेएक दिनोंमें चले चले द्वारकापुरीमें पहुँचे, वहां जाय राजकन्याओंको राजमंदिरमें रख, राजा उग्रसेनके पास जाय प्रणाम कर पहले तो श्रीकृष्णचंद्रजीने भौमासुर मारने और राजकन्याओंको छोंड़ाय लानेका सब भेद कह सुनाया. फिर राजा उग्रसेनसे बिदा होय प्रभु सत्यभामाको साथ ले छत्र कुंडल लिये गरुड़पर बैठ वैकुंठको गये, तहां पहुँचतेही—

चौ० कुंडलदियेअदितिकोईश,छत्रधर्‌योसुरपतिकेशीश॥

यह समाचार पाय वहां नारद आये, तिनसे हरिने कह सुनाया, कि तुम जाय इंद्रसे कहो कि, सत्यभामा तुमसे कल्पवृक्ष मांगती है, देखो वे क्या कहते हैं, इस बातका उत्तर मुझे लादो, पीछे समझा जायगा. महाराज! इतनी बात श्रीकृष्णचंद्रजीके मुखसे सुन नारदजीने सुरपतिसे जाय कहा; कि सत्यभामा तुम्हारी भौजाई तुमसे कल्पतरु मँगती है, तुम क्या कहते हो? सो कहो, मैं उन्हें जाय सुनाऊं कि इंद्रने यह कहा. इसबातके सुनतेही इंद्र पहले तो हकबकाय कुछ शोचकर रहा, पीछे उसने नारदमुनिका कहा सब इंद्राणीसे जाय कहा—

चौ०इंद्राणीसुनकहारिसाय, सुरपतितेरीकुमति नजाय॥
तू है बड़ो मूढ़ मति अंधु, को है कृष्णकौनको बंधु॥

तुझे वह सुध है कि नहीं. जो उसने व्रजमेंसे तेरी पूजा मेट व्रजवासियोंसे गिरि पुजवाय छलकर तेरी पूजाका सब पकवान आप खाय फिर सातदिन तुझे गिरिपर वर्षवाय उसने तेरा गर्व गँवाय सब जगतमें निरादर किया. इस बातकी कुछ तेरे ताईं लाज है कि नहीं? वह अपनी स्त्रीकी बात मानता है. तू मेरा कहा क्यों नहीं सुनता? महाराज! जब इंद्राणीने इंद्रसे यों कह सुनाया, तब वह अपनासा मुँह ले उलट नारदजीके पास आया; और बोला—हे ऋषिराय! तुम मेरी ओरसे जाय श्रीकृष्णचंद्रसे कहो कि, कल्पवृक्ष नंदनबन तज अनत न जायगा, और जायगा तो वहां किसी भांति न रहेगा. इतना कह

फिर समझायके कहियो जो आगे किसी भांति अब यहां हमसे बिगाड़ न करैं, जैसे व्रजमें ब्रजवासियोंको बहँकाय गिरिका मिसकर सब हमारी पूजाकी सामान खायगये; नहीं तो महायुद्ध होगा.

यह बात सुन नारदजीने आय श्रीकृष्णचंद्रसे इंद्रकी बात कही सुनायके बोले, हे महाराज! कल्पतरु इंद्र तो देता था पर इंद्राणीने न देने दिया. इस बातके सुनतेही श्रीकृष्ण मुरारी गर्वप्रहारी नंदनबनमें जाय रखवालोंको मार भगाय कल्पवृक्षको उठाय गरुड़पर धर ले आये. उसकाल वे रखवाले जो प्रभुके हाथकी मार खाय भागेथे, इंद्रके पास जाय पुकारे. कल्पतरुके ले जानेके समाचार पाय, महाराज! राजा इंद्र अतिकोप कर वज्र हाथमें ले सब देवताओंको बुलाय ऐरावत हाथीपर चढ़ श्रीकृष्णजीसे युद्ध करनेको उपस्थित हुआ; फिर नारदमुनिजीने जाय इंद्रसे कहा, महाराज! तुम महामूर्ख हो जो स्त्रीके कहे भगवानसे लड़नेको उपस्थित हुए, ऐसी बात करते तुम्हें लाज नहीं आती? जो तुम्हें लड़नाही था तो जब भौमासुर तुम्हारा छत्र और अदितिके कुंडल छिनाय लेगया, तब क्यों न लड़े? अब प्रभुने भौमासुरको मार कुंडल और छत्र लादिया, तो उनहींसे लड़ने लगे. जो तुम ऐसेही बलवान् थे तो भौमासुरसे क्यों न लड़े? तुम वह दिन भूल गये जब ब्रजमें जाय प्रभुको अतिदीनता कर अपना अपराध क्षमा कराय आये, फिर उनहीसे लड़ने चले हैं. महाराज! नारदजीके मुखसे इतनी बात सुनतेही राजा इंद्र जो युद्ध करनेको उपस्थित हुआथा सो अछताय पछताय लज्जित हो मनमार रहगया. आगे श्रीकृष्णचंद्र द्वारका प[illegible] हर्षित भये देख हरिको यादव सारे. प्रभुने सत्यभामाके [illegible] कल्पवृक्ष ले जायके रक्खा; और राजा उग्रसेनने सोलह[illegible]सौ जो राजकन्या अनव्याही लायेथे सो सब वेदकी रीतिसे श्रीकृष्णचंद्र[illegible]दीं.

चौ० भयोवेदविधि मंगलचार, ऐसे हरि बिहरत संसार।
सोलासहस [illegible]सौ गेह, रहत कृष्ण कर परम सनेह
पटरानी अ[illegible] जेगनी, प्रीति निरंतर तिनसों घनी॥

इतनी कथा सु[illegible] श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा! हरिने ऐसे भौमासुरका ब[illegible]किया; और अदितिके कुंडल और इंद्रका छत्र

लादिया, फिर सोलसहस्र एकसा आठ विवाह कर श्रीकृष्णचंद्र द्वारकापुरीमें आनंदसे सबको ले लीला करने लगे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे भौमासुरवधोनाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

अध्याय ६१.

श्रीकृष्णका रुक्मिणीजीको रिसाना और फिर समझान.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय मणिमय कंचनके मंदिरमें कुंदनका जड़ाऊ छपरखट बिछाथा, तिसपर फेनसे बिछोने फूलोंसे सवाँरे कपाल गेडुआ और ओसीसेसमेत सुगंधसे महक रहेथे. कपूर, गुलाबनीर, चोआ, चंदन, अरगजा सेजके चारों ओर पात्रोंमें भरा धरा था. अनेक अनेक प्रकारके चित्रविचित्र चारोंओर भीतोंपर खिंचे हुए थे; आलोंमें जहां तहां फूल पकवान पाक धरेथे और सब सुखका सामान जो चाहिये सो उपस्थित था. झुलावारेका घांघरा घूमघुमारा तिसपर सच्चे मोती टके हुए, चमचमाती आँगिया, झलझलाती सारी और जगमगाती ओढ़नी पहने ओढ़े नख शिखसे शृंगार किये रोरीकी आड़ दिये बड़े बड़े मोतियोंकी नथ, शीशफूल, करनफूल, माँग, टीका, ढेढी, बध्धी, चंद्रहार, मोहनमाल, धुकधुकी, पंचलड़ी, सतलड़ी मुक्तामाल, दुहरे तिहरे नौरतन और भुजबंध, कंकन, पहुँची, नौगरी, चूड़ी, छाप, छले, किंकिनी, अनवठ, बिछुए, जेहर, तेहर आदि सब आभूषण रत्नजड़ित पहने, चंद्रवदनी, चंपकबरनी, मृगनयनी, पिकबयनी, गजगामिनी,

कटिकेहरी श्रीरुक्मिणीजी और मेघबरन, चंद्रवदन, कमलनयन, मोरमुकुट दिये बनमाल हिये, पीतांबर पहिरे, पीतपट ओढे रूपसागर, त्रिभुवनउजागर, श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद तहां विराजतेथे; और आपसमें परस्पर सुख लेते देते थे, कि एकाएकी लेटे २ श्रीकृष्णजीने रुक्मिणीजीसे कहा, सुन सुंदरि! एक बात मैं तुझसे पूंछता हूं. तू तो महासुंदरी सब गुणयुक्त और राजा भीष्मककी कन्या और महाबली बड़ा प्रतापी राजा शिशुपाल चंदेरीका राजा ऐसा कि जिनके घर सात पीढ़ीसे राज्य चला आता है, और हम उसके त्राससे भागे २ फिरते हैं. मथुरापुरी तज समुद्रमें आय बसे हैं, उन्हींके भयसे. ऐसे राजाको तुम्हें तुम्हारे माता पिता और भाई देतेथे, और वह बरात ले ब्याहनेकोभी आ चुकाथा तिसे न बरा. तुमने कुलकी मर्यादा छोंड़ संसारकी लाज और माता पिता बंधुकी शंका तज हमें ब्राह्मणके हाथ बुलाय भेजा.

चौ०तुम्हरेयोगनहमपरवीन, भूपति नहींरूपगुणहीन
काहू याचक कीरति करी, सो तुम सुनके मनमें धरी ॥
कटकसाजनृपब्याहन आयो, तबतुमहमकोबोलपठायो
आयउपाधि बनीतहँभारी, क्योंहूंके पतिरहीहमारी ॥
तिनकेदेखत तुमको लाए, दलहलधर उनकेबिचराए
तुमलिखभेजीथीयहबानी, शिशुपालसेछुड़ावोआनी
सो परतिज्ञा रही तिहारी, कछु न इच्छा हुती हम[illegible] ।
अजहूं कछुनगयोतिहारो, सुंदरि मानहु वचन ह[illegible] ॥

कि जो कोई भूपति कुलीन गुणी बली तुम्हारे योग्य [illegible], तुम तिसके पास जाय रहियो. महाराज इतनी बातके सुनतेही [illegible]क्मिणीजी भय खाय चकित हो भयराय पछड़ा खाय भूमिपर [illegible], और जल बिन मीनकी भांति तड़फड़ाय अचेत हो लगीं उर्ध्वश्वा[illegible]ने. तिसकाल

दो०इहि छबि मुख अरुकावली, रही [illegible]ट इक संग ॥
मानहूँ शशि भूतल पऱ्यो, पीव[illegible] अमी भुवंग ॥

यह चरित्र देख इतना कह श्रीकृष्णचंद्र घबराय कर उठे, कि यह तो अभी प्राण तजती है, और चतुर्भुज हो उसके निकट जाय दो हाथसे पकड़ उठाय गोदमें बैठाय एक हाथसे पंखा करने लगे; और एक हाथ से अलक सँवारने. महाराज! उसकाल नंदलाल प्रेमवश हो अनेक अनेक चेष्टा करने लगे, कभी पीतांबरसे प्यारीका चंद्रमुख पोंछतेथे कभी कोमल कमलसा अपना हाथ उसके हृदयपर रखतेथे, निदान कितनीएक बेरमें श्रीरुक्मिणीजीके जीमें जी आया, तब हरि बोले-

चौ० तूही सुंदरिप्रेमगँभीर, तैं मन कछु न राखी धीर ॥
तैं मन जान्यो सांचे छांड़ी, हमने हँसी प्रेमकीमांड़ी ॥
अब तू सुंदरि देह सँभार, प्राण ठौरके नैन उघार ॥
जौलौं तू बोलत नहिं प्यारी, तौलौंहमदुखपावतभारी ॥
चेतीवचनसुनतप्रियनारी, चितईवारिजनयनउघारी ॥
देखे कृष्ण गोदमें लिये, भई लाज अति सकुची हिये ॥
हरबराय उठ ठाढ़ी भई, हाथ जोरि पाँयन परिरई ॥
बोले कृष्ण पीठ कर देत, भलीमिली जू प्रेम अचेत ॥

हमने हांसी ठानी, सो तुमने सांचही जानी. हँसीकी बातमें क्रोध करना उचित नहीं. उठो अब क्रोध दूर करो; और मनका शोक हरो. महाराज! इतनी बातके सुनतेही श्रीरुक्मिणीजी उठ हाथ जोड़ शिर नाय कहने लगीं, महाराज! आपने जो कहा कि, हम तुम्हारे योग्य नहीं सो सच कहा. क्योंकि तुम लक्ष्मीपति शिवविरंचिके ईश, तुम्हारी समताका त्रिलोकीमें कौन है? हे जगदीश! तुम्हें छोड़ जो जो जन और को ध्यावें, सो ऐसे हैं जैसे कोई हरियश छोड़ गृध्रगुण गावे. महाराज! आपने जो कहा, कि तुम किसी महाबली राजाको देखो सो तुमसे अतिबली और बड़ा राजा त्रिभुवनमें कौन है? सो कहो. ब्रह्मा, रुद्र इंद्रादि सब देवता वरदायी तो तुम्हारी आश करे हैं. तुम्हारी कृपासे वे जिसे चाहते हैं तिसे महाबली, प्रतापी, यशी, तेजस्वी, वर दे बनातेहैं.

और जो लोग आपकी सैकड़ों वर्ष अतिकाठिन तपस्या करते हैं, सो राजपद पाते हैं. फिर तुम्हारा भजन, ध्यान, जप, तप, भूल; नीति छोड़ अनीति करते हैं; तब वे आपसे आपही अपना सर्वस्व खोय भ्रष्ट होते हैं. कृपानाथ! तुम्हारी तो सदाकी यह रीति है कि अपने भक्तोंके हेतु संसारमें आय बारंबार अवतार लेते हो; और दुष्ट राक्षसोंको मार पृथ्वीका भार उतार निजजनोंको सुख दे कृतार्थ करते हो; और नाथ! जिसपर तुम्हारी बड़ी दया होती है, वह धन, राज, यौवन, रूप, प्रभुता पाय, जब अभिमानसे अंधा हो धर्म, कर्म, तप, सत्य, दया, पूजा, भजन, भूलता है; तब तुम उसे दरिद्री बनाते हो. क्योंकि दरिद्री सदाही तुम्हारा ध्यान सुमिरन किया करताहै.इसीसे तुम दरिद्री बनाते हो. जिसपर तुम्हारी बड़ी कृपा होगी, सो सदा निर्द्धन रहैगा. महाराज! इतना कह फिर रुक्मिणीजी बोलीं, कि हे प्राणनाथ! जैसा काशीपुरीके राजा इंद्रद्युम्नकी बेटी अंबाने किया, तैसा मैं न करूंगी, कि वह पति छोंड़ राजा भीष्मके पासगई और जब उसने इसे न रक्खा तब फिर अपने पतिके पास आई, पुनि पतिने उसे निकाल दिया. तब उसने गंगातीरमें बैठ महादेवका बड़ा तप किया. तहां भोलानाथने आय, उसे मुँहमांगा वर दिया. उस वरके बलसे जाय राजा भीष्मसे अपना पलटा लिया, सो मुझसे न होगा.

चौ० अरु तुम नाथ यहौ समुझाई, काहूयाचककरी बड़ाई
वाको वचन मान तुम लियो, हमपै विप्र पठैके दियो ॥
याचक शिव विरंचि शारदा, नारद गुण गावत सर्वदा
विप्र पठायो जानि दयाल, आय कियो दुष्टनको काल
दीन जान दासी सँग लई, तुम मोहिं नाथ बड़ाई दई ॥
यहसुनिकृष्णकहतसुनप्यारी, ज्ञानध्यानगतिलहीहमारी।
सेवा भजन प्रेमते जान्यो, तोहींसों मेरो मन मान्यो ॥

महाराज! प्रभुके मुखसे इतनी बात सुन संतुष्ट हो रुक्मिणी फिर हरिकी सेवा करने लगीं. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णमानलीलावर्णनं नाम एकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

अध्याय ६२.

प्रद्युम्न और अनिरुद्धका विवाह और बलरामजीके हाथसे रुक्मका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! सोलहसहस्र एकसौ आठ स्त्रियोंको ले श्रीकृष्णचंद्र आनंदसे द्वारकापुरीमें विहार करने लगे, और आठों पटरानियां आठोंपहर हरिकी सेवामें रहैं. नित उठ भोरही कोई मुख धुलावे, कोई उबटन लगाय न्हिलावे, कोई पटरस भोजन बनाय जिमावे,कोई अच्छे पान लौंग इलायची जावित्री जायफलसमेत तांबूल बनाय प्रियको खिलावे, कोई सुंदर वस्त्र और रत्नजड़ित आभूषण चुनवाय और बनाय प्रभुको पहनातीथी, कोई फूल माल पहिराय गुलाबनीर छिड़क केशर, चंदन चरचतीथी, कोई पंखा डोलातीथी और कोई पाँव दावतीथी. महाराज ! इसी भांति सब रानियां अनेक अनेक प्रकारसे प्रभुकी सदा सेवा करैं, और हरि हरभांति उन्हें सुख दें. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! कई वर्षके बीच-

दो॰एक एक यदुनाथकी, नारिन जाये पुत्र ।
इक इक कन्या लक्ष्मी, दश दश पुत्र सपुत्र ॥
एक लाख इकसठ सहस, असी बाल इकसार ॥
भये कृष्णके पुत्र ये, गुण बल रूप अपार ॥

सब मेघवर्ण, चंद्रमुख, कमलनयन, नीले पीले झँगले पहने, गंडे कठुले ताईत गलेमें डाले, घर घर बालचरित्र कर कर माता पिताको सुख देते, और उनकी मातायें अनेक भांतिसे लाड़ प्यार कर प्रतिपाल करें. महाराज! श्रीकृष्णचंद्रजीके पुत्रोंका होना सुन रुक्मने अपनी स्त्रीसे

कहा, कि अब मैं अपनी कन्या चारुमती जो कृतवर्माने मांगी है उसे न दूंगा, स्वयंवर करूंगा. तुम किसीको भेज मेरी बहन रुक्मिणीको पुत्रसमेत बुलवा भेजो. इतनी बातके सुनतेही रुक्मकी नारीने अति- बिनती कर ननँदको पत्र लिख पुत्रसमेत एक ब्राह्मणके हाथ बुलवाया और स्वयंवर किया. भाईभौजाईकी चिठ्ठी पातेही रुक्मिणी श्रीकृ- ष्णजीसे आज्ञा ले बिदा हो पुत्रके सहित चली चली द्वारकासे भोज- कटमें भाईके घर पहुँचीं.

चौ० देखरुक्मनेअतिसुखपायो, आदरकरनीचोशिरनायो ।
पाँयनपर बोली भौजाई, हरणभयोतबते इतआई ॥

यह कह फिर उसने रुक्मिणीजीसे कहा कि ननँद ! जो तुम आई हो तो हमपर दया माया कीजै; और चारुमती कन्याको अपने पुत्रके लिये लीजे. इस बातके सुनतेही रुक्मिणीजी बोलीं, कि भौजाई ! तुम पतीकी गति जानतीहो मत किसीसे कलह करवाओ, भैयाकी बात कुछ कही नहीं जाती, क्या जानिये किस समय क्या करैं? इससे कोई बात कहते करते भय लगताहै. रुक्म बोला, कि बहन! अब तुम किसी भांति न डरो, कुछ उपाधि न होगी. वेदकी आज्ञा है कि दक्षिणदेशमें कन्या भानजेको दीजे, इसकारण मैं अपनी पुत्री चारुमती तुम्हारे पुत्र प्रद्युम्न- को दूंगा; अरु श्रीकृष्णजीसे वैरभाव छोंड नया संबंध करूंगा, महा- राज ! इतना कह जब रुक्म वहांसे उठ सभामें गया, तब प्रद्युम्नजीभी मातासे आज्ञा ले बनठन कर स्वयंवरके बीचमें गये तो क्या देखते हैं, कि देश देशके नरेश भांति भांतिके वस्त्र शस्त्र आभूषण पहने, बांध बनाय किये, विहारकी अभिलाषा हियमें लिये सब खड़े हैं, और वह कन्या जयमाल कर लिये चारों ओर दृष्टि किये बीचमें फिरती है, पर किसीपै दृष्टि उसकी नहीं ठहरती. इसमें ज्यों प्रद्युम्नजी स्वयंवरके बीच- में गये, त्यों देखतेही उस कन्याने मोहित हो आ इनके गलेमें जयमाल डाली. सब राजा अछताय पछताय अपनासा मुँह देखते खड़े रहगये; और अपने मनहीमन कहने लगे कि भला ! देखें हमारे आगेसे इस कन्याको कैसे ले जायगा, हम बाटहीमें छीन लेंगे. महाराज ! सब

राजा तो यों कह रहेथे, और रुक्मने बर कन्याको मंडपके नीचे लेजाय वेदकी बिधिसे संकल्प कर कन्यादान किया; और उसके यौतुकमें बहुतही धन द्रव्य दिया कि, जिसका कुछ पारावार नहीं. आगे श्रीरुक्मिणीजी पुत्रको व्याह, भाई भौजाईसे बिदा हो बेटे बहूको ले रथपर चढ़ जो द्वारकापुरीको चलीं तो सब राजाओंने आय मार्ग रोंका; इसलिये कि प्रद्युम्नजीसे लड़ कन्याको छीनलें. उनकी यह कुमति देख प्रद्युम्नजीभी अपना अस्त्र शस्त्र ले युद्ध करनेको उपस्थित हुए, कितनी एक बेरतक इनसे उनसे युद्ध होता रहा, निदान प्रद्युम्नजी उन सबको मार भगाय आनंद मंगलसे द्वारकापुरीमें पहुँचे. इनके पहुँचनेका समाचार पाय सब कुटुंबके लोग क्या स्त्री क्या पुरुष पुरीके बाहर आय रीति भांति पाटंबरके पांवड़े डालते बाजे गाजेसे इन्हें लेगये. सारे नगरमें मंगल हुवा. ये राजमंदिरमें सुखसे रहने लगे.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! कई वर्ष पीछे श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके पुत्र प्रद्युम्नजीको पुत्र हुवा. उसकाल श्रीकृष्णचंद्रजीने ज्योतिषियोंको बुलाय सब कुटुंबके लोगोंको बैठाय मंगलाचार करवाय शास्त्रकी रीतिसे नामकरण किया ज्योतिषियोंने पत्र देख वर्ष, मास, पक्ष, दिन, तिथि, घड़ी, लग्न, नक्षत्र ठहराय उस लड़केका नाम अनिरुद्ध रक्खा. उसकाल—

सो० फूले अँग न समाय, दान दक्षिणा द्विजनको ॥
देत न कृष्ण अघाय, पूत भयो प्रद्युम्नको ॥

महाराज ! नातीके होनेका समाचार पाय पहले तो रुक्मने बहन बहनोईको अति हितकर यह पत्रीमें लिख भेजा, कि तुम्हारे पोतेसे हमारी पोतीका व्याह होय तो बड़ा आनंद है, और पीछे एक ब्राह्मणको बुलाय रोरी, अक्षत, रुपया, नारियल दे उसे समझायके कहा, कि तुम द्वारकापुरीमें जाय हमारी ओरसे अतिविनती कर श्रीकृष्णजीका पौत्र अनिरुद्ध जो हमारा दोहता है तिसे टीका देआओ. बातके सुनतेही ब्राह्मण टीका और लग्न साथ ले चला चला श्रीकृष्णचंद्रके पास द्वारकापुरीमें गया. उसे देख प्रभुने अतिमान सन्मान कर पूंछा, कि कहो देवता ! आपका

आना कहांसे हुआ ? ब्राह्मण बोला, महाराज! मैं राजा भीष्मकके पुत्र रुक्मका पठाया हूं, उनकी पौत्री और आपके पौत्रसे संबंध करनेको टीका और लग्न ले आया हूं. इस बातके सुनतेही श्रीकृष्णजीने दश भाइयोंको बुलाय टीका और लग्न ले उस ब्राह्मणको बहुत कुछ दे बिदा किया और आप बलरामजीके निकट जाय चलनेका विचार करने लगे. निदान वे दोनों भाई वहांसे उठ राजा उग्रसेनके पास जाय सब समाचार सुनाय उनसे बिदा हो बाहर आय बरातकी सब सामान मँगवाय इकट्ठी करवाने लगे. कईएक दिनोंमें जब सब सामान उपस्थित हो चुका तब बड़ी धूमधामसे प्रभु बरात ले द्वारकासे भोजकट नगरको चले. उसकाल एक झमझमाते रथपर तो रुक्मिणीजी पुत्रपौत्रको ले बैठ जातीं थीं, और एक रथपर श्रीकृष्णचंद्र और बलराम बैठे जाते थे. निदान कितने एक दिनोंमें सबसमेत प्रभु वहां पहुँचे. महाराज! बरातके पहुँचतेही रुक्म कलिंगादि सब देश देशके राजाओंको साथ ले नगरके बाहर जाय आगोनी कर सबको बागे पहराय अतिआदर मानकर जनवासेमें लिवाय लाया. आगे सबको खिलाय पिलाय मंडपके नीचे लिवाय लेगया, और उसने वेदकी बिधिसे कन्यादान किया. उसके यौतुकमें जो दान दिया उसको मैं कहांतक कहूं ? वह अकथ है. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, महाराज ! ब्याह हो चुकतेही राजा भीष्मकने जनवासेमें जाय हाथ जोड़, अतिबिनती कर, श्रीकृष्णचंद्रजीसे चुपचुपाते कहा, महाराज ! विवाह हो चुका और रस रहा, अब आप शीघ्र चलनेको विचार कीजो, क्योंकि–

चौ० भूप संग जे रुक्म बुलाए, ते सब दुष्ट उपाधी आये ।
मत काहूसों उपजे रारी, याहीते हौं कहत मुरारी ॥

इतनी बात कह जो राजा भीष्मक गये, त्योंहीं श्रीरुक्मिणीजीके निकट रुक्म आया.

दो० कहत रुक्मिणी टेर कर, किस घर पहुँचे जाय ॥
बेरी भूपति पाहुने, जुरे तिहारे आय ॥

चौ० जो तुमभैयाचाहो भलो, हमहिं बेग पहुँचावन चलो

नहीं तो रसमें अनरस होता दीखता है. यह वचन सुन रुक्म बोला, कि बहन ! तुम किसी बातकी चिंता मतकरो. मैं पहले जो राजा देश देशके पाहुने आये हैं तिन्हें बिदाकर आऊं, पीछे जो तुम कहोगी सो मैं करूंगा. इतना कह रुक्म यहांसे उठ जो राजा पाहुने आयेथे उनके पास गया वे सब मिलके कहने लगे, कि रुक्म ! तुमने कृष्ण बलदेव-को इतना धन द्रव्य दिया; और उन्होंने मारे अभिमानके कुछ भला न माना. एकतो हमे इस बातका पछताव है; और दूसरे उस बातकी क-सक हमारे मनसे नहिं जाती, कि जो बलरामने तुम्हें अभरन कियाथा महाराज ! इस बातके सुनतेही रुक्मको क्रोध हुआ. तब राजा कलिंग बोला, कि एक बात मेरे जीमें आई है कहो तो कहूँ. रुक्मने कहा कहो. फिर उसने कहा, कि हमें श्रीकृष्णसे कुछ काम नहिं पर बलरामको बुलादो तो हम उससे चौपड़ खेल सब धन जितलें; और जैसा उसे अभिमान है तैसा यहांसे रीते हाथ बिदा करैं. ज्यों कलिंगने यह बात कही त्योंही रुक्मने वहांसे उठ कुछ शोच विचार कर बलराम-जीके निकट जा बोला, कि महाराज! आपको सब राजाओंने प्रणा-मकर चौपड खेलनेको बुलाया है.

चौ॰ सुनबलभद्रतबहिंतहआए,भूपतिउठकैशीशनवाए।

आगे सब शजा बलरामजीका शिष्टाचार कर बोले, कि आपको चौपड खेलनेका बड़ा अभ्यास है; इसी लिये हम आपके साथ खेला चाहते हैं. इतना कह उन्होंने चौपड मँगवाय बिछाई; और रुक्मसे और बलरामजीसे होने लगी. पहले रुक्म दश बेर जीता तो बलदेवजीसे कहने लगा, कि धन तो सब जीता अब तो काहेसे खेलोगे? इसमें राजा कलिंग बडी बात कह हँसा. यह चरित्र देख बलदेवजी नीचा शिर कर, शोच बिचार करने लगे. तब रुक्मने दश करोड़ रुपये एक बार लगाये सो बलरामजीने जो जीतके उठाए तो सब धांदल कर बोले कि यह रुक्मका फांसा पड़ा तुम क्यों रुपये समेटते हो ?

चौ॰सुनि बलराम फेरसब दीने, अर्ब लगायो पाछे लीने॥

फिर हलधर जीते, और रुक्म हारा, उस समय भी रोगठी कर सब राजाओंने रुक्मको जिताया; और यों कह सुनाया–

चौ०जुआँ खेल पाँसेकी सार, यह तुम जानो कहा गवाँर
जुआ युद्ध गति भूपति जाने, ग्वाल गोपगैयन पहिंचाने

इस बातके सुनतेही बलदेवजीको क्रोध यों बढ़ा कि, जैसे पून्योंको समुद्रकी तरंग बढ़ैं. निदान ज्यों त्यों कर बलरामजीने क्रोधको रोंक मनको समझाय फिर सात अर्ब रुपये लगाये; चोपड़ खेलने लगे फिरभी वलदेवजी जीते, और सबोंने कपटकर रुक्महींको जीता कहा. इस अनीतिके होतेही आकाशसे यह वाणी हुई, कि हलधर जीते और रुक्म हारा, और हे राजाओ ! तुमने क्यों, झूंठ वचन उचारा ? महाराज ! जब रुक्मसमेत सब राजाओंने आकाशवाणी सुनी अनसुनी की, तब तो वलदेवजी महाक्रोधमें आय बोले–

चौ०करी सगाई बैर न छांड़यो, हमसों फेरकलह तुममांड्यो
मारौं तोहिं अरे अन्याई, भलो बुरो मानहुँ भौजाई ॥
अबकाहूकीकाननकारिहौं, आजप्राणकपटीकेहारिहौं ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज निदान वलरामजीने सबके देखते रुक्मको मारडाला और कलिंगको पछाड़ मारे घूंसोंसे उसके दांत उखाड़ लिये और कहा, कि तूभी मुँह पसारके हँसा था. आगे सब राजाओंको मार भगाय बलरामजीने जनवासेमें श्रीकृष्णचंद्रके पास आय सब ब्योरा कह सुनाया. इस बातके सुनतेही हरिने सबसमेत वहांसे प्रस्थान किया, और चले चले आनंद मंगलसे द्वारकामें आय पहुँचे. इनके आतेही सारे नगरमें सुख छागया. घर घर मंगलाचार होने लगे. श्रीकृष्णचंद्रजी और बलदेवजीने राजा उग्रसेनके सन्मुख जाय हाथ जोड़ कहा महाराज ! आपके पुण्यप्रतापसे अनिरुद्धको ब्याह लाए, और महादुष्ट रुक्मको मार आए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे अनिरुद्धविवाहो रुक्मिवधो नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

अध्याय ६३.

उषा स्वप्न, चित्ररेखाका अनिरुद्धको मायासे लाकर उषाको देना और उषा हरण.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! अब तो द्वारकानाथका बल पाऊं तो ऊषाहरणकी कथा सब गाऊं, जैसे उसने रात्रिसमय स्वप्नमें अनिरुद्धजीको देखा, और आसक्त हो खेद किया; पुनि चित्ररेखाने अनिरुद्धजीको लाय ऊषासे मिलाया तैसे मैं सब प्रसंग कहताहूं, तुम मन दे सुनो. ब्रह्माके वंशमें पहले कश्यप हुवा, तिसका पुत्र हिरण्यकशिपु अतिबली और महाप्रतापी और अमर भया. उसका सुत हिरण्यज प्रभुभक्त प्रल्हाद नाम हुआ. उसका बेटा राजा विरोचन, विरोचनका पुत्र राजा बलि, जिसका यश धर्म धरणीमें अवतक छाय रहा है, कि प्रभुने वामनअवतार ले राजा बलिको छल पाताल पठाया. उस बलिका ज्येष्ठ पुत्र महापराक्रमी बड़ा तेजस्वी बाणासुर हुआ, वह शोणितपुरमें बसे. नित कैलासमें जाय शिवकी पूजा करे, ब्रह्मचर्य पाले, सत्य बोले, जितेंद्रिय रहे, महाराज! एकदिन बाणासुर कैलासमें जाय हरकी पूजा कर प्रेममें आय लगा मग्न हो मृदंग बजाय बजाय नाचने गाने. उसका गाना बजाना सुन श्रीमहादेव भोलानाथ मग्न हो लगे पार्वतीजीको साथ ले नाचने, और डमरू बजाने निदान नाचते नाचते शंकरने अतिसुख पाय प्रसन्न हो बाणासुरको निकट बुलायके कहा, हे पुत्र! मैं तुझपर संतुष्ट हुआ, वर मांग, जो माँगेगा सो मैं दूँगा.

चौ०तैंने बाजे भले बजाए, सुनतश्रवण मेरे मनभाये ॥

इतनी बातके सुनतेही, महाराज ! बाणासुर हाथ जोड़ शिर नाय अतिदीनता कर बोला कि कृपानाथ ! जो आपने मेरेऊपर कृपा की तो पहले अमर कर मुझे सब पृथ्वीका राज्य दीजै, पीछे मुझे ऐसा बली कीजे कि कोई मुझसे न जीते. महादेवजी बोले, कि मैने तुझे यही वर दिया; और सब भयसे निर्भय किया. त्रिभुवननें तेरे बलको कोई न पावेगा, और विधाताकीभी कुछ तुझपर बश न चलेगी.

दो०बाजे भले बजायकै, दियो परम सुख मोहिं ॥
मैं अति हिय आनंदकर, दिये सहस्र भुज तोहिं ॥

अब तू घर जाय निश्चिंताईसे बैठ अविचल राज्य कर. महाराज ! इतना बचन भोलानाथके मुखसे सुन सहस्र भुज पाय बाणासुर अति प्रसन्न हो परिक्रमा दे शिर नाय बिदा हो आज्ञा ले शोणितपुरमें आया आगे त्रिलोकीको जीत सब देवताओंको बश कर नगरमें चारोंओर जलकी चुआन चौड़ी करवाई और अग्नि पवनका कोट बनाय निर्भय हो सुखसे राज्य करने लगा. कितने एक दिन पीछे—

दो०लरबे बिन भई भुज सबल, फरकहि अतिसहरायँ॥
कहत बाण कासों लरैं, कापर अब चढ़ि जाँय ॥

चौ०भई खाज लड़बेबिन भारी, को पुजवै हिय हौसहमारी

इतना कह बाणासुर घरसे बाहर जाय लगा पहाड़ उठाय २ तोड़ तोड़ चूर करने, और देश देश फिरने. जब सब पर्वत फोड़ चुका; और उसके हाथोंकी सुरसुराहट खुजली हट न गई तब—

चौ०कहतबाणअब कासों लरौं, इतनी भुजाकहा लैकरौं
सबल भार मैं कैसे सहौं, बहुरिजायकै हरसों कहौं ॥

महाराज ! ऐसे मनहींमन शोच बिचार कर बाणासुर महादेवजीके सन्मुख जा हाथ जोड़ शिर नाय बोला कि, हे त्रिशूलपाणि नाथ! तुमने जो कृपाकर सहस्रभुजा दीं सो मेरे शरीरपर भारी भई. इनका बल अब मुझसे सँभाला नहीं जाता. इसका कुछ उपाय कीजै, कोई महाबली युद्ध

करनेको मुझे बताय दीजै, मैं त्रिभुवनमें ऐसा पराक्रमी किसीको नहीं देखता,जो मेरे सन्मुख हो युद्ध करे. अब दया कर जैसे आपने मुझे महाबली किया, तैसेही कृपा कर मुझसे लड़ मेरे मनका अभिलाष पूरा कीजै तो कीजै, नहीं तो और किसी अतिबलीको बतादीजै. तिसीसे मैं जाकर युद्ध करूं; और अपने मनका शोक हरूं. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! बाणासुरसे इस भांतीकी बातें सुन श्रीमहादेवजीने बलखाय मनहीमन इतना कहा, कि मैंने तो इसे साधु जानके वर दिया; अब यह मुझसे लड़नेको उपस्थित हुआ. इस मूर्खको बलका गर्व भया,यह जीता न बचेगा, जिसने अहंकार किया, सो जगतमें आय बहुत दिन न जिया. ऐसे मनहींमन महादेवजी कह बोले, कि बाणासुर! तू मत घबराय तुझसे युद्ध करनेवाला थोड़े दिनके बीच यदुकुलमें श्रीकृष्णावतार होगा, उसबिन त्रिभुवनमें तेरा सामना करनेवाला कोई नहीं. यह वचन सुन बाणासुर अतिप्रसन्न हो बोला कि नाथ! वह पुरुष कब अवतार लेगा? और मैं कैसे जानूंगा; कि, अब वह उपजा? राजा! शिवजीने एक ध्वजा बाणासुरको देके कहा, कि इसको लेजा और अपने मंदिरके ऊपर गाड़ दे; जब यह ध्वजा आपसे आप टूटकर गिरे, तब तूं जानियो कि मेरा रिपु जन्मा है.

महाराज! जब शंकरने उससे ऐसे समझायके कहा. तब बाणासुर ध्वजा ले शिर नाय निजघरको चला. आगे घर जाय ध्वजा मंदिरपर चढ़ाय दिन दिन यही मनाता था, कि कब वह पुरुष प्रगटे; और मैं उससे युद्ध करूं. इसमें कितने एक वर्ष बीते उसकीबडी रानी बाणावती तिसके गर्भ रहा; और पूरे दिनोंमें एक लड़की हुई उसकाल बाणासुरने ज्योतिषियोंको बुलाय बैठायके कहा, कि इस लड़कीका नाम और गुण गणकर कहो. इतनी बातके कहतेही ज्योतिषियोंने झट वर्ष, मास, पक्ष, तिथि, वार, घटी, मुहूर्त, नक्षत्र, लग्न विचार, उस लडकीका नाम ऊषा धरके कहा, कि महाराज!यह कन्या रूप गुण शीलकी खान महाजान होगी. इसके ग्रह और लक्षण ऐसेही आन पड़े हैं.

इतना सुन बाणासुरने अतिप्रसन्न हो पहले बहुत धन ज्योतिषियोंको दे बिदा किया. पीछे मंगलमुखियोंको बुलाय मंगलाचार करवाये,

पुनि ज्यों ज्यों वह कन्या बढ़नें लगी त्यों त्यों बाणासुर उसे अतिप्यार करने लगा; जब ऊषा सात वर्षकी भई तब उसके पिताने शोणितपुरके निकटही कैलास था तहां कई एक सखी सहेलियोंके साथ शिव पार्वतीजीके पास पढ़नेको भेज दिया. ऊषा गणेश सरस्वतीको मनाय शिव पार्वतीजीकेसन्मुख जा हाथ जोड़ शिर नाय बिनतीकर बोली कि हे कृपासिंधु शिवगौरी! दयाकर मुझ दासीकों विद्यादान कीजै; और जगतमें यश लीजे, महाराज! ऊषाके अतिदीन बचन सुन शिवपार्वतीजीने उसने प्रसन्न हो विद्याका आरंभ करवाया, वह नित प्रति जाय पढ़ पढ़ आवे, इसमें कितने एक दिनोंके बीच सब शास्त्र पढ़ विद्या गुणवती हुई, और सब यंत्र बजाने लगी. एक दिन ऊषा पार्वतीजीके साथ मिलकर वीणा बजाय संगीतकी रीतिसे गाय रहीथी, कि शिवजीने आय पार्वतीसे कहा; हे प्रिये! मैंने जो कामदेवजीको जलायाथा तिसे अब कृष्णचंद्रजीने उपजाया. इतना कह श्रीमहादेवजी गिरिजाको साथले गंगातीरमें जाय नीरमें न्हाय न्हिलाय सुखकी इच्छा कर अति लाड़ प्यारसे लगे पार्वतीजीको वस्त्र आभूषण पहराने; और हित करने. निदान अतिआनंदमें मग्न हो डमरू बजाय बजाय तांडव नाच नाच संगीत शास्त्रकी रीतसे गाय गाय लगे पार्वतीको रिझाने और बड़े प्यारसे कंठ लगाने. उस समय ऊषा शिवगौरीका सुख प्यार देख देख पतिके मिलनेकी अभिलाषा कर मनहींमन कहने लगी, कि मेराभी कंत होय तो मैंभी शिवपार्वतीकी भांति उसके साथ विहार करूं पतिबिन कामिनीकी ऐसी शोभा नहीं है जैसे चंद्रबिन यामिनी. महाराज! ज्यों ऊषाने मनहींमन इतनी बात कही. त्यों अंतर्यामी श्रीपार्वतीजीने ऊषाकी अंतर्गति जान उसे अतिहितसे निकट बुलाय प्यारकर समझायके कहा कि बेटी! किसी बातकी चिंता मनमें मतकर, तेरा पति तुझे स्वप्नमें आय मिलेगा. तू उसे ढूंढ़वाय लीजो; और उसके साथ सुखभोग कीजो. ऐसे बर दे शिवरानीने ऊषाको बिदा किया. वह सब विद्या पढ़, बर पाय, दंडवत कर अपने पिताके पास आई. पिताने एक मंदिर अतिसुंदर निराला उसे रहनेको दिया और यह कितनी एक सखीसहेलियोंको ले वहां रहने लगी, और

दिन२ बढ़ने. महाराज! जिसकाल वह बाला बारह वर्षकी हुई. तो उसके मुखचंद्रकी ज्योतिको देख पूर्णमासीका चंद्रमा छविछीन हुआ, बालोंकी श्यामताके आगे अमावसकी अंधेरी फीकी लगने लगी, उसकी चोटीकी सटकाई लख नागनी अपनी केंचुल छोड़ छटकगई, भौंहकी बंकाई निरख धनुष धकधकाने लगा, आंखोंकी बड़ाई चंचलाई पेख मृग मीन खंजन खिसाय रहे, नाककी सुंदरताई देख तिलफूल मुरझाय गया. उसके अधरकी लाली देख बिंबफल बिलबिलाने लगा, दांतकी पांति निरख दाड़िमका हिया दढक गया, कपोलोंकी कोमलताई देख गुलाब फूलनेसे रहा, गलेकी गुलाई देख कपोत कलमलाने लगे, कुचोंकी कोर निरख कमलकली सरोवरमें जाय गिरीं, जिसकी कटिकी कृशता देख केसरीने बनबास लिया, जंघोंकी चिकनाई पेख केलेने कपूर खाया, देहकी गोराई निरख सोनेको सकुच भई; और चंपा चप गया, करपदके आगे पद्मकी पदवी कुछ न रही. ऐसी वह गजगामिनी, पिकबयनी, बनबाला यौवनकी सरसाईसे शोभायमान भई कि जिसने इनसबकी शोभा छीनली आगे एक दिन वह नवयौवना सुगंध उबटन लगाय निर्मल नीरसे मल मल न्हाय कंघी चोटी कर पाटी सँवार मांग मोतियोंसे भर अंजन मंजनकर मिहँदी महावर रचाय पान खाय अच्छे जड़ाऊ सोनेके गहने मँगवाय शीशफूल, बेना, बेंदी, बंकी, कर्णफूल, देंडी, चौदानियां, छडे, गजमोतियोंकी नथ, भलके लटकन समेत जुगनू, मोतियोंके दुलड़ेमें गुही, चंद्रहार मोहनकी माल, पंचलड़ी, धुकधुकी, भुजबंद, नोरतन, चूड़ी, नौगरी, कंकन, कड़े, मुँदरी, छले, छाप, किंकिणी, जेहर, तेहर, गुजर, अनवठ, बिछुए पहन सुथरा झमझमता सच्चे मोतियोंकी कोरका बड़े घेरका घाघरा, और चमचमाती अंचल पल्लूकी सारी पहर जगमगाती कंचुकी कस ऊपरसे झलझलाती ओढनी ओढनीपर सुगंध लगाय इस सज धजसे हँसती हँसती सखियोंके साथ माता पिताको प्रणाम करने गई कि जैसे लक्ष्मी, ज्यों सन्मुख जाय दंडवत कर ऊषा खड़ी भई त्यों बाणासुरने उसके यौवनकी छटा देख निजमनमें इतना कह इसे बिदा किया कि अब यह ब्याहन योग्य हुई, और पीछेसे कई एक राक्षस उसके मं-

दिरकी रखवालीको भेजे और कितनीएक राक्षसिनी उसकी चौकसीको पठाई, वे वहां जाय आठपहर सावधानीसे रहने लगे. और राक्षसियां सेवा करने लगीं-महाराज! वह राजकन्या पतिके लिये नितप्रति जप दान व्रतकर श्रीपार्वतीजीकी पूजा किया करे. एकदिन नित्यकर्मसे निश्चित हो रात सेजपर अकेली बैठी मनहींमन यों शोच रहीथी, कि देखिये पिता मेरा विवाह कब करे? और किस भांति मेरा बर मुझे मिले? इतना कह पतिहीको ध्यानमें धर सोगई तो स्वप्नमें देखती क्या है, कि एक पुरुष किशोर वेष, श्यामवर्ण, चंद्रमुख, कमलनयन, अतिसुंदर, कामरूप, मोहनस्वरूप, पीतांवर पहरे, मोरमुकुट शिर धरे, त्रिभंगी छबि करे, रत्नजडित आभूषण, मकराकृत कुंडल, बनमाल, गुंजहार पहने और पीतबसन ओढ़े, महाचंचल, सन्मुख आय खडा हुआ-यह उसे देखतेही मोहित हो लजाय शिर झुकाय, रही तब उसने कुछ प्रेमसनी बातें कर स्नेह बढ़ाय निकट आय हाथ पकड़ कंठ लगाय उसके मनका भ्रम और शोच संकोच सब बिसराय दिया. फिर तो परस्पर शोच संकोच तज सेजपर बैठे हाव भाव कटाक्ष और आलिंगन चुंबन कर सुख लेने देने लगे और आनंदमें मग्न हो प्रीतिकी बातें करने, कि इसमें कितनीएक बेर पीछे ऊषाने ज्यों प्यार कर कहा, कि पतिको एकबार अंकभर कंठ लगाऊं, त्यों नयनोंसे नींद गई और जिस भांति हाथ बढ़ा मिलनेको भई थी, तिसी भांति मुरझाय पछताय रहगई.

दो०--जाग परी शोचत खरी, भयो परम दुख ताहि।
कहा गयो वह प्राणपति, देखति चहुँदिशि चाहि॥

चौ०शोचतिऊषा मिलिहोंकाहि, फिरकैसमैंदेखोंताहि॥
सोवत जोरहती हौं आज, प्रीतमकबहुँनजातो भाज॥
क्यों सुखमें रहिबेको भई, जो यह नींद नयनतें गई॥
जागतही यामिनि यम भई, जैहै क्योंकर अबयहदई॥
बिन प्रीतम चितनिपट अचैन, देखनहिततरसतहैंनैन॥
श्रवणसुन्यो चाहत हबन, कहां गये प्रीतम सुखदैन॥
जो अपने पिय पुनिलख लेहूं, प्राणसाथ करउनकेदेहूं॥

महाराज! इतना कह ऊषा अतिउदास हो प्रियका ध्यान कर सेज पर जाय मुख लपेट पड़रही. जब रात जाय भोर हुआ और डेढ़पहर दिन चढ़ा, तब सखी सहेली मिल आपसमें कहने लगीं कि, आज क्या है जो ऊषा इतना दिन चढ़ा और अबतक सोती नहीं उठी. यह बात सुन चित्ररेखा बाणासुरके प्रधान कुम्भांडकी बेटी चित्रशाला में जाय क्या देखती है, कि ऊषा छपरखटके बीच मनमारे जीहार निधाह पड़ी रोरो लंबी श्वासें ले रही है. उसकी यह दशा देख—

चौ० चितरेखाबोलीअकुलाय, कहसखितूमोसोंसमझाय॥
आज कहा शोचति है खरी, परम वियोगसिंधुमें परी ॥
रोरो अधिक उसांसे लेत, तन मन व्याकुल है केहिहेत ॥
तेरे मनको दुख परिहरौं, मन चेतो कारज सब करौं ॥
मोसी सखी और ना धनी, है परतीति मोहिं आपनी ॥
सकललोकमेंहौंफिरआऊं, जहांजाउँकारजकरल्याऊं ॥
मोको वर ब्रह्माने दीनो, वश मेरे सबहीको कीनो ॥
मेरे संग शारदा रहै, वाके बल करिहौं जो कहै ॥
ऐसी महामोहनी जानौं, ब्रह्मा रुद्र इंद्र छलि आनौं ॥
मेरो कोऊ भेद न जाने, अपने गुणको आप बखाने ॥
ऐसे और न करिहै कोऊ, भलो बुरो कोऊ किन होऊ ॥
अब तू कह सब अपनी बात, कैसे कटी आजकी रात ॥
मोसोंकपटकरोजिनप्यारी, पुर ऊंगी सबआशतिहारी ॥

महाराज! इतनी बातके सुनतेही ऊषा अतिसकुचाय शिर नाय चित्र-रेखाके निकट आय मधुर वचनसे बोली, कि सखी! मैं तुझे अपनी हितू जान रातकी बात सब सुनातीहूं. तू निजमनमें रख; और कुछ उपाय-करसके तो कर. आजरातको स्वप्नमें एक पुरुष मेघवर्ण, चंद्रवदन, कम लनयन, पीतांबर पहरे, पीतपट ओढे, मेरे पास आय बैठा; और उसने अतिहित कर मेरा मन हाथमें लेलिया. मैंभी शोच संकोच तज उससे बातें करने लगी. निदान बतराते बतराते जो मुझे प्यार आया, तौं

मैंने उसे पकड़नेको हाथ बढ़ाया. इसबीच मेरी नींद गई, और उसकी मोहनी मूर्ति मेरे ध्यानमें रही.

चौ० देख्योंसुन्योंऔर नहिंऐसो, मैंकहुकहा बताऊं जैसो वाकी छबि बरणी गहिं जाय, मेरोचित लैगयो चुराय ॥

जब मैं कैलासमें श्रीमहादेवजीके पास विद्या पढ़तीथी. तब श्रीपार्वतीजीने मुझसे कहा था, कि तेरा पति तुझे स्वप्नमें आय मिलेगा, तू उसे ढूँढ़वाय लीजो- सो बर आज रात मुझे स्वप्नमें मिला. मैं उसे कहां पाऊं और अपने विरहकी पीर किसे सुनाऊं ? कहां जाऊं ? उसे किस भांति ढुंढ़वाऊं? न उसका नाम जानूँ न गाम. महाराज ! इतना कह जब ऊषा लंबी श्वासें ले मुरझाय रहगई, तब चित्ररेखा बोली, कि सखी अब तू किसी बातकी चित्तमें चिंता मत कर, मैं तेरे कंतको तुझे जहां होगा तहांसे ढूंढ़ ला मिलाऊंगी. मुझे तीनलोकमें जानेकी सामर्थ्य है. जहां होगा तहां जाय जैसे बनेगा तैसेही ले आऊंगी, तू मुझे उसका नाम बता; और जानेकी आज्ञा दे. ऊषा बोली,सखी! तेरी यही कहावत है, कि सारी रात रोई, सांस न आई; जो मैं उसका नांव गांवही जानती होती तो दुःख काहेका था ? कुछ न कुछ उपाय करती. यह बात सुन चित्ररेखा बोली—सखी ! तू इस बातकाभी शोच न कर, मैं तुझे त्रिलोकीके पुरुष लिख २ दिखाती हूं तुम उनमेंसे अपने चित्तचोरको देख बतादीजो, फिर ला मिलाना मेरा काम है. तब तो हँसकर ऊषा बोली बहुत अच्छा. महाराज ! यह बचन ऊषाके मुखसे निकलतेही चित्ररेखा लिखनेका सब सामान मँगवाय आसनपर बैठी, और गणेश शारदाको मनाय गुरुका ध्यान कर लिखने लगी. पहले तो उसने तीन लोक चौदह भुवन सात द्वीप नौखंड पृथ्वी आकाश सातों समुद्र आठों लोक वैकुंठसहित लिख दिखाये. पीछे सब देव, दानव, गंधर्व, किन्नर, यक्ष, ऋषि, मुनि, लोकपाल, दिक्पाल और सब देशोंके भूपाल लिख लिख एक एक कर चित्ररेखाने दिखाया. पर ऊषाने अपना चाहीता उनमें न पाया. फिर चित्ररेखा यदुवंशियोंकी मूर्ति एक एक लिख लिख दिखाने लगी, इसमें अनिरुद्धका चित्र देखतेही ऊषा बोली.

चौ०अबमनचोर सखी मैंपायो, रातयहीमेरे ढिगआयो।
कर अब सखी तू कछु उपाय, याको ढूंढ़ कहूंते ल्याय ॥
सुनके चित्तरेखा यों कहै, अब यह मोते किमि बचरहै ॥

यों सुनाय चित्ररेखा पुनि बोली, कि सखी ! तू इसे नहीं जानती मैं पहचानूं हूं. यह यदुवंशी श्रीकृष्णजीका पोता प्रद्युम्नजीका बेटा, और अनिरुद्ध इसका नाम है. समुद्रके तीर नीरमें द्वारकानाम एकपुरी है तहां यह रहता है; हरिकी आज्ञासे उस पुरीकी चौकी आठ पहर सुदर्शनचक्र देता है. इस लिये कि, कोई दुष्ट, दैत्य, दानव, आय यदुवंशियोंको न सतावे; और कोई पुरीमें आवे सो विना राजा उग्रसेन शूरसेनकी आज्ञा न आने पावे. महाराज ! ये बातें सुनतेही ऊषा अति उदास हो बोली, कि सखी ! जो वह ऐसी विकट ठौर है तो . तू किस भांति तहां जाय मेरे कंतको लावेगी. चित्ररेखाने कहा, अली ! तू इस बातसे निचिंत रह. मैं हरिप्रतापसे तेरे प्राणपतिको ला मिलातीहूं इतना कह चित्ररेखा रामनामी कपड़े पहन गोपीचंदनका ऊर्द्धपुंड्र तिलक काढ़ छापें उर मूड भुज और कंठमें लगाय बहुतसी तुलसीकी माला गलेमें डाल हाथमें बड़े बड़े तुलसीके हीरोंकी सुमिरनी ले ऊपरसे हिरावल ओढ़े कॉखमें आसन लपेट भगवद्गीताकी पोथी दवाय परमभक्त वैष्णवका भेप बनाय ऊपाको यों सुनाय बिदा हो द्वारकाको चली.

दो०पैंड़े अब आकाशके, अंतरिक्ष हो जाउँ ॥
ल्याऊं तेरे कंतको, चित्ररेख तो नाउँ ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! चित्ररेखा अपनी माया कर पवनके तुरंगपर चढ़ अँधेरी रातमें श्याम घटाके साथ बातकी बातमें द्वारकापुरीमें जा बिजुलीसी चमकी; और श्रीकृष्णचंद्रजीके मंदिरमें चढ़गई, ऐसे कि इसका आना किसीने न जाना. आगे यह ढूंढ़ती ढूंढ़ती वहां गई, जहां पलँगपर सोये अनिरुद्धजी अकेले स्वप्नमें ऊपाके साथ विहार कर रहेथे, इसने देखतेही उस सोतेको पलँगसमेत उठाय चट अपनी बाट ली-

चौ०-सोवतही पर्यंकसमेत, लिये जात ऊषाके हेत ॥
अनिरुद्धको लै आई वहां, ऊषा चिंतति बैठी जहां ॥

महाराज! पलँगसमेत अनिरुद्धको देखतेही ऊषा पहले तो हकबकाय चित्ररेखाके पांओंपर जाय गिरी, पीछे यों कहने लगी धन्य है धन्य है सखी! तेरे साहस और पराक्रमको. जो कठिन ठौर जाय बातकी बातमें पलँगसमेत उठालाई और अपनी प्रतिज्ञा पूरी की; मेरे लिये तैंने इतना कष्ट किया इसका पलटा मैं तुझे नहीं देसक्ती, तेरे गुणकी ऋणियां रही. चित्ररेखा बोली सखी! संसारमें बड़ा सुख यही है जो परको सुख दीजै; और कारजभी भला यही है कि उपकार कीजै; यह शरीर किसी कामका नहीं. इससे किसीका काम होसके तो यही बड़ा काम है. इसमें स्वार्थ परमार्थ दोनों होते हैं, महाराज! इतना वचन सुनाय चित्ररेखा पुनि यों कह बिदा हो अपने घर गई, कि सखी! भगवानके प्रतापसे तेरा कंत मैंने तुझे ला मिलाया. अब तू इसे जगाय अपना मनोरथ पूरा कर. चित्ररेखाके जातेही ऊषा अतिप्रसन्न हो लाज किये प्रथम मनमें मिलनेका भय लिये मनहींमन यों कहने लगी.

चौ० कहाबातकहिपियहिं जगाऊं, कैसे भुजभरकंठलगाऊँ

निदान बीणा मिलाय मधुर मधुर स्वरोंसे बजाने लगी, बीणाकी ध्वनि सुनतेही अनिरुद्धजी जाग पड़े, और चारों ओर देख देख मनहीमन यों कहने लगे, यह कौन ठौर, किसका मंदिर, मैं यहां कैसे आया? और कौन मुझे सोतेको पलँगसमेत उठा लाया ? महाराज! उसकाल अनिरुद्धजी तो अनेक प्रकारकी बातें कह कह अचरज करतेथे. और ऊषा शोच संकोच लिये प्रथम मिलनेका भय किये एक कोनेमें खड़ी प्रियका चंद्रमुख देख निरख अपने लोचनचकोरोंको सुख देतीथी. इसबीच —

चौ० अनिरुद्धदेखिकहैअकुलाय, कहसुंदरितूअपनोभाय।
है तू को मोपै क्यों आई, कै तू मोहिं आप लै आई॥
साच झूँठएकौ नहिं जानों, सपनोसो देखतुहौं मानों॥

महाराज! अनिरुद्धजीने इतनी बात कही; और ऊषाने कुछ उत्तर न दिया. बरन औरभी लाजकर कोनेमें ठस रही. तब तो उन्होंने झट उसे

हाथ पकड़ पलँगपर ला बिठाया; और प्रीतिसनी प्यारकी बातें कह उसके मनका शोच संकोच और सब भय मिटाया. आगे वे दोनों परस्पर सेजपर बैठ हाव भाव कटाक्षकर सुख लेने देने लगे; और प्रेमकथा कहने. इस बीच बातोंहीं बातों अनिरुद्धजीने ऊषासे पूंछा, कि हे सुंदरी! तूने प्रथम मुझे कैसे देखा; और पीछे किस भांति यहां मँगाया इसका भेद समझाकर कह, जो मेरे मनका भ्रम जाय. इतनी बातके सुनतेही ऊषा पतिका मुख निरख हर्षके बोली—

चौ॰ मोहिंमिलेतुमसपने आय, मेरोचित लगयो चुराये
जागी मनभारीदुख लह्यो, तबमैं चितरेखासों कह्यो ॥
सोईप्रभुतुमको यहँ लाई, ताकी गति जानीनहिंजाई ॥

इतना कह पुनि ऊषाने कहा महाराज! मैंने तो जिस भांति तुम्हें देखा; और पाया तैसे सब कह सुनाया. अब आप कहिये अपनी बात समझाय, जैसे तुमने मुझे देखा यादवराय; यह वचन सुन अनिरुद्ध अति आनंद कर मुसुकुरायके बोले, कि सुंदरी! मैंभी आज रातको स्वप्नमें तुझे देख रहा था कि, नींदहींमें कोई मुझे उठाय यहां ले आया. इसका भेद अबतक मैंने नहीं पाया कि मुझे कौन लाया. जागा तो मैंने तुझेही देखा. इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले कि महाराज! ऐसे वे दोनों प्रिय प्यारी आपसमें बतराय पुनि प्रीति बढ़ाय अनेक अनेक प्रकारसे कामकलोल करने लगे; और विरहकी पीर हरने. आगे पानकी मिठाई, मोती मालकी शीतलताई और दिपज्योतिकी मंदताई निरख जो ऊषा बाहर जाय देखे तो उपःकाल हुआ, चंद्रकी ज्योति घटी, तारे द्युतिहीन भये, आकाशमें अरुणाई छाई. चारों ओर चिड़िया चुह चुहाई. सरोवरमें कुमुदिनी कुम्हलाई; और कमल फूले. चकवाचकईका संयोग हुआ. महाराज! ऐसा समय देख एक बार तो सब द्वार मूंद ऊषा बहुत घबराय, घरमें आय, अतिप्यारकर प्रियको कंठ लगाय लेटी, पीछे प्रियको दुराय, सखी सहेलियोंसे छिपाय, छिप छिप कंतकी सेवा करने लगी. निदान अनिरुद्धका आना, सखी सहेलियोंने जाना. फिर तो वह दिन रात पतिके संग सुखभोग किया करे. एक दिन ऊषाकी माँ बेटीकी सुधलेने आई तो उसने छिपकर देखा, कि वह एक महासुंदर तरुण पुरुषके साथ

कोठेमें बैठी आनंदसे चौपड़ खेल रही है, यह देखतेही बिन बोले चाले दबे पांओं फिर मनहींमन प्रसन्न हो आशीश देती पूठमारे वह अपने घर चली गई. आगे कितने एक दिन पीछे एक दिन ऊषा पतिको सोते देख जीमें यह विचार कर सकुचती सकुचती घरसे बाहर निकली कि कहीं ऐसा न हो जो कोई मुझे न देख अपने मनमें जाने कि ऊषा पतिके लिये घरसे नहीं निकलती. महाराज ! ऊषा कंतको अकेला छोंड़ जाते तो गई पर उससे रहा न गया, फिर घरमें आय किवांड़ लगाय बिहार करने लगी. यह चरित्र देख पौंरियोंने आपसमें कहा कि, भाई! आज क्या है जो राजकन्या अनेक दिन पीछे घरसे निकली और फिर उलटे पांओंचली गई. इतनी बातके सुनतेही उसमेंसे एक बोला, कि भाई मैं कईएक दिनसे देखता हूं ऊषाके मंदिरका द्वार दिनरात लगा रहता है; और घरके भीतर कोई पुरुष हँस हँस बातें करता है और कभी चौपड़ खेलता है. दूसरेने कहा जो यह बात सच है तो चलो बाणासुरसे जाय कहें, समझ बूझ यहां क्यों बैठे रहें?

चौ० एक कहै यह कही न जाय, तुम सब बैठरहौ अरगाय
भली बुरी होवो सो होय, होनहार मेटै नहिं कोय॥
कछूनबातकुँवारिकी कहिये, चुपह्वैदेखबैठहीरहिये॥

महाराज! द्वारपाल आपसमें ये बातें करतेही थे कि, कईएक योद्धा साथ लिये फिरता फिरता बाणासुर वहां आ निकला और मंदिर ऊपर दृष्टि कर शिवजीकी दी हुई ध्वजा न देख बोला कि यहांसे ध्वजा क्या हुई? द्वारपालोंने उत्तर दिया कि, महाराज! वह तो बहुत दिन हुये टूटकर गिरपड़ी. इसबातके सुनतेही शिवजीका वचन स्मरण कर भावित हो बाणासुर बोला–

चौ० कबकी ध्वजा पताका गिरी, वरी कहूं औतऱ्योहरी

इतना बचन बाणासुरेक मुखसे निकलतेहीं एक द्वारपाल सन्मुख जा खड़ा हो हाथ जोड़, शिर नाय बोला कि महाराज ! एक बात है पर मैं कह नहीं सकता. जो आपकी आज्ञा पाऊं तो ज्योंकि त्यों कह सुनाऊं.

बाणासुरने आज्ञा दी कि अच्छा कह; तब पौरिया बोला कि, महाराज! अपराध क्षमा कीजिये. कई दिनसे हम देखते हैं कि, राजकन्याके मंदिरमें कोई पुरुष आया है वह दिनरात बातें किया करता है. इसका भेद हम नहीं जानते कि, वह कौन पुरुष है और वह कहांसे आया है और क्या करता है. इतनी बातके सुनतेही बाणासुर अति क्रोधकर शस्त्र उठाय दबे पांओं अकेला ऊषाके मंदिरमें जाय छिपकर क्या देखता है कि एक पुरुष श्याम वर्ण अतिसुंदर पीतपट ओढ़े निद्रामें अचेत ऊषाके साथ सोया पड़ा है.

चौ०शोचतबाणासुरयोंहिये, होयपापसोवतवधकिये ॥

महाराज! यों मनहीमन विचार बाणासुर तो कईएक रखवाले वहां रख उनसें कहा कि तुम इसके जागतेही हमें आय कहियो. फिर अपने घर जाय सामाकर सब राक्षसोंको बुलाय कहने लगा कि, मेरा वैरी आन पहुँचा है, तुम सब दल ले ऊषाका मंदिर जाय घेरो. पीछेसे मैंभी आता हूं. आगे इधर तो बाणासुरकी आज्ञा पाय सबराक्षसोंने आय ऊषाका घर घेरा और उधर अनिरुद्धजी और राजकन्या निद्रासे चौंक पंसासार खेलने लगे, इसमें चौपड़ खेलते खेलते ऊषा क्या देखती है कि, चहूं ओरसे घनघोर घटा घेर आई, बिजुली चमकने लगी, दादुर मोर पपीहे बोलने लगे. महाराज! पपीहाकी बोली सुनतेही राजकन्या इतना कह प्रियके कंठ लगी—

चौ०तुमपपिहापियपियमतकरौ, यहबियोगभाषापरिहरौ

इतनेमें किसीने जाय बाणासुरसे कहा कि, महाराज! तुम्हारा वैरी जागा. वैरीका नाम सुनतेही बाणासुर अतिकोप करके उठा और अस्त्र शस्त्र ले ऊषाकी पँवरिमें आय खड़ा हुआ और लगा छिप कर देखने. निदान देखते देखते—

चौ० बाणासुर यों कहै हँकार, को है रे तू गेहमँझार
घनतनबरणमदनमनहारी, कमलनयनपीतांबरधारी।
अरे चोर बाहर किन आवै, जान कहां अब मोसों पावै॥

महाराज! जब बाणासुरने टेरके यों कहे बैन, तब ऊषा और अनिरुद्ध सुन और देख भेय निपट अचैन; पुनि राजकन्याने अति चिंता कर भयमान हो लंबी श्वासें ले ले कंतसे कहा कि महाराज! मेरा पिता असुरदल ले चढ़ि आया अब तुम इसके हाथसे कैसे बचोगे?

दो०तबहिं कोरि अनिरुद्ध कह्यो, मत डरपे तू नारि।
स्यारझूंड राक्षस असुर, पलमें डारौं मारि॥

ऐसे कह अनिरुद्धजीने वेदमंत्र पढ़ एकसौ आठ हाथकी शिला बुलाय हाथमें ले बाहर निकल दलमें जाय बाणासुरको ललकारा इनके निकलतेही बाणासुर धनुष चढाय सब कटक ले अनिरुद्धजीपर यों टूटा कि, जैसे मधुमाखियोंका झूंड किसीपै टूटे. जब असुर अनेक अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाने लगे, तब क्रोधकर अनिरुद्धजीने शिलाके हाथ कई एक ऐसे मारे. कि सब असुरदल काईसा फट गया. कुछ मरे कुछ घायल हुए बचे सो भागगये; पुनि बाणासुर जाय सबको घेर लाया और युद्ध करने लगा. महाराज! जितने अस्त्र शस्त्र असुर चलाते थे तितने इधर उधरही जाते थे और अनिरुद्धजीके अंगमें एकभी शस्त्र न लगता था.

चौ०जे अनिरुधपरपरैंहथ्यार, अधपरकटैंशिलाकीधार
शिलाप्रहार सहो नहि परै, बज्र चोट ज्यों सुरपति करै॥
लागत शीश बीचते फटैं, टूटहिं जांघ भुजा धर कटैं॥

निदान लड़ते लड़ते जब बाणासुर अकेला रहगया और सब कटक कटगया तब उसने मनहींमन अचरज कर नागफांससे अनिरुद्धजीको पकड़ बांधा, कि इस अजीतको मैं कैसे जीतूंगा? इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! जिस समय अनिरुद्धजीको बाणासुर नागफांससे बांध अपनी सभामें लेगया उसकाल अनिरुद्धजी तो मनहींमन यो विचारते थे, कि मुझे कष्ट होय तो होय पर ब्रह्माका बचन झूंठा करना उचित नहीं, क्यों कि, जो मैं नागफांससे बलकर निकलूंगा तो उसकी अमर्यादा होगी इससे बँध रहनाही

भला है; और बाणासुर यह कह रहाथा कि, अरे लड़के! मैं तुझे अब मारताहूं. जो कोई तेरा सहाय हो तो बुलाव, इसबीच ऊषाने पियाकी यह दशा सुन चित्ररेखासे कहा कि सखी! धिक्कार है मेरे जीवनको जो पति मेरा दुःखमें रहे और मैं सुखसे खाऊं पीऊं और सोऊं. चित्ररेखा बोली, सखी ! कुछ चिंता मत करै. तेरे पतिको कोई कुछ न कर सकेगा. निश्चिंत रह, अभी श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजी सब यदुवंशियोंको साथ ले चढ़ आवेंगे और असुरदलको संहार कर तुझ समेत अनिरुद्धजीको छुँड़ाय लेजाँयगे. उनकी यही रीति है कि जिस राजाकी सुंदरी कन्या सुनते हैं तहांसे बल छलकर जैसे बने तैसे लेजाते हैं उन्हीका यह पोता है. ज्यों कुंडिनपुरसे राजा भीष्मककी बेटी रुक्मिणीजीको महाबली बड़े प्रतापी राजा शिशुपाल और जरासंधसे संग्राम कर लेगयेथे तैसेही अब तुझे ले जाँयगे, तू किसी बातकी चिन्ता मत करे. ऊषा बोली, सखी ! यह दुख मुझसे सहा नहीं जाता.

चौ० नागफांस बांधे पियहरी, दहै गात ज्वाला विषभरी ॥
हूं कैसे पौढ़ौं सुख चैना, पियदुख क्योंकर देखौं नैना ॥
प्रीतम विपत परे ज्यों जीवों, भोजन करौं न पानीपीवौं॥
वर वध अब बाणासुर कीजो, मोको शरण कंतकीदीजो
होनहार होनी है होय, तासों कहा कहैगो कोय ॥
लोक वेदकी लाज न मानौं, पियासंग दुख सुखही जानौं ॥

महाराज ! चित्ररेखासे ऐसे कह जब ऊषा कंतके निकट जाय निडर निःशंक हो बैठी तब किसीने बाणासुरको जा सुनाया कि, महाराज ! राजकन्या घरसे निकल उस पुरुषके पास गई. इतनी बातके सुनतेही बाणासुरने अपने पुत्र स्कंदको बुलायके कहा कि, बेटा! तू अपनी बहनको सभासे उठाय घर लेजाय पकड़ रख और निकलने न दे. पिताकी आज्ञा पातेही स्कंद अतिक्रोध कर बोला कि, तैंने यह क्या किया पापिनी, जो छोड़ी लोकलाज और कौम अपनी. हे नीच! मैं तुझे क्या वध करूं? होगा पाप और अपयशसेभी हूं डरूं. ऊषा बोली कि भाई! जो तुम्हें भावे सो कहो और करो. मुझे पार्वतीजीने जो बर दियाथा सो वर मैंने

पाया. अब इसे छोंड़ औरपै धाऊं तो अपनेको गाली चढ़ाऊं, तज़ती है पतिको अकुलनी नारी, यही रीति परंपरासे चली आती है. बीच संसार जिससे बिधनाने संबंध किया उसीके संग जगत्में अपशय लिया तो लिया.महाराज ! इतनी बातके सुनतेही स्कंद क्रोधकर हाथ पकड़ ऊषाको वहांसे मंदिरमें उठालाया और फिर न जाने दिया. पुनि अनिरुद्धजीकोभी वहांसे उठाय कहीं अनत लेजाय बंद किया. उसकाल इधरतो अनिरुद्धजी तियके वियोगमें महाशोक करतेथे. और उधर राजकन्या कंतके विरहमें अन्न पांनी तज कठिन योग करने लगी. इस बीच कितने एक दिन पीछे एकदिन नारदमुनिजीने पहले तो अनिरुद्धजीको जाय समझाया, कि तुम किसी बातकी चिंता मत करो अभी श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद और बलराम सुखधाम राक्षसोंके संग संग्राम कर तुम्हें छुड़ाय ले जाँयगे. पुनि बाणासुरको जा सुनाया कि राजा जिसे तुमने नागफाँससे पकड़ बांधा है वह श्रीकृष्णका पोता और प्रद्युम्नका बेटा है और अनिरुद्ध उसका नाम है. तुम यदुवंशीयोंको भलीभांतिसे जानते हो जो चाहो सो करो; मैं इस बातसे तुम्हें सावधान करने आया था सो कर चला. यह बात सुन बाणासुरने नारदजी ! मैं सब जानताहूं. इतना कह नारदजीको बिदा किया इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे ऊषास्वप्नअनिरुद्धबंधनं नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

अध्याय ६४.

श्रीकृष्ण और बाणासुरका युद्ध और बाणासुरका श्रीकृष्णजीको शरण आना और ऊषाका अनिरुद्धके संग विवाह कर देना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जब अनिरुद्धजीको बँधे २ चार

महीना होगये तब नारदजी द्वारकापुरीमें गये. सो वहीं क्या देखते हैं कि सब यादव महाउदास मनमलीन तनछीन होरहे हैं. और श्रीकृष्णजी व बलरामजी उनके बीचमें बैठे अतिचिंता कर कह रहे हैं, कि बालकको उठाय यहांसे कोन लेगया इस भांतिकी बातें हो रहीं थीं और रनवासमें रोना पीटना होरहा था, ऐसा कि कोई किसीकी बात न सुनताथा. नारदजीके जातेही सब लोग क्या स्त्री क्या पुरुष उठ धाये और अतिव्याकुल तनछीन मनमलीन रोते बिलबिलाते सन्मुख खड़े हुए. आगे अतिविनती कर हाथ जोड़ शिर नाय नारदजीसे सब पूंछने लगे.

चौ० साँचीबातकहौऋषिराय, जासोजियराखैं बहिराय॥
कैसे सुधि अनिरुद्धकी लहैं, कहौ साधुताके बल रहैं॥

इतनी बातके सुनतेही नारदजी बोले, कि तुम किसी बातकी चिंता मतकरो और अपने मनका शोक हरो, अनिरुद्ध जीते जागते शोणितपुरमें हैं. वहां उन्होंने जाय राजा बाणासुरकी कन्यासे भोग किया, इसलिये उसने उन्हें नागपाशसे पकड़ बांधा है, विना युद्ध किये वह किसी भांति अनिरुद्धजीको न छोंड़ेगा यह भेद मैंने तुम्हें कह सुनाया. यों कह नारदमुनिजी तो चले गये, पीछे सब यदुवंशियोंने जाय राजा उग्रसेनके कहा, कि महाराज! हमने ठीक समाचार पाया कि अनिरुद्धजी शोणितपुरमें बाणासुरके यहां हैं उन्होंने उसकी कन्या रमी इससे उसने उन्हें नागपाशसे बांध रक्खा है, अब हमें क्या आज्ञा होती है? इतनी बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने कहा, कि तुम हमारी सब सेना ले जाओ और जैसे बने तैसे अनिरुद्धको छुड़ालाओ. ऐसा वचन उग्रसेनके मुखसे निकलतेही महाराज! सब यादव तो राजा उग्रसेनका कटक ले बलरामजीके साथ हुए. व श्रीकृष्णचंद्र और प्रद्युम्नजी गरुड़के कांधेपर चढ़ सबके आगे शोणितपुरको गये.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जिसकाल बलरामजी राजा उग्रसेनका सब दल ले द्वारकापुरीसे धोसा दे शोणितपुरको चले उस समयकी कुछ शोभा वर्णी नहीं जाती कि; सबके आगे

तो बड़े बड़े दंतीले मतवाले हाथियोंकी पांति तिनपर धौंसा बाजता जाता था और ध्वजा पताका फहरातीं थीं, तिनके पीछे एक ओर गजों-की अवली अंबारियोंसमेत जिनपर बड़े बड़े रावत योद्धा शूरवीर यादव झिलम टोप पहने सब अस्त्र शस्त्र लगाए बैठे जातेथे, उनके पीछे रथोंके तांतोंके तांते दृष्टि आतेथे-उनकी पीठपर घुड़चढ़ोंके यूथके यूथ वर्ण वर्णके घोड़े गोटे पट्ठेवाले गजगाह पाखर डाले जमाते ठहराते नचाते कुदाते फँदाते चले जातेथे और उनके बीच बीच चारण यश गातेथे और कड़खैत कड़खा, तिस पिछे फरी, खांड़े, छूरी, कटारी, जमधर, बरछी, बरछे, भाले, बल्लम, बाने, पटे, धनुष, बाण, गदा, चक्र, फरशे, गँड़ासी, लुहँगी, गुप्ती, बांक, बिछुए समेत अनेक अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र लिये पैदलोंका दल टीड़ीदलसा चला जाताथा. उनके मध्य मध्य धौंसे, ढोल, डफ, बांसुरी भेरे, रणसिंहोंका जो शब्द हो-ताथा सो अतिही सुहावना लगताथा—

चौ॰ उड़ीरेणुआकाशलौंछाई, छिप्योभानुतमफैल्यो भाई।
चकवीचकवा भयो वियोग, सुंदरिकरैं कंतसों भोग ॥
फूलेकमलकुमुदकुम्हलाने, निशिचरफिरहिंनिशाजियजाने

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जिस समय बलरामजी बारह अक्षौहिणी सेना ले अतिधूमधामसे उसके गढ़ गढ़ी कोट तोड़ते और देश उजाड़ते ज्यों शोणितपुरमें पहुँचे और श्रीकृष्ण-चंद्र व प्रद्युम्नजीभी आन मिले तिसी समय किसीने अति भय खाय, घबराय, जाय हाथ जोड़ शिर नाय, बाणासुरसे कहा कि, महाराज! कृष्ण बलराम अपनी सब सेना ले चढ़ आये और उन्होंने हमारे देशके गढ़ गढ़ी कोट ढा गिराए और नगरको चारों ओरसे आय घेरा, अब क्या आज्ञा होती है? इतनी बातके सुनतेही बाणासुर महाक्रोध कर अपने बड़े बड़े राक्षसोंको बुलाय बोला तुम सब दल अपना लेजाय नगरके बाहर जाय कृष्ण बलरामके सन्मुख खड़े होओ, पिछेसे मैंभी आताहूँ. महा-राज! आज्ञा पातेही वे असुर बातकी बातमें बारह अक्षौहिणी सेना ले

श्रीकृष्ण बलरामजीके सोंहीं लड़नेको अस्त्र शस्त्र लिये आ खड़े रहे. उनके पीछेही श्रीमहादेवजीका भजन सुमिरणध्यान कर बाणासुरभी आ उपस्थित हुआ. शुकदेवजी मुनि बोले कि, महाराज! ध्यान करतेही शिवजीका आसन डोला और ध्यान धर जाना कि मेरे भक्तपर भीड़ पड़ी है इस समय चल कर उसकी चिंता मेटा चाहिये. यह मनहींमन विचार पार्वतीजीको अर्धांग धर, जटाजूट बांध, भस्म चढ़ाय, बहुतसी भाँग, आक, धतूरा खाय, श्वेतनागोंका जनेऊ पहन, गजचर्म ओढ़, मुंडमाल, सर्प पहन, त्रिशूल, डमरू, पिनाक खप्पर ले, नंदीपर बैठ, भूत, प्रेत, पिशाचनी आदि सेना ले भोलानाथ चले. उस समयकी कुछ शोभा बर्णी नहीं जाती कि, कानमें गजमणियोंकी मुद्रा, ललाटमें चंद्रमा, शिरपर गंगा धरे, लाललाल लोचन करे, अतिभयंकर भेष महाकालकी मूरति बनाये इस रीतिसे बजाते गाते सेनाको नचाते जातेथे कि वह रूप देखतेही बनिआवे कहनेमें न आवे. निदान कितनी एक बेरमें शिवजी अपनी सेना लिये वहां पहुँचे कि, जहां सब असुरदल लिये बाणासुर खड़ा था. हरको देखतेही बाणासुर हर्षके बोला कि कृपासिंधु आप बिन कौन इससमय मेरी सुध ले.

चौ०तेज तुम्हारो इनको दहै, यादवकुलअबकैसे रहै॥

यों सुनाय फिर कहने लगा कि, महाराज! इस समय धर्मयुद्ध करो. और एक एकके सन्मुख हो एक लड़ो. महाराज! इतनी बात जो बाणासुरके मुखसे निकली तो इधर असुरदल लड़नेको चलकर खड़ा हुआ और उधर यदुवंशी आ उपस्थित हुए. दोनों ओर जुझाऊ बाजा बाजने लगे, शूरवीर रावत योद्धा अस्त्र शस्त्र साजने, और अधीर नपुंसक कायर खेत छोंड़ छोंड़ जी लेले भागने. उसकाल महाकालस्वरूप शिवजी श्रीकृष्णचंद्रजीके सन्मुख हुये, बाणासुर बलरामजीके सोहीं हुआ, स्कंद प्रद्युम्नजीसे आय भिड़ा और इसी भांति एकएकसे जुट गये. दोनों ओरसे शस्त्र चलने लगे, उधर धनुष पिनाक महादेवजीके हाथ, इधर सारंग धनुष लिये यदुनाथ. शिवजीने ब्रह्मबाण चलाया, श्रीकृष्णचंद्रजीने ब्रह्मास-

रूसे काट गिराया. फिर रुद्रने चलाई महाबयार, सो हरिने तेजसे दीनी टार. पुनि महादेवजीने अग्नि उपजाई, वह मुरारिने मेह वर्षाय बुझाई. और एक महाज्वाला उपजाई, सो सदाशिवके दलमें धाई. उसने डाढ़ी मूंछ और जलायके केश, कीने सब असुर भयानक वेष. जब असुरदल जलने लगा और बड़ा हाहाकार हुआ तब भोलानाथने जले अधजले राक्षसों और भूतप्रेतोंको तो जल वर्षाय ठंढा किया और आप अति-क्रोध कर नारायणीबाण चलानेको लिया, पुनि मनहीमन कुछ शोच समझ न चलाया रखदिया. फिर तो श्रीकृष्णजी आलस्य बाण चलाय सबको अचेत कर लगे असुरदल काटने; ऐसे कि, जैसे किसान खेती काटे. यह चरित्र देख जो महादेवजीने अपने मनमें शोचकर कहा की, अब प्रलययुद्ध बिना किये नहीं बनता तोहीं स्कंद मोरपर चढ़ आया और अंतरिक्ष हो उसने श्रीकृष्णजीकी सेनापर बाण चलाया.

चौ० तब हरिसों प्रद्युम्न उच्चरै, मोर चढ्यो ऊपरतेलरै
आज्ञा देहु युद्ध अति करै, मारौं जबहिं भूमिगिरपरै

इतनी बातके कहतेही प्रभुने आज्ञा दी कि, प्रद्युम्नजीने एक बाण मारा सो जा मोरको लगा. तब स्कंद नीचे गिरा, स्कंदके गिरतेही बाणासुर अतिकोप कर पांच धनुष चढ़ाय एक एक धनुषपर दोदो बाण धर लगा मेहसा बरसाने और श्रीकृष्णचंद्रभी बीचहीं लगे काटने. उस-काल महाराज! इधर उधरके मारू ढोल डफसे बाजतेथे, कड़खैत धमालसी गातेथे, घावोंसे लोहूकी धार पिचकारियोंसी चलरहीथी, जिधरतिधर लाल लाल लोहू गुलालसा दृष्टि आताथा, बीच बीच भूत, प्रेत, पिशाच जो भांति भांतिके भेष भयावने बनाए फिरतेथे सो भगतसी खेल रहेथे. और रक्तकी नदी रंगकीसी बह निकलीथी. लड़ाई क्या दोनों ओर होलीसी हो रहीथी. इसमें लड़ते लड़ते कितनी एक बेर पीछे श्रीकृष्ण-चंद्रजीने एक बाण ऐसा मारा कि, उसके रथका सारथी उड़गया और घोड़े भड़के. निदान रथवानके मरतेही बाणासुरभी रण छोंड़ भागा. श्रीकृष्णजीने उसका पीछा किया. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! बाणासुरके भागनेका समाचार पाय उसकी मा

जिसका नाम कोटरा सो उसी समय भयानक भेष छूटे केश नंगमनंगी आ श्रीकृष्णजीके सन्मुख खड़ी हुई और लगी पुकार करने.

चौ॰ देखतही प्रभु मूंदे नैन, पीठ दई ताके सुन बैन ॥
तौलौं बाणासुर भग गयो, फिर अपनो दल जोरत भयो

महाराज! जबतक बाणासुर एक अक्षौहिणी दल साज वहां आया, तबतक कोटरा श्रीकृष्णजीके आगेसे न हटी पुत्रकी सेना देख अपने घर गई. आगे बाणासुरने आय बड़ा युद्ध किया पर प्रभुके सन्मुख न ठहरा, फिर भाग महादेवजीके पास गया बाणासुरको भयातुर देख शिवजीने अतिक्रोधकर महाविषमज्वरको बुलाय श्रीकृष्णजीकी सेनापर चलाया यह महाबली बड़ा तेजस्वी जिसका तेज सूर्यकी समान तीन मुंड नौ पग छह करवाला त्रिलोचन भयानक भेष श्रीकृष्णचंद्रजीके दलको घाला॰ उसके तेजसे यदुवंशी लगे जलने और थरथर कांपने; निदान अतिदुःख पाय घबराय यदुवंशियोंने आय श्रीकृष्णजीसे कहा कि महाराज! शिवजीके ज्वरने आय सारे कटकको जलाय मरा, अब इसके हाथसे बचाइये नहीं तो एकभी यदुवंशी जीता न बचेगा. महाराज! इतनी बात सुन और सबको कातर देख हरिने शीत ज्वर चलाया, वह महादेवजीके ज्वरपर धाया. इसे देखतेही वह डरकर पलाया और चला चला सदाशिवजीके पास आया॰

चौ॰तबज्वरमहादेवसोंकहै, राखहु शरण कृष्णज्वरदहै

यह बचन सुन महादेवजी बोले कि, श्रीकृष्णचंद्रजीके ज्वरको बिना श्रीकृष्णचंद्र ऐसा त्रिभुवनमें कोई नहीं जो हरे, इससे उत्तम यही है कि तू भक्तहितकारी श्रीमुरारीके पास जा॰ शिववाक्य सुन शोच विचार विषमज्वर श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदजीके सन्मुख जा हाथ जोड़ अति बिनती कर गिड़गिड़ाय हाहाखाय बोला. हे कृपासिंधु! पतितपावन! दीनदयाल! मेरा अपराध क्षमा कीजो, और अपने ज्वरसे बचाय लीजो॰

चौ॰प्रभुतुमहोब्रह्मादिकईशा, तुम्हारीशक्ति अगमजगदीश॥
तुमहीं रचकर सृष्टिसँवारी, सब माया जग कृष्णतुम्हारी॥
कृपा तुम्हारी यह मैं बूझौं, ज्ञान भये जगकरता सूझौं॥

इतनी कथा सुनतेही दयालु हरि बोले कि तू मेरी शरण आया इससे बचा, नहीं तो जीता न बचता. मैंने तेरा अबका अपराध क्षमा किया फिर मेरे भक्त और दासोंको मत व्यापियो तुझे मेरीही आन है. ज्वर बोला—कृपासिंधु ! जो इस कथाको सुनेगा उसे शीतज्वर एकांतरा और तिजारी कभी न व्यापेगी. पुनि श्रीकृष्णचंद्र बोले कि तू अव महादेवके निकट जा यहा मत रह, नहीं तो मेरा ज्वर तुझे दुःख देगा. आज्ञा पातेही बिदा हो दंडवत कर विषमज्वर सदाशिवजीके पास गया और ज्वरकी बाधा सब मिटगई. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज !

चौ० यहसंबादसुनै जो कोय, ज्वरको डर ताको नहीं होय

आगे बाणासुर अतिकोप कर सब हाथोंमें धनुष बाण ले प्रभुके सन्मुख आ ललकारके बोला—

चौ० तुमतेयुद्धकियो मैं भारी, तोहूं साध न पुजीहमारी ॥

जव यह कह लगा सब हाथोंसे बाण चलाने, तब भक्तहितकारी श्रीकृष्णचंद्रजीने सुदर्शनचक्रको छोड़ उसके चार हाथ रख सब हाथ काट डाले; ऐसे, कि जैसे कोई बातके कहते वृक्षको जुदा २ छांट डाले. हाथोंके कटतेही बाणासुर शिथिल हो गिरा, घावोंसे लोहूकी नदी बह निकली. जिसमें भुजा एक मगर मच्छसी जनातीथीं. कटेहुये हाथियोंके मस्तक घड़ियालसे डूबते उछलते जातेथे. बीच बीच रथ बड़े नवाड़ेसे बहे जातेथे. और जिधर तिधर समरभूमिमें श्वान, स्यार, गीध, आदि पशु पक्षी लोथें खैंच खैंच आपसमें लड़ लड़, झगड़ झगड़, फाड़ फाड़ खातेथे. कौवे शीशोंसे आंखें निकाल निकाल लेले उड़ उड़ जातेथे. श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! रणभूमिकी यह गति देख बाणासुर अतिउदास हो पछताने लगा. निदान निर्बल हो सदाशिवजीके निकट गया तब—

चौ० कहतबशिवमनमाहिंबिचार, अबहरिकीकीजैमनुहार

इतना कह श्रीमहादेवजी बाणासुरको साथ ले वेदपाठ करते वहां आए कि जहाँ रणभूमिमें श्रीकृष्णचंद्र खड़े थे, तहां बाणासुरको पांओंपर डाल शिवजी हाथ जोड़ बोले. कि हे शरणागतवत्सल ! अब यह

बाणासुर आपकी शरण आया. इसपर कृपादृष्टि कीजै और इसका अपराध मनमें न लीजै. तुम तो बारंबार अवतार लेते हो भूमिका भार उतारनेको और दुष्टहनन और संसारके तारनेको. तुम हो प्रभु अलख अभेद, अनंत, भक्तोंके हेतु संसारमें आय प्रकट होते भगवंत. नहीं तो सदा रहतेहो विराटस्वरूप, तिसका है यह रूप. स्वर्ग शिर, नाभि आकाश, अग्नि मुख, जल रेत, दिशा कर्ण, पृथ्वी पांव, समुद्र पेट, पर्वत नख, बादल केश, रोम वृक्ष, लोचन भानु, शशि मन, रुद्र अहंकार, पवन श्वास, पलक लगना रात दिन, गर्जन शब्द-

चौ०ऐसे रूप सदा अनुसरौ, काहूपै नहिं जाने परौ ॥

और यह संसार दुःखका समुद्र है इसमें चिंता और मोहरूपी जल भरा है, प्रभु! बिन नामकी नावके सहारे कोई इस महाकठिन समुद्रके पार नहीं जा सक्ता, और यों तो बहुतेरे डूबते उछलते हैं जो नरदेह पाकर तुम्हारा भजन, सुमिरन और जप न करेगा सो नर भूलेगा, धर्म और पाप बढ़ावेगा. जिसने संसारमें आय तुम्हारा नाम न लिया तिसने अमृत छोड़ विष पिया.

चौ०जिसकेहृदयबसोतुमआय,भक्तिमुक्तितिहिमिलिगुणगाय

इतना कह पुनि महादेवजी बोले कि, हे कृपासिंधु! दीनबंधु!! तुम्हारी महिमा अपरंपार है, किसे इतनी सामर्थ्य है जो उसे बखाने और तुम्हारे चरित्रोंको जाने. अब मुझपर कृपा कर इस बाणासुरका अपराध क्षमा कीजै और इसे अपनी भक्ति दीजै. यहभी तुम्हारी भक्तिका अधिकारी है, क्योंकि भक्त प्रह्लादका वंश अंश है. श्रीकृष्णचंद्र बोले कि,शिवजी! हममें और तुममें कुछ भेद नहीं ओर जो भेद समझेगा सो महानरकमें पडेगा और मुझे कभी न पावेगा, जिसने मुझे ध्याया, उसने अंतसमय मुझे पाया. इसने निष्कपट तुम्हारा नाम लिया, तिसीसे मैंने इसे चतुर्भुज किया. जिसे तुमने वरदिया और दोगे तिसका निर्वाह मैंने किया और करूंगा. महाराज! इतना वचन प्रभुके मुखसे निकलतेही शिवजी दंडवत कर बिदा हो अपनी सेना ले कैलासको गये और श्रीकृष्णचंद्र वहां ही खड़े रहे. तब बाणासुर हाथ जोड़ शिर नाय विनती कर बोला कि,

बातके सुनतेही श्रीविहारी भक्तहितकारी प्रद्युम्नजीको साथ ले बाणासुरके धाम पधारे. महाराज! उसकाल बाणासुर अतिप्रसन्न हो प्रभुको बड़ी भावभक्तिसे पाटंबरकें पांवड़े डालता लिवाय लेगया. आगे—

चौ०चरणधोयचरणोदकलियो, अचमनकरमाथेपरदियो

पुनि कहने लगा कि, जो चरणोदक सबको दुर्लभ है सो मैंने हरिकी कृपासे पाया और जन्मजन्मका पाप गँवाया. यही चरणोदक त्रिभुवनको पवित्र करता है. इसीका नाम गंगा है. इसे ब्रह्माने कमंडलुमें भरा, शिवजीने शीशपर धरा, पुनि सुर मुनि ऋषियोंने माना और भगीरथने तीनों देवताओंकी तपस्या कर संसारमें आना. तबसे इसका नाम भागीरथी हुआ. यह पापमलहरणी, पवित्रकारिणी, साधुसंतको सुखदेनी, वैकुंठकी निसेनी है. और जो इसमें न्हाया, उसने जन्मका पाप गँवाया. जिसने गंगाजल पिया, तिसने निःसंदेह परमपद लिया. जिनने भागीरथीका दर्शन किया, तिनने सारे संसारको जीत लिया. महाराज! इतना कह बाणासुर अनिरुद्धजी और ऊषाको ले आया और प्रभुके सन्मुख हाथ जोड़ बोला—

चौ०क्षमिये दोष भावई भई, यह मैं ऊषा दासी दई॥

यों कह वेदकी विधिसे बाणासुरने कन्यादान किया और तिसके यौतुकमें बहुत कुछ दिया कि जिसका पारावार नहीं. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! ब्याहके होतेही श्रीकृष्णचंद्र बाणासुरको आशा भरोसा दे राजगद्दीपर बैठाय पोते बहूको साथ ले बिदा हो धौंसा बजाय सब यदुवंशियोंसमेत वहांसे द्वारकापुरीको पधारे. इनके आनेका समाचार पाय सब द्वारकावासी नगरके बाहर आय प्रभुको बाजे गाजेसे लिवाय लाये उसकाल पुरबसी हाट बाट चौहटों चौबारों कोठोंसे मंगल गीत गाय गाय मंगलाचार करतेथे और राजमंदिरमें श्रीरुक्मिणी आदि सब सुंदरी बधाए गाय गाय रीतिं भांति करतींथीं और देवता अपने अपने विमानोंपर बैठ उधरसे फूल बरसाय बरसाय जयजयकार करतेथे और घर बाहर सारे नगरमें आनन्द हो रहाथा कि उसी समय बलराम सुखधाम और श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद सब यदुवं-

शियोंको बिदा दे अनिरुद्ध ऊषाको साथले राजमंदिरमें जा विराजे.

चौ०आनी ऊषागेहमँझारी, हरषहिं देखि कृष्णकी नारी॥
देहिंअशीशसासुउर लावैं, निरखि हरषिभूषणपहिरावैं ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे ऊषाविवाहचरित्रवर्णनं नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

अध्याय ६५.

नृग राजाका दी हुई गौंका दुसरे दिन दान करनेसे ब्राह्मण शापसे सरठ होकर कूपमें गिरना और श्रीकृष्णके स्पर्शसे शापमुक्त होना और श्रीकृष्णकी स्तुति करना.

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! इक्ष्वाकुवंशी राजा नृग बड़ा ज्ञानी, दानी, धर्मात्मा, साहसी था. उसने अनगनित गोदान किये. गंगाके बालूकी कणके, भादोंके मेहकी बूंदें और आकाशके तारे गिने जायँ, पर राजा नृगके दानकी गायें गनी न जाँय. जो ऐसा ज्ञानी महादानी राजा सो थोड़े अधर्मसे गिरगिट हो अंधे कुएमें रहा; तिसे श्रीकृष्णचंद्रजीने मोक्ष दिया, इतनी कथा सुन श्रीशुकदेवजीसे राजा परीक्षितने पूंछा महाराज! ऐसा धर्मात्मा दानी राजा किस पापसें गिरगिट हो अंधकुएमें रहा और श्रीकृष्णचंद्रजीने कैसे उसे तारा, यह कथा तुम मुझे समझाकर कहो जो मेरे मनका संदेह जाय. श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! आप चित्त दे मन लगाय सुनिये, मैं ज्योंकी त्यों सब कथा कह सुनाताहूं. कि राजा नृग तो नित्यप्राति गोदान किया करतेहीथे. पर एकदिन प्रातही न्हाय संध्या पूजा करके

सहस्र धौली, धूमरी, काली, पीली, भूरी, कबरी, गौ मँगाय, रूपेके खुर, सोनेके सींग, तांबेकी पीठ समेत पाटंबर उढ़ाय संकल्पी और उनके ऊपर बहुतसा अन्न धन ब्राह्मणोंको दिया. वे ले अपने घर गये, दूसरे दिन फिर राजा उसी भांति गोदान करने लगा; तो एक गाय पहले दिनकी संकल्पी अनजाने आनमिली सोभी राजाने उन गायों-के साथ दान करदी. ब्राह्मण ले अपने घरको चला, आगे दूसरे ब्राह्मणने अपनी गौ पहचान बाटमें रोकी और कहा यह गाय मेरी है मुझे कल राजाके यहांसे मिली है, हे भाई! तू इसे क्यों लिये जाताहै. वह ब्राह्मण बोला कि, इसे तो मैं अभी राजाके यहांसे लिये चला आताहूं तेरी कहांसे हुई? महाराज! वे दोनों ब्राह्मण इसी भांति मेरी मेरी कर झगड़ने लगे. निदान झगड़ते झगड़ते वे दोनों राजाके पास गये, राजाने दोनोंकी बात सुन हाथ जोड़ अतिबिनती कर कहा कि—

चौ० कोऊ लाख रुपैया लेऊ, गैया यह काहूको देऊ ॥

इतनी बातके सुनतेही दोनों झगड़ेलू ब्राह्मण अतिक्रोध कर बोले कि, महाराज! जो गाय हमने स्वस्ति बोलके लई सो करोड रुपये पानेसेभी हम न देंगे. वह तो हमारे प्राणके साथ है. महाराज! पुनि राजाने उन ब्राह्मणोंके पांओं पड़ पड़ अनेक भांति फुसलाया समझाया, पर उन तामसी ब्राह्मणोंने राजाका कहना न माना. निदान महाक्रोध कर इतना कह दोनों ब्राह्मण गाय छोंड़ चले गये कि महाराज! जो गाय आपने संकल्प कर हमें दी और हमने स्वस्ति बोल हाथ पसार ली वह गाय रुपये ले नहीं दी जाती, अच्छा जो तुम्हारे यहां ऐसा अन्याय है तो कुछ चिंता नहीं. महाराज! ब्राह्मणोंके जातेही राजा नृग पहले तो अतिउदास हो मनहींमन कहने लगा कि, यहा अधर्म अनजाने मुझसे हुआ सो कैसे छूटेगा और पीछे अति दान पुण्य करने लगा. कितने एक दिन बीते राजा नृग कालवश हो मरगया. उसे यमके गण धर्मराजके पास लेगये, धर्मराज राजाको देखतेही सिंहासनसे उठ खड़ा हुआ, पुनि भावभक्ति कर आसनपर बैठाय अतिहित कर बोला—महाराज! तुम्हारा पुण्य है बहुत और पाप है थोड़ा कहो पहले क्या भुगतोगे—

चौ० सुन नृप कहत जोरकै हाथ, मेरो धर्म टरो जिन नाथ।
पहले हौं भुगतौंगो पाप, तन धरिकै सहि हौं संताप॥

इतनी बातके सुनतेही धर्मराजने राजा नृगसे कहा कि, महाराज! तुमने अनजाने जो दान कीहुई गाय फिर दान की, उसी पापसे आपको गिरगिट हो बनबीच गोमतीतीर अंधेकुएमें रहते हुये जब द्वापरके अंतमें श्रीकृष्णचंद्र अवतार लेंगे तब तुम्हें वे मोक्ष देंगे. महाराज! इतना कह धर्मराज चुपरहा. और राजा नृग उसी समय गिरगिट हो अंधे कुएमें जा गिरा. और जीवभक्षण कर कर वहां रहने लगा. आगे कई युग बीत द्वापरके अंतमें श्रीकृष्णजीने अवतार लिया और ब्रजलीला कर जब द्वारकाको गये और उनके बेटे पोते भए, तब एकदिन कितनेएक श्रीकृष्णजीके बेटे पोते मिल अहेरको गए. और वनमें अहेर करते करते प्यासे भये. तब वे बनमें जल ढूंढ़ते ढूंढ़ते उसी अंधेकुएपर गये, जहां राजा नृग गिरगिटका जन्म ले रहा था. कुएमें झांकतेही एकने पुकारके सबसे कहा, अरे भाई! देखो! इस कुँएमें कितना बड़ा एक गिरगिट है इतनी बातके सुनतेही सब दौड़ आए और कुँएके पनघट पर खड़े हो लगे फेंटें पगड़ी मिलाय मिलाय लटकाय लटकाय उसे काढ़ने और आपसमें यों कहने लगे कि, भाई! इसे विन कुँएसे निकाले हम यहांसे न जाँयगे. महाराज! जब वह पगड़ी फेंटोंकी रस्सीसे न निकला, तब उन्होंने गांवसे सन सूत मूँज चामकी मोटी मोटी भारी भारी बरेतें मँगवाई और कुँएमें फांस गिरगिटको बांध बलकर खेंचने लगे. पर वह वहांसे टसकाभी नहीं. तब किसीने द्वारकामें जाय श्रीकृष्णजीसे कहा—महाराज! बनमें अंधे कुँएके भीतर एक बड़ा मोटा भारी गिरगिट है उसे कुवँर काढ़ हारे पर वह नहीं निकलता.

इतनी बातके सुनतेही हरि उठ धाए और चले चले वहां आए जहां [illegible]ड़के गिरगिट निकाल रहे थे. प्रभुको देखतेंही सब लड़के बोले कि, [illegible] देखो यह कितना बड़ा गिरगिट है. हम बड़ी बेरसे निकाल रहे हैं, [illegible]कलता नहीं. महाराज! इस बचनको सुन श्रीकृष्णजीने कुएँमें उतर [illegible] शरीरमें चरण लगाया तो वह देह छोंड़ अतिसुंदर पुरुष हुआ.

चौ॰भूपति रूप रह्योगहिपाँय, हाथजोड़विनैवैशिरनाय

कृपासिंधु! आपने बड़ी कृपा कि जो इस महाविपत्तिमें आय मेरी सुध ली. श्रीशुकदेवजी बोले राजा! जब वह मनुष्यरूप हो हरिसे इस भांतिकी बातें करने लगा, तब यादवोंके बालक और हरिके बेटे पोते अचरज कर श्रीकृष्णचंद्रसे पूंछने लगे कि, महाराज! यह कौन है? और किस पापसे गिरगिट हो यहां रहता था सो कृपाकर कहो तो हमारे मनका संदेह जाय. उसकाल प्रभुने आप कुछ न कहा, राजासे कहा—

चौ॰अपनो भेद कहौ समुझाय, जैसे सबै सुनैं मनलाय

कोहोआप कहांते आए, कौनपापयहकायापाए ॥

सुनकैनृपकहजोरेहाथ, तुमसबजानतहोयदुनाथ ॥

तिसपर आप पूंछते हो तो मैं कहताहूं मेरा नाम है राजा नृग मैंने अनगिनत गौ ब्राह्मणोंको तुम्हारे निमित्त दीं; एक दिनकी बात है कि मैंने कितनी एक गायें संकल्प कर ब्राह्मणोंको दीं; दूसरे दिन उन गायोंमेंसे एक गाय फिर आई सो मैं और गायोंके साथ अनजाने दूसरे दिन दान कर दी. जो वह लेकर निकला, तो पहले ब्राह्मणने अपनी गौ पहँचान उससे कहा यह गाय मेरी है मुझे कल राजाके यहांसे मिली है, तू इसे क्यों लिये जाता है? वह बोला-मैं अभी राजाके यहांसे लिये चला आता हूं. तेरी कैसे हुई? महाराज! वे दोनों विप्र इसी बातपर झगड़ते झगड़ते मेरे पास आए. मैंने उन्हें समझाया और कहा कि, एक गायके पलटे मुझसे लाख गौ लो और तुममेंसे कोई यह छोड़ दो. महाराज! मेरा कहा हठकर उन दोनोंने न माना. निदान गौ छोड़ क्रोध कर वे दोनों चले गये. मैं अछताय पछताय मन मार बैठ रहा. अंत समय यमके दूत मुझे धर्मराजके पास ले गये, धर्मराजने मुझसे पूंछा कि राजा! तेरा धर्म है बहुत और पाप है थोड़ा; कहो पहले क्या भुगतोगे? मैंने कहा पाप. इस बातके सुनतेही महाराज! धर्मराज बोले कि, राजा तैंने ब्राह्मणको दी हुई गाय फिर दान की इस अधर्मसे तू गिरगिट हो पृथ्वीपर जाय गोमतीतीर बनके बीच अंधकूपमें रह, जब द्वापरके अंतमें श्रीकृष्णचंद्र अवतार ले तेरे पास आवेंगे

तब तेरा उद्धार होगा. महाराज! तभीसे मैं सरठरूप इस अंधकूपमें पड़ आपके चरणकमलोंका ध्यान करताथा. अब आय आपने मुझे महाकष्टसे उद्धारा, और भवसागर पार उतरा. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! इतना कह राजा नृग तो बिदा हो विमानमें बैठ वैकुंठको गया, और श्रीकृष्णचंद्रजी सब बालगोपालोंको समझायके कहने लगे कि-

चौ० विप्रद्वेषजिन कोऊ करो, मतकोउ अंशविप्रकोहरो
मनसंल्पकियोजिन राख्यो, सत्यवचन विप्रनसोंभाख्यो
विप्रहिं दियो फेर जो लेहि, ताको दंड इतो यम देहि ॥
विप्रनके सेवक ह्वै रहियो, सबअपराध विप्रको सहियो
विप्रहि माने सो मोहिं माने, विप्रन अरुमोहिभिन्ननजाने

जो मुझमें और ब्राह्मणमें भेद जानेगा सो नरकमें पड़ेगा और विप्रको मानेगा वह मुझे पावेगा और निःसंदेह परमधाममें जावेगा; महाराज! यह बात कह श्रीकृष्णजी सबको वहांसे ले द्वारकापुरी पधारे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे राजानृगमोक्षो नाम पंचषष्टितमोऽध्यायः ६५

अध्याय ६६.

बलरामजीका व्रजमें जाना और गोपियोंके संग रासक्रीडा करना और हलसे यमुनाको खेंचना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद और बलराम सुखधाम मणिमय मंदिरमें बैठे थे कि बलरामजीने

प्रभुसे कहा भाई! जब हमें वृंदावनमें कंसने बुला भेजा था और हम मथुराको चले थे तब गोपियों और नंद यशोदासे हमने तुमने यह बचन किया था कि, हम शीघ्रही आय मिलेंगे सो वहां न जाय द्वारकामें आय बसे, वे हमारी सुरत करते होंगे. जो आप आज्ञा करें तो हम जन्मभूमि देख आवें और उनका समाधान कर आवें. प्रभु बोले कि अच्छा. इतनी बातके सुनतेही बलरामजी सबसे बिदा हो हल मूशल ले रथपर चढ़ सिधारे. महाराज ! बलरामजी जिस पुर नगर गांवमें जातेथे तहांके राजा आगू बढ़ अतिशिष्टाचार कर इन्हें ले जाते थे और ये एक एकका समाधान करते जातेथे; कितने एक दिनमें चलते चलते बलरामजी अवंतिका पुरी पहुँचे.

चौ० विद्यागुरुकोकियोप्रणाम, दिनदशतहांरहेबलराम ॥

आगे गुरुसे बिदा हो बलदेवजी चले चले गोकुलमें पधारे तो देखते क्या हैं कि, बनमें चारों ओर गायें मुँह बाये बिन तृण खाये श्रीकृष्णचंद्रजीकी सुरत किये बाँसुरी तानमें मन दिये रांभती हूंकती फिरती हैं, तिनके पीछे ग्वालबालभी यश गाते प्रेमरँगराते चले जाते हैं और जिधर तिधर नगरके निवासी लोग प्रभुके चरित्र और लीला बखान रहे हैं. महाराज! जन्मभूमिमें जाय ब्रजबासियों और गायोंकी यह अवस्था देख बलरामजी करुणाकर नयनोंमें नीरभर लिये आगे रथकी ध्वजा पताका देख श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजीका आना जान सब ग्वालबाल दौड़ आए. प्रभु आतेही रथसे उतर लगे एक एकके गले लग लग अतिहितसे क्षेम कुशल पूंछने; इस बीच किसीने जा नंद यशोदासे कहा कि बलदेवजी आए. यह समाचार पातेही नंद यशोदा और बड़े बड़े गोप ग्वाल उठ धाए, उन्हें दूरसे आते देख बलरामजी दौड़कर नंदरायके पाओंपर जाय गिरे, तब नंदजीने अति आनंद कर नयनोंमें जल भर बड़े प्यारसे बलरामजीको उठाय कंठसे लगाया और वियोगका दुःख गँवाया, पुनि प्रभुने—

चौ० गहेचरणयशुमतिकेजाय, उनहितकरउरलियेलगाय
भुजभरिभेंटकंठगहिरही, लोचनतेजलसरिताबही ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा कि, महाराज! ऐसे मिल चुल नंदरायजी बलरामजीको घरमें लेजाय कुशल क्षेम पूंछने लगे, कि कहो! उग्रसेन वसुदेव आदि सब यादव और श्रीकृष्णचंद्र आनंदसे हैं? और हमारीभी सुरत करते हैं? बलरामजी बोले सब आपकी कृपासे आनंद मंगलसे हैं और सदा सर्वदा आपका गुण गाते रहते हैं; इतना वचन सुन नंदराय चुपरहे; पुनि यशोदारानी श्रीकृष्णजीकी सुरत कर लोचनमें नीरभर अति व्याकुल हो बोली कि, बलदेवजी! हमारे प्यारे नयनोंके तारे श्रीकृष्णजी अच्छे हैं? बलरामजीने कहा बहुत अच्छे हैं. पुनि नंदरानी कहने लगी कि, बलदेव जबसे हरि यहांसे सिधारे तबसे हमारी आखोंके आगे अँधेरा हो रहा है. हम आठ पहर उन्हींका ध्यान किये रहती हैं और वे हमारी सुरत भुलाय द्वारकामें जाय छाय रहे और देखो बहन देवकी रोहिणी हमारी प्रीति छोंड़के वहांही बैठी है.

चौ॰मथुरातेगोकुलढिगजान्यो, बसीदूरतवहींमनमान्यो।
भेटन मिलन आवते हरी. फिर न मिले ऐसी उन करी

महाराज! इतना कह जब यशोदाजी अतिव्याकुल हो रोने लगी तब बलरामजीने समझाय बुझाय बहुत आशा भरोसा दे उनको ढाढस बँधाया. पुनि आप भोजन कर पान खाय घरसे बाहर निकले तो क्या देखते हैं कि, सब व्रजयुवतियां तनछीन मनमलीन, छूटे केश, मैले भेप निहारे, घरबारकी सुरत बिसारे, प्रेमरँगराती, यौवनकी माती, हरिगुण गाती; विरहमें व्याकुल जिधर तिधर मत्तवत् चली जाती हैं. महाराज! बलरामजीको देखतेही अतिप्रसन्न हो सब दौड़ आई और दंडवत् कर हाथ जोड़ चारों ओर खड़ी हो लगीं पूंछने और कहने, कि कहो बलराम सुखधाम, अब कहां बिराजते हैं हमारे प्राण सुंदर श्याम? कभी हमारी सुरत करते हैं बिहारी? के राजपाट पाय पिछली प्रीति सब बिसारी. जबसे यहांसे गये हैं तबसे एकबार उद्धवके हाथ योगका संदेशा कह पठाया फिर किसीकी सुध न ली, अब जाय समुद्रमाहिं बसे तो का-

हेको किसीकी सुध लेंगे? इतनी बातके सुनतेही एक गोपी बोल उठी कि सखी! हरिकी प्रीतिका कौन करे परेखा, उनका तो देखा सबके यही लेखा.

चौ० ये काहूको नाहिंन ईठ, मात पिताको जिन दई पीठ॥
राधा बिन रहते नहिं घरी, सोऊ हैं बरसाने परी ॥

पुनि हम तुमने घर बार छोड़, कुलकान लोकलाज तज, सुत, पति त्याग, हरिसे सनेह लगाय क्या फल पाया? निदान स्नेहकी नावपर चढ़ा विरहसमुद्रमांझ छोंड़ गए. अब सुनती हैं कि द्वारकामें जाय प्रभुने बहुत व्याह किये और सोलह सहस्र एकसौ राजकन्या भौमासुरने घेर रक्खीं थीं तिन्हेंभी श्रीकृष्णने लाय व्याहा. अब उनसेभी बेटे पोते नाती भये उन्हें छोड़ यहां क्यों आवेंगे? यह बात सुन एक और गोपी बोली कि, सखी! तुम हरिकी बातोंका कुछ पछतावाही मत करो, क्यों कि उनके तो सर्व गुण उद्धवजीने आपही सुनाए थे. इतना कह पुनि वह बोली कि आली! मेरी बात मानौं तो अब—

चौ० हलधरजूके परसो पाँय, रहिहैं इनहींकेगुणगाय॥
येहैं गौरश्यामनहिंगात, करिहैं नाहिंकपटकी बात ॥
पुनिसंकर्षण उत्तर दियो, तुम्हरे हेतु गमन हम कियो ॥
आवनहम तुमसों कहिगये, ताते कृष्णपठै ब्रजदये ॥
रहि हैं मास करैंगे रास, पुजवैंगे सब तुम्हरी आस ॥

महाराज! बलरामजीने इतना कह सब ब्रजयुवतियोंको आज्ञा दी कि आज मधुमासकी रात है. तुम भृंगार कर बनमें आओ. हम तुम्हारे साथ रास करैंगे. यह कह बलरामजी सांझसमय बनको सिधारे तिनके पीछे सब ब्रजयुवतियांभी सुथरे वस्त्र आभूषण पहन नख शिखसे भृंगार कर बलदेवजीके पास पहुँचीं.

चौ० ठाढ़ीभईसबैशिरनाय, हलधरछबिबरणीनहिंजाय
कनकबरणनीलांबरधरे, शशिमुखकमलनयनमनहरे
कुंडलएकश्रवणछबिछाजै, मनौंभानुशशिसंगबिराजै

एकश्रवणहरियशरसपान, दूजोकुंडलधरतनकान ॥
अंगअंग प्रतिभूषणघने, तिनकीशोभा कहत नबने।
यों कहपांयनपरी सुंदरी, लीलारास करहु रसभरी ॥

महाराज ! इतनी बातके सुनतेही बलरामजीके हूं किया. हुंकार करतेही रासकी सब वस्तु आय उपस्थित हुई तब तो सब गोपियां शोच संकोच तज अनुराग कर बीन, मृदंग, करताल, उपंग, मुरली, आदि सब यंत्र ले ले लगीं बजाने गाने और थेई थेई कर नाच नाच भाव बताय बताय प्रभुको रिझाने; उनका बजाना गाना नाचना सुन, देख मग्न हो वारुणी पान कर बलदेवजी सबके साथ मिल गाने नाचने और अनेक अनेक भांतिके कुतूहल कर सुख देने लेने लगे. उसकाल देवता, गंधर्व, किन्नर, यक्ष, अपनी स्त्रियों समेत आय आय विमानपर बैठे प्रभुगुण गाय गाय उधरसे फूल बरसातेथे. चंद्रमा तारामंडलसमेत रासमंडलीका सुख देख देख किरनोंसे अमृत बरषाताथा और पवन पानीभी थँभ रहा था. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! इसी भांति बलरामजीने ब्रजमें रह चैत्र वैशाख दो महीने रात्रिको तो ब्रजयुवतियोंके साथ रासविलास किया और दिनको हरिकथा सुनाय नंद यशोदाको सुख दिया. उसीमें एक दिन रात्रिसमय रास करते करते बलरामजीने जा,

चौ०नदी तीर करिकैविश्राम, बोले तहांकोपके राम।
यमुना तू इतही बहि आव, सहसधारकर मोहिंन्हवाव।
जो न मानिहो कह्यो हमारो, खंडखंडजलकरौं तिहारो॥

महाराज! जब बलरामजीकी बातें अभिमान कर यमुनाने सुनी अनसुनी कीं तब तो इन्होंने क्रोधकर उसे हलसे खैंचली और स्नान किया उसी दिनसे वहां यमुना अबतक टेढ़ी है आगे न्हाय श्रम मिटाय बलरामजी सब गोपियोंको सुख दे साथ ले बनसे चले नगरमें आए तहां-

चौ०गोपीकहैसुनौब्रजनाथ, हमहूंकोलैचालियोसाथ ॥

यह बात सुन बलरामजी गोपियोंको आशा भरोसा दे ढाढस बँधाय बिदा कर बिदा हो नंद यशोदाके निकट गये; पुनि उन्हेंभी समझाय बुझाय धीरज बँधाय कई दिन रह बिदा हो द्वारकाको चले और कितने एक दिनोंमें जाय पहुँचे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे बलभद्रचरितं नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥६६॥

अध्याय ६७.

वासुदेव पौंड्रकके दूतका श्रीकृष्णजीके सभामें आकर संदेशा कहना और श्रीकृष्णको चक्रसे पौंड्रकका मस्तक और हाथोंका काटना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! काशीपुरमें एक पौंड्रकनाम राजा सो महाबली और बड़ा प्रतापी था. तिसने विष्णुका भेष किया और छल बल कर सबका मन हर लिया. सदा पीतवसन, वैजयंतीमाल, मुक्तमाल, मणिमाल, पहने रहे और शंख, चक्र, गदा, पद्म लिये दो हाथ काठके किये, एक घोडेपर काठहीका गरुड़ धरे उसपर चढ़ा फिरे. वह वासुदेव पौंड्रक कहावे और सबसे आपको पुजावे. जो राजा उसकी आज्ञा न माने उसपर चढ़ जाय फिर मार उजाड़कर, उसे अपने बशमें रक्खे. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, राजा उसका यह आचरण देख सुन देश नगर गांव घर घरमें लोग चर्चा करने लगे कि, वासुदेव तो व्रजभूमिके बीच यदुकुलमें प्रगट हुए थे, सो द्वारकापुरीमें विराजते हैं दूसरा अब काशीमें हुआ है, दोनोंमें हम किसे सच्चा जानें और मानें. महाराज! देश देशमें यह चर्चा हो रहीथी कि, कुछ संधान पाय वासुदेव पौंड्रक एक दिन अपनी सभामें आय बोला—

चौ॰ को है कृष्ण द्वारका रहै, वाको वासुदेव जग कहै॥
भक्तहेतु भू हौं औतर्‍यो, मेरो भेष तहां तिन धर्‍यो ॥

इतनी बात कह एक दूतको बुलाय उसने ऊंच नीचकी बातें सब समझाय बुझाय इतना कह द्वारकामें श्रीकृष्णचंद्रजीके पास भेजदिया कि यातो मेरा भेष बनाय फिरतेहो सो छोंड़दो नहींतो लड़नेकाविचार करो. आज्ञा पातेही दूत बिदा हो काशीसे चला चला द्वारकापुरीमें पहुँचा और श्रीकृष्णचंद्रजीकी सभामें जा उपस्थित हुआ. प्रभुने उससे पूंछा कि तू कौन है? और कहांसे आया है? वह बोला मैं वासुदेव पौंड्रकका दूत हूं,काशीपुरीसे स्वामीका पठाया कुछ संदेसा कहने आपके पासआया हूं कहो तो कहूं ? श्रीकृष्णचंद्र बोले अच्छा, कह. प्रभुके मुखसे यह बचन निकलतेंही दूत खड़ा हो हाथ जोड़ कहने लगा कि महाराज ! वासुदेव पौंड्रकने कहा है कि, त्रिभुवनपति जगत्का कर्त्ता तो मैं हूं तू कौन है? जो मेरा भेष बनाय जरासंधके डरसे भाग द्वारकामें आय रहा है, कै तो मेरा बाना छोंड़ शीघ्र आय मेरी शरणागत हो, नहीं तो तेरे सब यदुवंशियोंसमेत तुझे आय मारूंगा भूमिका भार उतार अपने भक्तोंको पालूंगा मैंही हूं अलख अगोचर निराकार, मेरा जप तप यज्ञ दान करते हैं सुर नर मुनि ऋषि बार बार. मैंही ब्रह्मा हो बनाता हूं, विष्णु हो पालता हूं, शिव हो संहरता हूं, मैंनेही मच्छरूप हो वेद डूबते निकाले, कच्छरूप हो गिरि धारण किया, बराह बन भूमिको रखलिया, नृसिंह-अवतार ले हिरण्यकशिपुका वध किया. वामन अबतार ले बलिको छला, रामअवतार ले महादुष्ट रावणको मारा. मेरा यही काम है कि जब जब असुर मेरे भक्तोंको आय सताते हैं तब तब मैं अबतार ले भूमिका भार उतारता हूं.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज ! वासुदेव पौंड्रकका दूत तो इस ढबकी बातें करता था और श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद रत्नसिंहासनपर बैठे यादवोंकी सभामें हँस हँसकर सुनते थे कि इसबीच कोई यदुवंशी बोल उठा–

चौ०तोहिं कहा यम आयो लैन, भाषत तू जो ऐसे बैन।
मारे कहा तोहिं हम नीच, आयो है कपटीके बीच ॥

जो तू बंसीठ न होता तो बिनमारे न छोंड़ते, दूतको मारना उचित नहीं. महाराज! जब यदुवंशियोंने यह बात कही, तब श्रीकृष्णजीने उस दूतको निकट बुलाय समझाय बुझायके कहा कि, तू जाय अपने वासुदेवसे कह कि कृष्णने कहा है कि मैं तेरा बाना छोंड़ शरण आता हूं; सावधान हो. इतनी बातके सुनतेही दूत दंडवत् कर बिदा हुआ और श्रीकृष्णचंद्रजीभी अपनी सेना ले काशीपुरीको सिधारे. दूतने जाय वासुदेव पौंड्रकसे कहा कि महाराज! मैंने द्वारकामें जाय आपका कहा संदेश सब श्रीकृष्णको सुनाया, उन्होंने सुनकर कहा कि, तू अपने स्वामीसे जा[illegible] कि, सा[illegible] छोंड़ शरण लेने आता [illegible] कहताहै। [illegible] किसीने आय क[illegible]हाराज! आप निश्चिंत क्या बैठे हो? श्री[illegible] अपनी [illegible] चढ़ आये. इतनी बातके सुनतेही वासुदेव पौंड्रक उस[illegible] [illegible] कटक ले चढ़ धाया और चला चला श्रीकृष्णचंद्रजीके [illegible]मुख [illegible] साथ एक औरभी काशीका राजा चढ़ दौड़ा. दोनों ओर दल तुल[illegible] जुझाऊ बाजे बाजने लगे, शूरवीर रावत लड़ने और कायर खेत छोंड़ [illegible] ले भागने उसकाल युद्ध करता करता कालबश हो वासुदेव पौंड्रक इसभांति श्रीकृष्णचंद्रजीके सन्मुख जाकर ललकारा उसे विष्णुभेषसे देख सब यदुवंशियोंने श्रीकृष्णचंद्रसे पूंछा, कि महाराज! इसे इस भेषसे कैसे मारोगे, प्रभुने कहा कपटीके मारनेका कुछ दोष नहीं. इतना कह हरिने सुदर्शन चक्रको आज्ञा दी; उसने जातेही जो दोनों भुजा काष्ठकी थीं. वे उखाड़लीं. उसके साथ गरुड़भी टूटा और तुरंग भागा, जब वासुदेव पौंड्रक नीचे गिरा; तब सुदर्शनने उसका शिर काट फेंका.

चौ०कटतशीशनृपपौंड्रकतऱ्यो, शीशजायकाशीमेंपऱ्यो
जहां हुतो ताको रनिवासु, देखत शीशसुंदरी तासु ॥

रोवैं यौंकहिखेचैं बार, यह गति कहां भई करतार ॥
तुमतो अजरअमरहोभये, कैसे प्राणपलकमें गये ॥

महाराज! रानियोंका रोना सुन सुदक्षिणनाम उसका एक बेटा था सो वहां आय बापका शिर कटा देख अतिक्रोध कर कहने लगा कि, जिसने मेरे पिताको मारा है, उससे मैं बिन पलटा लिये न रहूँगा. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! वासुदेव पौंड्रकको मार श्रीकृष्णचंद्रजी तो अपना सब कटक ले द्वारकापुरीको सिधारे, और उसका बेटा अपने बापका वैर लेनेको महादेवजीकी अतिकठिन तपस्या करने लगा. इसमें कितने एक दिन पीछे एकदिन प्रसन्न हो महादेवजी भोलानाथने आय कहा कि, वर मांग; यह बोला महाराज! मुझे यही वर दीजे कि, श्रीकृष्णसे मैं अपने पिताका वैर लूं. शिवजी बोले अच्छा जो तू वैर लिया चाहता है तो एक काम कर. बोला क्या? कहा, उलटे वेदमंत्रोसे यज्ञ कर. उससे एक राक्षसी अग्निसे निकलेगी, उससे जो तू कहेगा सो वह करेगी. इतना वचन शिवजीके मुखसे सुन महाराज! वह जाय ब्राह्मणोंको बुलवाय वेदी [illegible] तिल, यव, घी, चिनी आदि सब होमकी सामा ले शाकल्य बनाय लगा उलटे वेदमंत्र पढ़ पढ़ होम करने; निदान यज्ञ करते करते अग्निकुंडसे कृत्यानाम एक राक्षसी निकली सो श्रीकृष्णजीके पीछेही पीछे नगर देश गाँव जलाती जलाती द्वारकापुरीमें पहुँची और लगी पुरीको जलाने; नगरको जलता देख सब यदुवंशी भय खाय श्रीकृष्णचंद्रजीके पास जा पुकारे कि, महाराज! इस आगसे कैसे बचेंगे? यह तो सारे नगरको जलाती चली आती है. प्रभु बोले तुम किसी बातकी चिंता मत करो, यह कृत्यानाम राक्षसी काशीसे आई है. मैं अभी इसका उपाय करताहूं. महाराज! इतना कह श्रीकृष्णजीने सुदर्शनचक्रको आज्ञा दी कि, इसे मार भगाय और इसी समय जाय काशीपुरीको जलाय आव. हरिकी आज्ञा पातेही सुदर्शनचक्रने कृत्याको मार भगाया और बातके कहतेही काशीको जा जलाया.

चौ०परजा भागी फिरैं दुखारी, गारीदेहिंसुदक्षहिंभारी ॥
फिऱ्योचक्र शिवपुरी जलाय, सोईकहीकृष्णसों आय ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे नृपपौंड्रकमोक्षोनाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

अध्याय ६८

बलराम सरोवरके बीच स्त्रियोंके साथ विहार करना और द्विविद वानरको मारना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! जैसे बलराम सुखधाम रूपनिधानने द्विविदकपिको मारा तैसेही मैं कथा कहताहूं तुम चित्त दे सुनो एक दिन द्विविद जो सुग्रीवका मंत्री और मयंदकपिका भाई व भौमासुरका सखा था सो कहने लगा कि, एक शूल मेरे मनमें है सो जब तब खटकती है. यह बात सुन किसीने पूंछा कि, महाराज! सो क्या? वह बोला कि, जिसने मेरे मित्र भौमासुरको मारा तिसे मारूं तो मेरे मनका दुःख जाय. महाराज! इतना कह वह उसी समय अतिक्रोध कर द्वारकापुरीको चला. श्रीकृष्णचंद्रका देश उजाड़ता और लोगोंको दुःख देता. किसीको पानी वरषाय बहाया, किसीको आग बरपाय जलाया. किसीको पहाड़से पटका. किसीपर पहाड़ दे पटका, किसीको समुद्रमें डुबाया. किसीको पकड़ बांध गुफामें छिपाया, किसीको पेट फाड़ डाला, किसीपर वृक्ष उखाड़ मारा; इसीरीतिसे लोगोंको सताता जाताथा, और जहां ऋषी मुनी देवताओंको बैठे

पाताथा तहां गू मूत रुधिर वरपाता था. निदान इसीभांति लोगोंको दुःख देता और उपाधि करता जा द्वारकापुरीमें पहुँचा. और अल्पतन धर श्रीकृष्णके मंदिरपर जा बैठा, उसको देख सब सुंदरी मंदिरके भीतर किंवाड़ दे दे भाग कर जाय छिपीं; तवतो वह मनहींमन यह विचार बलरामजीके समाचार पाय रैवत गिरिपर गया.

चौ॰पहले हलधरको बध करौं, पाछे प्राण कृष्णके हरौं

जहां बलदेवजी स्त्रियोंके साथ विहार करतेथे महाराज! छिपकर वह वहां क्या देखता है, कि बलरामजी मद्य पी सब स्त्रियोंको साथ ले एक सरोवर बिच अनेक अनेक भांतिकी लीला कर गाय २ न्हाय न्हिलाय रहे हैं. यह चरित्र देख द्विविद एक पेंड़पर जाय चढ़ा और किलकारियां मार मार घुरक २ लगा डाल डाल कूद कूद फिर फिर चरित्र करने और जहां मदिराका भरा कलश और सबके चीर धरे थे तिनपर हगने मूतने. बंदरको सब सुंदरी देखतहि डर कर पुकारीं, कि, महाराज! यह कपि कहांसे आया? जो हमें डराय डराय हमारे वस्त्रों पर हग मूत रहा है. इतनी बातके सुनतेही बलदेवजीने सरोवरसे निकल जो हँसके ढेल चलाया तो वह इनको मतवाला जान महाक्रोध कर किलकारी मार नीचे आया. आतेही उसने मदका भरा घड़ा जो तीरपर धरा था सो लुढ़ाय दिया और सारे चीर फाड़ टूक टूक कर डाले, तब तो क्रोध बलरामजीने हल मूशल सँभाला और वहभी पर्वतसम हो प्रभुके सोहीं युद्ध करनेको आय उपस्थित हुआ. इधरसे वे हल मूशल चलाते और उधरसे वह पेंड़ पर्वत.

चौ॰महायुद्ध दोऊ मिल करैं, नेक न दुहूं ठौरते टरैं॥

महाराज! ये तो दोनों बलि अनेक अनेक प्रकारकी बातें कर निधड़क लड़तेथे पर देखनेवालोंका मारे भयके प्राणही निकसताथा; निदान प्रभुने सबको दुःखित जान द्विविदको मार गिराया. उसके मारतेही सुर नर मुनि सबके जीको आनंद हुवा और दुःख छूटगया.

चौ॰फूले देव पुष्प वरषावैं, जय जय कर हलधर हि सुनावैं

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! त्रेतायुगमें यह बंदर ही था. तिसे बलदेवजीने मार उद्धार किया. आगे बलराम सुखधाम सबको साथ ले सुखसे वहांसे श्रीद्वारकापुरीमें आए और द्विविदके मारने का समाचार सारे यदुवंशियोंको सुनाया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे बलभद्रचरित्रे द्विविदकपिवधो नाम अष्टषष्टितमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ६८ ॥

अध्याय ६९.

सांबका लक्ष्मणाको ले जाना और फिर सांबको बांध लाना और बलरामजीका हस्तिनापुरको नागरसे ऊंधा करना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! अब मैं दुर्योधनकी बेटी लक्ष्मणाके विवाहकी कथा कहताहूं. कि जैसे सांब हस्तिनापुर जाय उसे ब्याह लाए. महाराज! राजा दुर्योधनकी पुत्री लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्य हुई, तब उसके पिताने सब देश देशके नरेशोंको पत्र लिख लिख बुलाया और स्वयंवर किया. स्वयंवरके समाचार पाय श्रीकृष्णचंद्रका पुत्र जो जाम्बवतीसे था सांबनाम वहभी वहां पहुँचा, वहां जाय सांब क्या देखता है कि देश देशके नरेश बलवान् गुणवान् रूपनिधान महासुजान सुथरे वस्त्र आभूषण रत्नजड़ित पहने, अस्त्र शस्त्र बांधे, मौन साधे, स्वयंवरके बीच पांति पांति खड़े हैं और उनके पीछे उसी भांति सब कौरवभी जहां तहां बारनै बाजन बाज रहे हैं. भीतर मंगलीलोग मंगलाचार कर रहे हैं. सबके बीच राजकुमारी मातपिताकी प्यारी मनहीमन यों कहती हार लिये आंखोंकीसी पुतली फिरती है, कि मैं किसे वरूं? महाराज! जब वह सुंदरी

शीलवती रूपवती माला लिये लाज किये फिरती फिरती सांबके सन्मुख आई, तब उन्होंने शोच संकोच तज निर्भय उसे हाथ पकड़ रथमें बैठाय अपनी बाट ली. सब राजा खड़े मुँह देखते रहगये, और कर्ण, द्रोण, शल्य, भूरिश्रवा, दुर्योधन आदि सारे कौरवभी उस समय कुछ न बोले. पुनि अतिक्रोध कर आपसमें कहने लगे कि, देखो इसने क्या काम किया कि जो रसमें आके अनरस किया. कर्ण बोला कि, यदुवंशियोंकी सदाकी यह टेव है, कि जहां कहीं शुभकाजमें जाते हैं तहां उपाधिही करते हैं.

चौ०जातहीन अबहीं ये बड़े, राज्य पाय माथेपर चढे।

इतनी बातके सुनतेही सब कौरव महाक्रोध कर अपने अपने अस्त्र शस्त्र ले यों कह चढ़ दौड़े कि, देखें वह कैसा बली है जो हमारे आगेसे कन्या ले निकल जायगा, और बाटके बीच सांबको जा घेरा. आगे दोनों ओरसे अस्त्र शस्त्र चलने लगे. निदान कितनी एक बेरके लड़नेमें जब सांबका सारथी मारा गया और वह नीचे उतरा तब ये उसे घर पकड़कर बांधके लाये व सभाके बीचोंबीच खड़ा कर इन्होंने उससे पूंछा कि, अब तेरा पराक्रम कहां गया? यह बात सुन वह लजाय रहा, इसमें नारदजीने आय राजा दुर्योधनसमेत सब कौरवोंसे कहा कि, यह सांबनाम श्रीकृष्णचंद्रका पुत्र है. तुम इसे कुछ मत कहो. जो होना था सो हुआ. अभी इसका समाचार पाय दल साज आवेंगे श्रीकृष्ण और बलराम जो कुछ कहना सुनना हो सो उनसे कह सुन लीजो, लड़केसे बात कहनी तुम्हें किसी भांति उचित [illegible]हीं. इसने लड़कबुद्धी की तो की. महाराज! इतना बचन कह [illegible]जी वहासे बिदा हो चले चले द्वारकापुरीको गये और राजा उग्र[illegible]की सभामें जा खडे भये-

चौ०देखत उठेसबौशिरनाय, आसनदियो ततक्षण[illegible]॥

बैठतेही नारदजी बोले कि, महाराज! कौरवोंने सांबको [illegible] महादुःख दिया और देते हैं. जो इस समय जाय उसकी शीघ्र [illegible]लो. नहीं तो फिर सांबका बचना कठिन है.

चौ–गर्व भयोकौरवकोभारी, लाजसकुचनहिंकरीतिहारी
बालकको बांध्यो उन ऐसे, शत्रूको बांधे कोऊ जैसे

इस बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने अतिकोपकर यदुवंशियोंको बुलायके कहा कि तुम अभी हमारा सब कटक ले हस्तिनापुर चढ़ जाओ, ओर कोरवोंको मार सांबको छुड़ा ले आओ. राजाकी आज्ञा पातेही ज्यों सब दल चलनेको उपस्थित हुआ, त्यों बलरामजीने जाय राजा उग्रसेनसे समझाकर कहा, कि महाराज! आप उनपर सेना न पठाइये, मुझे आज्ञा कीजे मैं जाय उन्हें उलहना दे सांबको छुड़ा लाऊं. देखूं उन्होंने किसलिये सांबको पकड़ बांधा? इस बातका भेद बिना मेरे गये न खुलेगा. इतनी बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने बलदेवजीको हस्तिनापुर जानेकी आज्ञा दी और बलदेवजी कितने एक बड़े बड़े पंडित, ब्राह्मण और नारदमुनिको साथ ले द्वारकासे चले चले हस्तिनापुर पहुँचे, उस समय प्रभुके नगरके बाहर एक बाड़ीमें डेरा कर नारदजीसे कहा कि, महाराज! हम यहां उतरे हैं आप जाय कौरवोंसे हमारे आनेका समाचार कहियो. प्रभुकी आज्ञा पाय नारदजीने नगरमें जाय बलरामजीके आनेका समाचार सुनाया.

चौ०सुनके सावधान सब भये, आगे होय लेन तहँगये।
भीषम द्रोण कर्ण मिलचले, लीने बसन पटंबर भले॥
दुर्योधन यों कहिके धायो, मेरो गुरु संकर्षण आयो॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा कि, महाराज! सब कौरवोंनें उस बाड़ीमें जाय बलरामजीसे भेंट कर भेंट दी और पांओं पड़ हाथ जोड़ बहुत स्तुति की. आगे चोआ चंदन लगाय फूलमाल पहराय पाटंबरके पांवड़े बिछाय बाजे गाजेसे नगरमें लिवा लाए. पुनि षट्रस भोजन करवाय पास बैठाय सबकी कुशल क्षेम पूंछ पूंछा, कि महाराज! आपका आना कहो कैसे हुआ? ऐसी उनके मुखसे बात निकलतेही बलरामजी बोले कि, महाराज! उग्रसेनके पठाए संदेशा कहने तुम्हारे पास आये हैं. कौरव बोले कहो, बलदेवजीने कहा कि राजाजीने कहा है कि, तुम्हें हमसे विरोध करना उचित न था.

चौ० तुमहो बहुत सो बालकएक, कियो युद्ध तज ज्ञान विवेक
महा अधर्म जानके कियो, लोकलाज तज सुत गहिलियो।
ऐसो गर्व तुम्हे अब भयो, समझ बूझ ताको दुख दयो॥

महाराज! इतनी बातके सुनतेही कौरव महाकोप कर बोले कि, बलरामजी! बसकरो बसकरो, अधिक बढ़ाई उग्रसेनकी मत करो. हमसे यह बात सुनी नहीं जाती, चार दिनकी बात है कि उग्रसेनको कोई जानता मानता न था, जबसे हमारे यहां सगाई की तभीसे प्रभुता पाई. अब हमीसे अभिमानकी बात कह पठाई-उसे लाज नहीं आती? जो द्वारकापुरीमें बैठा राज्य पाय पिछली सब बात गँवाई. जो मनमानता है सो कहता है. वह दिन भूलगया. कि मथुरामें ग्वाल गूजरोंके साथ रहता खाताथा जैसा हमने साथ खिलाय संबंधकर राजदिलवाया तिसका फल हाथोंहाथ पाया. जो किसी पूरेपर गुण करते तो वह जन्मभर हमारा गुण मानता किसीने सच कहा है कि, ओछोंकी प्रीत, बालूकी भीत समान हे. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! ऐसे अनेक अनेक प्रकारकी बातें कह कर्ण, द्रोण, भीष्म, दुर्योधन, शल्य आदि सब कौरव गर्व कर उठ उठ अपने घर गए और बलरामजी उनकी बातें सुन सुन हँसि हँसि वहां बैठे मनहीमन यों कहते रहे कि, इनको राज्य और बलका गर्व भया है जो ऐसी २ बातें करते हैं. नहीं तो ब्रह्मा, रुद्र, इंद्रका ईश; जिसे नवावै शीश. तिस उग्रसेनकी ये निंदा करें. तो मेरा नाम बलदेव, जो सब कौरवोंको नगरसमेत गंगामें डुबाऊं नहीं तो नहीं. महाराज! इतना कह बलदेवजी अतिक्रोध कर सब कौरवोंको नगरसमेत हलसे खैंच गंगातीरपर लेगए और चाहैं कि डुबावैं त्योंहीं अति घबराय भय खाय सब कौरव आय हाथ जोड़ शिर नाय गिड़गिड़ाय बिनती कर बोले कि, महाराज! हमारा अपराध क्षमा कीजे, हम आपकी शरण आए. अब बचाय लीजे जो कहोगे सो करेंगे, सदा राजा उग्रसेनकी आज्ञामें रहेंगे. राजा! इतनी बातके कहतेही बलरामजीका क्रोध शांत हुआ और जो हलसे खैंच नगर गंगातीपर लाये थे सो वहीं रक्खा. तिसी दिनसे हस्तिनापुर गंगातीरपर है, पहले वहां न था. आगे उन्होंने सांबको छोड़ दिया, और राजा दुर्योधनने चचा भतीजोंको मनाय घरमें

लेजाय मंगलाचार करवाय वेदकी विधिसे सांबको कन्यादान किया और उसके यौतुकमें बहुत कुछ संकल्प किया. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने कहा कि, महाराज! ऐसे बलरामजी हस्तिनापुर जाय कौरवोंका गर्व गँवाय भतीजेको छुड़ाय ब्याह लाए. उसकाल सारी द्वारकापुरीमें आनंद होगया और बलदेवजीने हस्तिनापुरका सब समाचार ब्योरा समेत समझाय राजा उग्रसेनके पास जा कहा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सांबविवाहकथनंनाम एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

अध्याय ७०.

नारदजीका सोलहसहस्र एकसौ आठ स्त्रियोंके साथ श्रीकृष्णजीका गृहस्थाश्रम देखना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय नारदजीके मनमें आई कि, श्रीकृष्णचंद्र सोलसहस्र एकसौ आठ स्त्री ले कैसे गृहस्थाश्रम करते हैं सो चलकर देखा चाहिये. इतना विचार चले चले द्वारकापुरीमें आये तो नगरके बाहर क्या देखते हैं कि, कहीं बाड़ियोंमें नाना भांतिके बड़े बड़े ऊंचे २ वृक्ष हरे फलफूलोंसे भरे खड़े झूम रहे हैं. तिनपर कपोत, कीर, चातक, मयूर आदि पक्षी मनभावनी बोलियां बैठे बोल रहे हैं. कहीं सुंदर सरोवरोंमें कमल खिले हुए तिनपर भौंरोंके झुंडके झुंड गुंजरहे हैं, तीरमें हंस सारस समेत खग कुलाहल कर रहे हैं, कहीं फुलवाड़ियोंमें माली मीठे मीठे सुरोंसे गाय गाय ऊंचे नीचे नीर चढ़ाय क्यारियोंमें जल सींच रहे हैं. कहीं इंदारों बावड़ीयोंपर रहँट परोहे

चल रहे हैं और पनघटपर पनहारियोंके ठट्टके ठट्ट लगे हैं. तिनकी शोभा कुछ बर्णी नहीं जाती. वह देखतेही बन आवे. महाराज ! यह शोभा बन उपबनकी निरख हरष नारद पुरीमें जाय देखें तो अतिसुंदर कंचनके मणिमय मंदिर जगमगाय रहे हैं, तिनपर ध्वजा पताका फहराय रहीं हैं. द्वार द्वारमें तोरन बंदनवार बँधी हैं, द्वार द्वारपर केलेके खंभ और कंचनके कुंभ सपल्लव भरे धरे हैं, घर घरकी जाली झरोखों मोखोंसे धूपका धुआं निकल श्याम घटासा मड़राय रहा है, उसके बीच सोनेके कलश कलसियां बिजुलीसी चमक रहीं हैं. घर घर पूजा, पाठ, होम, यज्ञ दान हो रहे हैं. ठौर ठौर भजन, सुमिरन, गान, कथा पुराणकी चर्चा चलरही है. जहां तहां यदुवंशी इंद्रकीसी सभा किये बैठे हैं और सारे नगरमें सुख छाय रहा है.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि महाराज ! नारदजी पुरीमें जातेही मग्न हो कहने लगे कि प्रथम किस मंदिरमें जाऊं जो श्रीकृष्णचंद्रको पाऊं ? महाराज ! मनहीमन इतना कह नारदजी पहले रुक्मिणीजीके मंदिरमें गये, वहां श्रीकृष्णचंद्र विराजतेथे. सो इन्हें देख उठ खड़े भए. रुक्मिणीजी जलकी झारी भर लाईं. प्रभुने पांव धोय आसनपर बैठाय धूप, दीप, नैवेद्य धर पूजा कर हाथ जोड़ नारदजीसे कहा-

चौ० जाघर चरण साधुके परैं, ते नर सुख संपति अनुसरैं॥
हमसे कुटमीतारनहेतु, घरही आय दरश तुम देतु ॥

महाराज ! प्रभुके मुखसे इतना बचन निकलतेही यह आशीश दे नारदजी जाम्बवतीके मंदिरमें गये, कि जगदीश! तुम चिरंजीव रहो. श्रीजाम्बवतीजीके समीप देखा कि हरि पंसासार खेल रहे हैं. नारदजीको देखतेही जो प्रभु उठे तो नारदजी आशीर्वाद दे उलटे फिरे. सत्यभामाके यहां गये तो देखा कि श्रीकृष्णजी बैठे तेल उबटना लगवाय रहे हैं. वहांसे चुपचाप नारदमुनिजी फिर आए इस लिये कि शास्त्रमें लिखा है तेल लगानेके समय न राजा प्रणाम करे और न ब्राह्मण आशीश दे. आगे नारदजी कालिंदीके घर गए, वहां देखा कि हरि सो रहे हैं. महा-

राज ! कालिंदीने नारदजीको देखतेही हरिको पांव दाब जगाया. प्रभु जागतेही ऋषिके निकट जाय दंडवत् कर हाथ जोड़ बोले, कि साधोंके चरण तीर्थके जलसमान हैं. जहां पड़े तहां पवित्र करते हैं. यह सुन वहांसेभी आशीश दे नारदजी चल खड़े हुए और मित्रविंदाके धाम गए. तहाँ देखा कि ब्रह्मभोज हो रहा है और श्रीकृष्ण परूसते हैं. नारदजीको देख प्रभुने कहा कि महाराज ! जो कृपा कर आए हो तो आपभी प्रसाद ले हमें उच्छिष्ट दीजै और घर पवित्र कीजै. नारदजीने कहा महाराज ! मैं थोड़ा फिर आऊं फेर आऊंगा. ब्राह्मणोंको जिमालीजे पुनि ब्रह्मशेष आय मैं पाऊंगा. यों सुनाय नारदजी बिदा हो सत्याके गेह पधारे वहां क्या देखते हैं कि, श्रीबिहारी भक्तहितकारी आनंदसे बैठे विहार कर रहे हैं, यह चरित्र देख नारदजी उलटे पांओं फिरे. पुनि भद्राके स्थानपर गए, तो देखा कि हरि भोजन कर रहे हैं. वहांसे फिरे तो लक्ष्मणाके गेह पधारे, तहां देखा कि, प्रभु स्नान कर रहे हैं. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने कहा कि, महाराज ! इसी भांति नारदमुनिजी सोलहसहस्र एकसौ आठ घर फिरेपर विना श्रीकृष्ण कोई घर न देखा. जहां देखा तहां हरिको गृहस्थाश्रमका कामही करते देखा यह चरित्र लखि—

चौ० नारदके मन अचरज एह, कृष्ण विना नाहिं कोई गेह॥
जाघर जाउँ तहां हरि प्यारी, ऐसी प्रभु लीला बिस्तारी
सोलहसहस अठौतर सौघर, तहां तहां सँगसुंदरि गिरिधर
मगनहोयऋषिकहतविचारी, योगमायायदुनाथतिहारी
काहूसों नहिं जानी परै, को न तिहारी माया तरै ॥

महाराज ! जब नारदजीने अचंभा कर कहे ये बैन, तब बोले प्रभु श्रीकृष्णचंद्र सुखदैन; कि हे नारद ! तुम अपने मनमें कुछ खेद मत करो, मेरी माया अति प्रबल हे और सारे संसारमें फैल रही है. यह मुझे ही मोहती है तो दूसरेकी क्या सामर्थ्य जो इसके हाथसे बचे और जगत्में आय इसमें न रचे.

चौ०नारद सुन बिनवैं शिरनाय,मोपर कृपाकरौ यदुराय

जो आपकी भक्ति सदा मेरे चित्तमें रहे और मेरा मन मायाके बश न होय विषयकी वासना न चहै. राजा! इतना कह नारदजी प्रभुसे विदा हो दंडवत् कर बीणा बजाते हरिगुण गाते अपने स्थानको गए और श्रीकृष्णचंद्रजी द्वारकामें लीला करते रहे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे नारदमायादर्शनं नाम सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

अध्याय ७१.

ब्राह्मणका मगंध देशसे वीस सहस्र राजाओंका संदेशा लेकर श्रीकृष्णके पास आना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज एक दिन श्रीकृष्णचंद्र रातसमय श्रीरुक्मिणीजीके साथ बिहार करतेथे और रुक्मिणीजी आनंदमें मग्न बैठी प्रीतमका मुखचंद्र निरख निरख अपने नयनचकोरोंको सुख देतीथीं कि, इस बीच रात व्यतीत भई, चिड़ियां चुहचुहाईं अंबरमें अरुणाई छाई चकोरोंको वियोग हुआ और चकवाचकवियोंको संयोग; कमल बिकसे, कुमुदिनी कुम्हलाई, चंद्रमा छबिछीन भया और सूर्यका तेज बढ़ा सब लोग जागे और अपना अपना गृहकाज करने लगे. उसकाल रुक्मिणीजी तो हरिके समीपसे उठ शोच संकोच लिये घरकी टहल टकोर करने लगीं और श्रीकृष्णचंद्रजी देह शुद्ध कर हाथ मुख धोय स्नान कर जप ध्यान पूजा तर्पणसे निश्चिंत होय ब्राह्मणोंको नाना प्रकारका दान दे नित्यकर्मसे सुचित्त हो बालभोग पाय, पान, लौंग, इलायची, जावित्री, जायफलके साथ खाय सुथरे वस्त्र आभू-

षण मँगवाय पहन शस्त्र लगाय उग्रसेनके पास गये. पुनि जुहार कर यदुवंशियोंकी सभाके बीच आय रत्नसिंहासनपर बिराजे.

महाराज! उसी समय एक ब्राम्हणने जाय द्वारपालोंसे कहा कि, तुम श्रीकृष्णचंद्रजीसे जाकर कहो कि, एक ब्राह्मण आपके दर्शनकी अभिलाषा किये द्वारपर खड़ा है, जो प्रभुकी आज्ञा पावे तो भीतर आवे; ब्राह्मणकी बात सुन द्वारपालोंने भगवानसे जाकर कहा कि महाराज! एक ब्राह्मण आपके दर्शनकी अभिलाषा किये पवँरिपर खड़ा है आज्ञा पावै तो आवे? हरि बोले अभी लाव, प्रभुके मुखसे यह बात निकलतेही द्वारपाल हाथोंहाथ ब्राह्मणको सन्मुख लेगये. विप्रको देखतेही श्रीकृष्णचंद्र सिंहासनसे उतर दंडवत् कर आगू बढ़ हाथ पकड़ उसे मंदिरमें लेगये और रत्नसिंहासनपर आपने पास बिठाय पूंछने लगे कि, कहो देवता! आपका आना कहांसे हुआ? और किस कार्यके हेतु पधारे? ब्राह्मण बोला—कृपासिंधु! दीनबंधु! मैं मगध देशसे आया हूं और बीससहस्र राजाओंका संदेशा लायाहूं. प्रभु बोले सो क्या? ब्राह्मणने कहा, महाराज! जिन बीस सहस्र राजाओंको जरासंधने बलकर पकड़ हथकड़ियां बेड़ियां दे रक्खे हैं. तिन्होंने मेरे हाथ आपको बिनती कर यह संदेशा कहला भेजा है:—दीननाथ! तुम्हारी सदा सर्वदाकी यह रीति है, कि जब जब असुर तुम्हारे भक्तोंको सताते हैं, तब तब तुम अवतार ले अपने भक्तोंकी रक्षा करते हो. नाथ! हिरण्यकशिपुसे प्रल्हादको छुड़वाया, और गजको ग्राहसे. तैसेही दया कर अब हमें इस महादुष्टके हाथसे छुड़वाइये; हम महाकष्टमें हैं. तुम बिन और किसीकी सामर्थ्य नहीं, जो इस महाविपत्तिसे निकाले और हमारा उद्धार करे.

महाराज! इस बातके सुनतेही प्रभु दयालु हो बोले, कि हे देवता! तुम अब चिंता मत करो, उनकी चिंता मुझे है. इतनी बातके सुनतेही ब्राह्मण संतोष कर श्रीकृष्णचंद्रको आशीश देने लगा. इसबीच नारदजी आ उपस्थित हुये. प्रणाम कर श्रीकृष्णचंद्रने उनसे पूछा, कि नारदजी! तुम सब ठौर जाते आते हो कहो हमारे भाई युधिष्ठिर आदि पांच पांडव इन दिनोंमें कैसे हैं? और क्या करते हैं? बहुत दिनसे हमने उनके कुछ समाचार नहीं पाए, इससे हमारा चित्त उन्हींमें लगा है. नारदजी बोले—कि, महाराज! मैं उन्हींके पाससे आता हूं. हैं तो-

कुशल क्षेमसे पर इन दिनोंमें राजसूय यज्ञ करनेके लिये निपट भावित हो रहे हैं, घड़ी घड़ी यही कहते हैं कि बिना श्रीकृष्णचंद्रजीकी सहायके हमारा यज्ञ पूरा न होगा, इससे महाराज! मेरा कहा मानिये तो

चौ० पहले उनकोयज्ञ सचारो, पाछे अनतकहूं पगधारो ॥

महाराज! इतनी बात नारदजीके मुखसे सुनतेही प्रभुने उद्धवजीको बुलायके कहा कि—

चौ० उद्धवतुमहौ सखा हमारे, मन आंखहुतेकबहुँनन्यारे।
दुहूं ओरकी भारी भीर, पहले कहां चले कहु बीर ॥
उत राजा संकटमें भारी, दुख पावत किये आशहमारी।
इत पांडव मिलयज्ञरचायो, ऐसे कहिप्रभु वचन सुनायो ॥

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे राजायुधिष्ठिरसंदेशो नाम एकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

अध्याय ७२.

श्रीकृष्णका आठ पटरानियों समेत हस्तिनापुरको जाना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! पहले तो श्रीकृष्णचंद्रजीने उस ब्राह्मणको इतना कह बिदा किया; जो राजाओंका संदेशा लायाथा कि, देवता! तुम हमारी ओरसे सब राजाओंसे कहो, कि तुम किसी बातकी चिंता मत करो हम बेगही आय तुम्हें छुड़ाते हैं. महाराज! यह बात कह श्रीकृष्णचंद्र ब्राह्मणको बिदा कर उद्धवजीको साथ ले राजा उग्रसेन शूरसेनकी सभामें गए और इन्होंने सब समाचार उनकेआगेकहे.

वे सुन चुप होरहे. इसमें उद्धवजी बोले कि; महाराज! ये दोनों काज कीजे, पहिले राजाओंको जरासंधसे छुँड़ाय लीजे. पीछे चलकर यज्ञ सँवारिये. क्योंकि राजसूययज्ञका काम बिना राजा और कोई नहीं कर सक्ता और वहां बीससहस्र नृप इकट्ठे हैं उन्हें छुंड़ाओगे तो वे सब गुणवान् यज्ञकाज बिन बुलाए जाकर करेंगे. महाराज! और कोई दशोदिशा जीत आवेगा तोभी इतने राजा इकट्ठे न पावेगा. इससे अब उत्तम यही है कि हस्तिनापुरको चलिये. पांडवोंसे मिल मता कर जो काम करना हो सो करिये. महाराज! इतना कह पुनि उद्धवजी बोले कि, महाराज! राजा जरासंध बड़ा दाता और गौब्राह्मणका मानने और पूजनेवाला है. जो कोई उससे जाकर जो मांगता है सो पाता है. याचक उसके यहांसे विमुख नहीं आता. वह झूंठ नहीं बोलता. जिससे बचनबंध होता है, उसको निबाहता है. और दशसहस्र हाथीओंका बल रखता है. उसके बलके समान भीमसेनका बल है. नाथ! जो तुम वहां चलो तो भीमसेनको साथ ले चलो, मेरी बुद्धिमें आता है कि, उसकी मीच भीमसेनके हाथ हैं. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, राजा! जब उद्धवजीने ये बातें कहीं तब श्रीकृष्णचंद्रजीने राजा उग्रसेन शूरसेनसे बिदा हो सब यदुवंशियोंसे कहा कि महाराज! कटक साजो हम हस्तिनापुरको चलेंगे. बातके सुनतेही सब यदुवंशी सेना साज ले आए और प्रभुभी आठों पटरानियोंसमेत कटकके साथ होलिये. महाराज! जिसकाल श्रीकृष्णचंद्र कुटुंबसमेत सब सेना ले धौंसा दे द्वारकापुरीसे हस्तिनापुरको चले उस समयकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती, आगे हाथियोंका कोट बायें दाहने रथ घोड़ोंकी ओट, बीचमें रनवास और पीछे सब सेना साथ लिये सबकी रक्षा किये श्रीकृष्णचंद्रजी चले जातेथे, जहां डेरा होताथा तहां कई योजनके बीच एक सुंदर सुहावना नगर बन जाताथा. देश देशके नरेश भय खाय आय भेंटकर भेंट धरतेथे और प्रभु उन्हें भयातुर देख तिनका सब भांति समाधान करतेथे. निदान इसी धूमधामसे चले चले हरि सबसमेत हस्तिनापुरके निकट पहुँचे. इसमें किसीने राजा

युधिष्ठिरसे जाय कहा कि, महाराज! कोई नृपति अतिसेना ले बड़ी भीड़से आपके देशपर चढ़ आया है. आप बेगही उसे देखिये. नहीं तौ उसे यहां पहुँचा जानिये. महाराज! इस बातके सुनतेही राजा युधिष्ठिरने अतिभय खाय अपने नकुल सहदेव दोनों छोटे भाइयोंको यह कह प्रभुके सन्मुख भेजा कि, तुम देख आओ कि, कौन राजा चढ़ आया है? राजाकी आज्ञा पातेही—

चौ०सहदेवनकुलदेखिफिर आए,राजाकोयहबचनसुनाये प्राणनाथ आयेहैं हरी, सुनि राजा चिंता परिहरी ॥

आगे अति आनंदकर राजा युधिष्ठिरने भीम अर्जुनको बुलायके कहा कि, भाई! तुम चारों भाई आगू जाय श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदको ले आओ. महाराज! राजाकी आज्ञा पाय और प्रभुका आना सुन वे चारों भाई अतिप्रसन्न हो भेंट पूजाकी सब सामा और बड़े बड़े पंडितोंको साथ ले ले बाजेगाजेसे प्रभुको लेने चले. निदान अति आदर मानसे मिल वेदकी विधिसे भेंट पूजा कर ये चारों भाई श्रीकृष्णजीको सब समेत पाटंबरके पांवड़े डालते चोआ, चंदन, गुलाब, नीर, छिड़कते, चांदी सोनेके फूल बरसाते, धूप, दीप, नैवेद्य करते; बाजे गाजेसे नगरमें ले आए. राजा युधिष्ठिरने प्रभुसे मिल अति सुख माना और अपना जीतब सुफल जाना, आगे बाहर भीतर सबने सबसे मिल यथायोग्य परस्पर सन्मान किया: और नयनोंको सुख दिया. घर बाहर सारे नगरमें आनंद होगया और श्रीकृष्णचंद्र वहां रह सबको सुख देने लगे.

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णहस्तिनापुरगमनं नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥

अध्याय ७३.

भीमके हाथसे जरासंधका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक दिन श्रीकृष्णचंद्र करुणासिंधु दीनबंधु भक्तहितकारी ऋषि मुनि ब्राह्मण क्षत्रियोंकी सभामें बैठे थे, कि राजा युधिष्ठिरने आय अति गिड़गिड़ाय बिनती कर हाथ जोड़ शिर नायके कहा कि, हे शिव विरंचिके ईश! तुम्हारा ध्यान करते हैं सदा सुर मुनि ऋषि योगीश; तुमहो अलख अगोचर अभेद, कोई नहीं जानता तुम्हारा भेद.

चौ॰ मुनियोगीश्वरइकचितध्यावत, तिनकेमनछिनक भीन आवत। हमको घरही दर्शन देतु, मानत प्रेम भक्ति केहेतु ॥ जैसी मोहन लीला करो, काहूपै नहिजाने परो मायामें भूल्यो संसार, हमसों करत लोकब्योहार ॥ जो तुमको सुमिरउ जगदीश, तोहि आपनो जानतईश॥ अभिमानीते हो तुम दूर, सतवादीके जीवनमूर॥

महाराज! इतना कह मुनि राजा युधिष्ठिर बोले कि हे दीनदयालु! आपकी दयासे मेरे सब काम सिद्ध हुए, पर एकही अभिलाषा रही. प्रभु बोले, सो क्या? राजाने कहा कि मेरा यही मनोरथ है कि, राजसूययज्ञ कर आपको अर्पण करूं, तो भवसागर तरूं. इतनी बातके सुनतेही श्रीकृष्णचंद्र प्रसन्न हो बोले कि, राजा! यह तुमने भला मनो-

स्थ किया. इससे सुर, नर, मुनि, ऋषि, सब संतुष्ट होयँगे. यह सबको भासता है और इसका करना तुम्हें कुछ कठिन नहीं. क्योंकि तुम्हारे चारों भाई अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, बड़े प्रतापी और अतिबली है. संसारमें अब ऐसा कोई नहीं जो इनका सामना करे. पहले इन्हें भेजिये कि ये जाय दशो दिशाओंके राजाओंको जीत अपने वश कर आवें. पीछे आप निश्चिंताईसे यज्ञ कीजिये. राजा! प्रभुके मुखसे इतनी बात जो निकली त्योंही राजा युधिष्ठिरने अपने चारों भाइयोंको बुलाय कटक दे चारोंको चारों ओर भेज दिया, दक्षिणको सहदेव पधारे, पश्चिमको नकुल सिधारे, उत्तरको अर्जुन धाए, पूर्वमें भीमसेन आए, आगे कितने एक दिनके बीच महाराज! वे चारों हरिप्रतापसे सारे द्वीप नोखंड जीत दशोंदिशाओंके राजाओंको वश कर अपने साथ ले आए. उसकाल राजा युधिष्ठिरने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचंद्रजीसे कहा, कि महाराज! आपकी सहायतासे यह काम तो हुआ. अब क्या आज्ञा होती है? इसमें उद्धवजी बोले कि धर्मावतार! सब देशके तो नरेश आए. पर अब एक मगधदेशका राजा जरासंधही आपके बशका नहीं और जबतक वह बश न होगा तबतक यज्ञभी करना सफल न होगा. महाराज! जरासंध राजा जयद्रथका बेटा महाबली बड़ा प्रतापी और अतिदानी धर्मात्मा है. हर किसीकी सामर्थ्य नहीं जो उसका सामना करे. इस बातको सुन जो राजा युधिष्ठिर उदास हुए तो श्रीकृष्णचंद्र बोले, कि महाराज! आप किसी बातकी चिंता मत कीजै. भाई भीम अर्जुन समेत हमे आज्ञा दीजे, कै तो बल छलकर हम उसे पकड़ लावें, कै मार आवें. इस बातके सुनतेही राजा युधिष्ठिरने दोनों भाइयोंको आज्ञा दी. तब हरिने उन दोनोंको अपने साथ ले मगधदेशकी बाट ली, आगे जाय पंथमें श्रीकृष्णजीने अर्जुन और भीमसेनसे कहा कि——

चौ० विप्ररूप है पग धारिये, छल बलकर वैरि मारिये ॥

महाराज! इतनी बात कह श्रीकृष्णजीने ब्राह्मणका भेष किया. उनके साथ भीमार्जुननेभी विप्रभेष लिया. त्रिपुंडू किये, पुस्तक काँखमें

लिये, अति उज्ज्वल स्वरूप, सुंदर रूप बन ठनकर, ऐसे चले कि जैसे तीनों गुण सत्व, रज, तम, देह धरे जाते होयँ, कै तीनो काल. निदान कितने एक दिनोंमें चले चले वे मगधदेशमें पहुँचे और द्वोपहरके समय राजा जरासंधकी पवँरिपर जा खड़े हुए. इनका भेष देख पौरियोंने अपने राजासे जा कहा कि, महाराज! तीन ब्राह्मण अतिथि बड़े तेजस्वी, महापंडित, अतिज्ञानी कुछ वांछा किये द्वारपर खड़े हैं, हमें क्या आज्ञा होती है, महाराज! बातके सुनतेही राजा जरासंध उठ आया और इन तीनोंको प्रणाम कर अतिमान सन्मानसे घरमें लेगया. आगे वह इन्हें सिंहासनपर बैठाय आप सन्मुख हाथ जोड़ खड़ा हो देख देख शोच शोच बोला कि—

चौ० याचकजोपरद्वारेआवै, बड़ोभूपसोउअतिथिकहावै ॥
विप्रनहींतुमयोधाबली, बातनकछुकपटीकीभली ॥
जोठगठगनिरूपधरआवैं, ठगितोजायभलोनकहावै ॥
छिपैनक्षत्रीकांतितिहारी, दीसतशूरबीरबलधारी ॥
तेजवंततुमतीनों भाई, शिवबिरंचि हरिसे बरदाई ॥
मैंजान्योंजियकर निर्मान, करौदेवतुमआपबखान ॥
तुम्हरी इच्छाहोसो करौ, अपवाचाते नहिं मैं टरौं ॥
दानी मिथ्याकबहुँनभाषै, धनतनसर्वसुकछुनराखै ॥
माँगौ सोही देहौं दान, सुत सुंदरी सर्वस्व परान ॥

महाराज! इस बातके सुनतेही श्रीकृष्णचंद्रजीने कहा कि, महाराज! किसी समय राजा हरिश्चंद्र बड़ा दानी होगया है कि, जिसकी कीर्ति संसारमें अबतक छाय रही है: सुनिये; एक समय राजा हरिश्चंद्रके देशमें अकाल पड़ा और अन्न बिन सबलोग, मरनेलगे तब राजाने अपना सर्वस्व बेंच बेंच सबको खिलाया. जब देश नगर धन गया और निर्धन हो राजा रहा तब एकदिन सांझसमय यह तो कुटुंबसमेत भूखा बैठा था कि इसमें विश्वामित्रने आय इसका सत देखनेको यह

बचन कहा, कि, महाराज! मुझे धन दीजे, और कन्यादानकासा फल लीजे. इस बचनके सुनतेही जो कुछ घरमें था सो लादिया, पुनि ऋषिने कहा महाराज! मेरा काम इतनेमें न होगा, फिर राजाने दासी बेंच धन लादिया. और धन जन गँवाय निर्धन निर्जन हो स्त्री पुत्रको ले रहा. पुनि ऋषिने कहा कि, धर्ममूर्ति! इतने धनसे मेरा काम न सरा, अब मैं किसके पास जाय मांगूं. मुझे तो संसारमें तुझसे अधिक धनवान् धर्मात्मा दानी कोई नहीं दृष्टि आता है. एक श्वपच नाम चंडाल मायापात्र है. कहो तो उससे जा धन मांगूं, पर इसमेंभी लाज आती है. कि ऐसे दानी राजाको याच उससे क्या याचूं? महाराज! इतनी बातके सुनतेही राजा हरिश्चंद्र विश्वामित्रको साथ ले उस चांडालके घर गए और इन्होंने उससे कहा कि, भाई! तू हमें एक वर्षके लिये गहने धर और उनका मनोरथ पूरा कर. श्वपच बोलाः—

चौ०कैसेटहलहमारीकरिहौ, राजसतामसमनतेहरिहौ
तुमनृपमहातेजबलधारी, नीच टहल है खरी हमारी ॥

महाराज! हमारे तो यही काम है कि, श्मशानमें जाय चौकी दे और जो मृतक आवें उनसे कर ले पुनि हमारे घरबारकी चौकशी करे. तुमसे यह होसके तो मैं रुपये दूं! और तुम्हें बंद कर रक्खूं? राजाने कहा अच्छा मैं वर्षभर तुम्हारी सेवा करूंगा तुम इन्हें रुपये दो. महाराज! इतना बचन राजाके मुखसे निकलतेही श्वपचने विश्वामित्रको रुपये गिन दिये. वह ले अपने घर गये और राजा वहां रह उसकी सेवा करने लगा कितने एक दिन पीछे कालवश हो राजा हरिश्चंद्रका पुत्र रोहिताश्व मरगया. उस मृतकको ले रानी मरघटमें गई और ज्यों चिता बनाय अग्निसंस्कार करने लगी त्योंही राजाने आय कर मांगा.

चौ०रानीबिलखकहैदुखपाय, देखौसमझहियेतुमराय ।

यह तुम्हारा पुत्र रोहिताश्व है, और कर देनेको पास और तो कुछ नहीं एक यही चीर है जो पहरे खड़ी हूं. राजाने कहा मेरा इसमें कुछ बश नहीं, मैं स्वामीके कार्यपर खड़ा हूं. जो स्वामीका कार्य न करूं

तो मेरा सत जाय. महाराज! इस बातके सुनतेही रानीने चीर उतारनेको आंचल पर हाथ डाला, त्योंही तीनों लोक कांप उठे. और भगवानने राजा रानीका सत देख पहले एक विमान भेजदिया और पीछेसे आय दर्शन दे तीनोंका उद्धार किया. महाराज! जब विधाताने रोहिताश्वको जिवाय राजा रानीको विमानपर बैठाय वैकुंठ जानेकी आज्ञा की, तब राजा हरिश्चंद्रने हाथ जोड़ भगवानसे कहा कि हे दीनबंधु! पतितपावन! दीनदयाल!! मैं श्वपच विना वैकुंठधाममें कैसे जा करूं विश्राम? इतना बचन सुन और राजाके मनका अभिप्राय जान श्रीभक्तहितकारी करुणासिंधु हरिने श्वपचकोभी राजा रानी और कुँवरके साथ तारा.

चौ० यहहरिश्चंद्र अमरपदपायो, यहयुगानुयुगयशचलिआयो

महाराज! यह प्रसंग जरासंधको सुनाय श्रीकृष्णचंद्रजीने कहा कि महाराज! और सुनिये कि, रंतिदेवने ऐसा तप किया, कि अड़तालिस दिन बिनपानी रहा और जब जल पीने बैठा तिसी समय कोई प्यासा आया इसने वह नीर आप न पी उस तृषावंतको पिलाया. उस जलदानसे उसने मुक्ति पाई. पुनि राजाबलिने अतिदान किया तो पातालका राज्य लिया और अबतक उसका यश चला जाता है. फिर देखिये कि, उद्दालक मुनि छठे महीने अन्न खाते थे. एक समय खाती बिरियां उनके यहां अतिथि आया, उन्होंने अपना भोजन आप न खाय भूखेको खिलाय और उस क्षुधाहीमें मरे. निदान, अन्नदान करनेसे वेकुंठको गये चढ़कर विमान. पुनि एक समय सब देवताओं को साथ ले राजा इंद्रने जाय दधीचिसे कहा कि महाराज! हम वृत्रासुरके हाथसे अब बच नहीं सकते. जो आप अपना अस्थि हमें दीजै तो उसके हाथसे बचें नहीं तो बचना कठिन है. क्योंकि वह बिन तुम्हारे हाड़के आयुध किसी भांति न मारा जायगा. महाराज! इतनी बातके सुनतेही दधीचिने शरीर गायसे चटवाय जांघका हाड़ निकाल दिया. देवताओंने ले उस अस्थिका बज्र बनाया और दधीचिने प्राण गँवाया और वैकुंठ धाम पाया.

चौ०ऐसे दाताभये अपार, तिनको यश गावत संसार ॥

राजा ! यों कह श्रीकृष्णचंद्रजीने जरासंधसे कहा कि महाराज ! आगे और युगमें धर्मात्मा दानी राजा होगये हैं, तैसे अब इसकालमें तुम हो. जो आगे उन्होंने याचकोंकी अभिलाषा पूरी की, तो तुम अब हमारी आशा पुजाओ; कहा हैः—

दो०--याचक कहा न मांगई, दाता कहा न देय ॥
गृह सुत सुंदरि लोभ बिन, तन शिर दे यश लेय ॥

इतना बचन प्रभुके मुखसे निकलतेही जरासंध बोला कि, याचकको दाताकी पीर नहीं होती, तोभी धीर अपनी प्रकृति नहीं छोड़ता इसमें सुख पावै कै दुःख. देखो, हरिने कपटरूप धर वामन बन राजा बलिके पास जाय तीन पैग पृथ्वी मांगी उस समय शुक्रने बलिको चिताया तोभी राजाने अपना पण न छोंड़ा.

चौ० देहसमेत मही तिनदई, ताकी जगमें कीरति भई ।
याचक विष्णुकहायशलीनो, सर्वसुलै तोऊ हठ कीनो ।

इसमें तुम पहले अपना भेद कहो, तब जो तुम माँगोगे सो मैं दूंगा; मैं मिथ्या नहीं भाषता. श्रीकृष्णचंद्र बोले कि, राजा हम क्षत्री हैं वासुदेव हमारा नाम है. तुम भली भांति हमें जानताहो, और ये दोनों अर्जुन भीम हमारे फुफेरे भाई हैं. हम युद्ध करनेको तुम्हारे पास आए हैं. हमसे युद्ध कीजै. हम यही तुमसे मांगने आए हैं और कुछ नहीं मांगते. महारज ! यह बात श्रीकृष्णचंद्रजीसे सुन जरासंध हँसकर बोला कि, मैं तुझसे क्या लडूं ? तू मेरे सोहींसे भाग चुका है और अर्जुनसेभी न लडूंगा, क्योंकि यह विदर्भदेश गयाथा इस करके नारीका भेष रहा, भीमसेनसे कहो तो इससे लडूं. यह मेरे समानका है. इससे लड़नेमें मुझे कुछ लाज नहीं.

चौ०पहले तुम सब भोजन करो, पाछे मल्ल अखाड़े लरा
भोजन दे नृप बाहर आयो, भीमसेन तहँ बोल पठायो
अपनी गदा ताहि तिन दई, गदा दूसरी आपन लई ॥

दो०जहां सभामंडप बन्यो, बैठे जाय मुरारि।
जरासंध अरु भीम तहँ, भये ठाढ़ इक बारि।

चौ०टोपी शीश काछनीकाछे, बने रूप दोउनके आछे

महाराज! जिस समय दोनों बीर आखाड़ेमें खंभ ठोक गदा तान ध्वजा पलट झूमकर सन्मुख आए, उसकाल ऐसे जनाए कि, मानों दो मतंगज मतवाले उठधाए. आगे जरासंधने भीमसेनसे कहा कि; पहले गदा तू चला क्योंकि तू ब्राह्मणका भेष ले पौरिमें आया था इससे मैं पहले प्रहार न करूंगा. यह बात सुन भीमसेन बोले कि, राजा हमसे तुमसे धर्मयुद्ध है. हमसे यह ज्ञान न चाहिये. जिसका जी चाहे सो पहले शस्त्र करे. महाराज! उन दोनों बीरोंने परस्पर ये बातें कर एक साथही गदा चलाई और युद्ध करने लगे.

चौ०ताकतघातैंअपनीअपनी. चोटकरतबाँई अरुदहनी।
अंग बचाय उछरि पग धरैं, पटही गदा गदासों लरैं॥
खट पट चोट गदापटकारी, लागत शब्द कुलाहल भारी

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! इसभांति दोनों बली दिनभर तो धर्मयुद्ध करते और सांझको घर आय एक साथ भोजन कर विश्राम लेते, ऐसे तिन्हे लड़ते२सत्ताईस दिन भए. तब एक दिन उन दोनोंके लड़नेके समय श्रीकृष्णचंद्रजीने मनहीमन विचारा कि यह यों न मारा जायगा क्योंकि जब यह जन्मा था तब दो फांक हो जन्मा था. उस समय जरा राक्षसीनें आय जरासंधका मुँह और नाक मूंदी तब दोनों फांक मिल गई. यह समाचार सुन उसी समय उसके पिता बृहद्रथने ज्योतिषियोंको बुलायके पूँछा, कि कहो, इस लड़केका नाम क्या होगा? और कैसा होगा? ज्योतिषियोंने कहा कि, महाराज! इसका नाम जरासंध हुआ और यह बड़ा प्रतापी और अजर अमर होगा. जबतक इसकी संधि न फटेगी तबतक यह किसीसे न मारा जायगा. इतना कह ज्योतिषी बिदा हो चले गये. महाराज! यह बात श्रीकृष्णचंद्रजीने मनहीमन

शोच और अपना बल दे भीमसेनको तिनका चीर सैनसे जताया कि इसे इसरीतसे चीर डालो. प्रभुके चितातेही भीमसेनने जरासंधको पकड़ कर देमारा और एक जांघपर पांव दे दूसरा पांव हाथसे पकड़ यों चीर डाला कि, जैसे कोई दांतन चीर डाले. जरासंधके मरतेही सुर, नर, गंधर्व, ढोल, दमामें, भेरी बजाय, फूल बरसाय बरसाय, जयजयकार करने लगे और दुःखद्वंद्व जाय सारे नगरमें आनंद हो गया. उसी बिरियां जरासंधकी नारी रोती श्रीकृष्णचंद्रजीके सन्मुख खड़ी हो हाथ जोड़ बोली कि, धन्य है धन्य नाथ! तुम्हें, जो ऐसा काम किया कि, जिसने सर्वसु दिया तुमने उसका प्राणलिया. जो जग तुम्हें सुत वित्त समर्पे देह, उससे तुम करते हो ऐसाही सनेह.

चौ० कपटरूपकरछलबलकियो, जगतआयतुमयहयशलियो

महाराज! जरासंधकी रानीने जब करुणाकर करुणानिधानके आगे हाथ जोड़ बिनती कर यों कहा, तब प्रभुने दयालु हो पहले जरासंधकी क्रिया की; पीछे उसके सुत सहदेवको बुलाय राजतिलक दे सिंहासनपर बिठायके कहा कि, पुत्र! नीतिसहित राज्य कीजो और ऋषि, मुनि, गौ, ब्राह्मण प्रजाकी रक्षा कीजो. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे जरासंधवधो नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥

अध्याय ७४.

श्रीकृष्णका जरासंधके पुत्र सहदेवका राजगद्दीपर बिठाना, और सब राजाओंको अपने घर भेज फिर हस्तिनापुरमें बुलाना और राजाओंका हस्तिनापुरमें आकर धर्मराजाके आगे भेट धरना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! श्रीकृष्णचंद्रजीने सहदेवको राज-

पाटपर बैठाय समझाय कहा कि राजा ! अब तुम जाय उन राजाओंको ले आओ. जिन्हें तुम्हारे पिताने पहाड़की कंदरामें मूंद रक्खा है. इतना वचन प्रभुके मुखसे सुनतेही जरासंधका पुत्र सहदेव बहुत अच्छा ऐसा कह कंदराके निकट जाय उसकी शिला उठाय आठसौ बीस सहस्र राजाओंको निकाल हरिके सन्मुख ले आया, हथकड़ियां बेड़ियां पहने गलेमें सांकल लोहेकी डाले, नख केश बढ़ाये, तनछीन मनमलीन मैले भेष सब राजा प्रभुके सन्मुख पांतिके पांति खड़े हो, हाथजोड़ विनती कर बोले हे कृपासिंधु दीनबंधु ! आपने भले समय आय हमारी सुध ली, नहीं तो सब मर चुकेथे. तुम्हारा दर्शन पाय हमारे जीमें जी आया, पिछला दुःख सब गँवाया. महाराज ! इस बातके सुनतेही कृपासागर श्रीकृष्णचंद्रजीने जो ऊपर दृष्टि की, तो बातकी बातमें सहदेव उनको ले जाय, हथकड़ी बेड़ी कटवाय, क्षौर करवाय, न्हिलवाय धुलवाय, षटरस भोजन खिलवाय, वस्त्र आभूषण पहरवाय, शस्त्र अस्त्र बँधवाय, पुनि हरिके सोहीं लिवाय लाया. उसकाल श्रीकृष्णचंद्रजीने उन्हें चतुर्भुज हो, शंख चक्र गदा पद्म धारण कर, दर्शन दिया. प्रभुका स्वरूप भूप देखतेही हाथ जोड़ बोले, नाथ ! तुम संसारके कठिन बंधनसे जीवको छुड़ाते हो. तुम्हें जरासंधकी बंधसे हमें छुड़ाना क्या कठिन था ? जैसे कृपा कर आपने हमें इस कठिन बंधसे छुँड़ाया, तैसेही अब हमें गृहरूप कूपसे निकाल काम, क्रोध, लोभ, मोहसे छुड़ाइये. जो हम एकांत बैठ आपका ध्यान करें और भवसागरको तरें.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! जब सब राजाओंने ऐसे ज्ञान वैराग्यभरे बचन कहे, तब श्रीकृष्णचंद्रजी प्रसन्न हो बोले कि, सुनो जिनके मनमें मेरी भक्ति है, वे निःसंदेह भुक्ति मुक्ति पावेंगे. बंधमोक्षका मनही कारण है. जिनका मन स्थिर है. तिन्हें घर और बन समान है. तुम और किसी बातकी चिंता मत करो. आनंदसे घरमें बैठ नीतिसहित राज्य करो, प्रजाको पालो, गोब्राह्मणकी सेवामें रहो, झूंठ मत भाषो, काम, क्रोध, लोभ, अभिमान तजो, भाव भक्तिसे हरिको भजो,

तुम निःसंदेह परम पदको पाओगे. संसारमें आय जिसने अभिमान किया, वह बहुत न जिया. देखो अभिमानने किसे न खो दिया.

चौ० सहस्रबाहु अतिबलीबखान्यो, परशुरामताकोबलमान्यो
वेनरूपरावणहो भयो, गर्व आपने सो नश गयो ॥
भौमासुर बाणासुर कंस, भए गर्वते ते विध्वंस ॥
श्रीमद गर्व करौ जिनकोय, त्यागौ सर्वसु निर्भयहोय ॥

इतना कह श्रीकृष्णचंद्रजीनें सब राजाओंसे कहा कि अब तुम अपने २ घर जाओ. कुटुंबसे मिल अपना राजपाट सँभाल हमारे न पहुँचते हस्तिनापुरमें राजा युधिष्ठिरजीके यहां राजसूययज्ञमें शीघ्र आओ. महाराज! इतना वचन श्रीकृष्णचंद्रजीके मुखसे निकलतेही सहदेवने सब राजाओंको जानेका सामान जितना चाहिये उतना बातकी बातमें ला उपस्थित किया. वे प्रभुसे बिदा हो अपने अपने देशोंको गए और श्रीकृष्णचंद्रजीभी सहदेवको साथ ले भीम अर्जुन सहित वहांसे चले आनंद मंगलसे हस्तिनापुर आए. आगे प्रभुने राजा युधिष्ठिरके पास जाय जरासंधके मारनेका समाचार और सब राजाओंके छुड़ानेको व्योरे समेत कह सुनाया.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदजीके हस्तिनापुर पहुँचतेही वे सब राजाभी अपनी २ सेना ले भेंटसहित आन पहुँचे और राजा युधिष्ठिरसे भेंट कर भेंट दे श्रीकृष्णचंद्रजीकी आज्ञा ले हस्तिनापुरके चारों ओर जा उतरे और यज्ञकी टहलमें आ उपस्थित हुए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सर्वभूपतिहस्तिनापुरगमनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः॥७४॥

अध्याय ७५.

धर्मराजाके राजसूययज्ञमें श्रीकृष्णजीकी अग्रपूजा और शिशुपालका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! जैसे राजा युधिष्ठिरने यज्ञ किया और शिशुपाल मारागया तैसे मैं सब कथा कहताहूं तुम चित्त दे सुनो. बीस-सहस्र आठसौ राजाओंके जातेही चारों ओरके जितने राजा थे क्या सूर्यवंशी क्या चंद्रवंशी तितने सब आय२ हस्तिनापुरमें उपस्थित हुए. उस समय श्रीकृष्णचंद्र और राजा युधिष्ठिरने मिलकर सब राजाओंका सब भांति शिष्टाचार कर समाधान किया, और हरएकको एकएक काम यज्ञका सौंपा; आगे श्रीकृष्णचंद्रजीने राजा युधिष्ठिरसे कहा कि, महाराज! भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव सहित हम पांचों भाई तो सब राजाओंको साथ ले ऊपरकी टहल करें और आप ऋषि, मुनि, ब्राह्मणोंको बुलाय यज्ञ आरंभ कीजै. महाराज! इतनी बातके सुनतेही राजा युधिष्ठिरने सब ऋषि मुनि ब्राह्मणोंको बुलाकर पूंछा कि, महाराज! जो जो वंस्तु यज्ञमें चाहिये सो आज्ञा कीजे. महाराज! इस बातके कहतेही ऋषि मुनि ब्राह्मणोंने ग्रंथ देख देख यज्ञकी सामग्री सब एक पत्रपर लिखदी और राजाने वोही मँगवाय उनके आगे धरवा दी. ऋषि मुनि ब्राह्मणोंने मिल यज्ञकी वेदी रची. चारों वेदोंके सब ऋषि, मुनि, ब्राह्मण वेदीके बीच आसन बिछाय जा बैठे. पुनि शुचि होय स्त्रीसहित गांठ जोड़ रा-जा युधिष्ठिरभी जा बैठे और द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र, दुर्योधन, शिशुपाल आदि जितने योद्धा और बड़े बडे राजा थे, वेभी आन बैठे. ब्राह्मणोंने स्वस्तिवाचन कर गणेश पुजवाय कलश स्थापन कर ग्रह

स्थापन किया. राजाने भरद्वाज, गौतम, वसिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, परशुराम, कश्यप, व्यास आदि बड़े बड़े ऋषि मुनि ब्राह्मणोंको वरण किया और उन्होंने राजासे यज्ञका संकल्प करवाय होमका आरंभ किया. महाराज! मंत्र पढ़ पढ़ ऋषि, मुनि, ब्राह्मण आहुती देने लगे और देवता प्रत्यक्ष हाथ बढ़ाय २ लेने. उस समय ब्राह्मण वेदपाठ करतेथे और सब राजा होमकी सामग्री ला ला देतेथे. और राजा युधिष्ठिर होम करते. कि इसमें निर्द्वंद्व यज्ञ पूर्ण हुआ और राजाने पूर्णाहुति दी उसकाल सुर, नर मुनि सब राजाको धन्य धन्य कहने लगे और यक्ष, गंधर्व, किन्नर बाजन वजाय, यश गाय २ फूल बरसाने. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! यज्ञसे निश्चिंत हो राजा युधिष्ठिरने सहदेवजीको बुलायके पूंछा कि—

चौ० पहले पूजा काकी कीजै, अक्षत तिलक कौनको दीजै।
कौन बड़ो देवनको ईश, ताहि पूज हम नावें शीश ।

सहदेवजी बोले कि, महाराज! सब देवोंके देव हैं वासुदेव, कोई नहीं जानता इनका भेव. ये हैं ब्रह्मा रुद्र इंद्रके ईश, इन्हींको पहले पूज नवाइये शीश. जैसे तरुवरकी जड़में जल देनेसे सब शाखा हरी होती हैं; तैसेही हरीकी पूजा करनेसे सब देवता संतुष्ट होते हैं. यही जगतके कर्ता हैं और यही उपजाते, पालते, मारते हैं. इनकी लीला है अनंत, कोई नहीं जानता इनका अंत. येही हैं प्रभु अलख, अगोचर, अविनाशी, उन्हीके चरणकमल सदा सेवती कमला भई दासी. भक्तोंके हेतु बार बार लेते हैं अवतार, तनु धर करते हैं लोकव्योहार.

चौ० बंधु कहत घर बैठे आवें, अपनी माया मोहिं भुलावें
महामोह हम प्रेम भुलाने, ईश्वरको भ्राता कर जाने
इनसे बड़ो न दीसे कोई, पूजाप्रथम इन्हीकी होई ॥

महाराज! इस बातके सुनतेही सब ऋषि मुनि और राजा बोल उठे कि—राजा! सहदेवजीने सत्य कहा. प्रथम पूजने योग्य हरिही हैं. तबतो राजा युधिष्ठिरने श्रीकृष्णचंद्रजीको सिंहासनपर बिठाय आठो

पटरानियोंसमेत चंदन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य कर पूजा की पुनि सब देवताओं, ऋषियों, मुनियों, ब्राह्मणों और राजओंकी पूजा की. रंगरंगके जोड़े पहनाए. चंदन केसरकी खौरें की फूलोंके हार पहराय सुगंध लगाय यथायोग्य राजाने सबकी मनुहार की. श्रीशुक देवजी बोले कि राजा !

चौ०हरिपूजतसबको सुखभयो,शिशुपालको शीशजूनयो।

कितनी एक बेरतक तो वह शिर झुंकाए मनहीमन कुछ शोच विचार करता रहा, निदान कालवश हो अति क्रोधकर सिंहासनसे उतर सभाके बीच निःसंकोच हो निडर बोला कि, इस सभामें धृतराष्ट्र, दुर्योधन, भीष्म, कर्ण, द्रोणाचार्य आदि सब बड़े बड़े ज्ञानी मानी हैं. पर इस समय सबकी गति मति मारीगई, बड़े बड़े मुनीश बैठे रहे और नंदगोपके सुतकी पूजा भई और कोई कुछ न बोला. जिसने और ब्रजमें जन्म ले ग्वालबालोंकी जूंठी छाक खाई, तिसीकी इस सभामें भई प्रभुता बड़ाई.

चौ०ताहिबड़ोसबकहतअचेत, सुरपतिकीबलिकागहिदेत

जिनने गोपी और ग्वालोंसे स्नेह किया, इस सभामें तिसहीको सबसे बड़ा साधु बनाय दिया. जिसने दुग्ध, दही, मही, माखन घर घर चुराया खाया, उसीका यश सबने मिल गाया. बाट घाटमें जिन्ने लिया दान, तिसीका यहां हुआ सन्मान. परनारिनसे जिसने छलबल कर भोग किया, सबने मताकर उसीको पहले तिलक दिया. ब्रजमेंसे इंद्रकी पूजा जिसने उड़ाई और पर्वतकी पूजा ठहराई, पुनि पूजाकी सब सामग्री गिरिके निकट लिवाय लेजाय मिसकर आपही खाई तोभी उसे लाज न आई, जिसकी जात पांत और माता पिता कुलधर्मका नहीं ठिकाना, तिसको अलख अबिनाशी कर सबने माना.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! इसी भांति कालबश हो राजा शिशुपाल अनेक २ प्रकारकी बुरी बातें श्रीकृष्णचंद्रजीको कहताथा और श्रीकृष्ण सभाके बीच सिं-

हासनपर बैठ सुन सुन एक एक बातपर एक एक लकीर खेंचतेथे. इस-बीच भीष्म, कर्ण, द्रोण और बड़े बड़े राजा हरिनिंदा सुन अतिक्रोध कर बोले कि अरे मूर्ख! तू सभामें बैठा हमारे सन्मुख प्रभुकी निंदा करता है ? रे चांडाल! चुप रह नहीं तो अभी पछाड़ मारे डालते हैं. महाराज! यह कह शस्त्र ले ले सब राजा शिशुपालको मारनेको उठ धाए! उस समय श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदने सबको रोककर कहा कि तुम इसपर शस्त्र मतकरो खड़े खड़े देखो. यह आपसे आपही मरजाता है. मैं इसके सौ अपराध सहूंगा क्योंकि मैंने वचन हारा है, सौसे बढ़ती न सहूंगा, इसीलिये मैं रेखा काढ़ता जाताहूं. महाराज इतनी बातके सुनतेही सबोंने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचंद्रजीसे पूंछा कि कृष्णनाथ! इसका क्या भेद है ? जो आप इसके सौ अपराध क्षमा करियेगा सो कृपाकर हमें समझाइये, तो हमारे मनका संदेह जाय. प्रभु बोले कि जिस-समय यह जन्मा था, तिस समय इसको तीन नेत्र और चार भुजा थीं, यह समाचार इसके पिता दमघोषने पाय ज्योतिषियों और बड़े बड़े पंडितोंको बुलायके पूंछा, कि यह लड़का कैसा हुआ ? इसका वि-चार कर मुझे उत्तर दो. राजाकी बात सुनतेही पंडित और ज्योतिषियोंने शास्त्रको विचारके कहा कि, महाराज! यह बड़ा बली और प्रतापी होगा और यहभी हमारे बिचारमें आता है कि जिसके मिलनेसे इसकी एक आँख और दो बाहु गिर पड़ेंगी यह उसीके हाथ मारा जायगा. इतना सुन इसकी मा महादेवी शूरसेनकी बेटी वसुदेवकी बहन हमारी फूफी अतिउदास भई, और आठ पहर पुत्रहीकी चिंतामें रहने लगी. कितने एक दिन पीछे एक समय पुत्रको लिये पिताके घर द्वारकामें आई और इसे सबसे मिलाया. जब यह मुझसे मिला और इसकी एक आंख और दो बाहु गिरपड़ीं, तब फूफीने मुझे वचनबंध करके कहा कि, इसकी मौत तुम्हारे हाथ है, तुम इसे मत मारियो: मैं यह भीख तुमसे मांगतीहूं. मैंने कहा अच्छा, सौ अपराध हम इसके न गिनेंगे. इस उपरांत अपराध करेगा तो हनेंगे. हमसे यह बचन ले फूफी सबसे विदा हो, इतना कह, पुत्रसहित अपने घर गई, कि यह सौ अ-पराध ज्यों करेगा, त्यों कृष्णके हाथ मरेगा.

महाराज! इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णजीने सब राजाओंके मनका भ्रम मिटाय उन लकीरोंको गिना. जो एक एक अपराधपर खैंची थी गिनतेही सौसे बढ़ती हुई. तभी प्रभुने सुदर्शन चक्रको आज्ञा दी, उसने झट शिशुपालका शिर काट डाला, उसके धड़से जो ज्योति निकली सो एक बेर तो आकाशको धाई, फिर आय सबके देखते श्रीकृष्णचंद्रके मुखमें समाई. यह चरित्र देख सुर, नर, मुनि जयजयकार करने और पुष्प बरसावने लगे. उसकाल श्रीमुरारि भक्तहितकारीने तीसरी मुक्ति दी, और उसकी क्रिया की.

इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूंछा कि महाराज! तीसरी मुक्ति प्रभुने किस भांति दी? सो मुझे समझायके कहिये. शुकदेवजी बोले कि, राजा! एकबार यह हिरण्यकशिपु हुआ. तब प्रभुने नृसिंह अवतार ले तारा; दूसरी बेर रावण भया, तो हरिने रामावतार ले इसका उद्धार किया, अब तीसरी बिरियां यह है, इसीसे तीसरी मुक्ति भई. इतना सुन राजाने मुनिसे कहा कि, महाराज! अब आगे कथा कहिये. शुकदेवजी बोले कि राजा! यज्ञके हो चुकतेही राजा युधिष्ठिरने सब स्त्रीसहित राजाओंको वस्त्र पहराय ब्राह्मणोंको अनगिनत दान दिये. देनेका काम यज्ञमें राजा दुर्योधनका था. तिसने देखकर एककी ठौर अनेक दिये, इसमें उसका यश हुआ तौभी वह प्रसन्न न हुआ. इतनी कथा कह श्रीशुकदेजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज! यज्ञके पूर्ण होतेही श्रीकृष्णचंद्रजी राजा युधिष्ठिरसे बिदा हो सर्व सेना ले कुटुंबसहित हस्तिनापुरसे चले द्वारकापुरी पधारे. प्रभुके पहुँचतेही घर घर मंगलाचार होने लगे और सारे नगरमें आनंद होगया. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे राजसूययज्ञशिशुपालमोक्षो नाम पंचसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

अध्याय ७६

मय सभामें दुर्योधनका मान मर्दन करना.

राजा परीक्षित बोले कि, महाराज! राजसूययज्ञ होनेसे सब कोई प्रसन्न हुए. दुर्योधन अप्रसन्न हुआ इसका कारण क्या है? सो तुम मुझे समझायके कहो, जो मेरे मनका भ्रम जाय. श्रीशुकदेवजी बोले, कि राजा! तुम्हारे पितामह बड़े ज्ञानी थे. उन्होंने यज्ञमें जिन्हें जैसा देखा तिन्हें तैसा काम दिया. भीमको भोजन करवानेका अधिकार दिया, पूजापर सहदेवको रक्खा, धन लानेको नकुल रहे, सेवा करनेपर अर्जुन ठहरे, श्रीकृष्णचंद्रजीने पांव धोने और जूंठी पत्तल उठानेका काम लिया. दुर्योधनको द्रव्य बांटनेका काम दिया और सब जितने राजा थे, तिन्होंने एक एक काज बांट लिया. महाराज! सबतो निष्कपट यज्ञकी टहल करतेथे. पर एक राजा दुर्योधनही कपटसहित काम करताथा, इससे वह एककी ठौर अनेक उठाता था. निजमनमें यह बात ठनके कि इनका भंडार टूटे तो अप्रतिष्ठा होय पर भगवत्कृपासे अप्रतिष्ठा न हो और यश होताथा. इसलिये वह अप्रसन्न होता था और वह यहभी न जानताथा कि मेरे हाथमें चक्र है एक रुपया दूंगा तो चार इकट्ठे होंगे. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, राजा अब आगे कथा सुनिये, श्रीकृष्णचंद्रजीके पधारतेही राजा युधिष्ठिरने

सब राजाओंको खिलाय पिलाय पहराय अतिशिष्टाचार कर बिदा किया. वे दल साज साज अपने अपने देशको सिधारे. आगे राजा युधिष्ठिर पांडव और कौरवोंको ले गंगास्नानको बाजे गाजेसे गये. नीरमें पैठ उनके साथ सबने स्नान किया. पुनि न्हाय न्हिलाय संध्या पूजनसे निश्चिंत हो, वस्त्र आभूषण पहन, सबको साथ लिये राजा युधिष्ठिर कहां आते हैं कि, जहां मयदैत्यने मंदिर अतिसुंदर सुवर्णके रत्नजड़ित बनाये थे. महाराज ! राजा युधिष्ठिर सिंहासनपर विराजे उसकाल गंधर्व गुण गातेथे. चारण बंदीजन यश बखानतेथे. सभाके बीच रंडियां नृत्य करतीं थीं. घर बाहरमें मंगली लोग गाय बजाय मंगलाचार करतेथे और राजा युधिष्ठिरकी सभा इंद्रकीसी सभा होरही थी. इस बीच राजा युधिष्ठिरके आनेके समाचार पाय राजा दुर्योधनभी कपट स्नेह किये वहां मिलनेको बड़ी धूमधामसे आया.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज ! वहां मयने चौक बीच ऐसा काम कियाथा कि जो कोई जाताथा तिसे थलमें जलका भ्रम होताथा और जलमें थलका. महाराज ! जो राजा दुर्योधन मंदिरमें पैठा तो उसे थल देख जलका भ्रम हुआ. उसने वस्त्र समेट उठाय लिये. पुनि आगे बढ़ जल देख उसे स्थलका धोखा हुआ, जो पांव बढ़ाया तो उसके कपड़े भीजे. यह चरित्र देख सब सभाके लोग खिलखिला उठे. राजा युधिष्ठिरने हँसीको रोक मुँह फेर लिया. महाराज सबके हँस पड़तेही राजा दुर्योधन अतिलज्जित हो महाक्रोध कर उलटा फिर गया. सभामें बैठ कहने लगा कि, कृष्णका बल पाय युधिष्ठिरको अति अभिमान हुआ है. आज सभामें बैठ मेरी हँसी की, इसका पलटा मैं लूं और उसका गर्व तोड़ूं तो मेरा नाम दुर्योधन, नहीं तो नहीं. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे दुर्योधनमानमर्दनंनाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

अध्याय ७७.

शाल्वका शिवजीकी तपस्या करके अजरामरका वर पाना और अकुंठितगति रथका पाना और श्रीकृष्णजीके हाथसे शाल्वका वध.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! जिस समय श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजी हस्तिनापुरमें थे तिसीसमय शाल्व नाम दैत्य शिशुपाल-का साथी जो रुक्मिणीके व्याहमें श्रीकृष्णचंद्रजीके हाथकी मार खाय भागा था, सो मनहीमन इतना कह, लगा महादेवजीकी तपस्या करने कि अब मैं अपना बैर यदुवंशियोंसे लूंगा.

चौ॰ इंद्रीजीतसबैबशकीनी, भूंखप्याससबऋतुसहलीनी॥
ऐसी विधि तप लाग्यो करन, सुमिरै महादेवके चरण।
नितउठ मुठी रेतलैखाय, करै कठिनतपशिव मनलाय
बरष एक ऐसी बिधि गयो, तबहीं महादेव वर दयो॥

कि आजसे तू अजर अमर हुआ और एक रथ मायाका तुझे मयदैत्य बना देगा. तू जहां जाने चाहेगा, वह तुझे तहां ले जायगा. विमानकी त्रिलोकीमें मेरे वरसे सर्व ठौर जानेकी सामर्थ्य होगी. महाराज ! सदा शिवने जो वर दिया तो एक रथ आय उसके सन्मुख खड़ा हुआ. वहां शिवजीको प्रणाम कर रथपर चढ़ा द्वारकापुरीको धर धमका. वहां जाय नगरनिवासियोंको अनेक अनेक भांतिकी पीड़ा उपजाने लगा. कभी अग्नि बरसाताथा, कभी जल, कभी वृक्ष उखाड़ नगरपर फेंकता था, कभी पहाड़, उसके डरसे सब नगरनिवासी अतिभयमान हो भाग राजा उग्रसेनके पास जा पुकारे, कि महाराजकी दुहाई, दैत्यने आय

नगरमें अति धूम मचाई; जो इसी भांति उपाधि करेगा तो कोई जीता न रहेगा. महाराज ! इतनी बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने प्रद्युम्नजी और सांबको बुलायके कहा कि देखो हरिका पीछा ताक यह असुर आया है, प्रजाको दुःख देने, तुम इसका कुछ उपाय करो. राजाकी आज्ञा पाय प्रद्युम्नजी सब कटक ले रथपर बैठ नगरके बाहर लड़नेको जा उपस्थित हुए और सांबको भयातुर देख बोले कि तुम किसी बातकी चिंता मत करो. मैं हरिप्रतापसे इस असुरको बातकी बातमें मार लेताहूं इतना बचन कह प्रद्युम्नजी सेना ले शस्त्र पकड़ जो उसके सन्मुख हुए तो उसने ऐसी माया की, दिनकी महाअंधेरी रात होगई. प्रद्युम्नजीने ज्योंहीं तेज बाण चलाये त्यों महाअंधारको दूर किया ज्यों सूर्यका तेज होके दूर करे. पुनि कई एक बाण उन्होंने ऐसे मारे कि; उसका रथ अस्तव्यस्त होगया और वह घबराकर कभी भागजाताथा कभी आय अनेक अनेक राक्षसी माया उपजाय लड़ता था और प्रभुकी प्रजाको अति दुःख देता था.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज ! दोनों ओरसे यहां युद्ध होताही था कि इस बीच एकाएकी आय शाल्व दैत्यके मंत्री द्युमानूने प्रद्युम्नजीकी छातीमें एक गदा ऐसी मारी कि ये मूर्च्छा खाय गिरे, इनके गिरतेही वह किलकारी मारके पुकारा कि मैंने श्रीकृष्णजीके पुत्र प्रद्युम्नजीको मारा. महाराज ! यादव तो राक्षसोंसे महायुद्ध कररहे थे उसी समय प्रद्युम्नजीको मूर्च्छित देख दारुक सारथीका बेटा रथमें डाल रणसे भागा और नगरमें ले आया. चैतन्य होतेही प्रद्युम्नजीने अति क्रोध कर सूतसे कहा कि—

चौ० ऐसो नाहीं उचित है तोहिं, जान अचेत भजायो मोहिं
रण त्यजकै तू ल्यायो धाम, यह तो नहीं शूरको काम ॥
यदुकुलमें ऐसा नहिं कोय, तजके खेत जो भाग्यो होय

क्या तैंने कभी मुझे भागता देखाथा ? जो आज मुझे रणसे भगाय लाया. यह बात जो सुनेगा सो मेरी हांसी और निंदा करैगा तैंने यह काम भला न किया, जो बिनकाम कलंकका टीका लगादिया. महा-

राज ! इतनी बातके सुनतेही सारथी रथसे उतर सन्मुख खड़ा हो हाथ जोड़ शिर नाय बोला कि हे प्रभु ! तुम सब नीति जानते हो, ऐसा संसारमें कोई धर्म नहीं, जिसे तुम नहीं जानते. कहा है—

चौ०रथी शूर जो घायल परै, ताहि सारथी लै नीकरै ।
जो सारथी परै खा घाय, ताहि बचाय रथी लै जाय ॥
लागीप्रबलगदाअतिभारी, मूर्च्छित ह्वैसुधदेहबिसारी ॥
तब हौं रणते लै नीसरो, स्वामिद्रोह अपयशते डरो ॥
घरी एक लीनो विश्राम, अब चलकर कीजै संग्राम ॥
धर्मनीति तुमसकलजानियो, जगउपहासनमन आनियो
अबतुमसबहीकोबधकरिहौ, मायामयदानवकोहतिहौ

महाराज ! ऐसे कह सूत प्रद्युम्नजीको जलके निकट लेगया, वहां जाय उन्होंने मुख हाथ पांव धोय सावधान हो कवच टोप पहन धनुप बाण सँभाल सारथीसे कहा भला जो भया सो भया पर तू अब मुझे वहां ले चल. जहां द्युमत् यदुवंशियोंसे युद्ध कर रहा है. बातके सुनतेही सारथी बातकी बातमें रथ वहां लेगया. जहां वह लड़ रहा था. जातेही इन्होंने ललकारकर कहा कि इधर उधर क्या लड़ता है ? आ मेरे सन्मुख हो जो तुझे शिशुपालके पास भेजूं. यह वचन सुनतेही वह जो प्रद्युम्नजीपर आय टूटा तो कई एक बाण मार इन्होंने उसे मार गिराया और सांबनेभी असुरदल काट काट समुद्रमें पाट डुबाया.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जब असुर-दलसे युद्ध करते करते द्वारकापुरीमें सब यदुवंशियोंको सताइस दिन हुए तब अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रजीने हस्तिनापुरमें बैठे बैठे द्वारकाकी दशा देख देख राजा युधिष्ठिरसे कहा कि महाराज ! मैंने रात्रि स्वप्नमें देखा कि, द्वारकामें महाउपद्रव होरहा है, और सब यदुवंशी अतिदुःखित हैं इससे अब आप आज्ञा दो तो हम द्वारकाको प्रस्थान करें. यह बात सुन राजा युधिष्ठिरने हात जोड़कर कहा कि, जो प्रभुकी इच्छा. इतना बचन राजा युधिष्ठिरके मुखसे निकलतेही श्रीकृष्ण और बलराम

सबसे विदा हो जो पुरके बाहर निकले तो क्या देखते हैं कि बांई ओर एक हरिणी दौडी जाती है और सोहीं श्वास खड़ा शिर झाड़ता है यही अपशकुन देख हरिने बलरामजीसे कहा कि, भाई! तुम सबको साथ ले पिछेसे आओ; मैं आगे चलताहूं. राजा! भाईसे यों कह श्रीकृष्णचंद्रजी आये. जाय रणभूमिमें क्या देखते हैं कि, असुर यदुवंशियोंको चारों ओरसे बड़ी मार मार रहे हैं और वे निपट घबराय शस्त्र चलाय रहे हैं यह चारित्र देख हरि जो वहां खड़े हो कुछ भावित हुए तो पीछेसे बलदेवजीभी जा पहुँचे. उसकाल श्रीकृष्णचंद्रजीने बलरामसे कहा कि,भाई! तुम जाय नगर और प्रजाकी रक्षा करो. मैं इन्हे मार चला आता हूं. प्रभुकी आज्ञा पाय बलदेवजी तो पुरीमें पधारे और आप हरि वहां रणमें गए. जहां प्रद्युम्नजी शाल्वसे युद्ध कर रहे थे यदुपतिके आतेही शंखध्वनि हुई और सबने जाना कि श्रीकृष्णचंद्र आए. महाराज! प्रभुके आतेही शाल्व अपना रथ उड़ाय आकाशमें लेगया और वहांसे अग्निसम बाण बरसाने लगा. उस समय श्रीकृष्णचंद्रजी सोलह बाण गिनकर ऐसे मारे कि, उसका रथ और सारथी उड़गया और वह तड़फड़ाय नीचे गिरा; गिरतेही सँभलकर एक बाण उसने हरिकी बाम भुजामें मारा और यों पुकारा कि, कृष्ण खड़ा रह, मैं युद्ध कर तेरा बल देखता हूं तैंने तो शंखासुर, भौमासुर और शिशुपाल आदि बड़ बड़े बलवान् योद्धाओंको छल बल करके मारे हैं पर अब मेरे हाथसे तेरा बचना कठिन है.

चौ० मोसौंतोहिंपऱ्योअबकाम, कपटछांडि कीजो संग्राम
बाणासुर भौमासुर बैरी, तेरो मग देखतहैंहरी ॥
पठऊं,तहां बहुरि नहिं आवै, भेजे तुमहिं बड़ाई पावै।

यह बात सुन जो श्रीकृष्णजीने इतना कहा कि रे मूर्ख! अभिमानी कायर!! क्रूर!!! क्षत्री जो हैं गंभीर शूर धीर वे पहले किसीसे बड़ा बोल नहीं बोलते. इतना सुन उसने दौड़कर हरिपर एक गदा अति क्रोधकर चलाई, सो प्रभुने सहज स्वभावही काट गिरायी. पुनि श्रीकृ-

ष्णचंद्रजीने उसे एक गदा मारी. वह गदा खाय मायाकी ओटमें जाय दोघड़ी मूर्छित हुआ फिर कपटरूप बनाय प्रभुके सन्मुख आय बोलाः-

दो०माय तिहारी देवकी, पठयो मोहिं अकुलाय ॥
रिपु शाल्व बसुदेवको, पकेर लीन्हे जाय ॥

महाराज! वह असुर इतना बचन सुनाय, वहांसे जाय, मायाको वसुदेव बनाय बाँध लाय, श्रीकृष्णचंद्रके सोहीं आय, बोला-के कृष्ण! देख, मैं तेरे पिताको बांध लाया और अब इसका शिर काट सब यदुवंशियोंको मार समुद्रमें डालूंगा. पीछे तुझे मार एकछत्र राज्य करूंगा महाराज! ऐसे कह उसने मायाके बसुदेवका शिर श्रीकृष्णचंद्रजीके देखते २ काटडाला और बरछीके फलपर रख सबको दिखाया. यह मायाका चरित्र देख पहले तो प्रभुको मूर्च्छा आई पुनि देह सँभाल मनहीमन कहने लगे कि, यह क्योंकर हुआ? जो यह वसुदेवजीको बलरामजीके रहते द्वारकासे पकड़ लाया? क्या यह उनसेभी बली है? जो उनके सन्मुखसे वसुदेवजीको ले निकल आया. महाराज! इसी भांतिकी अनेक अनेक बातें कितनीएक बेर लग आसुरी मायामें आय प्रभुने की और महाभावित रहे, निदान ध्यान कर प्रभुने देखा तो सब आसुरी मायाकी छायाका भेद पाया, तब तो श्रीकृष्णचंद्रजीने उसे ललकारा. प्रभुकी ललकार सुन वह आकाशको गया और लगा वहां प्रभुपर शस्त्र चलाने; इसबीच श्रीकृष्णचंद्रजीने कई एक बाण ऐसे मारे कि वह रथसमेत समुद्रमें गिरा; गिरतेही सँभल गदा ले प्रभुपर झपटा, तब तो हरिने उसे अति क्रोध कर सुदर्शनचक्रसे मारगिराया, ऐसे कि जैसे सुरपतिने वृत्रासुरको मार गिराया था, महाराज! उसके गिरतेही उसकी शीशकी मणि निकल भूमिपर गिरी और ज्योति श्रीकृष्णचंद्रजीके मुखमें समाई. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे शाल्वदैत्यवधोनाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

अध्याय ७८.

बलरामजीका यात्रा करते समय नैमिषारण्यमें जाना और कुशसे सूतका वध करना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! अब मैं शिशुपालके भाई वक्रदंत और विदूरथकी कथा कहताहूं कि जैसे वे मारे गये, जबसे शिशुपाल मारागया तबसे वे दोनों श्रीकृष्णचंद्रजीसे अपने भाईका पलटा लेनेका विचार किया करते थे. निदान शाल्व और प्रद्युम्नको मारतेही अपना सब कटक ले द्वारकापुरीपर चढ़ आए और चारों ओरसे घेर लगे अनेक अनेक प्रकारके यंत्र और शस्त्र चलाने.

चौ० परोनगरकोलाहलभारी, सुनिपुकाररथचढ़ेमुरारी।

आगे श्रीकृष्णचंद्रने नगरके बाहर जाय वहां खड़े हुए, कि जहां अतिकोप किये शस्त्र लिये वे दोनों असुर लड़नेको उपस्थित थे. प्रभुको देखतेही दंतवक्त्र महाअभिमान कर बोला, कि रे कृष्ण! तू पहले अपना शस्त्र चलाय ले पीछे मैं तुझे मारूंगा. इतनी बात मैंने इसलिये तुझे कही कि, मरते समय तेरे मनमें यह अभिलाषा न रहे कि, मैंने दंतवक्त्रपर शस्त्र न किया. तूने तो बड़े बड़े बली मारे हैं, पर अब मेरे हाथसे जीता न बचेगा. महाराज! ऐसे कितने एक दुष्ट बचन कह दंतवक्त्रने प्रभुपर गदा चलाई सो हरिने सहजही काट गिराई, पुनि दूसरी गदा ले हरिसे महायुद्ध करने लगा. तब तो भगवानने उसे मार गिराया और उसका जी निकल प्रभुके मुखमें समाया. आगे दंतवक्त्रका मरना देख विदूरथ ज्यों युद्ध करनेको चढ़ आया, त्योंही श्रीकृष्णजीने

सुदर्शन चक्र चलाया. उसने विदूरथका शिर मुकुटकुंडलसमेत काट गिराया. पुनि सब असुरदलको मार भगाया, उसकाल—

चौ० फूले देव पुष्प बरसावैं, किन्नर चारण हरियशगावैं।
सिद्ध साध्य विद्याधर सारे, जय जय चढ़े विमान पुकारे।

पुनि सब बोले कि, महाराज! आपकी लीला अपरंपार है; कोई इसका भेद नहीं जानता. प्रथम हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष भये, पीछे रावण और कुंभकर्ण, अब ये दंतवक्त्र शिशुपाल हो आये. तुमने तीनो बेर इन्हे मारा और परम मुक्ति दी. इससे तुम्हारी गति कुछ किसीसे जानी नहीं जाती. महाराज! इतना कह देवता तो प्रभुको प्रणाम कर चले गये और हरि बलरामजीसे कहने लगे, कि, भाई! कौरव और पांड़वोंसे हुई लढ़ाई, अब क्या करें? बलदेवजी बोले कृपानिधान! कृपा कर आप हस्तिनापुरको पधारिये; तीर्थयात्रा कर पीछेसे मैंभी आताहूं. इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले, कि महाराज! यह वचन सुन श्रीकृष्णचंद्रजी तो वहांसे कुरुक्षेत्रमें पधारे, जहां कौरव पांड़व महाभारत युद्ध करतेथे और बलरामजी तीर्थयात्राको निकले. आगे सब तीर्थ करते करते बलदेवजी नैमिषारण्यमें पहुँचे तो वहां क्या देखते हैं कि एक ओर ऋषि मुनि यज्ञ रच रहे हैं और ऋषि मुनियोंकी सभामें सिंहासनपर बैठे सूतजी कथा बांच रहे हैं, इनको देखतेही शौनकादिक सब मुनि ऋषियोंने उठकर प्रणाम किया और सूत सिंहानसनपर गद्दी लगाये बैठा देखता रहा. महाराज! सूतके न उठतेही बलरामजीने शौनकादिक सब ऋषि मुनियोंसे कहा, कि इस मूर्खको किसने वक्ता किया, और व्यासआसन दिया. वक्ता चाहिये भक्तिमंत विवेकी और ज्ञानी, यह है गुणहीन कृपण और अति अभिमानी. पुनि चाहिये निर्लोभी और परमार्थी, यह है महालोभी और अपस्वार्थी, ज्ञानहीन अविवेकीको यह व्यासगद्दी फबती नहीं, इसे मारें तो क्या! पर यहांसे निकाल दिया चाहिये. इसबातके सुनतेही शौनकादि बड़े बड़े मुनि ऋषि अति बिनती कर बोले कि, महाराज! तुम हो वीर धीर सकल धर्म नीतिके जाननेवाले, यह है कायर अधीर अविवेकी अभिमानी अज्ञान इसका अपराध क्षमा कीजै. क्योंकि यह व्यासगद्दीपर बैठा है और ब्रह्माने यज्ञकर्मके लिये इसे यहां स्थापित किया है.

चौ० आसनगर्वमूढ़मनधर्‌यो, उठिप्रणामतुमकोनहिकर्‌यो।
यही नाथ याको अपराध, परी चूक हैतो यह साध।
सूतहि मारे पातक होय, जगमें भलो कहै नहि कोय॥
निष्फलबचननजायतिहारो, यहतुमनिजमनमाहिविचारो

महाराज! इतनी बातके सुनतेही बलरामजीने एक कुश उठाय सहज स्वभाव सूतको मारा, उसके लगतेही वह मरगया. यह चरित्र देख शौनकादि मुनि ऋषि हाहा कर अति उदास हो बोले कि, महाराज! जो बात होनी थी सो तो हुई पर अब कृपा कर हमारी चिंता मेटिये. प्रभु बोले तुम्हें किस बातकी इच्छा है? सो तुम कहो हम पूरी करें. मुनियोंने कहा महाराज! हमारे यज्ञ करनेमें किसी बातका विघ्न न हो, यही हमारी बासना है. सो आप पूरी कीजे और जगतमें यश लीजे. इतना बचन मुनियोंके मुखसे निकलतेही अंतर्यामी बलरामजीने सूतके पुत्रको बुलाय व्यासगद्दीपर बैठायके कहा कि, यह अपने बापसे अधिक वक्ता होगा और मैंने इसे अमरपद दे चिरंजीव किया. अब तुम निश्चिंताईसे यज्ञ करो. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सूतवधोनाम अष्टसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७८॥

अध्याय ७९.

भीम और दुर्योधनका गदायुद्ध.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! बलरामजीकी आज्ञा पाय शौनकादिक सब ऋषि मुनि प्रसन्न हो यज्ञ करने लगे, तो इल्वलका बेटा

बल्वल आय महामेघ कर बादल गर्जे, बड़ी भयंकर अतिकाली आँधी चलाय लगा आकाशसे रुधिर और मल मूत्र बरसाने; अनेक उपद्रव मचाने. महाराज ! दैत्यकी यह अनीति देख बलदेवजीने हल मूशल आवाहन किया. वे आय उपस्थित हुए. पुनि महाक्रोध कर प्रभुजीने जा बल्वलको हलसे खैंच एक मूशल उसके शिरपर ऐसा मारा कि—

चौ० फूट्यो मस्तक छूटे प्राण, रुधिर प्रवाह भयो तिहिं यान॥
कर भुज डारि पऱ्यो विकरार, निकरे लोचन राते बार॥

बल्वलके मरतेही सब मुनियोंने अतिसंतुष्ट हो बलदेवजीकी पूजा की और बहुतसी स्तुति कर भेंट दी. फिर बलराम सुखधाम वहांसे विदा हो तीर्थयात्राको निकले, तो महाराज ! सब तीर्थ कर पृथ्वीप्रदक्षिणा करते करते वहां पहुँचे कि जहां कुरुक्षेत्रमें दुर्योधन और भीमसेन महायुद्ध करते थे और पांडवसमेत श्रीकृष्णचंद्र और बड़े बड़े राजा खड़े देखते थे. बलरामजीके जातेही दोनों बीरोंने प्रणाम किया. एकने गुरु जान, दूसरेने बंधु मान. महाराज ! उन दोनोंको लड़ता देख बलरामजी बोले—

चौ० सुभट समान प्रबल दोउ बीर, अब संग्राम तजहु तुम धीर॥
कुरु पांडवको राखहु बंस, बंधु मित्र सब भये विध्वंस॥
दोऊ सुनि बोले शिरनाय, अब रणते उतऱ्यो नहिं जाय॥

पुनि दुर्योधन बोला कि गुरुदेव! मैं आपके सन्मुख झूठ नहीं भाषता आप मेरी बात मन दे सुनिये, यह जो महाभारत युद्ध होताहै और लोग मारे गये और जाते हैं और जाँयगे, सो तुह्मारे भाई श्रीकृष्णचंद्रजीके मतसे, पांडव केवल श्रीकृष्णजीके बलसे लड़ते हैं. नहीं तो इनकी क्या सामर्थ्य थी ? जो ये कौरवोंसे लड़ते, ये बापरे तो हरिके वश ऐसे हो रहे हैं कि, जैसे काठकी पुतली नटके वश होय. जिधर वह चलावे तिधर चले, उनको यह उचित न था जो पांडवोंकी सहायता कर हमसे इतना द्वेष करें. दुःशासनकी भीमसेनसे भुजा उखड़ाई और मेरी जांघमें गदा लगवाई तुमसे अधिक हम क्या कहेंगे? इस समय—

चौ० जो हरि करैं सोई अब होय, या बातें जाने सब कोय॥

यह बचन दुर्योधनके मुखसे निकलतेही, बलरामजी श्रीकृष्णचंद्रजीके निकट आए, और बोले कि भाई! तुमभी उपाधि करनेमें कुछ घाट नहीं तुमने यह क्या किया? जो युद्ध करवाया, दुःशासनकी भुजा उखड़ाई और दुर्योधनकी जांघ कटवाई, यह धर्मयुद्धकी रीत नहीं है, कि कोई बलवान् हो किसीकी भुजा उखाड़े कै कटिके नीचे शस्त्र चलावे, हां धर्मयुद्ध यह है कि एक एकको ललकार सन्मुख शस्त्र करे. श्रीकृष्णचंद्र बोले भाई! तुम नहीं जानते, ये कौरव बड़े अधर्मी अन्यायी हैं. इनकी अनीति कुछ कही नहीं जाती. पहले इन्होंने दुःशासन, शकुनि, भगदत्तके जुआँ खेल कपट कर राजा युधिष्ठिरका सर्वस्व जीत लिया. दुःशासन द्रौपदीको हाथ पकड़ लाया, इससे उसके हाथ भीमसेनने उखाड़े, दुर्योधनने सभाके बीच द्रौपदीको जांघपर बैठनेको कहा, इससे उसकी जांघ काटी गई. इतना कह पुनि श्रीकृष्णचंद्र बोले कि, भाई! तुम नहीं जानते इसी भांतिकी जो जो अनीति कौरवोंने पांडवोंके साथ की है सो हम कहांतक कहेंगे? इससे यह भारतकी आग किसी रीतिसे अब न बुझेगी. तुम इसका कुछ उपाय मतकरो. महाराज! इतना बचन प्रभुके मुखसे निकतेही बलरामजी कुरुक्षेत्रसे चल द्वारका पुरीमें आये और राजा उग्रसेनसे भेंट कर हाथ जोड़ कहने लगे; कि महाराज! आपके पुण्यप्रतापसे हम सब तीर्थयात्रा तो कर आये पर एक अपराध हमसे हुआ. राजा उग्रसेन बोले सो क्या? बलरामजीने कहा महाराज! नैमिषारण्यमें जाय हमने सूतको मारा तिसकी हत्या हमको लगी. अब आपकी आज्ञा होय तो पुनि नैमिषारण्यमें जाय यज्ञके दर्शन कर फिर तीर्थ न्हाय हत्याका पाप मिटाय आवें; पीछे ब्राह्मण-भोजन करवाय जातको जिमावें, जिससे जगमें यश पावें. राजा उग्रसेन बोले अच्छा, आप हो आइये. महाराज! राजाकी आज्ञा पाय बलरामजी कितने एक यदुवंशियोंको साथ ले नैमिषक्षेत्र जाय स्नान दान कर शुद्ध हो आये. पुनि पुरोहितको बुलाय होम करवाय ब्राह्मण जिमाय जातको खिलाय लोकरीति कर पवित्र हुए. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि—महाराज!

चौ० जो यह चरित सुने मन लाय, ताको सबही पाप नशाय

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे बलरामतीर्थयात्राकरणं नामै... ...तितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

अध्याय ८०.

सुदामाका द्वारकापुरीमें जाना और श्रीकृष्णको भेंट देकर पूर्व कथा करना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि—महाराज! अब मैं सुदामाकी कथा कहता हूं कि जैसे वह प्रभुके पास गया और उसका दरिद्र कटा सो तुम मन दे सुनो. दक्षिण दिशाकी ओर है एक द्राविड़ देश, तहां विप्र और वणिक बसतेथे नरेश. जिनके राज्यमें घर घर होता था भजन सुमिरण और हरिका ध्यान, पुनि सब करतेथे तप, यज्ञ, धर्म, दान और साधु, संत, गौ ब्राह्मणका सन्मान.

चौ० ऐसे बसैं सबै तिहि ठौर, हरि बिन कछु न जानै और

तिसी देशमें सुदामानाम ब्राह्मण श्रीकृष्णचंद्रजीका गुरुभाई अतिदीन, धनहीन, तनुक्षीण, महादरिद्री ऐसा कि जिसके घरपै न घास, खानेको कुछ पास न रहताथा. एक दिन सुदामाकी स्त्री दरिद्रसे अति घबराय, महा दुःख पाय, पतिके निकट जाय, भय खाय, डरती कांपती बोली, कि महाराज! अब इस दरिद्रके हाथसे महादुःख पाती हैं, जो आप इसे खोया चाहिये तो मैं एक उपाय बताऊं. ब्राह्मण बोला सो क्या? कहा तुम्हारे परममित्र त्रिलोकीनाथ द्वारकावासी श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद हैं, जो उनके पास जाओ तो यह दरिद्र जाय, क्योंकि वे अर्थ, धर्म, काम, मोक्षके दाता हैं, महाराज! जब ब्राह्मणीने ऐसे समझाकर कहा

तब सुदामा बोला, कि हे प्रिये! बिन दिये श्रीकृष्णचंद्रभी किसीको कुछ नहीं देते, यह मैं भली भांतिसे जानता हूं, कि जन्मभर मैंनें किसीको कभी कुछ नहीं दिया, बिन दिये कहांसे पाऊंगा? हां तेरे कहेसे जाऊंगा, तो श्रीकृष्णजीके दर्शन कर आऊंगा. इस बातके सुनतेही ब्राह्मणीने एक अतिपुराने धौले वस्त्रमें थोड़ेसे चावल बांध ला दिये, प्रभुकी भेंटके लिये और लोटा और लाठी ला आगे धरी, तब तो सुदामा डोर लोटा कांधेपर डाल, चावलकी पोटली कांखमें दबाय, लाठीं हाथमें ले, गणेशको मनाय, श्रीकृष्णचंद्रजीका ध्यान कर, द्वारकापुरीको पधारे. महाराज! बाटहीमें चलते चलते सुदामा मनहींमन कहने लगा, कि भला धन तो मेरी प्रारब्धमें नहीं, पर द्वारका जानेसे श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदका दर्शन तो करूंगा, इसीभांतिसे शोच बिचार करता करता सुदामा तीन पहरके बीच द्वारकापुरीमें पहुँचा तो क्या देखता है, कि नगरके चारों ओर समुद्र हैं और बीचमें पुरी वह पुरी कैसी है कि जिसके चहूं ओर बन उपबन फूल फल रहे हैं, तड़ाग वापी इंदारोंपर रहँट परोहे चल रहे हैं, ठौर ठौर गायोंके यूथके यूथ चर रहे हैं, तिनके साथ ग्वाल बाल न्यारेही कुतूहल करते हैं.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! सुदामा बन उपबनकी शोभा निरख पुरीके भीतर जाय देखें तो कंचनके मणिमय मंदिर महासुंदर जगमगाय रहे हैं, ठांव ठांव अथाइयोंमें यदुवंशी इंद्रकीसी सभा किये बैठे हैं, हाट बाट चौहटोंपर नाना प्रकारकी बस्तु बिकरहीं हैं, घर घर जिधर तिधर गान दान हरिभजन और प्रभुका यश हो रहा है और सारे नगरनिवासी महाआनंदमें हैं. महाराज! यह चरित्र देखता देखता और श्रीकृष्णचंद्रजीका मंदिर पूंछता पूंछता सुदामा जा प्रभुकी सिंहपौरपर खड़ा हुआ. इसने किसीसे डरते डरते पूंछा, कि श्रीकृष्णचंद्रजी कहां बिराजते हैं? उसने कहा कि, देवता! आप मंदिरभीतर जाओ सन्मुख श्रीकृष्णचंद्रजी रत्नसिंहासनपर बैठे हैं, महाराज! इतना बचन सुन सुदामा जो भीतर गया. तो देखतेही श्रीकृष्णचंद्र सिंहासनसे उतर आगू बढ़ भेंटकर अतिप्यारसे हाथ पकड़ उसे लेगये, पुनि

सिंहासनपर बिठाय पांव धोय चरणामृत ले चंदन चरच, अक्षत लगाय पुष्प चढ़ाय, धूप दीप कर प्रभुने सुदामाकी पूजा की.

चौ०इतनो करि हरि जोरे हाथ. कुशल क्षेम पूंछत यदुनाथ

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा कि महाराज! यह चरित्र देख रुक्मिणीजी समेत आठों पटरानियां और सब यदुवंशी जो उस समय वहां थे मनहींमन यों कहने लगे कि, इस दरिद्री, दुर्बल, मलिन, वस्त्रहीन, ब्राह्मणने ऐसा क्या अगले जन्म पुण्य किया था? जो त्रिलोकीनाथने इसे इतना मान दिया. महाराज! अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्र उसकाल सबके मनकी बात समझ उनका संदेह मिटानेको सुदामासे गुरुके घरकी बात करने लगे कि, भाई! तुम्हे वह सुध है? जो एक दिन गुरुपत्नीने हमें तुम्हें इंधन लेने भेजा था और जब बनमें इंधन ले गठड़ियाँ बांध शिरपर धर घरको चले तब आंधी और मेह आया और लगा मूशलधार बरसावने, जल थल चारों ओर भर गये. हम तुम भीग कर महादुःख पाय जाड़ा खाय रातभर एक वृक्षके नीचे रहे, भोरही गुरुदेव बनमें ढूंढ़ते आये और अति करुणा कर आशीश दे हमें तुहें अपने साथ कर लिवाय लाये.

इतना कह श्रीकृष्णचंद्रजी बोले कि भाई! जबसे तुम गुरुदेवके यहांसे बिछड़े तबसे हमने तुम्हारा समाचार न पाया था कि कहां थे और क्या करते थे. अब आय दर्शन दिखायां तुमने हमें महासुख दिया और घर पवित्र किया. सुदामा बोला हे कृपासिंधु! दीनबंधु!! स्वामी!!! अंतर्यामी!!! तुम सब जानो हो. कोई बात संसारमें ऐसी नहीं जो तुमसे छिपी है. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सुदामा द्वारकागमनं नाम अशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

अध्याय ८१

सुदामाका दरिद्र दूर करना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्रजीने सुदामाकी बात सुन और उसके अनेक मनोरथ समझ हँसकर कहा कि, भाई ! भाभीने हमारे लिये क्या भेंट भेजी है ? सो देते क्यों नहीं ? कांखमें किसलिये दबाय रहे हो. महाराज ! वह बचन सुन सुदामा तो सकुचाय शिर झुँकाय रहा और प्रभुने उठ चावलकी पोटली उसकी कांखसे निकाल ली, पुनि खोल उसमेंसे अति रुचकर दो मुट्ठी चावल खाए और ज्यों तीसरी मूठ भरी त्यों रुक्मिणीजीने हरिका हाथ पकड़ा और कहा कि महाराज ! अपने दो लोक तो इसे दिया अब अपने रहनेकाभी कोई ठौर रक्खोगे कि नहीं ? ब्राह्मण तो सुशील, कुलीन, अति बैरागी, महात्यागीसा दृष्टि आता है, क्यों कि इसे बिभव पानेसे कुछ भी हर्ष न हुवा. इससे मैंने जाना कि ये लाभ, हानि, समान जानते हैं इन्हे पानेका हर्ष, न जानेका शोच. इतनी बात रुक्मिणीके मुखसे निकलतेही श्रीकृष्णचंद्रजीने कहा, कि हे प्रिये ! यह मेरा परम मित्र है. इसके गुण मैं कहांतक बखानूं, सदा सर्वदा मेरे स्नेह मग्न रहता है और उसके आगे संसारके सुखको तृणवत् समझता है. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज! ऐसे अनेक प्रकारकी बातें कर प्रभु रुक्मिणीजीको समझाय सुदामाको मंदिरमें लिवाय लेगये. आगे षटरस भोजन करवाय पान खिलाय

हरिने सुदामाको शुक्ल सेजपर ले जाय बैठाया. वह पंथका हारा थका तो थाही सेजपर जाय सुख पाय सोगया.

प्रभुने विश्वकर्माको बुलाय समझायके कहा, कि तुम अभी जाय सुदामाके मंदिर अति सुंदर कंचनरत्नके बनाय तिनमें अष्टसिद्धि नवनिधि धर आओ. जो इसे किसी बातकी कांक्षा न रहे. इतना बचन प्रभुके मुखसे निकलतेही विश्वकर्मा वहां जाय बातकी बातमें बनाय आया और हरिसे कह अपने स्थानको गया. भोर होतेही सुदामा उठ स्नान दान भजन पूजासे निश्चिंत हो प्रभुके पास बिदा होने गया. उस समय श्रीकृष्णचंद्रजी मुखसे तो कुछ न बोल सके पर प्रेममें मग्न हो आंखे डबडबाय शिथिल हो देख रहे. सुदामा बिदा हो प्रणाम कर अपने घरको चला और पंथमें जाय मनहीमन विचार करने लगा, भला भया जो मैंने प्रभुसे कुछ न मांगा जो उनसे कुछ मांगता तो वे देते तो सही पर मुझे लोभी लालची समझते, कुछ चिंता नाहीं, ब्राह्मणीको मैं समझाय लूंगा, श्रीकृष्णचंद्रजीने मेरा अतिमान सन्मान किया और मुझे निर्लोभी जाना; यही मुझे लाख है, महाराज! ऐसे शोच विचार करता करता सुदामा अपने गांवके निकट आया; तो क्या देखता है कि, न वह ठाँव है, न वह टूटी मड़ैया; वहां तो इंद्रपुरीसी बस रही है, देखतेही सुदामा अतिदुःखित हो कहने लगा कि हे नाथ! तूने यह क्या किया, एक दुःख तो थाही दूसरा और दिया. यहांसे मेरी झोंपडी क्या हुई? और ब्राह्मणी कहां गई? किससे पूछूं और किधर ढूंढूं? इतना कह द्वारपर जाय सुदामाने द्वारपालोंसे पूछा कि यह मंदिर अतिसुंदर किसका है? तब द्वारपालने कहा श्रीकृष्णचंद्रजीके मित्र सुदामजीका. यह बात सुन जो सुदामा कुछ कहनेको हुआ तो भीतरसे देख उसकी ब्राह्मणी अच्छे वस्त्र आभूषण पहने नख शिखसे शृंगार किये पान खाये सुगंध लगाये सखियोंको साथ लिये पतिके निकट आई.

चौ०पाँयन पर पाटंबर डारे, हाथ जोर ये बचन उचारे।
ठाढ़े क्यों मंदिरपग धारो, मनसों शोच करो तुम न्यारो।
तुम पाछे विश्वकर्मा आये, तिन मंदिर पलमाँझ बनाये।

महाराज! इतनी बात ब्राह्मणीके मुखसे सुन सुदामजी मंदिरमें गए, और अति विभव देख महाउदास भये. ब्राह्मणी बोली स्वामी! धन पाय लोग प्रसन्न होते हैं, तुम उदास हुए इसका कारण क्या है? सो कृपाकर कहिये, जो मेरे मनका संदेह जाय. सुदामा बोला, कि हे प्रिये! यह माया बड़ी ठगिनी है; इसने सारे संसारको ठगा है, ठगती है और ठगैगी. सो प्रभुने मुझे दी और मेरे प्रेमकी प्रतीति न की. मैंने उनसे कब मांगी थी, जो उन्होंने मुझे दी? इसीसे मेरा चित्त उदास है. ब्राह्मणी बोली—स्वामी! तुमने तो श्रीकृष्णचंद्रजीसे कुछ न मांगाथा पर अंतर्यामी घट घटकी जानतेहैं. मेरे मनमें धनकी वासना थी सो प्रभुने पूरी की. तुम अपने मनमें और कुछ मत समझो.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! इस प्रसंगको जो जो सदा सुने सुनावेगा, सो जन जगतमें आय दुःख कभी न पावेगा और अंतकाल वैकुंठधाम जावेगा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सुदामादरिद्रगमनंनाम एकाशीतितमोऽध्यायः८१

अध्याय ८२

श्रीकृष्णचंद्रजीको यादवोंसमेत सूर्यग्रहण न्हाने कुरुक्षेत्र जाना और कौरव पांडवोंका मिलाप होना और कुंतीका वसुदेवजीसे वार्तालाप.

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! अब मैं प्रभुके कुरुक्षेत्र जानेकी कथा कहताहूं तुम चित्त दे सुनो, कि जैसे द्वारकासे सब यदुवंशियोंको साथ

ले श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजी सूर्यग्रहण न्हाने कुरुक्षेत्र गये. राजाने कहा महाराज! आप कहिये मैं मन दे सुनताहूं. पुनि श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक समय सूर्यग्रहणका समाचार पाय श्रीकृष्ण-चंद्र और बलदेवजीने राजा उग्रसेनके पास जायके कहा, कि महाराज! बहुत दिन पीछे सूर्यग्रहण आया है, जो इस पर्वको कुरुक्षेत्रमें चलकर स्नान करें तो बड़ा पुण्य होगा, क्योंकि शास्त्रमें लिखा है कि कुरुक्षेत्रमें दान पुण्य करिये सो सहस्र गुण होय. इतनी बातके सुनतेही यदुवंशीयोंने श्रीकृष्णचंद्रजीसे पूंछा, कि महाराज! कुरुक्षेत्र ऐसा तीर्थ कैसे हुआ? सो कृपा कर हमें समझायके कहिये. श्रीकृष्णचंद्रजी बोले, कि सुनो. जमदग्नि ऋषि बड़े ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, तेजस्वी थे; तिनके तीन पुत्र हुए उनमें सबसे बड़े परशुराम सो वैराग्य कर घर छोड़ त्रिकूट जाय रहे और सदाशिवकी तपस्या करने लगे. लड़कोंके होतेही जमदग्नि ऋषि गृहस्थाश्रम छोंड़ वैराग्य कर स्त्रीसहित बनमें जाय तप करने लगे; उनकी स्त्रीका नाम रेणुका, सो एक दिन अपनी बहनको नौतने गई, उसकी बहन राजा सहस्रार्जुनकी स्त्री थी. नौता देतेही अहंकार कर राजा सहस्रार्जुनकी रानी रेणुकाकी बहन हँसकर बोली बहन! तुम हमें हमारे कटकसमेत जिमाय सको तो नौत दो नहीं तो न दो. महाराज! यह बात सुन रेणुका अपनासा मुंह ले चुपचाप वहांसे उठ अपने घर आई. इसे उदास देख जमदग्नि ऋषिने पूंछा कि, आज क्या है, जो तू अनमनी होरही है? महाराज! बातके पूंछतेही रेणु-काने रोकर सब ज्यूं की त्यूं बात कही सुनतेही जमदग्निऋषिने स्त्रीसे कहा कि, अच्छा तू जायके अभी अपनी बहनको कटक-समेत नौत आओ पतिकी आज्ञा पाय रेणुका बहनके घर जाय नौत आई, उसकी बहनने अपने स्वामीसे कहा, कल तुम्हे हमें दलसमेत जमदग्नि ऋषिके यहां भोजन करने जाना है. स्त्रीकी बात सुन अच्छा कह, वह हँसकर चुप होरहा, भोर होतेही जमदग्नि उठकर राजा इंद्रके पास गए और कामधेनु मांग लाए. पुनि जाय सहस्रार्जुनको बुलाय लाए. वह कटकसमेत आया; तिसे जमदग्निने इच्छा भोजन खिलाया. कटकसमेत भोजन कर राजा सहस्रार्जुन अतिलज्जित हुआ और मनहीमन कहने लगा, कि इसने

इतने लोगोंके खानेकी सामग्री रातभरमें कहां पाई और कैसे बनाई ? इसका भेद कुछ जाना नहीं जाता. इतना कह बिदा हो उसने अपने घर जाय यों कह एक ब्राह्मणको भेज दिया कि, देवता ! तुम जमदग्नि ऋषिके घर जाय इस बातका भेद लाओ कि, उसने किसके बलसे एक दिनके बीच मुझे कटकसमेत नौत जिमाया ? इतनी बातके सुनतेही ब्राह्मणने जाय देख आय सहस्रार्जुनसे कहा कि, महाराज ! उसके घरमें कामधेनु है, उसीके प्रभावसे तुम्हें एक दिनमें नौत जिमाया. यह समाचार सुन सहस्रार्जुनने उसी ब्राह्मणसे कहा, कि देवता ! तुम जाय हमारी ओरसे जमदग्निऋषिसे कहो कि, सहस्रार्जुनने कामधेनु मांगी है. बातके सुनतेही वह ब्राह्मण संदेशा ले ऋषिके पास गया और उसने सहस्रार्जुनकी बात कही. ऋषि बोले कि यह गाय हमारी नहीं जो हम दें. यह तो राजा इंद्रकी है, हम इसे दे नहीं सक्ते, तुम जाय अपने राजासे कहो; बातके सुनतेही ब्राह्मणने जाय राजा सहस्रार्जुनसे कहा कि महाराज ! ऋषिने कहा है कि, कामधेनु हमारी नहीं, यह तो राजा इंद्रकी है, इसे हम दे नहीं सक्ते. इतनी बात ब्राह्मणके मुखसे निकलतेही सहस्रार्जुनने अपने कितने एक योद्धाओंको बुलायके कहा तुम अभी जाय जमदग्निके घरसे कामधेनु खोल लाओ. स्वामीकी आज्ञा पाय योद्धा ऋषिके स्थानपर गए और जो धेनुको खोल जमदग्निके घरसे लेचले तो ऋषिने दौड़कर बाटमें जाय कामधेनुको रोंका, यह समाचार पाय क्रोध कर सहस्रार्जुनने आ ऋषिका शिर काट डाला, कामधेनु भाग इंद्रके यहां गई, रेणुका आय पतिके पास खड़ी भई.

दो० शिर खसोट लोटत फिरै, बैठि रहै गहि पाय ॥
छाती पीटै रुदन करि, पड़ पड़ महि बिललाय ॥

उसकाल रेणुकाका बिलबिलाना और रोना सुन दशों दिशाके दिक्पाल कांप उठे और परशुरामजीका तप करते आसन डिगा और ध्यान छूटा. ध्यानके छूटतेही ज्ञानकर परशुरामजी अपना कुठार ले वहां आए जहां पिताकी लोथ पड़ीथी और माता रोती पीटती

खड़ी थी, देखते परशुरामजीको महाकोप हुआ, इसमें रेणुकानें पतिके मारे जानेका सब भेद पुत्रको रो रो कह सुनाया. बातके सुनतेही परशुरामजी इतना कह तहां गए जहां सहस्रार्जुन अपनी सभामें बैठाथा कि माता! पहले मैं अपने पिताके वैरीको मार आऊं, तब आय पिताको उठाऊंगा. उसे देखतेही परशुरामजी कोप कर बोलेः—

चौ०अरे क्रूरकायर कुलद्रोही, तातमारिदुखदीनोमोहीं

ऐसे कह जब फरसा ले परशुरामजी महाकोपमें आए, तब वहभी धनुषबाण ले इनके सोहीं खड़ा हुआ. दोनों बली महायुद्ध करनें लगे निदान लड़ते लड़ते परशुरामजीने चार घड़ीके बीच सहस्रार्जुनको मार गिराया. पुनि उसका कटक चढ़ आया. तिसेभी उन्होंने उसीके पास काट डाला. फिर वहांसे आय पिताकी गति करी और माताको समझाय पुनि उसी ठौर परशुरामजीने रुद्रयज्ञ किया, तभीसे वह स्थान कुरुक्षेत्र कहकर प्रसिद्ध हुआ. वहां जाकर ग्रहणमें जो कोई दान, स्नान, तप, यज्ञ करता है, उसे सहस्रगुण फल होता है.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजापरीक्षितसे कहा कि, महाराज! इस प्रसंगके सुनतेही सब यदुवंशियोंने प्रसन्न हो श्रीकृष्णचंद्रजीसे कहा कि महाराज! शीघ्र कुरुक्षेत्रको चलिये अब विलंब न करिये क्योंकि पर्वपर पहुँचा चाहिये. बातके सुनतेही श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजीने राजा उग्रसेनसे पूँछा, कि महाराज! सब कोई कुरुक्षेत्रको चलेगा. यहां पुरीकी चौकशीको कौन रहेगा. राजा उग्रसेनने कहा अनिरुद्धजीको रख चलिये.राजाकी आज्ञा पाय प्रभुने अनिरुद्धको बुलाय समझायकर कहा कि; बेटा! तुम यहां रहो, गोब्राह्मणकी रक्षा करो और प्रजाको पालो. हम महाराजजीके साथ सब यदुवंशियोंसमेत कुरुक्षेत्र न्हाय आवें. अनिरुद्धजीनें कहा जो आज्ञा. महाराज! एक अनिरुद्धजीको पुरीकी रखवालीमें छोड़ शूरसेन, वसुदेव, उद्धव, अक्रूर, कृतवर्मा आदि छोटे बड़े यदुवंशी अपनी स्त्रियोंसमेत राजा उग्रसेनके साथ कुरुक्षेत्र चलनेको उपस्थित हुए. जिस समय कटकसमेत राजा उग्रसेनने पुरीके बाहर डेरा किया, उसकाल सब जाय मिले, तिनके पीछेसे श्रीकृष्णजी भाई भौजाईको साथ ले आठों पटरानी और सो-

लह सहस्र एकसौ आठ रानियों बेटों पोतों समेत जाय मिले. प्रभुके पहुँचतेही राजा उग्रसेनने वहांसे डेरा उठाय राजा इंद्रकी भांति बड़ी धूमधामसे आगेको प्रस्थान किया: इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! कितने एक दिनोंमें चले चले श्रीकृष्णचंद्र सब यदुवंशियोंसमेत आनंदमंगलसे कुरुक्षेत्रमें पहुँचे. वहां जाय पर्वमें सबने स्नान किया और यथाशक्ति हरएकने हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी, अस्त्र, शस्त्र, वस्त्र, आभूषण, अन्न, धन दान दिया. पुनि वहां सबोंने डेरे डाले. महाराज ! श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजीके कुरुक्षेत्र के जानेके समाचार पाय चहूं ओरके राजा कुटुंबसहित अपनी अपनी सब सेना ले ले वहां आये; आय श्रीकृष्णचंद्रजी बलरामजीको मिले, पुनि सब कौरव पांडवभी अपना अपना दल ले ले सहकुटुंब वहां आय मिले. उसकाल कुंती और द्रौपदी यदुवंशियोंके रनवासमें जाय सबसे मिली. आगे कुंतीने भाईके सन्मुख जाय कहा कि, भाई ! मैं बड़ी अभागी, जिस दिनसे मांगी उसीदिनसे दुःख उठाती हूं. तुमने जबसे व्याह दी तबसे मेरी सुधि कभी न ली और राम कृष्ण जो सबके हैं सुखदाई, उनकोभी मेरी दया कुछ न आई. महाराज ! इस बातके सुनतेही करुणाकर आंखे भर वसुदेवजी बोले कि, बहन ! तू मुझे क्या कहती है ? इसमें मेरा कुछ बश नहीं; कर्मकी गति जानी नहीं जाती. हरिइच्छा प्रबल है. देखो कंसके हाथ, मैंनेभी क्या क्या दुःख न पाया ?

चौ० प्रभुआधिन सकल जग आय, कित दुख करो देख जगमाय

महाराज ! इतना कह बहनको समझाय बुझाय वसुदेवजी वहां गये जहां सब राजा उग्रसेनकी सभामें बैठे थे और राजा दुर्योधन आदि बड़े बड़े नृप और पांडव उग्रसेनहीकी बड़ाई करते थे, कि राजा ! तुम बड़भागी हो जो सदा श्रीकृष्णचंद्रका दर्शन पाते हो, और जन्म जन्मका पाप गवाँते हो. जिन्हें शिव, बिरंचि आदि सब देवता खोजते फिरें सो प्रभु तुम्हारी सदा रक्षा करें, जिनका भेद योगी, यति, मुनि, ऋषि न पावें, सो हरि तुम्हारी आज्ञा लेने आवें. जो हैं सब जगके ईश, वेही तुम्हें नवावते शीश. इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज !

ऐसे सब राजा आय आय राजा उग्रसेनकी प्रशंसा करते थे और वे यथायोग्य सबका समाधान करतेथे, इतनेमें श्रीकृष्णबलरामजीका आना सुन नंद उपनंदभी सकुटुंब सब गोपी ग्वाल बाल समेत आन पहुँचे स्नान दानसे सुचित्त हो नंदजी वहा गये जहां पुत्रसहित वसुदेव विरा जते थे. इन्हें देखतेही वसुदेवजी उठकर मिले और दोनोंने परस्पर प्रेम कर ऐसे सुख माना, कि कोई जैसे गई वस्तु पाय सुख माने, आगे वसुदेवजीने नंदरायसे ब्रजकी पिछली सब बात कह सुनाई, जैसे नंद-रायजीने श्रीकृष्ण बलरामजीको पाला था. महाराज! इस बातके सुनतेही नंदरायजी नयनोंमें नीर भर वसुदेवजीका मुख देख रहे. उसकाल श्रीकृष्ण बलदेवजी प्रथम नंद यशोदाजीको यथायोग्य दंड-वत् प्रणाम कर पुनि ग्वालबालोंसे जाय कर मिले. तहा गोपीयोंने आय हरिका चंद्रमुख निरख निरख अपने नयनचकोरोंको बहुतसा सुख दिया और जीवनका फल लिया.

इतना कह श्रीकृष्णचंद्रजी बोले, कि महाराज! वसुदेव, देवकी, रोहिणी, श्रीकृष्ण, बलरामसे मिल जो कुछ प्रेम नंद, उपनंद, यशोदा, गोपी, गोप, ग्वाल, बालोंने किया, सो मुझसे कहा नहीं जाता, वह देखतेही बन आवे, निदान सबको स्नेहमें निपट अति व्याकुल देख श्रीकृष्णचंद्रजी बोले कि सुनो.

चौ० मेरी भक्तिजोप्राणीकरै, भवसागर निर्भयसो तरै ॥
तनमनधनतुमअर्पणकीन्हो, नेहनिरंतरकरमोहिंचीन्हो ॥
तुमसम बड़भागी नहिं कोय, ब्रह्मरुद्र इंद्रादि न होय ॥
योगीश्वरके ध्यान न आयो, तुमसँग रह नितप्रेमबढ़ायो ॥
हौं सबहीके घट घट रहौं, अगम अगाध जु बाणीवहौं ॥

जैसे तेज, जल, अग्नि, पृथ्वी, आकाशका है देहमें वास; तैसे सर्व घटमें भरा है मेरा प्रकाश.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! जब श्रीकृष्णचंद्रने यह सब भेद कह सुनाया तब सब ब्रजवासियोंको धीरज आया.

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णबलरामकुरुक्षेत्रगमनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

अध्याय ८३.

द्रौपदीका और श्रीकृष्णजीकी रुक्मिणी आदि सोळह सहस्र एकसौ आठ पटरानियोंका संवाद.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जैसे द्रौपदी और श्रीकृष्णचंद्र जीकी स्त्रियोंमें परस्पर बातें हुई सो प्रसंग मैं कहताहूं तुम सुनो. एक दिन कौरव और पांडवोंकी स्त्रियां श्रीकृष्णचंद्रजीकी नारियोंके पास बैठी थीं और गुण गातीं थीं. इसमें कुछ बार्ता जो चली तो द्रौपदीने रुक्मिणीसे कहा कि, सुंदरी ! कह तूने श्रीकृष्णचंद्रजीको कैसे पाया, श्रीरुक्मिणी बोली—

चौ०सुनौ द्रौपदी तुम चितलाय, जैसे प्रभुने किया उपाय

मेरे पिताका तो मनोरथ था कि, मैं अपनी कन्या श्रीकृष्णचंद्रको दूं, और भाईने राजा शिशुपालके देनेका मन किया. वह बरात ले ब्याहनेको आया और श्रीकृष्णचंद्रजीको मैंने ब्राह्मण भेज बुलाया. ब्याहके दिन मैं गौरीकी पूजा कर घरको चली तो श्रीकृष्णचंद्रजीने सब असुरदलके बीचसे मुझे उठायके ले रथमें बैठाय अपनी बाट ली. तीस पीछे समाचार पाय सब असुरदल प्रभुपर आय टूटा, सो हरिने सहजही मार भगाया. पुनि मुझे ले द्वारका पधारे. वहां जातेही राजा उग्रसेन शूरसेन वसुदेवजीने [illegible]की विधिसे श्रीकृष्णचंद्रजीके साथ मेरा ब्याह किया. विवाहके सम[illegible] पाय मेरे पिताने बहुतसा यौतुक भिजवाय दिया, इतनी कथा क[illegible] श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा; कि महाराज ! ऐसे द्रौपदी[illegible] सत्यभामा, जाम्बवती, कालिंदी, भद्रा, सत्या, मित्रविंदा, लक्ष्मणा [illegible]दि श्रीकृष्णचंद्रजीकी सोलह सहस्र ए-

कसौ आठ पटरानियोंसे पूंछा और एक ऐकने सब समाचार अपने अपने बिवाहका ब्योरे समेत कहा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे स्त्रीगीतवर्णनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

अध्याय ८४.

वसिष्ठ वामदेव आदि ऋषियोंका आना और वसुदेवजीका यज्ञ करना.

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! अब मैं सब ऋषियोंके आनेकी और वसुदेवजीके यज्ञ करनेकी कथा कहताहूं, तुम चित्त दे सुनो. महाराज ! एकदिन राजा उग्रसेन, शूरसेन, वसुदेव, श्रीकृष्ण, बलराम सब यदुवंशियोंसमेत सभा किये बैठे थे और सब देश देशके नरेश वहां उपस्थित थे कि, इस बीच श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदके दर्शनकी अभिलाषा कर व्यास, वसिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, पराशर, भृगु, पुलस्त्य, भरद्वाज, मार्कण्डेय आदि अट्ठासी सहस्र ऋषि वहां आए, और तिनके साथ नारदजीभी आए. उन्हें देखतेही सभाकी सभा सब उठ खड़ी हुई. पुनि सब दंडवत् कर पाटंबरके पावंडे डाल सबको सभामें ले गये. आगे श्रीकृष्णचंद्रने सबको आसनपर बैठाय पांव धोय चरणामृत ले पिया और सारी सभापर छिड़का; फिर चंदन, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य कर भगवानने सबकी पूजा कर परिक्रमा की; पुनि हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो हरि बोले कि, धन्य भाग्य हमारे जो आपने आय घर बैठे दर्शन दिया. साधुका दर्शन गंगाके स्नानसमान है. जिसने साधुका दर्शन पाया, उसने जन्म जन्मका पाप गवाँया. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज !

चौ० श्रीभगवान बचन जबकहे, तबसब ऋषी विचारत रहे

कि, जो प्रभु है ज्योतिस्वरूप और सकल सृष्टिका कर्ता सो जब यह बात कहै तब औरकी किसने चलाई. मनही मन सब मुनियोंने जब इतना कहा तब नारदजी बोले—

चौ० सुनोसभातुमसबमनलाय, हरिमायाजानीनहिंजाय

ये आपही ब्रह्मा हो उपजाते है, विष्णु हो पालते हैं, शिव हो संहारते हैं. इनकी गति अपरंपार है, इसमें किसीकी बुद्धि कुछ काम नहीं देनेको और दुष्टोंके मारनेको और सनातन धर्म चलानेको बारंबार अवतार ले प्रभु आते हैं. महाराज ! ज्यों इतनी बात कह नारदजी सभासे उठनेको हुए, त्यों वसुदेवजी सन्मुख आय हाथ जोड़ विनती कर बोले कि, हे ऋषिराय ! मनुष्य संसारमें आय कर्मबंधसे कैसे छूटे? सो कृपा कर कहिये. महाराज ! यह बात वसुदेवजीके मुखसे निकल तेही सब मुनि ऋषि नारदजीका मुख देख रहे तब नारदजीने मुनियोंके मनका अभिप्राय समझकर कहा कि हे देवताओ ! तुम इस बातका अचरज मत करो, श्रीकृष्णजीकी माया प्रबल हैं; इसने सारे संसारको जीत रक्खा है. इससे वसुदेवजीने यह बात कही और दूसरे ऐसाभी कहा है कि जो जन जिसके समीप रहता है वह उसका गुणप्रभाव और प्रताप मायाके वश हो नहीं जानता. जैसे—

चौ० गंगावासी अनतहि जाई, तजके गंग कूपजल न्हाई ।
यों ही यादव भये अजाने, नाहीं कछुक कृष्णगति जाने ॥

इतनी बात कह नारदजीने मुनियोंके मनका संदेह मिटाय वसुदेवजीसे कहा कि महाराज ! शास्त्रमें कहा है जो नर तीर्थ, दान, तप, व्रत, यज्ञ करता है, सो संसारके बंधनसे छूट कर मुक्ति पाता है. बातके सुनतेही प्रसन्न हो वसुदेवजीने बातकी बातमें सब यज्ञकी सामा मँगाय उपस्थित की और ऋषियों और मुनियोंसे कहा कि महाराज ! कृपा कर यज्ञका आरंभ कीजिये. महाराज ! वसुदेवजीके मुखसे इतना बचन निकलतेही सब ब्राह्मणोंने यज्ञका स्थान बनाय सँवारा. इस बीच

स्त्रियोंसमेत वसुदेवजी वेदीमें जाय बैठे, सब राजा और यादव यज्ञकी टहलमें आ उपस्थित हुए.

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा, कि महाराज ! जिस समय वसुदेवजी वेदीमें जाय बैठे; उसकाल वेदकी विधिसे मुनियोंने यज्ञका आरंभ किया और लगे वेदमंत्र पढ़पढ़ आहुति देने और देवता सब भाग आय आय लेने. महाराज ! जिसकाल यज्ञ होने लगा उसकाल उधर किन्नर, गंधर्व, भेरी, दुंदुभी, बजाय बजाय गुण गाते थे. इधर चारण वंदीजन यश बखानते थे. उर्वशी आदि अप्सरा नाचतीं थीं और देवता अपने अपने विमानोंमें बैठ फूल बरसाते थे और याचक जयजयकार करते थे; इसमें यज्ञ पूर्ण हुआ और वसुदेवजीने पूर्णाहुति दे ब्राह्मणोंको पाटंबर पहिराय अलंकृत कराय, रत्न, धन बहुतसा दिया और उन्होंने वेदमंत्र पढ़ पढ़ आशीर्वाद किया. आगे सब देश देशके नरेशोंकोभी वसुदेवजीने पाटंबर पहराया और जिमाया पुनि उन्होंने यज्ञकी भेंट धर कर बिदा हो अपनी बाट ली. महाराज ! सब राजाओंके जाते ही नारदजी समेत सारे ऋषिभी बिदा हुए. पुनि नंदरायजी, गोप, गोपी, ग्वाल बाल समेत जब वसुदेवजीसे बिदा होने लगे उस समयकी बात कुछ कही नहीं जाती. इधर तो यदुवंशी करुणाकर अनेक अनेक प्रकारकी बातें करते और उधर सब ब्रजवासी जाते थे, उसका बखान कुछ करा नहीं जाता, सो देखतेही बनि आवे. निदान वसुदेवजी श्रीकृष्ण बलरामजीके समेत नंदरायजीको समझाय बुझाय पाटंबर पहराय, और बहुतसा धन दे बिदा किया. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! इस भांति श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजी पर्व न्हाय यज्ञ कर सब समेत जब द्वारकापुरीमें आए तो घर घर मंगल आनंद भए बधाए. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे वसुदेवयज्ञकरणं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ८४ ॥

अध्याय ८५.

श्रीकृष्णका बलिराजाके यहांसे आपके छ बंधुओंको लाकर देवकीको देना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! द्वारकापुरीके बीच एकदिन श्रीकृष्णचंद्र और बलरामजी जो वसुदेवजीके पास गए तो वे इन दोनों भाइयोंको देख यह बात मनमें विचार उठ खड़े हुए कि कुरुक्षेत्रमें नारदजीने कहा था कि श्रीकृष्णचंद्र जगतके कर्त्ता और दुःखहर्त्ता हैं. और हाथ जोड़ बोले हे प्रभु! अलख अगोचर अविनाशी, सदा सेवती हैं तुम्हें कमला भई दासी. तुम हो सब देवोंके देव, कोई नहीं जानता तुम्हारा भेव. तुम्हारीही ज्योति है चंद्र सूर्य पृथ्वी आकाश, तुम्हीं करतेहो सब ठौर ठौरमें प्रकाश. तुम्हारी माया है प्रबल उसने सारे संसारको भुलाय रक्खा है; त्रिलोकीमें सुर, नर, मुनि, ऐसा कोई नहीं जो उसके हाथसे बच गया हो. महाराज! इतना कह पुनि वसुदेवजी बोले कि, हे कृपानाथ!

चौ० कोउन भेद तुम्हारो जाने, वेद न माँझ अगाध बखाने
शत्रु मित्र कोऊ न तिहारो, पुत्र पिता न सहोदर प्यारो ॥
पृथ्वीभारहरण अवतरो, जनके हेतु भेष बहु धरो ॥

महाराज! ऐसे कह वसुदेवजी बोले कि, हे करुणासिंधु! दीनबंधु! जैसे आपने अनेक पतितोंको तारा, तैसे कृपा कर मेराभी उद्धार कीजे; जो भवसागरके पार हो आपके गुण गाऊं. श्रीकृष्णचंद्र बोले कि—हे पिता! तुम ज्ञानी होय पुत्रोंकी बड़ाई क्यों करते हो

कृष्णचंद्रजीसे छोटी जिसका नाम सुभद्रा, वह व्याहने योग्य हुई तब वसुदेवजीने कितने एक यदुवंशी और श्रीकृष्ण बलरामजीको बुलायके कहा, कि अब कन्या व्याहने योग्य हुई. कहो किसे दें? बलरामजी बोले कि कहा है, व्याह बैर प्रीति समानसे कीजै, एक बात मेरे मनमें आई है कि यह कन्या दुर्योधनको दीजे, तो जगतमें यश और बड़ाई लीजें. श्रीकृष्णचंद्रजीने कहा, मेरे विचारमें आता है जो अर्जुनको लड़की दें, तो संसारमें यश लें. श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! बलरामजीके कहनेपर तो कुछ न बोले. पर श्रीकृष्णचंद्रजीके मुखसे बात निकलतेही सब पुकार उठे कि अर्जुनको कन्या देना अतिउत्तम है, इस बातके सुनतेही बलरामजी बुरा मान वहांसे उठगये. और उनका बुरा मानना देख सब लोग चुप रहे. आगे यह समाचार पाय अर्जुन संन्यासीका भेष बनाय दंडकमंडलु ले द्वारकामें जाय एक भलीसी ठौर देख मृगछाला बिछाय आसन मार बैठे.

महाराज! एकदिन बलदेवजीभी अर्जुनको साधु जानकर घर जिमाने लिवाय लेगये. जो अर्जुन भोजन करने बैठे तो चंद्रबदनी, मृगलोचनी सुभद्राजी दृष्टि आई, देखतेही इधर तो अर्जुन मोहित हो सबकी दीठ बचाकर फिरफिर देखने लगे और मनहीमन यह विचार करनें, कि देखिये विधाता कब जन्मपत्रीकी विधि मिलावे. और उधर सुभद्राजी इनके रूपकी छटा देख रीझ मनहीमन यों कहती थीं—

चौ० हैकोउन्नृपतिनाहिंसंन्यासी, काकारणयहभयोउदासी

महाराज! इतना कह उधर तो सुभद्राजी घरमें जाय पतिके मिलनेकी चिंता करने लगीं और इधर भोजन कर अर्जुन अपने आसनपर आय प्रियाके मिलनेको अनेक अनेक प्रकारकी भावना करने लगे. इसमें कितने एक दिन पीछे एक समय शिवरात्रिके दिन सब पुरवासी क्या स्त्री क्या पुरुष नगरके बाहर शिवपूजनको गये, तहां सुभद्राजी अपनी सखी सहेलियों समेत गईं. उनके जानेका समाचार पाय अर्जुनभी रथपर चढ़ धनुष बाण ले वहां उपस्थित हुए. महाराज! ज्यों शिवपूजन

कर सखियोंको साथ ले सुभद्राजी फिरीं, त्यों देखतेही शोच संकोच तज अर्जुनने हाथ पकड़ हठाय सुभद्राको रथमें बैठाय अपनी बाट ली.

चौ०सुनिकैरामकोप अतिकरयो, हलमूशललैकांधेधऱ्यो।
राते नयन रक्तसे करे, घनसम गाज बोल उच्चरे ॥
अबहीं जाय प्रलयम करिहौं,क्षितिउठाय करमाथेधरिहौं
मेरी बहन सुभद्रा प्यारी, ताको कैसे हरै भिखारी ॥

महाराज! बलरामजी तो महाक्रोधमें बकझक रहे थे, कि इस बातका समाचार पाय प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, सांब और बड़े बड़े यादव बलदेवजीके सन्मुख आय हाथ जोड़ बोले कि, महाराज! हमें आज्ञा होय तो जाय शत्रुको पकड़ लावें. इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! जिस समय बलरामजी सब यदुवंशियोंको साथले अर्जुनके पीछे चलनेको उपस्थित हुये, उसकाल श्रीकृष्णचंद्रजीने आय बलरामजीको सुभद्राहरणका सब भेद समझाया और अतिविनती कर कहा कि, भाई! अर्जुन एक तो हमारी फूफीका बेटा और दूसरे परम मित्र, उसने जाने अनजाने समझे बिन समझे यह कर्म किया तो किया, पर हमें उससे लड़ना किसी भांति उचित नहीं. यह धर्मविरुद्ध और लोकविरुद्ध है. इस बातको जो सुनेगा सो कहेगा कि; यदुवंशियोंकी प्रीति है बालूकीसी भीति. इतनी बात सुनतेही बलरामजी शिर धुन झुंझुलाकर बोले कि. भाई! यह तुम्हाराही काम है कि आग लगाय पानीको दौड़ना, नहीं तो अर्जुनकी क्या सामर्थ्य थी जो हमारी बहन ले जाता? इतना कह मनहीमन पछताय तावपेंच खाय बलरामजी भाईका मुख देख हल मूशल पटक बैठ रहे और उनके साथ सब यदुवंशीभी.

श्रीशुकदेवजी बोले कि, राजा इधर तो श्रीकृष्णचंद्रजीने सबको समझाय बुझाय रक्खा और उधर अर्जुनने घर जाय वेदकी विधिसे सुभद्राके साथ व्याह किया. ब्याहके समाचार पाय श्रीकृष्ण बलरामजीने वस्त्र, आभूषण, दास, दासी, हाथी, घोड़े, रथ और बहुतसे रुपये एक ब्राह्मणके हाथ संकल्प कर हस्तिनापुरको भेज दिये. आगे श्रीमुरारी भक्तहितकारी रथपर बैठ मिथिलाको चले. वहां श्रुतदेव नाम एक राजा और बहुलाश्वनाम एक ब्राह्मण दो भक्त थे. महाराज! प्रभुके

चलतेही नारद, वामदेव, व्यास, अत्रि, परशुराम आदि, कितनेएक मुनि आन मिले और श्रीकृष्णचंद्रजीके साथ होलिये, पुनि जिस दिशामें हो प्रभु जाते थे, तहांके राजा आगू आय आय पूज पूज भेंट धरते जातेथे. निदान चले चले कितने एक दिनोंमें प्रभु वहां पधारे, हरिके आनेके समाचार पाय वे दोनों बैठे थे तैसेही भेट ले उठ धाए और श्रीकृष्णचंद्रजीके पास आए. प्रभुका दर्शन करतेही दोनों भेंट धर दंडवत् कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो अतिविनती कर बोले, हे कृपासिंधु ! दीनबंधु ! ! आपने वड़ी दया की कि जो हमसे पतितोंको दर्शन दे पावन किया और जन्म मरणसे छुटा दिया.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, राजा ! अंतर्यामी श्रीकृष्णचंद्र उन दोनों भक्तोंके मनकी भक्ति देख दो स्वरूप धारण कर दोनोंके घर जाय रहे. उन्होंने मन मानता सब राव चाव किया और हरिने कितने एक दिन वहां ठहर उन्हें अधिक सुख दिया. आगे प्रभु उनके मनका मनोरथ पूरा कर ज्ञान बढ़ाय जब द्वारकाको चले, तब ऋषि मुनि पंथमें विदा हुए और हरि द्वारकामें जा विराजे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे सुभद्राहरणं श्रीकृष्णचंद्रमिथिलागमनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

अध्याय ८७

नारदजी और नरनारायणका संवाद.

इतनी कथा सुनाय राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूँछा कि महाराज ! आप जो आगे कहआये कि वेदने परमेश्वरकी स्तुति की,

सो निर्गुण ब्रह्मकी स्तुति वेदने क्योंकर की ? यह मुझे समाझाकर कहो, जो मेरे मनका संदेह जाय. श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! सुनिये कि जिसने बुद्धि, इंद्रिय, मन, प्राण, धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको बनाया है, सो प्रभु सदा निर्गुण रहता है, पर जब ब्रह्मांड रचता है तब सगुण-रूप होता है. इससे निर्गुण सगुण वही एक ईश्वर है. इतना कह पुनि श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज ! जो तुमने प्रश्न किया सो प्रश्न एक समय नारदजीने नरनारायणसे किया था. राजा परीक्षितने कहा कि, महाराज ! यह प्रसंग मुझे समझा कर कहिये जो मेरे मनका संदेह जाय. श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा सत्ययुगमें एक समय नारदजीने सत्यलोकमें जाय जहां नरनारायण अनेक मुनियोंके संग बैठे तप करते थे पूंछा कि महाराज ! निराकार ब्रह्मकी स्तुति वेद किस भांति करते हैं ? सो कृपा कर कहिये. नरनारायण बोले कि, सुनो नारद ! जो संदेह तूने मुझसे पूंछा यही संदेह एक समय जनलोकमें जहां सनातनादि ऋषि बैठे तप करते थे तहां संवाद हुआ था. नारदजी बोले महाराज ! मैंभी तो वहीं रहताहूं जो यह प्रसंग चलता तो मैंभी सुनता. नरनारायणने कहा, नारदजी ! तुम श्वेतद्वीपमें भगवान्के दर्शनको गयेथे, तभी यह प्रसंग चला था इससे तुमने नही सुना. इतनी बात सुन नारदजीने पूंछा महाराज ! वहां क्या प्रसंग चला था ? सो कृपाकर कहिये, नरनारायण बोले कि, सुनो नारद! जब मुनियोंने यह प्रश्न किया तब सनंदन मुनि कहने लगे कि सुनो–जिस समय महाप्रलय हो चौदह ब्रह्मांड जलाकर जलमय हो जाते हैं उस समय पूर्ण ब्रह्म अकेले सोते रहते हैं जब भगवान्को सृष्टि करनेकी इच्छा होती है, तब उसके श्वाससे वेद निकल हाथ जोड़ स्तुति करते हैं. ऐसे कि, जैसे कोई राजा अपने स्थानपर सोता हो और बंदीजन भोरही उसका यश गाय उसीको जगावें इसलिये कि चैतन्य हो शीघ्र अपना कार्य करे.

इतना प्रसंग कह नरनारायण बोले कि, सुनो नारद ! प्रभुके मुखसे निकल वेद यह कहते हैं कि हे नाथ ! बेग चैतन्य हो सृष्टि रचो और जीवोंके मनसे अपनी माया दूर करो. क्योंकि, वे तुम्हारे रूपको

पहचानें, तुम्हारी माया प्रबल है, वह सब जीवोंको अज्ञान कर रखती है, जो उससे छूटे तो जीवको तुम्हारे समझनेका ज्ञान हो. हे नाथ! तुम बिन इसे कोई वश नहीं कर सक्ता. जिसके हृदयमें ज्ञानरूप हो तुम विराजते हो सोई इस मायाको जीतता है, नहीं तो किसकी सामर्थ्य है जो मायाके हाथसे बचे? तुम सबके कर्ता हो, सब जीव तुम्हीसे उत्पन्न हो, तुम्हीमें समाते हैं, ऐसे कि जैसे पृथ्वीसे अनेक वस्तु हो पुनि पृथ्वीमें मिल जाते हैं,कोई किसी देवताकी पूजा स्तुति करे-पर वह तुम्हारीही पूजा स्तुति होती है, ऐसे कि, जैसे कोई कंचनके आभरण बनाय अनेक नाम धरे, पर वह कंचनही है; तिसी भांति तुम्हारे अनेक रूप हैं और ज्ञान कर देखिये तो कोई कुछ नहीं जिधर देखिये तिधर तुमहीं तुम दृष्टि आते हो, नाथ! तुम्हारी माया अपरंपार है. यही सत्व, रज, तम, तीन गुण हो तीन स्वरूप धारण कर, सृष्टिको उपजाय पालन नाश करती है. इसका भेद न किसीने पाया, न कोई पावेगा. इससे जीवको उचित यह हैं कि सब वासना छोंड़कर तुम्हाराही ध्यान करे. इसीसे इसका कल्याण है. महाराज! इतना प्रसंग सुनाय नर नारायणने नारदसे कहा कि, हे नारद! जब सनंदन मुनिने पुरातन कथा कह सबके मनका संदेह दूर किया, तब सनकादिक मुनियोंने वेदकी विधिसे सनंदन मुनिकी पूजा की.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, हे राजा! यह नारायण नारदका संवाद जो कोई सुनेगा सो निःसंदेह भक्ति पदार्थ पाय मुक्त होगा. जो कथा पूर्ण ब्रह्मकी वेदने गाई, सो कथा सनंदन मुनियोंने सनकादिक मुनियोंको सुनाई, पुनि वही कथा नरनारायणने नारदके आगे गाई, नारदसे व्यासने पाई, व्यासने मुझे पढ़ाई, सो मैंने तुम्हें सुनाई. इस कथाको जो जन सुने सुनावेगा, सो मन मानता फल पावेगा. जो पुण्य होती है तप, दान, व्रत तीर्थ करनेमें सोई पुण्य होती है इस कथाके कहने सुननेमें. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे नरनारायणसंवादोनाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

अध्याय ८८.

वृकासुरने शिवजीकी तपश्चर्या कर मस्तकपर हाथ धरनेसे भस्म होनेका वर पाना और शिवजीके मस्तकपर हाथ धरनेको चलना पीछे विष्णुने ब्राह्मणका रूप धर असुरको मारना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! भगवानकी अद्भुत लीला है, इसे सबकोई जानता है. जो जन हरिकी पूजा करे सो दरिद्री होय और महादेवको माने सो धनवान्. देखो हरिकी ऐसी रीति है. ये लक्ष्मीपति वे गौरीपति, ये धरे वनमाला वें मुंडमाला, ये चक्रपाणि वे शूलपाणि, ये धरणीधर वे गंगाधर, ये मुरली बजावें वे सिंगी, ये वैकुंठनाथ वे कैलासवासी, ये प्रतिपालें वे संहारें, ये चरचें चंदन वे लगावें विभूति, ये ओढें अंबर वे व्याघ्रांबर, ये पढ़ें वेद वे आगम, इनका वाहन गरुड़ उनका नंदी, ये रहे ग्वालबालोंमें वे भूतप्रेतोंमें.

चौ० दोऊप्रभुकीउलटीरीति, जितइच्छातितकीजेप्रीति ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! राजायुधिष्ठिरसे श्रीकृष्णचंद्रने कहा कि, हे युधिष्ठिर! जिसपर मैं अनुग्रह करताहूं, हौले हौले उसका धन सब खोता हूं, इसलिये, कि धनहीनको भाई, बंधु, स्त्री पुत्र, आदि सब कुटुंबके लोग तज देते हैं; तब उसे वैराग्य उपजता है. वैराग्य होनेसे धनजनकी माया छोड़ निर्मोही हो मन लगाय मेरा भजन करता है, भजनप्रतापसे अटल निर्वाणपद पाता है. इतना कह पुनि शुकदेवजी कहने लगे कि महाराज! और देवताकी पूजा करनेसे मनोकामना पूरी होती है, पर भक्ति नहीं मिलती, यह प्रसंग सुनाय

मुनिने पुनि राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! एक समय शकुनिका पुत्र वृकासुर तप करनेकी अभिलाषा कर जो घरसे निकला तो पंथमें उसे नारदमुनि मिले, नारदजीको देखतेही इसने दंडवत कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो अतिदीनतासे पूंछा कि, महाराज! ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, इन तीनों देवताओंमें शीघ्र वरदाता कौन है? सो कृपा कर कहो, तो मैं उन्हींकी तपस्या करूं. नारदजी बोले कि, सुन वृकासुर: इन तीनों देवताओंमें महादेवजी बड़े वरदायक हैं, इन्हींको न रीझते विलंब न खीजते. देखो शिवजीने थोड़ेसे तप करनेसे प्रसन्न हो सहस्रार्जुनको सहस्र हाथ दिये, और अल्पही अपराधमें महाक्रोध कर उनका नाश किया. महाराज! इतना कह नारदमुनि तो चले गए और वृकासुर अपने स्थानपर आया. महादेवका अतितप यज्ञ करने लगा. सात दिनके बीच उसने छूरीसे अपने शरीरका मांस सब काट काट होम दिया. आठवें दिन जब शिर काटनेका मन किया तब भोलानाथने आय उसका हाथ पकड़के कहा, कि मैं तुझसे प्रसन्न हुआ जो तेरी इच्छा आवे सो वर मांग. मैं तुझे अभी दूंगा. इतना वचन शिवजीके मुखसे निकलतेही वृकासुर हाथ जोड़कर बोला—

दो०—ऐसा वर दीजै अबै, जाके शिर धरों हाथ ॥
भस्म होय सो पलकमें, करहु कृपा तुम नाथ ॥

महाराज! बातके कहतेही महादेवजीने उसे मुँहमांगा वर दिया. वर पाय वह शिवजीकेही शिरपर हाथ धरने चला. उसकाल भय खाय महादेवजी आसन छोंड़ भागे, उनके पीछे असुर भी दौड़ा. महाराज! सदाशिवजी जहां जहां फिरे तहां तहां वहभी उनके पीछेही लगा आया; निदान अतिव्याकुल हो महादेवजी वैकुंठमें गये. उनको महादुःखित देख भक्तहितकारी वैकुंठनाथ श्रीमुरारि करुणानिधान करुणाकरके विप्रवेश धर वृकासुरके सन्मुख जाय बोले कि, हे असुरराय! तुम उनके पीछे क्यों श्रम करते हो यह मुझे समझा कर कहो: बातके सुनतेही वृकासुरने सब भेद कह सुनाया. पुनि भगवान् बोले, कि हे असुरराय! तुमसा सयाना हो धोखा खाया यह बड़े अचरजकी बात है. इस

नंगे भुनंगे बावले भांग धतूरा खानेवाले योगीकी बात कौन सत्य माने, यह सदा रक्षा लगाये सर्प लिपटाये भयानक भेष किये भूतप्रेतोंको संग लिये श्मशानमें रहता है. इसकी बात किसके जीमें सांच आवे. महाराज! यह बात कह श्रीनारायणजी बोले कि–हे असुर-राय ! जो तुम मेरा कह झूंठ मानो तो अपने शिरपर हाथ रखदेख लो. महाराज ! प्रभुके मुखसे इतनी बात सुनतेही मायाके बश अज्ञान हो ज्यों वृकासुरने अपनें शिरपर हाथ रखलिया. त्यों जलकर भस्मका ढेर हुआ. असुरके मरतेही सुरपुरमें आनंदके बाजन बजेने लगे और देवता जयजयकार कर फूल बरसावने; विद्याधर, गंधर्व, किन्नर, हरिगुण गाने; उसकाल हरिने हरकी स्तुति कर बिदा किया और वृकासुरको मोक्षपद दिया. श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज ! इस प्रसंगको जो सुने सुनावेगा, सो निःसंदेह हरिहरकी कृपासे परमपद पावेगा. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे रुद्रमोक्षवृकासुरवधो नाम अष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

अध्याय ८९.

सब ऋषिमुनियोंका तीनों देवोंमें बडेपनकी भृगुजीसे परीक्षा लेना और विष्णुको श्रेष्ठ ठराना.

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! एक समय सरस्वतीके तीर सब ऋषि मुनि बैठे तप यज्ञ करतेथे. उनमेंसे किसीने पूंछा कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन तीनों देवताओंमें बड़ा कौन है ? सो कृपा कर कहो.

इसमें किसीनें कहा शिव, किसीने कहा ब्रह्मा, पर सबने मिल एकको बड़ा न बताया. तब कई एक बड़े बड़े मुनीशों ऋषीशोंने कहा, कि हम यों तो किसीकी बात नहीं मानते पर हां जो कोई इन तीनों देवताओंकी जाके परीक्षा कर आवे और धर्म स्वरूप कहै तो उसका कहना सत्य मानों. महाराज ! यह बात सुन सबने प्रणाम की और ब्रह्माके पुत्र भृगुको तीनों देवताओंकी परीक्षा कर आनेको आज्ञा दी. आज्ञा पाय भृगुमुनि प्रथम ब्रह्मलोकमें गए और चुप चाप ब्रह्माकी सभामें जाकर बैठे, न दंडवत की, न स्तुति, न परिक्रमा दी. राजा ! तब पुत्रका अनाचार देख ब्रह्माने कोप किया और चाहा कि शाप दूं, पर पुत्रकी ममता कर न दिया. उसकाल भृगु ब्रह्माको रजोगुणमें आसक्त देख वहांसे उठ कैलासमें गए और जहां शिव पार्वती विराजते थे तहां जा खड़े भये, इन्हे देख शिवजी खड़े हो ज्यों हाथ पसार मिलनेको हुये त्यों यह बैठ गया; बैठतेही शिवजीने अतिक्रोध कर इसके मारनेको त्रिशूल हाथमें लिया, उस समय पार्वतीने अति विनती कर पांओं पर महादेवजीको समझाया और कहा कि यह तुम्हारा छोटा भाई है, इसका अपराध क्षमा कीजिये. कहा है:—

चौ॰ बालकसों जो चूक कुछ कछु परै, साधु न कबहूं मनमें धरै

महाराज ! जब पार्वतीजीने शिवजीको समझाकर ठंढा किया, तब भृगु महादेवजीको तमोगुणमें लीन देख चल खड़े हुए, पुनि वैकुंठमें गये; जहां भगवान् मणिमय कंचनके छपरखटपर फूलोंकी सेजमें लक्ष्मीके साथ सोतेथे. जातेही भृगुने भगवान्के हृदयमें एक लात ऐसी मारी, कि वे नींदसे चौंक पड़े. मुनिको देख लक्ष्मीको छोड़ छपरखटसे उतर हरि भृगुजीका पांव शिर आंखोंसे लगाय लगे दाबने और यों कहने, कि हे ऋषिराय ! मेरा अपराध क्षमा कीजे. मेरे कठोर हृदयकी चोट तुम्हारे कोमल चरणकमलमें अनजाने लगी, यह दोष चित्तमें न लीजे. इतना वचन प्रभुके मुखसे निकलतेही भृगुजी अतिप्रसन्न हो स्तुति कर बिदा हो वहां आये जहां सरस्वतीतीर सब ऋषि मुनि बैठे थे, आतेही भृगुजीने तीनों देवताओंका भेद सब ज्यों का त्यों कह सुनाया कि—

चौ०ब्रह्मा राजसमें लपटान्यो, महादेव तामसमें सान्यो
विष्णुजु सात्विकमाहि प्रधान, तिनते बड़ो देव नहिंआन
सुनतऋषिनको संशयगयो, सबहीके मन आनंद भयो ॥
विष्णुप्रशंसा सबनेकरी, अविचल भक्ति हृदयमें धरी ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! मैं अंतरकथा कहता हूं, तुम मन लगाय सुनो. द्वारकापुरीमें राजा उग्रसेन तो धर्मराज करते थे और श्रीकृष्ण बलराम उनके आज्ञाकारी थे. राजाके राज्यमें सब लोग अपने अपने स्वधर्ममें सावधान काज काममें सज्ञान रहते और आनंद चैन करते थे, तहां एक ब्राह्मणभी अतिसुशील धर्मनिष्ठ रहता था. एक समय उसके पुत्र हो मरगया, वह उस मरे पुत्रको ले राजा उग्रसेनके द्वारपर गया और जो उसके मुँहमें आया सो कहने लगा कि; तुम बड़े अधर्मी दुष्कर्मी पापी हो, तुम्हारेही कर्म धर्मसे प्रजा दुःख पाते हैं; मेरा पुत्र तुम्हारेही पापसे मरा. महाराज ! इसीभांतिकी अनेक अनेक बातें कह मरा लड़का राजद्वारपर रख ब्राह्मण अपने घरको आया. आगे उसके आठ बेटे हुए और आठोंको वह उसी रीतसे राजद्वारपर रख आया. जब नवां पुत्र होनेको हुआ, तब ब्राह्मण फिर राजा उग्रसेनकी सभामें जा श्रीकृष्णचंद्रजीके सन्मुख खड़े हो पुत्रोंके मरनेका दुःख सुमिर सुमिर रो रो यह कहने लगा कि, धिकार है राजा और इसके राज्यको, पुनि धिकार है उन लोगोंको, जो इस अधर्मीकी सेवा करते हैं और धिकार है मुझे जो इस पुरीमें रहता हूं, जो इन पापियोंके देशमें न रहता तो मेरे पुत्र बचते. इन्हींके अधर्मसे मेरे पुत्र मरे और किसीने उपराला न किया. महाराज ! इस ढबकी सभाके बीच खड़े हो ब्राह्मणने रो रो बहुतसी बातें कहीं पर कोई कुछ न बोला. निदान श्रीकृष्णचंद्रके पास बैठा हुआ अर्जुन सुन घबराकर बोला कि हे देवता ! तुम किसीके आगे यह बात क्यों कहते हो और क्यों इतना खेद करते हो, इस सभामें कोई धनुर्द्धारी नहीं जो तेरा दुःख दूर करे. आज कलके राजा आपकाजी हैं, परदुःखनिवारक नहीं जो प्रजाको सुख दें और गौ ब्राह्मणकी सेवा करें. ऐसा सुनाय पुनि अर्जुनने ब्राह्मणसे कहा कि, देवता !! अब तुम जाय अपने घर निश्चिंत बैठ रहो, जब तुम्हारे लड़का होने-

का दिन आवे तब तुम मेरे पास आइयो, मैं तुम्हारे साथ चलूंगा. और लड़केको न मरने दूंगा. महाराज! इतनी बातके सुनतेही बाह्मण खिझलायके बोला कि, मैं इस सभाके बीच श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और अनिरुद्धको छुड़ाय ऐसा बलवान् किसीको नहीं देखता जो मेरे पुत्रको कालके हाथसे बचावे. अर्जुन बोला कि—ब्राह्मण तू मुझे नहीं जानता कि, मेरा नाम धनंजय है तुझसे प्रतिज्ञा करताहूं कि जो मैं तेरा सुत कालके हाथसे न बचाऊं तो तेरे मरेहुए लड़के जहां पाऊं तहांसे ले आय तुझे दिखाऊं. और वेभी न मिले तो गांडीवधनुप समेत अपनेको अग्निसे जलाऊं. महाराज! प्रतिज्ञा कर जब अर्जुनने ऐसे कहा तब वह ब्राह्मण संतोष कर अपने घरको गया. पुनि पुत्र होनेके समय विप्र अर्जुनके निकट आया. उसकाल अर्जुन धनुष बाण ले इसीके साथ उठ धाया. आगे वहां जाय उसका घर अर्जुनने बाणोंसे ऐसा छाया कि, जिसमें पवनभी प्रवेश न कर सके और आप धनुष बाण लिये उसके चारों ओर फिरने लगा.

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज! अर्जुनने बहुतसा उपाय बालकके बचानेको किया पर न बचा. और दिन बालक होनेके समय रोता था, उस दिन श्वासभी न लिया बरन पेटहींसे मरा निकला मरे लड़केका होना सुन लज्जित हो अर्जुन श्रीकृष्णचंद्रजीके निकट आया और इसके पीछे ब्राह्मणभी आया. महाराज! वह ब्राह्मण आतेही रो रो कहने लगा—कि रे अर्जुन! धिक्कार है तुझे और तेरे जीतबको. जो मिथ्या वचन कह संसारमें लोगोंको मुख दिखाता है. अरे नपुंसक! जो तू मेरे पुत्रको कालके हाथसे न बचा सकता था, तो तैंने प्रतिज्ञा क्यों की थी? मैं तेरे पुत्रको बचाऊंगा और न बचा सकूंगा तो तेरे मरे सब पुत्र ला दूंगा. इतनी बातके सुनतेही अर्जुन धनुष बाण ले वहांसे उठ चला चला संयमिनी पुरीमें धर्मराजाके पास गया. उसे देख धर्मराज उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ स्तुति कर बोला कि, महाराज! आपका आगमन यहां कैसे हुआ? अर्जुन बोला कि, मैं अमुक ब्राह्मणके बालक लेने आया

हूं. धर्मराजने कहा, वे बालक यहां नहीं आये. महाराज! इतना बचन धर्मराजके मुखसे निकलतेही अर्जुन वहांसे बिदा हो सब ठौर फिरा. पर उसने ब्राह्मणके लड़कोंको कहीं न पाया. निदान अछता पछता द्वारकापुरीमें आया और चिता बनाय धनुष बाण समेत जलनेको उपस्थित हुआ. आगे अग्नि जलाय अर्जुन जो चाहे कि चितापर बैठूं, तो श्रीमुरारि गर्वप्रहारीने आय हाथ पकड़ा और हँसके कहा कि, हे अर्जुन! तू मत जले, तेरी प्रतिज्ञा मैं पूरी करूंगा; जहां उसे ब्राह्मणके पुत्र होंगे तहांसे ला दूंगा. महाराज! ऐसे कह त्रिलोकीनाथ रथपर बैठ अर्जुनको साथ ले पूर्व दिशाकी ओरको चले और सात समुद्र पार हो लोकालोक पर्वतके निकट पहुँचे, वहां जाय रथसे उतर एक अतिअँधेरी कंदरामें पैठे, उस समय श्रीकृष्णचंद्रजीने सुदर्शनचक्रको आज्ञा दी; वह कोटिसूर्यका प्रकाश किये प्रभुके आगे महाअँधियारेको टालता चला.

चौ०तम तजि केतिक आगे गये,जलमें तबै जु पैठत भये
महातरंग तासुमें लसे, मूंदि आँखि ये तामें धसे ॥
पहुडे हुते शेषजी जहां, अर्जुन कृष्ण पहूंचे तहां ॥

जातेही आंखें खोलकर देखा कि एक बड़ा लंबा चौड़ा ऊंचा कंचनका मणिमय मंदिर अतिसुंदर है, तहां शेषजीके शीशपर रत्नजड़ित सिंहासन धरा है, तिसपर श्यामघनरूप सुंदरस्वरूप चंद्रवदन कमलनयन किरीट कुंडल पहने पीतबसन ओढ़े पीतांबर काछे बनमाल मुक्तमाल डाले आप प्रभु मोहनी मूर्ति बिराजे हैं और ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र, आदि सब देवता सन्मुख खड़े स्तुति करते हैं. महाराज! ऐसा उत्तम स्वरूप देख अर्जुन और श्रीकृष्णचंद्रजीने प्रभुके सोहीं जाय दंडवत् कर हाथ जोड़ अपने आनेका सब कारण कहा. बातके सुनतेही प्रभुने ब्राह्मणके बालक सब मँगाय दिये और अर्जुनने देख बहुत प्रसन्न हो लीने, तब प्रभु बोले-

चौ०तुमदोउमेरीकलाजुआहि, हरिअर्जुनदेखोचितचाहि
भार उतारन भुवपर गये, साधु संतको बहु सुख दये ॥

असुरदैत्य तुम सब संहारे, सुर नर मुनिके काज सँवारे॥
मेरे अंश जु तुमसे द्वैहैं, पूरनकाम तुम्हारे ह्वैहैं॥

इतना कह भगवानने अर्जुन और श्रीकृष्णचंद्रजीको बिदा किया. ये बालक ले पुरीमें आए, घर घर आनंद मंगल भये बधाये. इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि—महाराज!

चौ॰ जो यह कथा सुने धरध्यान, तिनके पुत्र होंय कल्यान

इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे द्विजकुमाराहरणं नाम नवाशीतितमोऽध्यायः॥ ८९॥ श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु॥

अध्याय ९०.

श्रीकृष्णजीने द्वारकामें सोलह सहस्र एकसौ आठ रानियोंके संग किया हुआ विहार.

श्रीशुकदेवजी बोले कि—महाराज! द्वारकापुरीमें श्रीकृष्णचंद्र सदा बिराजें, ऋद्धि सिद्धि सब यदुवंशियोंके घर घर बिराजें; नर नारी सब आभूषण ले नव वेष बनावें, चोआ, चंदन चरच सुगंध लगावें. महाराज! हाट बाट चौहटे झाड़ बुहार छिड़कावें, तहां देश देशके व्यापारी अनेक अनेक पदार्थ बेंचनेको लावें: जिधर तिधर पुरवासी कुतूहल करें, ठौर ठौर ब्राह्मण वेद उच्चरें. घर घर मंगली लोग कथा पुराण सुने सुनावें, साधु संत आठो याम हरियश गावें. सारथी, रथ, घुड़बहल जोत जोत राजद्वारपर लावें. रथी, महारथी, गजपति, अश्वपति, शूरवीर, रावत, योद्धा, यादव राजाको जुहार करने जावें. गुणीजन नाचें, गावें, बजावें, रिझावें, बंदीजन चारण शब्द बखान कर हाथी घोड़े, वस्त्र, अन्न, धन, कंचनके रत्नजड़ित आभूषण पावें. इतनी कथा कह श्री-

शुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि, महाराज! उधर तो राजा उग्रसेनकी राजधानीमें इसी रीति भांतिके कुतूहल हो रहे थे. और इधर श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद सोलह सहस्र एकसो आठ युवतियोंके साथ नित्य विहार करें,कभी युवतियां प्रेममें आसक्त हो प्रभुका भेष बनाया करें, कभी हरि आसक्त हो युवतियोंको सिंगारें और जो परस्पर लीला क्रीडा करें सो अकथ हैं; मुझसे कही नहीं जाती वह देखही बनिआवें.

इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! एक दिन रात्रिसमय श्रीकृष्णचंद्र सब युवतियोंके साथ बिहार करतेथे और प्रभुके नानाप्रकारके चरित्र देख किन्नर, गंधर्व बीन, पखवाज, भेरी, दुंदुभी बजाय बजाय गुण गाते थे और एकसा समा हो रहाथा कि इसमें बिहार करते जो कुछ प्रभुजीके मनमें आया तो सबको साथ ले सरोवरके तीर जाय नीरमें पैठ जलक्रीड़ा करने लगे. आगे जलक्रीड़ा करते करते सब स्त्री श्रीकृष्णचंद्रके प्रेममें मग्न हो तनमनकी सुरत भुलाय एक चकवा चकवीको सरोवरके वारपै बैठे बोलते देख बोली!

चौ०हे चकई तू दुख क्यों गावै, पियवियोग ते रैननशावै. अतिव्याकुलह्वैदियाहिपुकारे, हमलौंतूनिजपियहिसमारे। हमतौ तिनकी चेरीभई, ऐसे कहि आगेको गई॥

पुनि समुद्रसे कहने लगीं कि, हे समुद्र! तू जो लंबी स्वासें लेता है और रात दिन जागता है, सो क्या तुझे किसीका वियोग है? के चौदह रत्न गये सो शोक है? इतना कह फिर चंद्रमाको देख बोलीं; हे चंद्रमा! तू क्यों तनछीन मनमलीन होरहा है? क्या तुझे राजरोग हुआ? जो दिन दिन घटता बढ़ता है, कै श्रीकृष्णचंद्रको देख जैसे हमारी गति मति भूलती है तैसी तेरी भूली है?

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजासे कहा कि—महाराज! इसीभांति सब स्त्रियोंने पवन, मेघ, पर्वत, नदी, कोकिल, हंससे अनेक अनेक बातें कहीं सो जान लीजे. आगे सब श्रीकृष्णचंद्रके साथ विहार करें और सदा सेवामें रहें. प्रभुके गुण गावें और मनवांच्छित फल पावें; प्रभु गृहस्थधर्मसे गृहस्थाश्रम चलावें.

महाराज! सोलह सहस्र एकसौ आठ श्रीकृष्णचंद्रकी रानी जो प्रथम बखानी, तिनमें एक एक रानीके दश दश पुत्र और एक एक कन्या थी और उनकी संतान अनगिनत होगई; सो मेरी सामर्थ्य नहीं कि जो उनकी संतानका बखान करूं; पर मैं इतना जानता हूं कि श्रीकृष्ण-चंद्रकी संतानके पढ़ानेको तीन करोड़ अठासी सहस्र एकसौ पाठशाला थीं और इतनेही पंडित थे. आगे श्रीकृष्णचंद्रके जितने बेटे, पोते, नाती हुए; रूप, बल, पराक्रम, धन, धर्ममें कोई कम न था, एक एकसे बढ़कर था; उनका बर्णन मैं कहांतक करूं?

इतना कह ऋषि बोले कि महाराज! मैंने ब्रज और द्वारकाकी लीला गाई, यह है सबको सुखदायी. जो जन इसे प्रेमसहित गावेगा, सो निःसंदेह भक्ति मुक्ति पदार्थ पावेगा. जो फल होता है तप, यज्ञ, दान, व्रत, तीर्थ, स्नान करनेसे; सो फल मिलता है हरिकथा सुनने और सुनानेसे. इति श्रीलल्लूलालकृते प्रेमसागरे द्वारकाविहारवर्णनं नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

श्लोक—फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियम्
श्रीवत्सांकमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ॥
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतम्
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्यांगभूषं भजे ॥
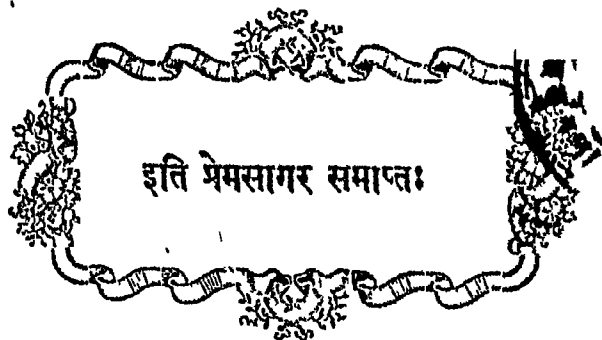
इति प्रेमसागर समाप्तः

श्रीगोस्वामि तुलसीदासजीकृत

रामायण

(तत्त्वदीपिका-भाषाटीकासहित.)

सचित्र-गुटका.

वाचकवृंद !

आनंदकंद श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र चरित्रोंकी चर्चाही इस असार संसारमें परम सार और चारों पदार्थोंके सम्पादन करनेका उत्तम द्वार है. यह विषय ऐसा रसीला है कि जिसका एकबार भली प्रकार विचार करनेसे तदाकार वृत्तिद्वारा ब्रह्मसाक्षात्कार होकर ब्रह्माकार अनिर्वचनीय आनंदका आविष्कार होता है. अतएव यह कहना पड़ता है कि यद्यपि भाषाके भण्डारमें उत्तमोत्तम काव्यग्रंथ अनेक हैं, तथापि श्रीरामगुणवर्णनप्रधान यह "**रामायण**" अपने ढँगकी एकही है. इसमें सदाचार, सद्व्यवहार, सद्विचार, सद्धर्मसार और उत्तम राजनीति बिस्तारका ऐसा अद्भुत प्रकार दर्शाया है कि जिसकेकारण यूरोप आदि द्वीपान्तरनिवासीभी इसका असीम समादर करते हैं, इतनाही नहीं, बरन अंग्रेजी और जर्मनी आदि अनेक भाषाओंमें इसके अनेकानेक अनुवादभी हुए हैं. इस प्रकार सन्मान्य जो "**रामायण**" अन्यान्य पुस्तकोंकी अपेक्षा सर्वसामान्यमें असामान्य मान्य होरही है, उसीको हमने सरल हिन्दी भाषानुवादसहित मनोहर गुटकाके आकारमें सचित्र छापकर एक निरालाही ढँग निकाला है. यों तो यह पुस्तक हमारे यहां आज कई वर्षोंसे भिन्न २ प्रकारके आकारोंमें छपकर सहस्रोंवार पाठकोंके दृष्टिगोचर होचुकी है; किंतु अबकी बार यह नयाही आविष्कार है. इसमें पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ कई नवीन विषय

ऐसे डाले गये हैं जो बड़े सटीक रामायणमेंभी नहीं हैं. अब तक बिलायत आदि देशान्तरोंमें तथा भारतवर्षमें प्रायः जितनी सचित्र पुस्तकें छपी हैं, उन सबके आधार नवीन सुधारसे स्थान २ पर प्रसंगानुकूल कैसे २ सुन्दर, सुरंग और सुविचित्र चित्र चित्रित किये गये हैं कि जिनके देखनेसे प्रस्तुत कथाप्रसंगका ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव होता है कि जिसके आगे नाटकोंका नाट्याभिनयभी फीका प्रतीत होता है. पुस्तककी आदिमें एक "श्रीरामपञ्चायतन" का चित्र है, जिसमें ऐसे दर्शनीय दशरंग हैं कि जिनका अवलोकन करतेही अंग २ में आनन्दके तरंग उठने लगते हैं. बेलबूटेभी ऐसे अनूठे हैं कि जो रूठेकोभी रिझाते हैं किंबहुना, पुस्तकें तो आप लोगोंने आजतक बहुत देखीं होंगी; परंतु ऐसी अपूर्व पुस्तक देखनेका यह प्रथमही अवसर है. यह खासकर दिल्लीदरबारके लिये तैयार कीगई है सूक्ष्माकार होनेके कारण पाठकगण इसे मुशाफिरीमेंभी साथ रखसक्ते हैं. ऐसे अलौकिक अलंकारोंसे युक्त होनेके कारण यह पुस्तक सर्वसाधारणको तो उपयुक्त है ही, परं च विशेपकर राजा, महाराजा, अमीर, उमराव, शेठ, साहूकार तथा उदार सरदारोंके आगारका आभरण होनेयोग्य है. राजराजेश्वर महाराज श्रीमान् सप्तम एडवर्ड महोदयके राज्याभिपेक महोदयके आनंदमें सर्वसाधारणको इसको अनुपम लाभ पहुँचानेके लिये ऐसे बहुमूल्य पुस्तकका मूल्य केवल २।) रुपया रक्खा है.